नवाब-बेमुल्क

511

इक़बाल बहादुर वैद्यसरे

5711

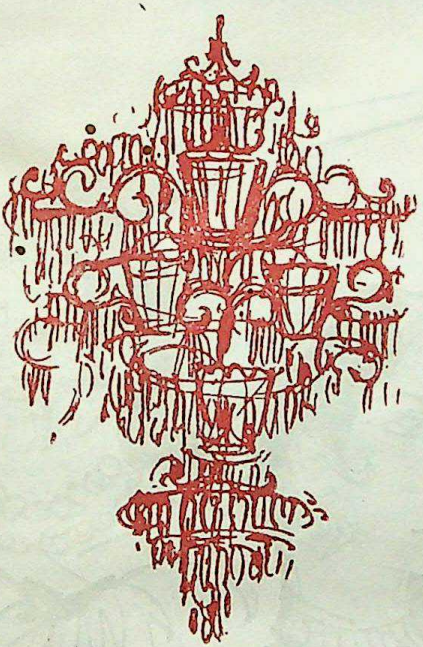

नवाब-बेमुल्क

इंडियन बुक डिपो
[illegible] भवन,
[illegible] अमीनाबाद पोस्ट आफिस,
बी० एन० वर्मा रोड,
लखनऊ

ऐतिहासिक उपन्यास

साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड
इलाहाबाद-३

नवाब-बेमुल्क

इक़बाल बहादुर देवसरे

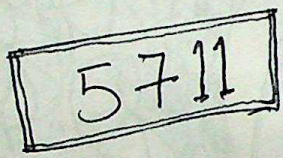

मूल्य : तीस रुपये
© लेखक
प्रथम संस्करण : १९७६
NAWAB-BEMULK (NOVEL) BY IQBAL BAHADUR DEVSARE
Price : Rs. THIRTY

गिरीश टण्डन द्वारा साहित्य-भवन (प्रा०) लिमिटेड, ९३ के० पी० कक्कड़ रोड, इलाहाबाद के लिए प्रकाशित तथा कामेश्वर नाथ भार्गव द्वारा सुपरफ़ाइन प्रिन्टर्स, १-सी, बाई का बाग, इलाहाबाद में मुद्रित ।

नवाब-बेमुल्क

ऐतिहासिक उपन्यासों के सुप्रसिद्ध लेखक श्री इकबाल बहादुर देवसरे के दो बड़े उपन्यास—बेगम हजरतमहल और जाने-आलम—प्रकाशित करने का सुयोग साहित्य-भवन को मिल चुका है। ये दोनों उपन्यास पाठकों में अत्यधिक लोकप्रिय हुए और यशस्वी बने। अब हम देवसरे जी का इसी कड़ी में तीसरा उपन्यास—नवाब-बेमुल्क—पाठकों को भेंट कर रहे हैं। विश्वास है कि यह उपन्यास अपनी रोचकता, ऐतिहासिकता और चरित्र-चित्रण की दृष्टि से पूर्ववर्ती उपन्यासों से भी अधिक पसन्द किया जायगा।

इस उपन्यास—नवाब-बेमुल्क का नायक अवध का एक विद्रोही नवाब है। अवध के अन्यतम लोकप्रिय नवाब आसफुद्दौला का बेटा, नवाब वजीरअली खाँ अपने पिता का उत्तराधिकारी बन कर अवध की गद्दी पर बैठा लेकिन वह तेजदिमाग था, स्वाभिमानी था और अंग्रेजों का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं करता था, इसके परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने जबरदस्ती की और उसे गद्दी से उतार कर बनारस में रख दिया और अवध की गद्दी पर दूसरे को नवाब बना कर बैठा दिया। फिर 'नवाब-बेमुल्क' होकर वजीरअली खाँ ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा उठाया और अपनी थोड़ी-सी ताकत के बूते ही अंग्रेजों से लड़ता-लड़ता मारा गया।

अवध का यही करुणापूर्ण और संघर्षमय अध्याय इस उपन्यास की कथावस्तु है। अवध की नवाबी का यह अन्धकार-युग आज पहली बार इस उपन्यास में उजागर हुआ है।

पाठक इस उपन्यास का भी स्वागत करेंगे, ऐसा विश्वास है।

—प्रकाशक

नवाब-बेमुल्क

"जिसको न दे मौला, उसको दे आसफुद्दौला।" एक आवाज गूंज गई।

दिन चढ़ चुका था। अवध की राजधानी लखनऊ में एक राह चलते फकीर ने कदम रोक कर आवाज बुलन्द की और दौलतखाना आसफी की ओर जाने वाली सड़क पर बढ़ गया।

उसके दो-चार कदम आगे बढ़ते ही बगल की एक तंग गली से निकल कर एक दूसरा फकीर भी उसी सड़क पर आ गया। उसने भी खड़े होकर बड़े इतमीनान के साथ आवाज लगाई—"जिसको न दे मौला, उसको क्या दे आसफुद्दौला!"

पहले वाले फकीर ने आवाज सुन कर पीछे को गर्दन मोड़ी, पैरों को रोका और आश्चर्यभरी निगाह से पीछे वाले फकीर की ओर देखा। लेकिन बिना कुछ कहे-सुने तुरन्त ही सीधा होकर अपनी राह चलने लगा। वह दूसरा फकीर भी चुपचाप उसी के पीछे चलने लगा।

हर सौ-पचास कदम की दूरी पर दोनों फकीरों की आवाजें बारी-बारी से गूंज कर वातावरण को चौंका रही थीं। सड़क पर आने-जाने वाले राहगीर तथा दोनों ओर के मकानों में रहने वाले लोग भी उन दोनों फकीरों की पुकारों को सुन रहे थे। लखनऊ के सभी निवासी नवाब आसफुद्दौला की उदारता से भली-भाँति परिचित थे। अच्छी तरह जानते थे कि नवाब का हाथ खुला हुआ है। रोजाना उनके हाथों से हजारों-लाखों रुपया लुटता रहता है। उनकी उदारता का दूर-दूर तक बोलबाला है।

दोनों फकीर अपनी-अपनी टेर लगाते हुए धीरे-धीरे आगे बढ़ते चले जा रहे थे। उन दोनों की वेश-भूषा फकीरी बाने के अनुकूल ही दिखाई दे रही थी। पहले फकीर ने नीले रंग के मोटे कपड़े की तहमत बाँध रखी थी और एक काला कम्बल कुछ इस तरह से लपेटे था कि उसका एक सिरा बाएँ कंधे के ऊपर से जाकर पीठ के पीछे धरती से बातें कर रहा था। गले में काले, सफेद, नीले तथा हरे रंग के काँच के बड़े-बड़े बँटों की माला पड़ी थी। बाएँ कंधे के नीचे बगल में सुरमई रंग की लम्बी झोली लटक रही थी। पीतल की पतली जंजीर से बँधा हुआ कशकोल दाहिनी बगल में झूल रहा था। सिर के काले-

सफेद धूलधूसरित खिचड़ी बाल दोनों कंधों को छू रहे थे। ढाढ़ी-मूछों का भी कुछ ऐसा ही बेतुका हिसाब था। हाथ में किसी काली लकड़ी का साँप की तरह बलखाता हुआ मोटा सोंटा था। चेहरे की झुर्रियाँ, आँखों की मिचमिचाहट कह रही थी कि उसकी उम्र पचास के ऊपर है।

पीछे चलने वाले दूसरे फकीर का वेश पहले से कुछ भिन्न था। उसकी गेरुए रंग की तहमत के ऊपर लम्बा कुर्ता था जो घुटनों के नीचे तक झूल रहा था। झोली तथा कशकोल उसके भी दाएँ-बाएँ कंधों के नीचे लटक रहे थे। गले में काले मोटे डोरों की गंडों की भाँति गाँठदार माला थी। सिर, डाढ़ी मूँछ के बाल उतने खिचड़ी न थे। आँखें बड़ी-बड़ी और नाक जरूरत से कुछ ज्यादा लम्बी तथा नुकीली थी। उसकी आयु चालीस-पचास वर्ष के भीतर ही आँकी जा सकती थी। उसकी आवाज भी पहले फकीर की अपेक्षा कुछ कड़कदार थी। हाथ में लोहे की कुबड़ी छड़ी थी जिसके ऊपरी सिरे पर कुछ घुँघरु-बँधे थे, जो टेकने पर छनन्-छनन् की आवाज करते थे।

एक तिराहे पर पहुँच कर पहले फकीर ने अपनी टेर लगाई और सीधे रास्ते पर आगे बढ़ गया। दूसरे फकीर ने भी रुक कर अपनी पुकार ऊँची की और आगे बढ़ा। तभी एक ओर से चार-पाँच लोग आकर उसके पीछे चलने लगे। फकीर लम्बे कदम रखता कुछ आगे निकल गया।

उसके आगे बढ़ जाने पर उन लोगों में से एक ने दूसरे की तरफ मुड़ कर कहा—"अमाँ, इस फकीर की आवाज सुनी ?"

दूसरे ने मुस्करा कर कहा—"दोनों कानों से सुनी है।"

"जाने ये कौन कहाँ का फकीर है ? कैसी गलत आवाज लगाता है ! कहता है—जिसको न दे मौला उसको क्या दे आसफुद्दौला ! मानो अपनी इस उलटी आवाज से नवाब आसफुद्दौला की उदारता को, उनकी सखावत को दबाना चाहता है।"

"नाशुकरा है।"

"ये फकीर लखनऊ का रहने वाला नहीं मालूम होता ?" तीसरे ने कहा—"लखनऊ का होता तो ऐसी गलत आवाज कभी न लगाता।"

चौथे व्यक्ति ने कहा—"ऐसा भी हो सकता है कि इसने नवाब के हाथों से कभी कुछ पाया न हो। कुढ़न में उलटी आवाज लगाने लगा हो।"

"सच बात तो यों है ?" पहले ने कहा—"इन लोगों ने फकीरी वेश को भी बदनाम कर रखा है। फकीर होना बहुत मुश्किल है। फकीर के चारों हर्फ गहरे मानी रखते हैं।"

"क्या मानी रखते हैं ?" दूसरे ने मुस्कराते हुए पूछा।

पहले ने भी हलकी सी मुस्कान होठों पर लाकर कहा—"अजी जनाब फकीर में फ़े, काफ़, ये, रे चार हर्फ हैं। फ़े के मानी होते हैं कि फकीर को फाकामस्त होना चाहिए। काफ के मानी हैं, कनायत यानी जितना जो कुछ मिल जाए उसी पर संतोष कर

लेना चाहिए। ये हर्फ कहता है कि हमेशा यादे खुदा किया कर और रे हर्फ रियाजत की तरफ इशारा करता है।" फिर जरा रुक कर कहा—"उलटी सीधी आवाजें लगाने वाले ये फकीर नहीं कहे जा सकते। फिर जो चारों हर्फों के मानी रखने वाला सच्चा फकीर होता है उसमें कुछ करामात भी हुआ करती है। इनमें भला क्या करामात होगी ?"

सुन कर सभी साथी हँस पड़े। एक ने कहा—"आप ने फकीर लफ्ज का अच्छा माने बताया और उसके साथ इस फकीर की खिल्ली भी उड़ा दी।"

कुछ क्षण के लिए वातावरण मौन हो गया। सब लोग चुपचाप कदम बढ़ाते रहे। कुछ आगे जाने पर उस फकीर ने खड़े होकर फिर आवाज लगाई और फिर आगे बढ़ा।

एक व्यक्ति ने मुँह सिकोड़ कर कहा—"इस फकीर की ये गलत आवाज तो लखनऊ की फिजा को गन्दा कर देगी। इस आवाज से नवाब की उदारता को ठेस लगेगी।"

"उहूँ," दूसरे ने कहा—"कुत्ते भौंकते रहते हैं और हाथी अपनी मस्तानी चाल चलता रहता है। एक इसकी बेतुकी आवाज से नवाब आसफुद्दौला की मुट्ठी बन्द नहीं हो सकती।"

कुछ आगे चल कर वे सभी लोग पास की एक गली में मुड़ गए।

दौलतखाना आसफी की बारहदरी में लखनऊ के दानी नवाब आसफुद्दौला का दरबार सजा हुआ था। नवाब के हाली-मोहाली, उमरा, कारकुन, हकीम, शायर सभी अदब-कायदे के साथ अपने-अपने स्थान पर बैठे थे। ऊँचे स्थान पर बिछी हुई चमचमाती मसनद पर बड़े तकिए का सहारा लिए नवाब आसफुद्दौला भी दरबार में रौनक अफरोज थे।

अभी कुछ देर पहले नवाब आसफुद्दौला ने सात सौ बेशकीमती कश्मीरी दोशाले गरीबों को ओढ़ा कर अपनी उदारता का परिचय दिया था। दरबारियों में मन्द स्वर में नवाब की उसी उदारता की चर्चाएँ चल रही थीं। लेकिन नवाब आसफुद्दौला शान्त-खामोश बैठे थे। उनका ध्यान दरबारियों की चर्चाओं की ओर न था। वह दूसरी ही विचारधारा में बह रहे थे। उन्होंने एक मिसरा सोचा था—'तमाशा खुदाई का हम देखते हैं।' इसी रदीफ काफिया को लेकर वह एक गजल कहना चाहते थे, विचार दौड़ रहे थे, चेहरे पर गम्भीरता छाई हुई थी और निगाहें एक ओर जमी हुई थीं।

सहसा आसफुद्दौला का ध्यान टूट गया। ख्याल दूसरी तरफ आ पहुँचा। दौलतखाने के दीचे से दो आवाजें बारी-बारी से आकर उनके कानों से टकरा रही थीं। और वह अपनी गजल की उधेड़-बुन को छोड़ कर उन्हीं आवाजों के फेर में पड़ गए थे। उन्होंने दरबारियों की ओर देखा। दरबारी चौंक कर संभल गए और आला हजरत की जवान मुबारक से कुछ सुनने का इन्तजार करने लगे।

आसफुद्दौला ने नवाब नाजिर तहसीन अली खाँ की ओर देख कर कहा—"तहसीन

अली खाँ ! जरा नीचे जाकर देखना । ये बारी-बारी से अपनी आवाजें बुलन्द करने वाले कौन लोग हैं ?"

दरबारियों ने अपनी बातों के फेर में उन आवाजों को नहीं सुना था । चेहरों पर हैरत दौड़ पड़ी और आदेश पाकर नवाब नाजिर गिरते-पड़ते जीना उतर गए और उलटे पैरों वापस आकर अर्ज किया—"आला हजरत ! दो फकीर दौलतखाने के नीचे खड़े हुए हैं । उन्हीं दोनों ने बारी-बारी से अपनी आवाजें बुलन्द की हैं ।"

"उन दोनों फकीरों को यहाँ बुलाया जाए ?" नवाब ने कहा ।"

दो क्षण बाद दोनों फकीर आकर नवाब आसफुद्दौला के सामने खड़े थे ।

आसफुद्दौला ने निगाह उठा कर उन दोनों फकीरों को गौर से देखा । फिर एक सायत की खामोशी के बाद कहा—"तुम्हीं लोगों ने अभी दौलतखाने के नीचे अपनी आवाजें बुलन्द की थीं ?"

"जी हाँ ?" जवाब मिला ।

आसफुद्दौला फिर खामोश हो गए । एक क्षण गुजर गया ।

कम्बलधारी फकीर बोला—"मौला हुजूर को सलामत रखे और हुकूमत में दिन-दूनी, रात-चौगुनी तरक्की अता फरमाए । और ये एक अदना खुदा का बन्दा फकीर अपनी आवाज दुनिया के लोगों को सुनाता रहे ।"

आसफुद्दौला ने नजर उठा कर उससे पूछा—"तुम्हारी आवाज क्या है ?"

"मेरी आवाज खल्क खुदा का नक्कारा है ?" फकीर ने बड़े इतमीनान से कहा—"सारे मुल्क में मेरी आवाज गूंज कर सच और सही साबित हो रही है ?"

"क्या ?" आसफुद्दौला ने पूछा ।

"आला हजरत ? इस फकीर की आवाज है—जिसको न दे मौला, उसको दे आसफुद्दौला ।"

"कहाँ रहते हो ?"

"रहने का कौन-सा ठिकाना अर्ज करूँ ?" फकीर ने कहा—"मसल मशहूर है—'दरिया बहता रहे और फकीर चलता रहे ।' इन दोनों का रुक जाना बेहतर नहीं । यों ये फकीर ख्वाजा की नगरी अजमेर से चलता-फिरता लखनऊ आया है ।"

"तुम्हें लखनऊ आए कितने दिन हुए ?"

"आज दसवाँ दिन है ।"

"दौलतखाने के नीचे और भी किसी दिन अपनी आवाज बुलन्द की थी ?"

"नहीं, ?" फकीर ने कहा—"आज पहले ही दिन यहाँ आवाज लगाई है ।"

एक क्षण की खामोशी के बाद आसफुद्दौला ने नजर उठा कर उससे पूछा—"क्या चाहते हो ?"

फकीर थोड़ा मुस्कराया, फिर गम्भीर होकर बोला—"फकीर का चाहना क्या ?

दाता जो कुछ हाथ उठा कर दे दे वही नियामत है। वही मौला की देन है।"

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"यों मेरा नाम फूलशाह है ?" उसने कहा—"मगर लखनऊ के लड़के कम्बल शाह कह कर पुकारते हैं।"

एक क्षण की खामोशी के बाद आसफुद्दौला ने दूसरे फकीर की तरफ नजर घुमाई, पूछा—"तुम्हारी आवाज क्या है ?"

वह फकीर गम्भीर स्वर से बोला—"मेरी आवाज लखनऊ के लोगों को चौंका देने वाली और हैरत में डाल देने वाली जरूर है, लेकिन हकीकत है। सचाई है। उसमें खुशामद नहीं हैं। चापलूसी नहीं है। इसलिए मुमकिन है लोगों को मेरी सदा पसन्द न हो। लेकिन मैं समझता हूँ कि मेरी सदा खुदा को पसंद होगी।"

"तुम्हारी क्या सदा है ?" आसफुद्दौला ने गम्भीर दृष्टि से उसकी तरफ देखा।

"मेरी सदा है।" फकीर ने कहा—"जिसको न दे मौला उसको क्या दे आसफुद्दौला !"

आसफुद्दौला एक क्षण चुप रहे। फिर पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"अब्दुल्लाशाह।"

"तुम भी कहीं बाहर से लखनऊ आए हो ?"

अब्दुल्लाशाह ने कहा—"दिल्ली से आया था। पर अब लखनऊ में ही रहता हूँ।"

"लखनऊ में कहाँ रहते हो ?"

"जो फकीरों के रहने की जगह है।"

"कहाँ ?"

"गोमती के किनारे वाले पुराने कब्रिस्तान से मिला हुआ मेरा झोपड़ा है।"

"अकेले हो ?"

"नहीं, बीबी है और एक लड़की भी है।"

"तुम क्या चाहते हो ?"

अब्दुल्लाशाह बड़े संतोष के साथ बोला—"मैं किसी से कुछ नहीं चाहता, बन्दे से क्या चाहना-माँगना ! चाहना-माँगना उस मौला से चाहिए जो सारी दुनिया को देता है। बेमाँगे देता है।" फिर गम्भीर होकर कहा—"दाता एक खुदा ही है। उसका बन्दा दाता नहीं कहा जा सकता और जो अपने को दाता समझता है वह गलती करता है। जो अमीर-गरीब-बादशाह और फकीर को देता है, हर एक की मुराद पूरी करता है वही दाता है।"

अब्दुल्लाशाह का कहना सुन कर आसफुद्दौला कुछ देर खामोश बैठे रहे। फिर एक खिदमतगार को अपने पास बुला कर उसके कान में कुछ कहा। खिदमतगार वहाँ से

चला गया।

दरबारी हैरत में डूबे थे। उनकी नजरें कभी उस फकीर के चेहरे पर पड़ती थीं कभी आसफुद्दौला के चेहरे पर। बीच में बोलने का कोई साहस नहीं करता था।

आसफुद्दौला ने अब्दुल्लाशाह से फिर सवाल किया—"जब तुम किसी से कुछ माँगते चाहते नहीं, कोई सवाल नहीं करते, उस सूरत में ये फकीरी बाना बनाकर आवाज क्यों बुलंद करते हो ?"

अब्दुल्लाशाह गम्भीर स्वर में बोला—"मेरा ये फकीरी बाना और मेरी पुकार किसी से कुछ माँगने के लिए नहीं है। मेरा ये फकीरी वेश यादेखुदा के लिए है और मेरी आवाज दुनिया के लोगों को सोते से जगाने के लिए है। जिससे लोग मौला को भूल कर किसी बन्दे को दाता न समझें।"

"तुम कोई और भी धंधा करते हो ?" नवाब ने पूछा।

"बस एक यादेखुदा का ही धंधा करता हूँ।" फकीर ने बड़े इतमीनान से कहा —"इस धंधे से ज्यादा फायदे का दूसरा कौन-सा धंधा-रोजगार और हो सकता है ? इस धंधे का दोनों जहान में बोलबाला है।"

"तब तुम अपना और अपनी बीबी-बच्चों का पेट किस तरह पालते हो ? कहाँ से खिलाते-पिलाते हो ?"

"मौला खिलाता-पिलाता है ?" फकीर ने किंचित मुस्करा कर कहा—"कोई न किसी की परवरिश करता है न खिलाता-पिलाता है। उसका दस्तरख्वान बहुत बड़ा है। दुनिया में जितने भी जानदार हैं, सभी को उसके ही दस्तरख्वान से खाना मिलता है। कोई भी भूखा-प्यासा नहीं रहने पाता।"

तब तक खिदमतगार दोनों हाथों में दो पके हुए कुम्हड़े लेकर आ गया। उसके दाहिने हाथ वाला कुम्हड़ा आसफुद्दौला ने अपने हाथ में लेकर फूलशाह उर्फ कम्बलशाह की तरफ बढ़ा दिया। उसने सैकड़ों दुआएँ दीं।

फिर आसफुद्दौला ने खिदमतगार के बाएँ हाथ वाला कुम्हड़ा अपने हाथ में लिया और अब्दुल्लाशाह की तरफ बढ़ा कर कहा—"हम तुम्हें ये पका फल देना चाहते हैं, कबूल करोगे ?"

"जरूर कबूल करूँगा ?" अब्दुल्लाशाह ने कुम्हड़ा अपने हाथों में लेते हुए कहा— "बेमाँगे तो खुदा ही दिया करता है।" फिर बड़े संतोष के साथ धीरे से कहा—"परवर दिगार ! तेरा हजार-हजार शुक्र है जो आज सुबह-सुबह तूने ये नियामत अता फरमाई है।"

इसके बाद दोनों फकीर वहाँ से चले गए।

दरबारियों को नवाब आसफुद्दौला का यह खेल समझ में न आया। वे सब आश्चर्य के अथाह सागर में गोते लगा रहे थे। सोच रहे थे। सोच रहे थे कि आला

हजरत ने ऐसा तुच्छ दान तो कभी नहीं किया। जिन हाथों से हजारों-लाखों रुपया लुटा करता है उन हाथों से दो-दो टके के फल खैरात किए गए। खुदा जाने हजरत के इस खेल में क्या राज छिपा है!

आसफुद्दौला मसनद से उठ कर जनानखाने की तरफ चले गए। उनके जाते ही उस वक्त का दरबार भी खतम हो गया। सभी दरबारियों ने अपने-अपने घरों की राह पकड़ ली।

दौलतखाना आसफी से बाहर आकर दोनों फकीरों ने अपना अलग-अलग रास्ता लिया। अब्दुल्लाशाह तो अपनी टेर से दुनिया को जगाने के लिए लखनऊ की घनी बस्ती में घुस गया। फूलशाह हाथ में नवाब आसफुद्दौला का दिया हुआ पका फल लिए धीरे-धीरे बाजार की ओर जाने वाले रास्ते पर चल रहा था। वह बार-बार लाल पके कुम्हड़े पर नजर डालता हुआ सोच रहा था—अवध के नवाब आसफुद्दौला की सखावत की तो बड़ी धूम सुनी जा रही थी। लोग कहते थे कि उनके हाथों लाखों रुपया रोजाना लुटा करता है। लेकिन यहाँ आकर तो कुछ भी देखने को न मिला। हजरत ने पुकार सुन कर अपने सामने भी बुलाया। पूछा भी कि क्या चाहते हो? उस वक्त तो ऐसा मालूम हो रहा था कि इतना कुछ देंगे कि माला-माल हो जाऊँगा। फकीर से अमीर बन जाऊँगा और मौज की जिन्दगी बसर करूँगा। मगर हाथ बढ़ा कर दिया क्या—एक पका फल!

फूलशाह उर्फ कम्बलशाह अफीम खाने का आदी था। आज सुबह से उसे अफीम खाने को नहीं मिली थी। पास में पैसे भी नहीं थे कि खरीद कर खा लेता। फेरी करने तथा आवाज लगाने से भी अभी तक कुछ पल्ले नहीं पड़ा था। नशे के बिना चलना-फिरना कठिन हो रहा था। शरीर का जोड़-जोड़ दुख रहा था। जम्हाइयाँ आ रही थीं। आँखें मिचमिचा रही थीं। फिर उस कुम्हड़े पर नजर डाल कर वह सोचने लगा—इस कुम्हड़े का क्या होगा? कौन पकाए-भूनेगा? बेकार ही जाएगा। किसी जानवर के आगे डाल देना पड़ेगा। इससे तो यही बेहतर मालूम होता है कि इसे बेच कर कुछ पैसे वसूल कर लूं। जो भी चार-छः पैसे मिल जाएँगे, इस वक्त के नशे-पानी के काम आएँगे। जरूरत पर एक टके का मिल जाना भी बहुत हो जाता है। इस वक्त की जरूरत रफा हो जाने से आसफुद्दौला की यही खैरात बहुत बड़ी बन जाएगी।

अपने इस गुनताड़े के अनुसार फूलशाह ने सब्जीमंडी जा कर एक कुंजड़िन के हाथों कुम्हड़े को चार पैसे में बेंच दिया। हाथ में पैसे आते ही फूलशाह में कुछ चुस्ती सी आ गई। लम्बे-लम्बे डग बढ़ा कर अफीम की दूकान से अफीम खरीदी और पड़ोस के एक मदकखाने में दाखिल हो गया।

अब्दुल्लाशाह लखनऊ के गली-कूचों में गश्त लगाता, अपनी आवाज से लोगों को चौंकाता, सचेत करता, संध्या समय बाजार से गुजरा। सब्जीमंडी में उसने एक कुंजड़िन की दूकान पर रखा हुआ अपने ही कुम्हड़े जैसा एक दूसरा पका कुम्हड़ा देखा। वह रुक

कर सोचने लगा—मौला कितना बड़ा राजिक है ! उसने आज नवाब के हाथों से एक फल दिलाया था। मगर अपनी नासमझी और उस दाता की करामात को न समझ पाकर मैं फिक्र में पड़ गया था कि इस एक कुम्हड़े से किस-किस का पेट भरेगा। झोपड़े में बीबी और लड़की भी तो भूखी बैठी इन्तजार कर रही होगी ! लेकिन वाह रे मौला ! तेरा राज तू ही जानता है। तूने सबके पेट भरने का इन्तजाम कर दिया। नवाब के दिए हुए पके कुम्हड़े की तरह इस कुंजड़िन की दूकान पर एक दूसरा कुम्हड़ा भी मौजूद कर दिया और खरीद लेने के लिए अपने एक फरिश्ते से चार टके भी दिला दिए थे। मौला, किस मुँह व जबान से तेरा शुक्रया अदा करूँ ?

अब्दुल्लाशाह कुँजड़िन की दूकान पर पहुँच कर कम्हड़े का मोल-भाव करने लगा।

कुँजड़िन ने कुम्हड़ा हाथ में उठा कर कहा—"लाल पका फल है। घर भर के खाने के लिए काफी होगा। मैंने इसे पूरे दो टकों में खरीदा है। एक टका मेरी दूकान-दारी का जोड़ लो। इस तरह पूरे तीन टके, छै पैसे इसके दाम हैं। खरीदना चाहो तो छै पैसे निकाल कर मेरे हाथ में रखो और ले जाओ। इतना मीठा होगा कि गुड़-शक्कर मिलाने की भी जरूरत न पड़ेगी।"

अब्दुल्लाशाह ने बिना किसी हुज्जत-झिझक के अंटी से छै पैसे निकाल कर कुँजड़िन के हाथ में रख दिए और कुम्हड़ा लेकर सीधा अपने झोपड़े की राह चल पड़ा।

झोंपड़े में पहुँचते-पहुँचते संध्या का अंधकार धरती पर पैर फैला चुका था। अब्दुल्लाशाह की बारह-तेरह वर्ष की लड़की अनवरी झोपड़े से लगी हुई बड़ी कब्र पर दीपक जला रही थी। उसकी माँ झोपड़े के भीतर ही थी। अब्बा को देखते ही अनवरी दौड़कर उसके पास आ गई और लाल पका कुम्हड़ा उससे ले लिया और मुस्कराते हुए झोपड़े के भीतर भाग गई।

अनवरी ने अपने हाथ का कुम्हड़ा माँ को दिखा कर कहा—"अम्मी ! देखो। आज अब्बा कितना लाल पका कुम्हड़ा लाए हैं। इसकी खीर पकाना। बहुत मीठा होगा। गुड़ डालने की जरूरत नहीं पड़ेगी।"

अम्मी ने धीरे से कहा—"एक इस कुम्हड़े की खीर कौन-कौन खाएगा ?"

अब्दुल्लाशाह ने झोपड़े के भीतर कदम रखते हुए अनवरी की माँ से कहा—"घबड़ाओ नहीं ? ऐसा ही एक दूसरा कुम्हड़ा झोली में है। दोनों मिला कर सब के लिए पूरा पड़ जाएगा।" और उसने झोली कंधे पर से उतार कर अनवरी की माँ को थमा दी।

अनवरी की माँ ने झोली से कुम्हड़ा निकाला और चाकू ले कर उसे काटने-छीलने लगी। उसे काटने-छीलने के बाद उसने अनवरी से कहा—"ला अनवरी उस कुम्हड़े को भी काट-छील दूँ।"

अनवरी अपने हाथ के कुम्हड़े को दबा कर मुस्कराते हुए बोली—"नहीं, इसे मैं

काटूँ-छीलूँगी।"

माँ कुछ नहीं बोली।

अब्दुल्लाशाह एक फटी पुरानी चटाई पर आसन जमा चुके थे। अनवरी उसी के पास बैठ कर कुम्हड़े को काटने लगी। उसने चाकू चलाने से पहले अब्दुल्लाशाह से पूछा —"अब्बा ? आज ये एक ही तरह के दो पके कुम्हड़े कहाँ मिल गए थे ?"

अब्दुल्लाशाह ने इतमीनान से कहा—"मौला की देन है। वही तो दिया करता है।"

"मौला दिया करता है कि दिलाया करता है ?" अनवरी ने हँस कर कहा।

अब्दुल्लाशाह ने कहा—"वह झोली वाला फल जिसे तेरी माँ ने काट छील कर रखा है, लखनऊ के नवाब आसफुद्दौला ने दान में दिया था।"

अनवरी की माँ बोली—"इतने बड़े नवाब आसफुद्दौला ने एक कुम्हड़ा खैरात किया ? सुना है कि वह तो खुले हाथों हजारों रुपया खैरात करने के बाद दस्तरख्वान पर बैठा करते हैं।"

अब्दुल्लाशाह गम्भीर होकर बोला—"दाता तो बस एक खुदा है। चाहे वह लाखों रुपया दे, चाहे एक पका फल दे।"

अनवरी ने कुम्हड़े पर चाकू रखा किन्तु हाथ रोक कर बोली—"अब्बा और ये मेरा वाला कुम्हड़ा आपको किसने दिया था ?"

"इस कुम्हड़े को मैंने सब्जीमंडी बाजार में एक कुँजड़िन की दूकान से छै पैसे में खरीदा था।"

"ये दूसरा खरीद लेने की जरूरत क्यों महसूस हुई थी ?"

"इसलिए कि एक कुम्हड़े की खीर तो अकेली अनवरी ही खा जाएगी।" और अब्दुल्लाशाह जोर से हँस पड़ा।

अनवरी झेंप गई। उसने गर्दन झुका कर पहले समूचा कुम्हड़ा छीलना शुरू कर दिया। जब उसका सारा छिलका छिल कर साफ हो गया। तब अनवरी ने इतमीनान के साथ उसके दो टुकड़े किए। दो टुकड़े होते ही कुम्हड़े के अन्दर से एक चमकदार काफी बड़ा हीरा निकल कर चटाई पर गिर पड़ा। उसे देख कर अनवरी चौंक पड़ीं। हीरा की चमक-दमक, शकल-सूरत उसने कभी नहीं देखी थी। हाथ का चाकू एक तरफ डाल कर हीरा को उठाते हुए जोर से पुकार उठी—"ऐ, अब्बा ! इस कुम्हड़े के भीतर से ये काँच का चमकदार टुकड़ा क्यों निकल पड़ा है ?" और वह आँखें फाड़ कर उसे देखने लगी। चेहरा कौतूहल से भरा था।

अब्दुल्लाशाह ने अनवरी के हाथ से हीरा अपने हाथ में ले लिया। उलट-पलट कर बड़े गौर से देखने के बाद बोला—"ये काँच का टुकड़ा नहीं, कोई कीमती जवाहरात है।"

जवाहरात का नाम सुन कर अनवरी की माँ भी अपना काम छोड़ कर पास खिसक आई और आश्चर्य भरे स्वर से बोली—"ऐ, कुम्हड़े के अन्दर जवाहरात कहाँ से आ गया ?"

अनवरी बोली—"अब्बा ? क्या कुम्हड़े के फल के भीतर जवाहरात पैदा हुआ करते हैं।"

अब्दुल्लाशाह इतमीनान से बोला—"कुम्हड़े के अन्दर जवाहरात नहीं पैदा होते। ये भी उसी मौला का करिश्मा है जिसकी आवाज लगा कर मैं लोगों को जगाया करता हूँ।"

अनवरी मुस्कराते हुए बोली—"अब्बा ! ये जवाहरात मुझे दे दीजिए।"

"अनवरी, तू इस एक जवाहरात को क्या माँगती है ?" अब्दुल्लाशाह ने गम्भीर दृष्टि से उसकी तरफ देख कर कहा—"तू तो जवाहरातों की रानी है। तेरा भाग्य तो हीरे-जवाहरातों की तरह चमक रहा है। तू तो सिर्फ बड़ी कब्र वाले पीर की खिदमत किए जा। रोज चिराग रोशन किए जा।"

"हाँ अब्बा ?" अनवरी सँभल कर बोली—"एक दिन मैंने ख्वाब में देखा था। बड़ी कब्र वाले पीर साहब मानो मुझे बेगम कह कर पुकार रहे हैं।"

अनवरी की माँ हँस कर बोली—"इस वक्त बाप-बेटी दोनों दून की उड़ान ले रहे हैं।"

इसके बाद दोनों कुम्हड़ों की खीर पकाई गई। सब ने भर पेट खाई। खा-पीकर अनवरी सो गई। लेकिन अनवरी की माँ तथा अब्दुल्लाशाह देर तक जागते रहे। अनवरी की माँ उस हीरे को लेकर बड़े-बड़े ख्वाब देख रही थी। ऊँची-ऊँची उड़ानें ले रही थी। पर अब्दुल्लाशाह को दूसरे ही विचारों ने घेर रखा था। वह अनवरी की माँ के गुनताड़ों का केवल हूँ-हाँ में जवाब देकर अपने विचार-सागर की गहराइयों में झाँक रहा था। वह सोच रहा था—उस महान दाता ने फल के अन्दर हीरा मेरे हाथ में देकर मुझे जगा दिया है। अपनी कुदरत का करिश्मा दिखा कर बीबी-बच्ची के पेट का तो प्रबन्ध कर दिया। वैसे भी वही सब का पेट भरता था। मगर एक सांसारिक बन्धन के कारण मेरे सिर पर चिन्ता का एक बोझ रखा था और उसकी वजह से मैं अपना पूरा समय उस मौला की याद में नहीं लगा पा रहा था। उसने अब उस बोझ को भी उतार दिया। इसलिए अब लाजिमी तौर पर मुझे उसकी याद में मस्त होकर उसके द्वार तक पहुँचना चाहिए।

अनवरी की माँ अपने मनसूबों में तैरती हुई बीच में ही सो गई। उसके बाद अब्दुल्लाशाह की भी पलकें झुक गईं और वह भी सो गया।

सबेरा होते ही अब्दुल्लाशाह ने हीरा गाँठ में बाँधा और झोपड़े से निकल कर सीधे जौहरी बाजार जा पहुँचा। एक सच्चे पुश्तैनी ईमानदार जौहरी की दूकान में जा

कर अपनी गाँठ खोली और हीरा निकाल कर परखने को जौहरी के हाथ में रख दिया।

जौहरी ने देर तक उस हीरे को भली प्रकार जाँचा, परखा। फिर विस्मय भरी दृष्टि से अब्दुल्लाशाह की तरफ देखा और कहा—"शाह साहब! ये हीरा तो अच्छा पानीदार और काफी कीमती है। कहाँ से तुम्हारे हाथों में आ गया?'

अब्दुल्लाशाह ने झूठ बोलना गुनाह समझा। सोच, मौला की देन को किसी दूसरे की देन बताना, उसमें दुनियादारी की बातें जोड़ना बहुत गुनाह है। अतः अब्दुल्लाशाह ने उस दिन सबेरे अपने झोपड़े से निकल कर आवाज लगाने तथा रात में झोपड़े में लौट कर फल के अन्दर से हीरा पाने की सच्ची कहानी सुना दी। किसी घटना को न छिपाया न घटाया बढ़ाया।

सुन कर जौहरी आश्चर्य भरी दृष्टि से अब्दुल्लाशाह के चेहरे की तरफ देखने लगा। अब्दुल्लाशाह फिर बोला—"जौहरी जी! मेरा बयान हकीकत है। उसमें किसी तरह के शक-शुभा या हैरत-ताज्जुब की गुञ्जायश नहीं है। मौला बहुत बड़ा दाता है। ये हीरा उसी की मेहरबानी है।"

"तब क्या तुम इस हीरे को बेचना चाहते हो या केवल जाँचने-परखने के लिए मेरे पास लाए हो?"

अब्दुल्लाशाह गम्भीर होकर बोला—"हीरा रख कर मैं क्या करूँगा? खुदा ने जिस मतलब से दिया है वही करूँगा। बीवी और बच्ची अभी तक मेरे दामन से बँधी हुई थीं। मौला ने वह गाँठ खोल दी! उन दोनों की रोजी का इन्तजाम कर दिया। इसलिए इस हीरा को बेच कर रकम उन दोनों के हवाले कर दूँगा। और मैं पूरी आजादी के साथ खुदा की याद करूँगा।"

जौहरी पहले तो बड़ी गौर से उसकी ओर देखता रहा। फिर बोला—"खैर, मेरी जाँच में ये हीरा बीस हजार रुपए का है।" जौहरी ने एक बार पुनः हीरे को हाथ में लेकर देखा-परखा और बोला—"अगर तुम्हें बीस हजार की रकम में ये हीरा बेचना मंजूर हो तो मैं अभी रुपया गिनवा दूँ। ढो ले जाओ।"

"मुझे आप की जाँच-परख और कीमत पर पूरा यकीन-भरोसा है। जैसा मैं खुद सच्चा हूँ उसी तरह खुदा के सभी बन्दों को सच्चा समझता हूँ।" अब्दुल्लाशाह ने इत-मीनान के साथ कहा—"आप मेरे साथ एक मेहरबानी और करें?"

"क्या?" जौहरी ने नजर उठा कर कहा।

"हीरा की कीमत, बीस हजार की रकम आप अपने यहाँ ही जमा रखें। मैं रुपया ढो कर झोपड़े में रखने के लिए नहीं ले जाऊँगा। मेरी बीबी जब आप से अपने खर्च, खाने-पीने के लिए जितना रुपया चाहे उसे दे दिया करेंगे?"

"वाकई तुम बहुत सच्चे और खुदा को पहचानने वाले फकीर हो?" जौहरी ने गम्भीरतापूर्वक कहा—"मैं तुम्हारी बीबी के नाम से अभी अलग खाता खोल कर रकम

जमा किए लेता हूँ और मैं भी तुम्हारी ही तरह सचाई के साथ वादा करता हूँ कि रुपयों के लेन-देन में कभी एक दमड़ी की भूल-चूक न होगी। बल्कि रुपया सैकड़ा सूद-ब्याज भी मूल रकम में जुड़ता जाएगा।"

"खुदा के बन्दे को ऐसी ही सचाई के साथ दुनिया में रहना चाहिए।" अब्दुल्ला-शाह ने धीरे से कहा।

जौहरी बोला—"लेकिन शाह साहब ? मैं आपकी बीवी बच्ची को तो अभी तक जानता-पहचानता नहीं।"

शाम को उन दोनों को मैं अपने साथ लाकर जान-पहचान करा दूँगा आप उन्हें पहचान लेंगे और वह आपको।"

इसके बाद अब्दुल्लाशाह अपने झोपड़े की तरफ चल पड़ा।

अब्दुल्लाशाह की समस्त गाथा जौहरी की दूकान से हवा की लहरों पर सवार होकर उसी दिन लखनऊ के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँच गई। नवाब आसफुद्दौला ने भी अपने दरबार में उस कहानी को बड़ी दिलचस्पी के साथ सुना। जिस भेद-भाव के साथ और जिसे उन्होंने वह हीरा दान किया था उसका स्मरण करके उनका हृदय कह उठा—"सच है, दाता तो बस एक मौला है। वह जिसको देना चाहता है वही पाता है। बन्दे के इख्तियार से बाहर की बात है।"

२

अवध राज्य की स्थापना नवाब वजीर सआदत खाँ बुरहानुल-मुल्क उर्फ मोहम्मद अमीन ने की थी। सआदत खाँ बुरहानुल-मुल्क दिल्ली के बादशाह मोहम्मदशाह के एक वजीर थे और अवध का सूबा उनकी जागीर में था, दिल्ली की बादशाहत कमजोर हो जाने के कारण उधर बंगाल में तो पहले ही स्वतंत्र रूप से नवाबी शासन कायम हो चुका था और अब इधर अवध भी एक स्वतंत्र राज्य बन गया था। राजधानी थी फैजाबाद।

बंगाल तथा अवध राज्य की शक्तियों के अलावा एक तीसरी शक्ति और भी बड़े जोर-शोर के साथ उभर रही थी। अँग्रेजों की ईस्ट इन्डिया कम्पनी जो सौदागर बन कर भारत में आई थी। यहाँ के बादशाहों, नवाबों के दरबार में उसके फिरंगी अफसर हाथ बाँधे खड़े, भीख माँगते नजर आया करते थे। आज वही कम्पनी तथा उसके कार्यकर्त्ता इतने बढ़-चढ़ गए थे, ऐसे शक्तिशाली हो गए थे कि वह खुद देश के बादशाह-नवाबों को

गद्दी पर बैठाने-उतारने लगे थे। लेकिन कम्पनी की यह सत्ता, यह प्रभाव अभी तक विशेष रूप से बंगाल तक ही सीमित था। वहीं उसके रंगमंच के पर्दे उठा गिरा करते थे।

लेकिन बक्सर की लड़ाई ने अवध राज्य की भी कमर तोड़ दी थी। कारण था कि अवध के तीसरे नवाब शुजाउद्दौला ने भी इस युद्ध में भाग लिया था। अन्त में शुजाउद्दौला को मैदान छोड़ कर भागना पड़ा था, बल्कि अपना अवध राज्य बचाना भी कठिन हो गया था। विवश होकर शुजाउद्दौला को कम्पनी के साथ संधि का प्रस्ताव रखना पड़ा था। इस प्रकार किसी तरह अवध राज्य तो उस समय बच गया, लेकिन वह संधि ऐसी गले पड़ी कि अवध राज्य के लिए वह घुन बन गई थी। संधि की शर्तों के अनुसार शुजाउद्दौला को पचास लाख रुपया हरजाना कम्पनी को देना स्वीकार करना पड़ गया था। इस हरजाने की रकम की अदायगी की शर्त थी कि बीस लाख रुपया तुरन्त उसी समय अदा कर दिया जाए। शेष तीस लाख रुपया बाद में दो किस्तों से चुकाया जाए। लेकिन बाद में चुकाई जाने वाली रकम की कोई जमानत देनी भी जरूरी थी। अतः नवाब शुजाउद्दौला को चुनारगढ़ का किला जमानत के रूप में कम्पनी को देना पड़ा था।

अब क्या था। अब तो रास्ता खुल गया था। बुढ़िया क्या मरी थी कि यम घर का द्वार ही देख गए थे। कम्पनी हिंसक पशु बन गई। मुँह में ऐसा खून लग गया जो अवध की नवाबी को समूचा निगल जाने के बाद भी न धुल सका। हरजाने की जो तीस लाख रुपये की रकम अदा करने को बाकी रह गई थी, शुजाउद्दौला ने उसे भी चुका दिया, पर कम्पनी ने जमानत वापस करने के लिए साँस-डकार भी न ली। चुनारगढ़ का किला अपने ही अधिकार में लिए रही।

इसके अलावा कम्पनी के महान अधिकारी ने शुजाउद्दौला पर एक नमदा और भी कस दिया। अवध के दरबार में एक अँग्रेज रेजीडेन्ट रखने के लिए नवाब को मजबूर किया। जब शुजाउद्दौला ने जबर्दस्त के उस ठेंगे को भी स्वीकार कर लिया तो एक गोरी पल्पटन भी लाकर राजधानी में रख दी गई और उसके खर्चे का बोझ भी नवाब की गर्दन पर ही लाद दिया गया। इस प्रकार एक के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी संधि करके तथा उनमें नयी-नयी धाराएँ बढ़ा कर कम्पनी अवध के नवाब को अपाहिज बनाने और शिकंजे में कसने के लिए तुल गई थी। अवध दरबार में अँग्रेजी हिन्दुस्तानी जितनी भी पल्टनें रखी गई थीं। उनका खर्च दो लाख दस हजार रुपया माहवार बिना किसी हुज्जत तथा हीला-बहाना के शुजाउद्दौला को चुकाना पड़ रहा था।

सन् १७७५ ई० में नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु हो जाने पर उनके इकलौते बेटे नवाब आसफुद्दौला यहिया अली खाँ उर्फ मिरजा अमानी ने अवध राज्य की हुकूमत सँभाली थी। यों तो शुजाउद्दौला के पच्चीस नवाबजादे थे। पर आसफुद्दौला इकलौते बेटे

इस वजह से कहलाते थे कि एक तो वह सूबे से बड़े थे, दूसरे शुजाउद्दौला की निकाही बेगम नवाब आलिया सुलतान उर्फ बहू-बेगम की कोख से पैदा हुए थे। और इसीलिए वह अवध राज्य की गद्दी के हकदार थे। शुजाउद्दौला के शेष चौबीस लड़के मुतायी बेगमों से थे जिनकी संख्या चार-पाँच सौ के लगभग थी। ये सभी बेगमात अलग महल में रहती थीं जो खुर्द महल के नाम के प्रसिद्ध था।

आसफुद्दौला बहुत ही भले तथा शान्ति-प्रिय स्वभाव के थे। उनकी सूझ-समझ भी गहरी थी तथा उनमें योग्य शासक की क्षमता भी थी। दानी दाता तो वह अपने समय के एक ही थे। खुले हाथों धन लुटाया करते थे। लेकिन सिर मुड़ाते ही ओले पड़ने लगे। अवध राज्य की हुकूमत की बागडोर उनके गले की फाँसी बन गई थी। लेकिन उन्हें शान्ति प्राप्त न थी। ईस्ट इन्डिया कम्पनी की प्रबल सत्ता ने उन्हें दबाना झुकझोरना और पहले दिन से ही उनके शासन में अड़ंगे डालना शुरू कर दिया था। अपने सीधे स्वभाव तथा छल-कपट से दूर रहने वाले आसफुद्दौला पर कम्पनी का ऐसा घनघोर आतंक छा गया था कि अँग्रेज सरकार अपने जिस ध्येय को नवाब शुजाउद्दौला से पूरा नहीं कर सकी थी, जो चीजें शुजाउद्दौला के जमाने में उसे प्राप्त नहीं हो सकी थीं, वे सब अब वह नवाब आसफुद्दौला से छीन-झपट रही थी। और आसफुद्दौला कम्पनी के बाज-झपट्टों से सुख की साँस नहीं ले पा रहे थे।

उस समय ईस्ट इन्डिया कम्पनी के सर्वोच्च अधिकारी वारेन हेस्टिंग्स थे। उन्हीं के हाथों में कम्पनी की सत्ता थी। और सत्ता को और अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए, देश के कोने-कोने में अँग्रेजी-राज्य स्थापित करने के लिए कम्पनी को धन की बहुत आवश्यकता थी। क्योंकि अब कम्पनी ने अपना रुख बदल दिया था। सौदागरी का आना-बाना एक ओर फेंक कर ढाल-तलवारों से सुसज्जित हो गई थी और युद्ध के मैदानों में उतर कर तलवार चलाना उसने अपना ध्येय बना लिया था।

आसफुद्दौला को गद्दी पर बैठे अभी कुछ ही महीने गुजरे थे कि कम्पनी के महा-प्रभू वारेन हेस्टिंग्स का आतंकपूर्ण खरीता कलकत्ता से आसफुद्दौला के पास आ पहुँचा। सूचित किया गया था कि अवध के भूतपूर्व नवाब शुजाउद्दौला के साथ कम्पनी सरकार ने जो संधि की थी वह उनकी मृत्यु के साथ समाप्त हो गई। इसलिए अब नयी संधि स्थापित करना जरूरी है।

भला आसफुद्दौला जैसा सीधा-सच्चा, झगड़े-झाँसों से दूर रहने वाला व्यक्ति कम्पनी के आदेश का विरोध कैसे कर सकता था। ऊँट चाहे जिस करवट बैठे, आई बला को टालना जरूरी था। अतः नवाब ने सिर झुका कर गवर्नर जनरल का हुक्म मान लिया।

नयी संधि हुई। उसकी एक धारा के अनुसार अवध के खजाने से पचास लाख रुपया निकाल कर कम्पनी के खजाने में दाखिल करना जरूरी था। नकद रुपया तैयार न

था। इसलिए उसके बदले में आसफुद्दौला ने बनारस का इलाका कम्पनी को दे दिया। उस समय उत्तर भारत में बनारस संस्कृति तथा व्यवसाय का केन्द्र था। यद्यपि बनारस एक अलग हिन्दू राज्य था। महाराजा बलवन्तसिंह के समय से उस पर अवध के नवाब का केवल नाममात्र का शासन रह गया था। पर इससे क्या? अवध राज्य में तो शामिल था। अवध के नवाब को उस समय बनारस के इलाके से पचहत्तर लाख रुपया साल की आमदनी भी थी।

इस प्रकार कम्पनी को पचास लाख के बदले में पचहत्तर लाख का इलाका मिल गया था, फिर भी उसका पेट न भरा। कुछ और पेट में डालने की जरूरत महसूस हो गई। अतः वारेन हेस्टिंग ने पेट पर हाथ फेरते हुए सामग्री खोज ली। अवध दरबार में मौजूद कम्पनी की सेना का खर्च पचास हजार रुपया माहवार का बोझ नवाब आसफुद्दौला की गर्दन पर और रख दिया। अवध में कम्पनी की जो फौजें रह रही थीं उनका पिछला खर्चा अभी तक चुकाना बाकी था। इसलिए आसफुद्दौला से फौजों के पिछले-अगले दोनों प्रकार के खर्चों की माँग बड़े जोर-शोर और ताकीदों के साथ शुरू हो गई। उस समय अवध के खजाने में नकद रुपयों का अभाव था। आसफुद्दौला बहुत बड़ी परेशानी में पड़ गए। उधर वारेन हेस्टिंग्स को रुपया चाहिए था। वह इस विषय में कोई हीला-बहाना नहीं सुनना चाहते थे।

आसफुद्दौला को मालूम था कि उनके पिता नवाब शुजाउद्दौला ने मरने से कुछ दिन पहले नवाब बहू-बेगम के लिए एक बहुत बड़ी जागीर अलग कर दी थी और उसकी पाँच वर्ष पहले की जमा तथा दो करोड़ रुपया और भी बहू-बेगम के निजी खजाने में दाखिल कर दिया था। अतः आसफुद्दौला चाहते थे कि माँ से रुपया लेकर अपने संकट को दूर करें। लेकिन बहू-बेगम से रुपयों के मामले में बहुत पहले से उनकी पटरी नहीं बैठती थी। बहू-बेगम कई बार उन्हें काफी रकमें दे चुकी थीं और आसफुद्दौला उन्हें खैरात में लुटा चुके थे। इसलिए उन्होंने अब मुट्ठी बन्द कर ली थी। बल्कि एक प्रकार से मन मुटाव सा पैदा हो गया था। अन्त में अपने सिर की बलाय दूर करने के लिए आसफुद्दौला ने वारेन हेस्टिंग्स को अपनी माँ के खजाने की सूचना दे दी।

देर क्या थी? भूखे भेड़िया की तरह महा सेनापति वारेन हेस्टिंग्ग कलकत्ता से फैजाबाद आ पहुँचे। पहले नवाब से रुपयों की माँग की। उन्होंने मजबूरी जाहिर करके बहूबेगम की ओर इशारा कर दिया। वारेन हस्टिंग्स को तो रुपया चाहिए था। चाहे माँ दे, चाहे बेटा। मगर माँ सीधी तरह देने वाली न थी। इसलिए गोरी पल्टन से उनका महल घिरवा लिया गया और बहूबेगम को जितना लूटा जा सका लूटा गया। इस विषय में आसफुद्दौला ने सांस भी न ली। बहू-बेगम ने समझ लिया कि आसफुद्दौला ने ही उनको लुटवाया है और उनके दिल पर आसफुद्दौला की ओर से मैल की मोटी तह जम गई।

वारेन हेस्टिंग्स तो लूट-खसोट के लिए पागल हो रहा था। अवध राज्य को तो

उसने कुबेर का खजाना समझ लिया था। आए दिन आसफुद्दौला से रुपयों की माँग कर रहा था। आसफुद्दौला परेशान थे। किसी करवट चैन नहीं पा रहे थे। अन्त में चुनार के किले में वारेन हेस्टिंग्स तथा आसफुद्दौला की भेंट हुई। बैठक जमी और संधि की धाराओं में पुनः उलट-फेर हुआ। उस समय तक नवाब अवध को चौरासी लाख रुपया कम्पनी को अँग्रेजी-हिन्दुस्तानी फौजों का खर्च तथा नौ लाख पचास हजार रुपया वार्षिक अंग्रेज रेजीडेन्ट और उसके दफ्तर आदि का खर्च चुकाना पड़ता था। चुनारगढ़ की इस संधि में पलटनों का खर्चा कुछ कम किए जाने का प्रस्ताव रखा गया। आसफुद्दौला ने फौज की संख्या कुछ कम करने का अनुरोध किया। जाहिरा तौर पर आसफुद्दौला की प्रार्थना स्वीकार कर ली गई। लेकिन वह एक मजाक ही रहा। केवल कागजों का पेटा भर गया। न कोई पल्टन अवध से हटाई गई और न नवाब आसफुद्दौला के सिर का बोझ ही हलका हुआ।

इसके बाद आसफुद्दौला के साथ वारेन हेस्टिंग्स का एक मजाक और भी छिड़ा। अवध के रजीडेन्ट को महा सेनापति ने अधिकार प्रदान किया कि वह जब-तब नवाब अवध के खजाने का निरीक्षण किया करे उसके साथ आसफुद्दौला को भी आदेश पत्र द्वारा सूचित किया गया कि वह अपने राजकोष के निरीक्षण में किसी प्रकार की बाधा न उत्पन्न करें। और उनसे कई लाख रुपया की माँग की।

इस प्रकार नवाब आसफुद्दौला अपनी मसनद नशीनी के दिन से इस समय तक दो-तीन करोड़ रुपया कम्पनी को दे चुके थे, पर वारेन हेस्टिंग्स की भूख शान्त नहीं हो रही थी। वह जितना देते थे वह उतना ही और माँगता जा रहा था। आसफुद्दौला परेशान थे और अपनी विवशता को पत्रों द्वारा कम्पनी सरकार के महा प्रतिनिधि के सामने स्पष्ट कर रहे थे। एक यही उपाय उनके पास था।

वारेन हेस्टिंग्स ने समूचे देश में ऐसी आग लगा रखी कि भारत में तो खलबली मची ही थी, विलायत में भी कम्पनी के डायरेक्टरों ने उस आग की आँच को महसूस किया। और उनके स्थान पर किसी दूसरे शान्तिप्रिय अधिकारी को भारत भेजने का निश्चय कर लिया। फलस्वरूप लार्ड कार्नवालिस गवर्नर जनरल होकर कलकत्ता आ गए। उन्होंने अवध के नवाब के साथ दयापूर्ण व्यवहार किया। नवाब को जो कम्पनी की सेनाओं पर चौरासी लाख रुपया वार्षिक खर्च करना पड़ता था, उसे घटा कर पचास लाख कर दिया। इसके साथ ही शासन में छेड़-छाड़ तथा रुपयों की माँग भी बंद कर दी। आसफुद्दौला ने संतोष की साँस ली।

फिर भी आसफुद्दौला का दिल टूट सा गया था। फैजाबाद में उनका जी नहीं लग रहा था। उस स्थान से तबीयत उचाट सी हो गई थी। यद्यपि उनके शासन में वहाँ की प्रजा सुखी तथा समृद्ध हो रही थी। अँग्रेज-सत्ता भी शान्ति धारण किए थी। लेकिन बहू-बेगम की नाराजगी, उनका मनमुटाव तथा बेगम के आदमियों की खुलेआम नवाब

के विरोध में टीका-टिप्पणियाँ आसफुद्दौला की शान्ति को हर समय भंग किए रहती थीं। माँ से वह किसी तरह से लड़ना-झगड़ना नहीं चाहते थे। इसलिए उन्होंने फैजाबाद से हट जाना चाहा और अवध राज्य की राजधानी फैजाबाद के बदले लखनऊ में बनाने का निश्चय कर लिया।

३

अब अवध राज्य की राजधानी लखनऊ थी। लखनऊ, एक देहात, जो अपने लड़कपन से खेल रहा था, अब तक एक खुशनुमा, खूबसूरत, निफासत और नजाकत से भरा हुआ शहर नजर आ रहा था। नवाब आसफुद्दौला ने उसे अपने हाथों से सजा कर, सोलहो सिंगार से सम्पन्न करके नयी नवेली बना दिया था। मुगलों की राजधानियाँ आगरा-दिल्ली भी उसके आगे झख मारती थी। चेहरे पर से घूँघट हटाने का साहस नहीं कर पाती थीं। और लखनऊ दुलहिन बनी बड़े ठस्से के साथ मुस्करा रही थी। उसका रूप-लावण्य आज संसार में प्रसिद्ध हो रहा था।

लखनऊ की भूमि पर पदार्पण करते ही आसफुद्दौला ने उसके विस्तार के लिए पास-पड़ोस के बावन गाँवों को उसमें शामिल करके नगर का रूप दिया था। इसके बाद उन्होंने राज्यकीय भवन निर्माण कराना आरम्भ किया। सब से पहले दौलतखाना आसफी की इमारत तामीर हुई। उसके बाद दूसरी इमारतों के निर्माण का ताँता बँध गया। रेजीडेन्सी की इमारत अंग्रेज रेजीडेन्ट करनल जान बेरी की इच्छा अनुसार उन्हीं की देख-भाल में तामीर हुई। ऐशबाग तथा चारबाग में बहुत ही खुशनुमा दर्शनीय कोठियाँ खड़ी हुईं। चूँकि नवाब आसफुद्दौला को हवाखोरी का बहुत शौक था, अक्सर शहर से निकल कर पास-पड़ोस के देहातों की तरफ निकल जाया करते थे। अतः जब-तब देहात में ठहरने के लिए लखनऊ से कुछ दूरी पर बीबीपुर तथा चिनहट के देहातों में भी नफीस आराम देने वाली कोठियाँ तामीर करा डालीं।

संयोगवश लखनऊ में अकाल ने अपना भयंकर रूप दिखलाना आरम्भ कर दिया। अमीर-गरीब अकाल का शिकार बन कर भूखों मरने लगे। हाहाकार मच गया। अपनी प्रिय-प्रजा को इस महान संकट से बचाने के लिए आसफुद्दौला उपाय सोचने लगे और अन्त में उन्होंने अपना संसार प्रसिद्ध इमामबाड़ा का निर्माण कराना आरम्भ कर दिया।

इमामबाड़ा की इमारत बन रही थी। बड़े ज़ोर-शोर के साथ काम चल रहा था। हजारहा पुरुष-स्त्री तथा लड़के-लड़कियाँ काम में जुटे थे। सब को भूखों मरने से बचने का सरल उपाय मिल गया था। मजदूरी इतनी मिलती थी जो पेट की आग बुझाने के लिए बहुत काफी थी। दूसरे-तीसरे नवाब आसफुद्दौला भी इमारत का काम देखने के लिए घूमते-घामते वहाँ पहुँच जाया करते थे। उसी सिलसिले में नवाब की उदारता का लोगों को एक विशेष परिचय प्राप्त हुआ।

लखनऊ के रुस्तमनगर मोहल्ले में एक शरीफ खानदानी पर्दानशीन महिला रहा करती थीं। घर में अकेली ही थीं, आगे-पीछे कोई नहीं था। पेट-पालने का भी कोई विशेष जरिया-वसीला न था। घर की चार-दीवारी के अन्दर बैठी जो पुरानी जायदाद थी उसी को बेच-बेच कर खाया करती थीं। अपनी खानदानी इज्जत-आबरू के कारण कभी किसी जरूरत पर भी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाती थीं। लेकिन उनके मकान की पुरानी जायदाद कोई कारू का खजाना तो थी नहीं कि कभी खतम न होती। वे भूखों मरने लग गईं। इधर बदनसीबी ने भी जोर बाँधा; क्योंकि अभाग्य तो हमेशा ऐसे ही अवसर के ताक में रहा करता है। लखनऊ में अकाल अपना नंगा नाच दिखला रहा था। भुखमरी फैल रही थी। अतः उन शरीफ पर्दानशीन महिला की हालत और भी खस्ता हो रही थी।

लखनऊ में धूम मच रही थी। हर गली-कूचे में छोटे-बड़े, अमीर-गरीब सब की जबान पर एक ही चर्चा थी—नवाब आसफुद्दौला ने मौत का जबड़ा बन्द कर दिया। अपनी प्रिय प्रजा को भूखों मरने से बचा लिया। इमामबाड़ा की वह विशाल इमारत बनवानी शुरू कर दी है जिसमें काम करके हजारों स्त्री-पुरुष लड़के-लड़कियाँ भर पेट खा रही हैं। मजदूरी भी इतनी काफी मिलती जो खाने को काफी होती।

सहसा वे चर्चाएँ उन पर्दानशीन महिला के कानों में भी गूंज गईं। पेट की आग बड़ी भयानक हुआ करती है। अपनी प्रबल ज्वालाओं से बड़े-बड़े लोगों की मान, मर्यादा तथा प्रतिष्ठा को भस्म करके राख का ढेर लगा देती है। मसल सच्ची नजर आने लग जाती है—'मरता क्या न करता।' पेट की आग बुझाने के लिए लोग बुरा-भला न सोच कर सब कुछ करने के लिए तैय्यार हो जाया करते हैं। इसलिए उस महिला ने भी इमामबाड़े के काम पर पहुँच कर मजदूरी करने का निश्चय कर लिया। फिर भी खानदानी इज्जत-आबरू अड़ंगे डाल रही थी। खुलेआम दिन-दहाड़े घर की देहरी से बाहर कदम रखने के लिए साहस नहीं जुटा पा रही थी। सैकड़ों प्रकार के विचारों तथा दृष्टातों को सामने रख कर घर के भीतर ही ढेर हो जाने की सलाह दे रही थी। इधर भूख की आग धक्के देकर बाहर को धकेल रही थी। अन्त में भूख ही जीत गई। एक संध्या के कुछ पहले महिला ने काले बुर्के से ऊपर से नीचे तक शरीर को छिपाया और घर से निकल पड़ी।

जब वह इमामबाड़े के काम पर पहुँचीं, सूर्य डूब रहा था। काम बन्द होने में एक दो सायद की देर थी। फिर भी उन्होंने चूना-गारा की तसली उठा कर काम पर पहुँचाई उसके बाद ही काम बन्द हो गया।

एक मजदूरिन ने सहानुमति के रूप में उनसे कहा—"बीबी जी, अब तो काम बन्द हो गया है! आप कल सबेरे काम शुरू होने के ठीक समय पर आ जाना। तभी पूरी मजदूरी के पैसे मिल सकेंगे। सबेरे से शाम तक ईंट-पत्थर, चूना-गारा ढोने के बाद ही पेट भर खाने के लिए मजदूरी मिला करती है।"

सुन कर महिला के दिल को एक धक्का सा लगा। उस मजदूरिन से कुछ न कह कर एक ठण्डी साँस खींच कर तसली को ठिकाने पर रखने चली गईं।

नवाब आसफुद्दौला काम मुलाहजा फरमाने के लिए आए हुए थे और वहीं पास में खड़े किफायतुल्ला से बातें कर रहे थे। उस मजदूरिन ने सहानुभूति के रूप में महिला से जो कुछ कहा था, उसे नवाब ने सुना था और उन महिला का निराश होकर लौटना भी देखा था। समझ गए कि ये कोई खानदानी पर्दानशीन अकाल की सताई हैं। पेट की आग बुझाने के लिए घर की चारदीवारी से बाहर निकल आई हैं। अपनी बात छोड़ कर नवाब ने किफायतुल्ला से उन महिला की तरफ इशारा करके कहा—"ये लखनऊ के किसी भले घर की पर्दानशीन मालूम होती हैं। शायद भूख-प्यास से तंग आकर इन्हें मजदूरी करने के लिए आना पड़ा था। मगर बदकिस्मती से काम बन्द हो गया। मजदूरी करने को नहीं मिली। खैर, रोक कर इन्हें पूरे दिन की मजदूरी के पैसे दे दिए जाएँ। और आज से रोशनी का पूरा इन्तजाम करके रात में भी दिन की तरह इमारत का काम चला करे। इसके साथ ये भी ख्याल रखा जाए कि अगर कोई पर्दानशीन औरत किसी वक्त भी काम पर आकर गारे की एक तसली भी उठा कर काम पर पहुँचा दे तो बिना किसी सोच-विचार, हुज्जत-बहस के उसे पूरे दिन की मजदूरी दे दी जाया करे। हमने इमामबाड़े की इस इमारत का काम अपनी प्रजा की परवरिश के लिए ही जारी किया है।" फिर एक क्षण चुप रहने के बाद कहा—"इस सब के साथ इसका भी ख्याल रखा जाए कि जो गर्भवती स्त्री काम करने आए, उसे दूनी मजदूरी चुकाई जाया करे यानी उसके पेट के बच्चे की भी मजदूरी चुकाई जाया करे।"

दूसरे दिन से आसफुद्दौला के उदारतापूर्ण आदेश का पालन होने लगा।

आसफुद्दौला का इमामबाड़ा बन कर खड़ा हो गया। तीस लाख रुपया उसकी तामीर में खर्च हुआ था। किन्तु वह संसार में नवाब आसफुद्दौला की एक अपूर्व यादगार कही जा रही थी। १६८ फुट लम्बा, ५३ फुट चौड़ा और ५० फुट ऊँचा गुम्बददार कमरा हैरत में डालने वाला था। कितनी बड़ी विशेषता थी कि इतने विशाल लम्बे-चौड़े तथा ऊँचे कमरे में, कहीं एक भी खम्भा नहीं खड़ा किया गया था। इसके अलावा इमाम-बाड़े की समस्त दीवारों को लेकर फर्श की तह के नीचे तक एक भूल-भुलइया तैय्यार की

गई थी, जिसमें घुस कर निकल आना बड़ा मुश्किल काम था। जानकार ही उसकी सैर करा सकते थे। इमामबाड़े की इस विचित्र इमारत का निर्माण किफायतुल्ला के दिमाग की जादूगरी थी। उसी ने उसका नक्शा तैय्यार किया था। और अपनी निगरानी में इमारत खड़ी कराई थी। इमामबाड़े के बाहर रूमी दरवाजा भी किफायतुल्ला की जादूगरी का एक दूसरा नमूना था।

आसफुद्दौला नवाब शुजाउद्दौला के बड़े और लाड़ले बेटे थे। अतः जब वह जवानी के द्वार पर खड़े हुए थे यानी इक्कीस वर्ष की उम्र को पहुँचे थे, शुजाउद्दौला ने उनका विवाह दिल्ली के वजीर खानदान की एक वजीरजाद शमशुन्निसा बेगम के साथ बड़ी धूमधाम से कर दिया था। इस विवाह में चौबीस लाख रुपया खर्च हुआ। शादी में शरीक होने के लिए मुगल शाहंशाह शाहआलम भी दिल्ली से फैजाबाद तशरीफ लाए थे।

लेकिन आसफुद्दौला की यह शादी उनकी जिन्दगी के लिए खुशगवार न साबित हुई। जैसे ही दुलहिन ब्याह कर घर आई। मियाँ बीवी में ठन गई और कुछ ऐसी ठनी, मनमुटाव ने ऐसा भयंकर रूप धारण किया कि जो दोनों के एक जन्म जीवन के लिए हो गया था। लखनऊ आकर नवाब शमशुन्निसा बेगम उर्फ नवाब खासमहल आसफुद्दौला के विशेष महल दौलतखाना आसफी से अलग किला मच्छी भवन में उतरी थी और वहीं रहना पसंद किया था। उनके अलग रहने से आसफुद्दौला भी खुश थे। उन्होंने सहर्ष बेगम के वहाँ रहने का प्रबंध कर दिया था। ऐश-आराम, नौकर नौकरानियाँ, ख्वाजासरा, अहलकार-मुंशी आदि किसी की कमी न थी। साठ लाख रुपया सालाना की जागीर प्रतापगंज देकर बावर्चीखाने के लिए साठ रुपया रोजाना भी नियुक्त कर दिया था। राय रतनचन्द को उनकी ड्योढ़ी का दारोगा बना कर मुंशी आदि भी दे रखे थे और समस्त नौकरों का खर्च भी खुद ही उठाते थे। बेगम को उन पर अपने खजाने से एक पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ता था।

लेकिन खिचाव तथा तनातनी बदस्तूर बनी थी। उसमें किसी ओर से ढील नहीं आने पाती थी। न नवाब आसफुद्दौला बेगम के महल मच्छी भवन में कभी कदम रखते थे न शमशुन्निसा बेगम कभी दौलतखाना आसफी की ओर रुख करती थीं।

मियाँ-बीवी के इस मनमुटाव को लेकर प्रश्न उठ सकता है कि क्या अवध के यशस्वी नवाब आसफुद्दौला ने बिना बीवी के ही अपनी जवानी तथा उमंगों भरी जिन्दगी को गुजार देने का निश्चय कर लिया था? क्या कभी किसी रूपवती को अपनी बगल में बैठा कर हँसने गुदगुदाने की उनकी इच्छा नहीं हुआ करती थी? उनका हृदय ऐसा नीरस क्यों हो गया था? इन सभी जिज्ञासाओं का जवाब स्पष्ट था एक खानदानी नवाबजादा, फिर अवध राज्य का शासक, जिसके हाथों में हुकूमत थी। अनाप-शनाप खर्च करने के लिए

खजाना था और जिसकी जवानी, जिसका हृदय प्रेम-स्नेह से अठखेलियाँ कर रहा था, ऐसा व्यक्ति अपनी अनमोल जिन्दगी को रूखे-सूखे तरीके से कैसे गुजार सकता था ?

फिर मुसलमान शासकों की परम्परा चली आ रही थी कि उनकी हरमसरा रूपवतियों, नवयौवनाओं से ठसा-ठस भरी होनी चाहिए। इसके अलावा धर्म-इसलाम भी बहुत उदार था। इस विषय में उसने भी काफी छूट दे रखी थी। शरा कहता था कि नगाड़ा पीट कर चार सुन्दरियों के साथ चार निकाह किये जा सकते हैं और मुता की रसम द्वारा हरम भरने की तो कोई मनाही नहीं। हरम के अन्दर हजारों लाखों मुतायी बेगमें बैठाई जा सकती हैं। फिर आँखों के सामने उदाहरण भी मौजूद था—नवाब शुजाउद्दौला के जनानखाने में लगभग पाँच सौ रूप की धनी नवयौवनाएँ मौजूद थीं और उनमें से ढेरों आज भी खुर्दमहल के नाम से सुखी जीवन व्यतीत कर रही थीं।

अतएव आसफुद्दौला ने भी उसी प्राचीन प्रथा को अपना लिया था। अपने हरम को चार पाँच सौ सुन्दरियों से भर रखा था। किन्तु हरम की इस भीड़ में कोई खानदानी शरीफजादी न थी। सब ऐसी-वैसी ही थीं। अधिक संख्या में कसबियाँ, रंडियाँ और डोमनियाँ ही थीं। फिर भी वे सभी नवाबी जनान खाने में सात पर्दों के अन्दर बैठी हुई थीं और बड़े-बड़े खिताबों अलकाबों से पुकारी जाती थीं। उन सबके आँचल की गाँठ नवाब आसफुद्दौला के दामन से बँधी हुई थी। इसलिए किसी को किसी प्रकार के सुख-साधन, ऐश आराम तथा धन दौलत की कमी न थी। जवानी से अठखेलियाँ करतीं, यौवन उछालतीं, मौज की जिन्दगी बसर कर रही थीं और उन्हीं परीपैकरों के सम्पर्क से आसफुद्दौला अपनी कीमती जिन्दगी को आगे धकेलते हुए दिल को गुदगुदाया करते थे।

यह सब कुछ था। फिर भी आसफुद्दौला एक जबर्दस्त मानसिक पीड़ा से पीड़ित थे। उनकी वास्तविक सन्तान कहलाने वाला, उनके कोई बेटा न था। एक चहेती की कोख से एक बेटा अवश्य उत्पन्न हुआ था और उसे पाकर नवाब की जिन्दगी बाग-बाग हो गई थी। उम्मीदों का सागर आँखों के सामने लहरा उठा था। नवाबजादा बुरहान-अली खाँ अवध-राज्य की गद्दी का वारिस समझा जाने लगा था। पर वह पौधा परवान न चढ़ सका। तीन वर्ष की आयु को पहुँच कर दागजुदाई दे गया और आसफुद्दौला की जिन्दगी पर पुनः ओस पड़ गई। मानसिक वेदना ने पुनः उन्हें झखझोरना आरम्भ कर दिया था।

जनानखाने में बेगमात की जो भीड़ मौजूद थी उनमें से अनेक गर्भ धारण करती थीं और समय पर बेटे-बेटियों को भी जन्म दिया करती थीं। लेकिन उनके गर्भ तथा बेटे-बेटियों का जन्म आसफुद्दौला के लिए हर्षोल्लास के बदले एक विषम समस्या बन जाया करता था। और अन्त में हकीकत भी सामने आ जाया करती थी। लेकिन उस सचाई को नक्कारे की चोट बनाना, अपने हाथों अपना पर्दाफाश करना गलत था। आखिर गर्भ धारण करने वाली तथा बालक-बालिका को जन्म देने वाली उन्हीं से तो लगी लिपटी थीं।

नवाबी जनानखाने तथा सात पर्दों के अन्दर रह कर नवाब आसफुद्दौला की मुतायी बेगमें ही तो कही-पुकारी जाती थीं। ये कुछ ऐसी भेद भरी बातें थीं जो नवाब आसफुद्दौला पर दूसरा रंग चढ़ा दिया करती थीं। उनकी रुखी-सूखी जिन्दगी हरी हो जाती थी। एक संतोष सा प्राप्त हो जाता था। अपनी ही औलाद मान कर खुशी मनाते थे। जश्न-जलसे और दरबार सजाते, नौकर चाकरों को नयी-नयी पोशाकें बाँटते थे और इनाम इकराम तथा खैरात की धूम मचा देते थे। इसके अलावा अपनी खुशी के इजहार में बच्चे तथा उसकी माता के लिए जेवरात जोड़े पोशाक आदि भिजवाते थे।

जो भी संतान पैदा होती उसका पालन-पोषण शाही नियमानुसार ही हुआ करता था। और सभी तरह के लाड़ लड़ाए जाते थे। इस प्रकार आसफुद्दौला के नाम से जुड़े हुए बाईस लड़के नवाबी जनानखाने में जमा हो गए थे! सभी नवाबजादे कहलाते थे। आसफुद्दौला उन सबको प्यार करते, दुलराते, उनके साथ खेलते और अपने दिल को ढाढ़स बँधाते थे।

फिर भी जो मानसिक वेदना आसफुद्दौला के पीछे लगी थी उसकी कुरेदन समय-समय पर हरी हो जाती थी। उस समय वह चिन्ता के अथाह सागर में डूब कर उसकी गहराईयाँ झाँकने लग जाते थे। अपनी जायज सही सन्तान तथा लखनऊ की नवाबी के सही वारिस की खोज में उनकी आँखें गड़ जाया करती थीं। क्योंकि मौजूद बाईस बेटों की हकीकत जो कुछ कह रही थी उसे उनका दिल अच्छी तरह जानता था। लखनऊ की आम जनता भले ही उन बाईस भाइयों को आसफुद्दौला की सन्तान समझा करे, पर उनका दिल सच्ची गवाही नहीं देता था। उलझन और अधिक बढ़ जाया करती थी। उस परेशानी भरी उदासी में जाने कैसे-कैसे विचार दौड़ लगाने लग जाते थे, भविष्य अंधकार में है। उसमें सही उजाला पैदा होने की कोई उम्मीद नजर नहीं आती थी।....शायद कोई फकीर, औलिया, खुदा का प्यारा हमारी मुराद पूरी कर सके,....उलझन का छोर हमारे हाथों में दे सके। कहते हैं कि खुदा फकीरों की सुनता है उनकी दुआ के जरिये से इनसान का दर्द दूर किया करता है।....मगर ऐसे फकीर औलिया कहाँ हैं....उनका मिलना ही तो कठिन है....फिर उनकी पहचान भी एक दर्द-सिर है....यों तो हर रास्ते पर दो चार फकीर आवाज लगाते, हाथ फैलाते नजर आ जाया करते हैं। उनसे क्या हासिल हो सकता है।....लेकिन अगर खुदा चाहे तो सभी रास्ते खुल सकते हैं। खुदा का प्यारा फकीर भी मिल सकता है और अपनी दुआ से मुराद भी पूरी कर सकता है।

अपने ऐसे विचारों तथा विश्वासों को लेकर आसफुद्दौला अक्सर संध्या समय घोड़े पर सवार होकर अकेले घूमने निकल पड़ते थे और लखनऊ के बाहर गोमती के किनारे-किनारे दूर तक चले जाया करते थे।

ऐसी ही एक संध्या थी। आसफुद्दौला घोड़े पर सवार इधर-उधर निगाह घुमाते-दौड़ाते चले जा रहे थे। शाह अब्बास के मजार के पास से गुजरे। शाह अब्बास एक खुदा

रसीदा फकीर अर्से से लखनऊ में रह रहे थे। फैजाबाद में रहते हुए आसफुद्दौला ने उनका नाम सुना था। यह भी सुना था कि वह बहुत बड़े करामाती फकीर हैं। लेकिन फैजाबाद से लखनऊ राजधानी लाने के कुछ पहले हजरत अब्बास दुनिया को छोड़ कर खुदा की खिदमत में पहुँच गए थे। मुरीदों ने उनका एक बहुत साधारण-सा कच्ची दीवारों, खपरैलों वाला मजार बनवा दिया था।

आसफुद्दौला की उचटती नजर उस मजार पर पड़ी, किन्तु कोई प्रभाव उत्पन्न न हुआ। घोड़ा मचलता हुआ गोमती के किनारे की ओर बढ़ा चला जा रहा था। कुछ आगे बढ़ने पर सुनसान, झाड़ी-झंखाड़ों भरा नदी का किनारा था। उन्होंने देखा; दस बीस कदम आगे कोई पागल-सा, नंगा धड़ंगा, केवल कमर में एक गूदड़-सा लपेटे दोनों हाथ फैलाए नाचने में तल्लीन है। उसका सारा शरीर धूल धूसरित हो रहा है। सिर-दाढ़ी, मूंछ कहीं भी एक बाल नहीं है। चेहरा मुस्कानों से भरा है, पर वह अपनी धुन में है। कौन आ रहा है, कौन जा रहा है, उसे खबर नहीं है, वह तो मस्ती से नाचे जा रहा है।

नवाब का मन कौतूहल से भर गया। घोड़े की चाल धीमी करके धीरे-धीरे उसके पास पहुँच गए। पागल चौंक सा-पड़ा। नाचना बन्द करके बड़े गौर से नवाब की तरफ देखा और हाथ बढ़ा कर बोला—"नवाब आसफुद्दौला है ? ला दे, क्या देता है ?"

"क्या चाहिए ?" आसफुद्दौला ने घोड़े पर चढ़े-चढ़े पूछा।

पागल ठहाका मार कर हँस पड़ा। बोला—"मुझसे पूछता है ? हः हः हः, मैं क्या चाहूँ ? तू मुझे क्या देगा ? तेरे पास क्या है ?"

"अपनी चाह तो जाहिर करो ?" नवाब ने कहा।

"मेरी चाह कुछ भी नहीं। तू अपनी चाह जाहिर कर ?" और उसने घोड़े के आगे आकर रास पकड़ ली। कड़क कर बोला—"घोड़े पर से नीचे उतरा फिर माँग ले जो चाहता हो।"

आसफुद्दौला घोड़े पर से कूद पड़े। पास में पत्थर की एक शिला थी। पागल जाकर उस पर बैठ गया। आसफुद्दौला ने घोड़े को एक झाड़ी से अटका दिया और जाकर पागल के पास शिला पर बैठ गए।

पागल बोला—"बहुत दिनों बाद आज मिला है ? हः हः हः।"

आसफुद्दौला चुपचाप बैठे नजर जमा कर उसकी तरफ देखने लगे। पागल के चेहरे पर अनेक प्रकार के रंग दौड़ लगा रहे थे। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में उन्माद की चमक भी थी। गम्भीरता का तेज भी था। वह भी निर्निमेष दृष्टि से नावाब की तरफ देख रहा था। सहसा पलक झपका कर वह बड़े जोर से हँसा—हः हः हः ! और कुछ क्षणों तक हँसता रहा, फिर बोला—"क्या देख रहा था नवाब ?" फिर हँसा। फिर बोला—"क्या तू भी मेरी तरह एक मजजूब है ? नहीं, तू मजजूब नहीं। अवध का नवाब है, मेरी बादशाहत दूसरी ! तेरी बादशाहत दूसरी है। बहुत बड़ा फर्क है। मेरी बादशाहत

में दर्द नहीं। तेरी बादशाहत में दर्द है।" फिर हँसा—हः हः हः। फिर बोला—"जानता है मैं कौन हूँ ?"

"नहीं।" आसफुद्दौला ने धीरे से कहा।

"मत जान ?" फिर ठहाका लगाने के बाद कहा—"न जानना ही अच्छा है।"

नवाब आसफुद्दौला का कौतूहल बढ़ रहा था। समझ में नहीं आ रहा था कि यह कैसा पागल या मजजूब है। मगर उनका हँसना, बातों का ढंग और बातें कह रही थीं कि इसमें कुछ है। कितना क्या है ? यही एक गहरा प्रश्न है। वह ऐसे ही गुनताड़े में डूबे हुए खामोश थे।

"चुप क्यों है ?" पागल ने गम्भीर होकर पूछा—"अपना दर्द अपनी उलझन बयान कर ?"

आसफुद्दौला बोले—"हमारी उलझन बहुत बड़ी है।"

"बहुत बड़ी है ?" पागल हँसा। फिर बोला—"कितनी बड़ी है तेरी उलझन, जमीन से आसमान तक या लखनऊ से कलकत्ता तक ?" फिर ठहाका लगाने के बाद कहा—"बयान कर अपनी उलझन को।"

"हमारी उलझन का बयान सिर्फ एक सवाल है।" आसफुद्दौला ने उसके चेहरे पर नजर जमा कर कहा।

"क्या सवाल है ?" उसने अधिक गम्भीर होकर पूछा।

"हमारी मुराद पूरी होगी ?"

"तू, जिस तरह अपनी मुराद पूरी करना चाहता है वह गैर मुमकिन है।"

आसफुद्दौला जवाब सुन कर सन्नाटे में आ गए। अंतस में एक धक्का सा लगा। फिर नजर उठा कर कहा—"दूसरा सवाल करूँ ?"

"दूसरा सवाल क्या है ?"

"जो मैं चाहूँगा वह पूरा होगा ?"

पागल हँसा। बोला—"तेरे दोनों सवाल एक ही गहराई को झाँक रहे हैं।" फिर एक क्षण चुप रहने के बाद कहा—"सुन, खुदा सारी दुनिया का निगहबान है। उसे अपनी खुदाई के हर बन्दे का ख्याल रहता है। उसने अमीर भी पैदा किए हैं और फकीर भी। उसी ने तुझे बादशाह बनाया है। दुनिया में बादशाह उसके दूसरे बन्दों से बड़ा माना जाता है। बादशाह पर उसका साया भी रहता है। बादशाह की ख्वाहिश खुदा जरूर पूरी करता है। तेरी भी ख्वाहिश पूरी करेगा। लेकिन ..." वह चुप हो गया।

आसफुद्दौला ने उत्सुकता भरे स्वर से कहा—"आप आधी बात कह कर क्यों चुप हो गए ? लेकिन के आगे कहिए।"

"लेकिन आगे यह है।" पागल सिर उठाकर बोला—"खुदा बन्दे की भी

ख्वाहिश पूरी करता है और अपनी भी। यानी वह बन्दे की इज्जत रख कर अपनी रजा भी रखता है।"

"यह कैसे ?" आसफुद्दौला ने कुछ हैरत के साथ कहा—"खुदा बन्दे की ख्वाहिश भी पूरी करता है और अपनी रजा भी रखता है। कुछ समझ में नहीं आ रहा।"

"यही समझना तो मुश्किल है।" पागल ने चेहरे पर गम्भीर भाव लाकर कहा —"खुदा के कायदे-कानून और राज-भेद को समझना बन्दे की समझ से बहुत दूर है। और वह दूरी इस तरह नापी जा सकती है।" पागल एकदम उठकर मस्ती में आ गया। हाथ फैला कर नाचने-गाने लगा—"लाड़ लड़ा कर, प्यार बढ़ा कर, अपनी कर और उसकी देख।" नाचते हुए वह संध्या के अंधकार में नजरों से जाने कहाँ गायब हो गया।

आसफुद्दौला आँखें फैला कर उसे इधर-उधर खोजते-ढूंढ़ते रहे। जब वह कहीं दिखाई न पड़ा और संध्या का अंधकार काली रात से बदलता हुआ महसूस हुआ, उन्होंने अपना घोड़ा खोला, सवार हुए और भारी मन लिए दौलतखाना आसफी की ओर लौट पड़े।

४

आसफुद्दौला को किसी पहलू चैन न थी। कम्पनी सरकार का आतंक तथा गवर्नर जनरल के अड़ंगे आए दिन उनकी राह में पड़े रहते थे। फैजाबाद से लखनऊ राजधानी उठा लाने के बाद कुछ दिन आराम की साँसे ली थीं और अपनी मानसिक वेदना को शान्त करने का उपाय ढूंढ़ना-खोजना आरम्भ किया था कि फिर वही ढाक के तीन पात सामने आ गए थे।

कलकत्ता में लार्ड कार्नवालिस के स्थान पर लार्ड सर जॉन शोर अस्थायी गवर्नर जनरल होकर आ गए थे। और आते ही उन्होंने अवध-राज्य पर अपनी गिद्ध-दृष्टि जमा दी थी। नवाब आसफुद्दौला पुनः कम्पनी का शिकार बन गए थे। सर जान शोर ने हर तरह से उन्हें दबाना शुरू कर दिया था। नवीन गवर्नर जनरल का आदेश आया था— अवध राज्य-दरबार में कम्पनी की एक यूरोपियन तथा एक हिन्दुस्तानी पल्टन और रखी जाए। इस आदेश का खुला मतलब था कि इन दोनों पल्टनों का खर्च पाँच लाख पचास हजार रुपया माहवार अवध दरबार को और बर्दाश्त करना पड़ेगा। आसफुद्दौला बहुत

बड़ी परेशानी में पड़े हुए थे। समझ में नहीं आता था कि कम्पनी का ये हलाहल विष किस प्रकार निगला-उगला जाए ? और इस विषय में लखनऊ का रेजीडेन्ट उनका गला दबा रहा था। जल्दी स्वीकृति चाहता था ताकि फौजें बुला ली जाएँ।

सरकार आसफी में महाराजा झाऊलाल बहुत ही योग्य समझदार, स्वामि-भक्त तथा ईमानदार दरबारी थे। आसफुद्दौला उनकी सूझ-समझ तथा बुद्धि के कायल थे। उनकी इज्जत करते थे, प्रेम रखते थे और जब कभी कोई गहरी परेशानी आकर उनके सम्मुख खड़ी हो जाती थी, उससे पीछा छुड़ाने के लिए महाराजा झाऊलाल याद आ जाया करते थे। खिलवत में बुलाकर उन्हें अपना दर्द दिखाते थे और इलाज चाहा करते थे। महाराज झाऊलाल भी अपनी बुद्धिमत्ता से चुटकी बजा कर मालिक के दर्द को रफ़ा कर दिया करते थे। इस समय भी वही हो रहा था।

डेढ़ पहर दिन चढ़े दौलतखाना आसफी के विशेष कमरे में खिलवत गरम थी। आसफुद्दौला मसनद पर भारी भरकम तकिए का सहारा लिए बैठे थे। उनके सामने कालीन पर महाराज झाऊलाल अदब कायदे के साथ बैठे हुए थे। कमरे में केवल दो ही व्यक्ति थे। कलकत्ता से आया हुआ गवर्नर जनरल सर जान शोर का आदेश-पत्र नवाब के सामने मसनद पर रखा हुआ था।

आसफुद्दौला ने आदेश-पत्र को उठा कर एक बार पढ़ा और फिर महाराजा झाऊलाल को दे दिया। झाऊलाल ने देर तक आदेश पत्र को पढ़ा, समझा। फिर उसे नवाब के सामने मसनद पर रख दिया।

और नवाब की तरफ देखते हुए गम्भीर होकर बोले—"गवर्नर जनरल का यह आदेश अनुचित है। खर्चे का इतना बड़ा बोझ अवध राज्य किसी प्रकार नहीं ढो सकता। कम्पनी की जो पल्टनें एक अर्से से लखनऊ में मौजूद चली आ रही हैं उन्हीं का खर्च चुकाना कठिन हो रहा है। ये पचास लाख रुपया वार्षिक कहाँ से चुकाया जाएगा ?"

"यही तो हम भी सोचते हैं ?" आसफुद्दौला ने चिन्ता भरे लहजे से कहा—"लेकिन रजीडेन्ट पीछे पड़ा है। मंजूरी चाहता है। दोनों पल्टनों को जल्द लखनऊ बुलाना चाहता है। और इस तरह से कम्पनी की सभी फौजों का खर्च मिल कर डेढ़ दो करोड़ हो जाएगा। इतनी बड़ी रकम कहाँ से अदा की जाया करेगी ?" फिर एक क्षण रुकने के बाद धीरे से कहा—"ये हुकूमत तो हमारे गले पड़ गई।"

"इस तौर-तरीके से लखनऊ की रियासत बिक जाएगी।" झाऊलाल ने भी धीरे से कहा।

"तब क्या किया जाए ?" आसफुद्दौला ने उनकी तरफ नजर उठा कर कहा—"तुम्हारा मशविरा क्या है ?"

क्या जनाब आली इस नाचीज के मशविरे को पसंद फरमाएँगे ?" झाऊलाल ने विनीत भाव से पूछा।

"पसंद फरमाने की क्या बात है ?" आसफुद्दौला ने उनकी तरफ देख कर कहा—"अपनी हर परेशानी के वक्त पर हम तुम्हीं से मशविरा चाहा करते हैं और इसकी वजह यही है कि हमें पूरा यकीन है, हम अच्छी तरह जानते हैं कि तुम हमारे सच्चे खैरंदेश हो। तुम्हारे दिल में अवध रियासत का दर्द है उसकी सच्ची खैरख्वाही मौजूद है।"

"हुजूर का ऐसा ख्याल होना जहेकिस्मत कहा जा सकता है।" झाऊलाल ने खुशामद भरे लहजे से कहा—"कमतरीन हर वक्त कदमों पर निछावर हो जाने को तैय्यार है। इस बारे में नाचीज का मशविरा यही है कि रेजीडेन्ट से खुले शब्दों में कह दिया जाय कि आगे नई पल्टनें रखने से हम मजबूर हैं। हमारी रियासत अब किसी भी नई पल्टन का बोझ नहीं उठा सकतीं। जो कम्पनी की फौज अभी तक हमारे दरबार में मौजूद चली आ रही हैं और जिनका पूरा खर्चा हम बर्दाश्त करते चले आ रहे हैं, वही हमारे लिए एक बहुत बड़ा बोझ है। इसके साथ रेजीडेन्ट से यह भी जाहिर कर दिया जाए कि अवध दरबार को एक तरह से अंग्रेजी फौज रखने की कोई जरूरत नहीं महसूस होती। हमारे पास काफी सिपाही हैं और उनसे हम अपनी रियासत की हिफाजत कर सकते हैं। लेकिन हम उसे रखने के लिए अपनी मसनदनशीनी के वक्त से मंजूरी दे चुके हैं इसलिए उस बोझ को किसी तरह उठाते रहेंगे।"

सुन कर आसफुद्दौला ने धीरे से कहा—"इसलाह तो हमें सही मालूम होती है।"

झाऊलाल फिर बोले—"हुजूर गुस्ताखी माफ फरमाएँ ! ये अंग्रेज बच्चे हैं। हुजूर जितना दबते चले जाएँगे, ये और ज्यादा दबाते चले जाएँगे। और उनका ये तौर तरीका, रोजाना रुपयों की माँग, आए दिन के अड़ंगे साफ जाहिर करते हैं कि कम्पनी का इरादा अवध राज्य को बिलकुल मिटा देने का है।"

आसफुद्दौला बड़े गौर से झाऊलाल की तरफ देखने लगे। नजर कह रही थी कि हजरत महाराजा की बातों से प्रभावित हो रहे हैं।

झाऊलाल बहुत नरम और सचाई भरे लहजे से बोले—"हुजूर का नमक खिद-मतगुजार के खून और रग-रंग में पैवस्त है। आला हजरत की परेशानी को कमतरीन अपनी परेशानी से बढ़ कर समझ रहा है। जनाब आली मसनदनशीनी के दिन से लूटे जा रहे हैं और कम्पनी का पेट नहीं भर रहा। आज हुजूर नई पल्टनों को रख कर उनका सर्फा उठाना मंजूर कर लेंगे, कल वह कोई दूसरा बहाना ढूंढ़ निकालेंगे। बुरे लोगों के पास बहानों की क्या कमी हुआ करती है ?"

जरा देर सोचने-समझने की मुद्रा में रहने के बाद आसफुद्दौला ने नजर उठा कर बड़े इतमीनान तथा भरोसा भरे लहजे से कहा—"तुम्हारे मशविरे की एक-एक बात हमारे गले उतर गई। जरा भी शक नहीं है कि हम अंग्रेजों से जितना दबते जाएँगे, उनके आगे जितना झुकते जाएँगे वह हमारे सर पर चढ़ते जाएँगे। हम रजीडेन्ट को बुला

कर गवर्नर के इस हुक्मनामे का साफ जवाब दिए देते हैं। आगे एक भी अंग्रेजी-पल्टन हमें अपने यहाँ रखना मंजूर नहीं है।"

"हुजूर अपनी रियासत के मालिक और मुख्तार हैं।" झाऊलाल ने इतमीनान से कहा—"इस तरह से तो अवध में दोखस्मी हुकूमत कायम हो जाएगी। एक बीवी किस-किस को खुश रख सकेगी।"

आसफुद्दौला हँस पड़े। फिर मसनद से उठ कर बोले—"तुमने हमारी बहुत बड़ी परेशानी दूर कर दी। कई दिन से हम जिस उलझन को सुलझाने में परेशान थे वह तुमने अपने सही और नेक मशविरे से सुलझा दी।"

और नवाब आसफुद्दौला बड़े संतोष के साथ जनानखाने की तरफ चले गए। महाराजा झाऊलाल भी वहाँ से चल पड़े।

महाराजा झाऊलाल अपने दफ्तर में आकर आसन पर बैठ गए। दफ्तर में और कोई न था। केवल उनके परम विश्वासी मुंशी राय बालकराम मौजूद थे और अपनी जगह पर सिर झुकाए बैठे अपना काम कर रहे थे। दफ्तर के बाहर दो खिदमतगुजार बरामदे के एक कोने में बैठे ऊँघ से रहे थे।

महाराजा झाऊलाल अधेड़ अवस्था के पुराने खानदानी तथा इज्जतदार व्यक्ति थे। उनका खानदान अवध राज्य की खैरख्वाही तथा शासक की खैरंदेशी, स्वामिभक्ति के लिए प्रसिद्ध था। झाऊलाल के पूर्वज पहले फैजाबाद में आबाद थे। उनके पिता नवाब शुजाउद्दौला के कारकुन तथा सच्चे सलाहकार थे। अतः मसनदनशीन होते ही नवाब आसफुद्दौला ने भी उस खानदान की ईमानदारी तथा नेकनीयती की बातों को सुन कर झाऊलाल को अपनी सरकार का एक विशेष कारकुन बना कर महाराजा का खिताब अता फरमाया था। धीरे-धीरे महाराजा झाऊलाल ने नवाब आसफुद्दौला के दिल में अपनी जगह बना ली। उनके महान् विश्वासी सलाहकार बन गए थे। जब नवाब आसफुद्दौला राजधानी को उठा कर फैजाबाद से लखनऊ ले आए, झाऊलाल भी सपरिवार उनके साथ आ गए थे। नवाब की उन पर महान् कृपा रहती थी। झाऊलाल ने जहाँ अपनी हवेली बनवाई थी और एक नया मोहल्ला आबाद किया था, वहीं एक बहुत खूबसूरत बाजार भी कायम किया था। बाजार का उद्घाटन झाऊलाल के आग्रह-अनुरोध पर स्वयं नवाब आसफुद्दौला ने किया था। धीरे-धीरे झाऊलाल का स्थापित किया हुआ वह बाजार उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हो गया था और झाऊलाल का बाजार कहलाता था।

झाऊलाल आसफुद्दौला के सच्चे भक्त और दिल से हितैषी थे। अपने मालिक के हर दर्द को अपना दर्द समझा करते थे। कम्पनी के अंग्रेज अधिकारियों द्वारा आए दिन रुपयों की माँग तथा लूट-खसोट वह शुरू से देखते चले आ रहे थे। अक्सर अवध में इस डाकाजनी को देख कर उनका हृदय कराह उठता था। उन्हें कम्पनी का पूर्ण इतिहास ज्ञात था। इसलिए उनके दिल में अँग्रेजों के प्रति एक प्रकार की घृणा-सी उत्पन्न

हो गई थी। किन्तु अभी तक उनकी वह घृणा किसी रूप में उभरी नहीं थी। इसका कारण यही था कि झाऊलाल अपने विचारों को अपने स्वामी के विचारों तथा उनकी शान्ति के साथ दौड़ाया करते थे। लखनऊ आकर आसफुद्दौला को कम्पनी के प्रधान अधिकारी की ओर से कुछ शान्ति प्राप्त हो गई थी। इसलिए झाऊलाल के हृदय की घृणा भी सो सी गई थी।

नवाब आसफुद्दौला ने आज उन्हें अपने पास बुला कर जो अपने दिल की पीड़ा जाहिर की थी और उसको दूर करने के लिए उचित इलाज चाहा था, उसने महाराजा झाऊलाल की घृणा को ठोकर मार कर जगा दिया था। गवर्नर के आदेश पत्र को पढ़ कर तथा नवाब की परेशानी को समझ कर अँग्रेजों की सभी करतूतें, उनकी एक-एक आतंक भरी ज्यादती, रुपयों की माँग तथा रोज-रोज की लूट-खसोट सामने आ गई थी। उनका हृदय पुकार कर कह उठा था—वह दिन दूर नहीं है जब अवध का समूचा इलाका कम्पनी के उदर में चला जाएगा और अवध की नवाबी हमेशा-हमेशा के लिए खतम हो जाएगी। एक कम्पनी सरकार और उसकी सत्ता ही जिन्दा दिखाई देगी।

झाऊलाल के अंतस में अँग्रेज-सत्ता के प्रति नफरत का जो बीज एक अर्से से पड़ा हुआ था, आज वह केवल अंकुरित ही नहीं हो उठा था। बल्कि उसमें पत्ते भी निकल आए थे। दफ्तर में बैठे हुए वह सोच रहे थे—कम्पनी की इस सत्ता को किस प्रकार उखाड़ा जा सकता है? किस प्रकार ऐसा करारा धक्का दिया जा सकता है कि देश से उसका नाम-निशान गायब हो जाए। एक अवध ही नहीं सारे देश का दुख दूर हो जाए।

ऐसे ही सोच-विचारों तथा अँग्रेजों की विरोध भावना को लेकर झाऊलाल देर तक आँखें बन्द किए अपने स्थान पर बैठे रहे। सहसा चौंक से पड़े, आखें खोल दीं। मानो उन्हें अपनी विषम समस्या का हल मिल गया था। उन्होंने कलमदान खोल कर कलम पकड़ी। कागज के कई कोरे पन्ने हाथ में लिए और उन पर दत्तचित्त होकर लेखनी दौड़ाने लगे। कुछ देर में उन्होंने कई पत्रों के मसौदे तैय्यार कर डाले। ये पत्र जमाँशाह बादशाह काबुल, ग्वालियर के महाराज महाद जी सेंधिया, नवाब मोहम्मद खाँ हाकिम अर्काट, नवाब ढाका तथा राजपूताने के दो तीन नरेशों के नाम थे। सभी पत्र नवाब आसफुद्दौला नवाब अवध की ओर से लिखे गए थे। सभी पत्रों का विषय एक था। यानी कम्पनी के आतंक तथा ज्यादतियों भरी सत्ता की पूर्ण चर्चा के साथ उसे उखाड़ फेंकने पर जोर दिया गया था। संगठन का अनुरोध किया गया था।

झाऊलाल ने उन समस्त पत्रों के मसौदे को अपने विश्वासी मुंशी राय बालकराम को सौंप कर कहा—"बालकराम, याद रखना ये सभी मसौदे बहुत भेद भरे हैं। इनका किसी तीसरे व्यक्ति को पता न होना चाहिए। बड़ी सावधानी के साथ स्पष्ट अक्षरों में लिख कर तथा सभी पत्रों पर हमारी मोहर लगा कर तैय्यार कर रखना। तीसरे पहर

के बाद जब हम आएँगे इन पत्रों को अपने-अपने ठिकानों पर पहुँचाने की व्यवस्था कर देंगे।"

राय बालकराम ने पत्रों के मसौदे लेकर सुरक्षित रूप से रख लिए। महाराजा झाऊलाल दफ्तर से अपने घर चले गए। चूंकि दोपहर का समय हो चुका था। इसलिए राय बालकराम ने सोचा—महाराजा ने शाम को आकर पत्रों को ठिकानों पर पहुँचाने का प्रबन्ध करने को कहा है। अब खाने-पीने का समय हो चुका है, घर चलूं। खाना खाकर शीघ्र ही दफ्तर में आ जाऊँगा और मसौदों की स्पष्ट प्रतिलिपि तैय्यार करके मोहर आदि लगा रखूंगा। और राय बालकराम ने उन समस्त पत्रों के मसौदों को सुरक्षित रूप से रख दिया। घर चले गए।

आसफुद्दौला के नायब अर्थात् वजीरे आज़म उस समय नवाब सरफराजुद्दौला मिरजा हसन रज़ा खाँ थे। महाराजा झाऊलाल से सरफराजुद्दौला की नहीं बनती थी। कारण स्पष्ट था कि आसफुद्दौला झाऊलाल पर अधिक विश्वास रखते थे। खास कामों में उनसे परामर्श लेते थे। लेकिन सरफराजुद्दौला आखिर नायबुल रियासत थे। नवाब के बाद वजीर का ही पद सब से बड़ा था। इसलिए सरफराजुद्दौला को अपने ओहदे का घमंड था और झाऊलाल को अपनी योग्यता, सचाई, तथा नवाब की दया, कृपा का गर्व था। खिचाव बहुत कड़ा था। सरफराजुद्दौला झाऊलाल की पतंग काट देने पर तुले हुए थे। मौके की ताक में लगे रहते थे। लेकिन अभी तक उन्हें झाऊलाल को नीचा दिखाने का कोई अवसर नहीं मिला था।

इधर पन्द्रह बीस दिन पहले एक घटना ने झाऊलाल का सिर ऊँचा करके नायबुल रियासत मिरजा हसन रजा के दिल में नई कुढ़न पैदा कर दी थी। बदला चुकाने के लिए वे तड़प रहे थे। इसकी वजह यह थी, कि नायबुल रियासत के मुनीब थे राजा टिकैत राय। दोनों में अच्छी साठ-गाँठ थी। वजीरे आजम की मुनीब पर बहुत बड़ी मेहरबानी बरस रही थी। संयोगवश नवाब आसफुद्दौला को खबर हुई कि राजा टिकैत राय के हिसाब-किताब में कई लाख रुपया का गबन है। नवाब ने नयाबुल रियासत से पूछा। वह अपने मुनीब को हर तरह से बचाना चाहता था। इसलिए उन्होंने उल्टा-सीधा, गोल-मोल जवाब देकर बात को टाल दिया। किन्तु आसफुद्दौला के दिल से वह बात टली नहीं। उन्होंने उस मामले की जाँच-पड़ताल अपने विश्वासी कारकुन महाराजा झाऊलाल को सौंप दी। यद्यपि झाऊलाल उस विषय से दूर रहना चाहते थे। लेकिन हुक्म-हाकिम से मजबूर हो गए। झाऊलाल सचाई तथा ईमानदारी के साक्षात् पुतले थे ही। इसलिए उन्होंने बिना किसी प्रकार का वैर-भाव के दूध-का-दूध और पानी-का-पानी निकाल कर मालिक के सामने रख दिया। गबन पूर्ण रूप से साबित था। नवाब आसफुद्दौला ने उनकी इस बेलौस जाँच-पड़ताल तथा सचाई की भरे दरबार में सराहना की।

अपना और फैसला देने के लिए मामले के सभी कागजात अपने पास रख लिए थे। अभी तक कोई फैसला नहीं सुनाया था।

नायबुल रियासत मिरजा हसन रजा के सीने पर साँप लोट रहा था। वह झाऊ-लाल को मिटाने के लिए बेचैन थे। हर वक्त उन्हीं का ख्याल दिमाग में हथौड़े की चोटें लगाता रहता था।

राय बालकराम खाना खाकर शीघ्र ही घर से दफ्तर में आ गए। महाराजा झाऊलाल के सौंपे हुए पत्रों के मसौदों को हाथ में लेकर बड़ी सावधानी के साथ उन सब की प्रतिलिपियाँ तैय्यार की और उन पर महाराजा की मोहर लगाई। इसके बाद पत्रों की नकलें तथा मसौदे एक साथ जमा करके सुरक्षित रूप से रखना चाहते थे कि सहसा सरफराजुद्दौला वहाँ आ गए। राय बालकराम अपने सामने वजीरे आजम को खड़ा देख कर घबड़ा से गए। समस्त पत्र-मसौदे हाथ में लिए उनकी इज्जत के लिए खड़े हो गए। लेकिन चेहरे पर घबराहट के चिह्न उभर रहे थे।

सरफराजुद्दौला जानते थे कि राय बालकराम महाराजा झाऊलाल के खास और परम विश्वासी मुंशी हैं। उनके चेहरे पर हवाइयाँ-सी उड़ती देख कर माथा ठनक उठा। समझे कुछ दूध में काला जरूर है। पूछा—"क्या है? कोई खास बात है?"

राय बालकराम और अधिक सिटपिटा गए। कुछ कहने के लिए मुँह न खुला।

सरफराजुद्दौला ने बालकराम के हाथ के कागजों पर नजर दौड़ाई। उन पर महाराजा झाऊलाल की मोहर अंकित नजर आई। कौतूहल बढ़ गया। लपक कर बालक-राम के हाथ से वे सभी मसौदे-पत्र अपने हाथ में ले लिए। खड़े-खड़े एक-दो पत्रों को पढ़ा। चेहरे पर रौनक सी दौड़ पड़ी। सभी कागजों को मोड़ कर अपनी कमर के फेंटे में रख लिया और चुपचाप वहाँ से आला हजरत नवाब आसफुद्दौला के महलों की तरफ चले गए।

राय बालकराम हक्के-बक्के से खड़े थे। दिल धड़क रहा था। घबराहट बढ़ रही थी। यह क्या हो गया समझ में नहीं आ रहा था।

५

आसफुद्दौला के जो बाईस बेटे थे, उन सबों में मिरजा वजीरअली खाँ आयु में सबसे बड़े होने के साथ-साथ सबसे अधिक आकर्षक भी थे। उन्होंने जिस प्रकार खुले

हाथों रूप-सौन्दर्य पाया था, उसी तरह अपूर्व शारीरिक गठन भी पाई थी। अंग-अंग गठीले, शक्तिपूर्ण तथा साँचे में ढले मालूम होते थे। फिर जवानी की उठान, सत्तरह-अठारह वर्ष की आयु ने उनके सुर्ख-सफेद, मैदा-शहाब, जैसे रंग ने, नाक-नक्शे ने तथा मुख पर के तेज व चमक ने और चार चाँद लगा रखे थे। इसके अलावा उन्हें कसरत करने तथा अखाड़े में उतरने का भी विशेष व्यसन था। प्रतिदिन सूर्य निकलने से पहले नहा-धोकर अखाड़े में पहुँच जाते थे।

वजीरअली खाँ की माता हसीना बानो बेगम जाति-वंश की एक कसबी थीं। लेकिन परम रूपवती तथा बहुत तेज मिजाज। नवाबी जनानखाने में उन्हीं की सत्ता जागती थी। बेगमात की भारी भीड़ नवाब हसीना बानो बेगम के आगे भीगी बिल्ली बनी रहती थीं। इसका स्पष्ट कारण था। नवाब आसफुद्दौला हसीना बानो बेगम के हुस्नो जमाल पर फिदा दे, अतः वह हरमसरा में रहने वाली मुतायी बेगमों में नवाब की चहेती बेगम समझी जाती थीं।

माँ के स्वभाव के अनुसार मिरजा वजीर खाँ का स्वभाव भी काफी तेज था। गर्मी तथा जिद्द-हठ की थोड़ी भी कमी न थी। जो चाहते थे उसे पूरा करके ही रहते थे। किसी की कोई कड़ी बात बर्दाशत करना उनके स्वभाव में न था। फौरन उनका हाथ पेश-कब्ज तथा कमर में लटकती हुई विलायती तलवार पर पहुँच जाया करता था। इसीलिए महल से लेकर सरकार तक के लोग उनसे डरते थे।

अखाड़े के चार-यार जो राजाना उनके साथ अखाड़े में उतरा करते थे, वही मिरजा वजीर अली खाँ के साथी और सोहबती थे। आसफुद्दौला भी उनके रूप-रंग, शारीरिक बनावट तथा जवानी की चमक पर मोहित थे। फिर वह उनकी चहेती बेगम की कोख से उत्पन्न हुए थे। इसलिए पाँच वर्ष की आयु से ही अपने और बेटों की अपेक्षा वजीरअली खाँ को ज्यादा चाहते थे। वजीरअली खाँ की शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध भी विशेष रूप से किया गया था। इधर जब से वजीर अली खाँ ने जवानी की मंजिल का जीना चढ़ना शुरू किया था, उन्हें देख कर आसफुद्दौला अपनी मानसिक वेदना को एकदम भूल जाते थे। उस दर्द की दवा उन्हीं को समझने लग गये थे।

मिरजा वजीरअली खाँ का अखाड़ा गरम था। अखाड़ची चार यार मर्दान अली, दिलावर अली, शेर खाँ और रुस्तम खाँ मौजूद थे। सभी लँगोटबन्द, शरीर पर मिट्टी चढ़ाए छातियाँ फुलाए भुजाएँ ठोंक रहे थे। अखाड़े के उस्ताद यों तो उस्ताद गफूरअली खाँ थे। लेकिन अब वह रोजाना नहीं आते थे। क्योंकि उन्होंने मिरजा वजीर अली खाँ को इतना सिखा दिया कि चार यारों को सिखाने के लिए मिरजा वजीरअली खाँ ही काफी थे। जब कभी उस्ताद गफूरअली खाँ आ भी जाते थे, तो चुपचाप बैठे देखा करते थे। कभी मौके पर पहलवानी के कुछ दाँव-पेंच बतला दिया करते थे।

एक पहर दिन चढ़ चुका था। इसलिए अखाड़ा ठण्डा पड़ गया। वजीरअली खाँ

चार यारों सहित अखाड़े से हट कर बगल के खुले हुए बरामदे में आकर नशिस्त पर बैठ गए। वहाँ नीलम कनीज दूध-बादाम वगैरा लिए पहले से मौजूद थी। उसने सबसे पहले नवाबज़ादे मिरजा वजीरअली खाँ को दूध तथा कागजी बादाम पेश किए। वजीर-अली खाँ ने अपनी मजबूत चुटकी से बादामों को तोड़-तोड़ कर चबा लिया और दूध पी गए।

नीलम ने चार यारों को भी बादाम तथा दूध के गिलास पेश किए। लेकिन चार यारों में से एक भी वजीरअली खाँ की तरह बादामों को चुटकी से न तोड़ सका। केवल दिलावर ने बहुत जोर लगाने पर दो बादामों को तोड़ा। सब को पत्थर से तोड़ कर बादाम चबाने पड़े। इस पर नीलम खिलखिला कर हँस पड़ी। वजीरअली खाँ ने भी मुस्कराते हुए चार यारों की तरफ देखा।

नीलम हँसती हुई बोली—"आज पता लग गया!"

"किस बात का पता लग गया?" वजीरअली खाँ ने उसकी तरफ देख कर पूछा।

नीलम बोली—"इस बात का पता लग गया हुजूर कि अखाड़ची, कसरती एक आप ही हैं। आपके ही पंजे फौलादी हैं। उँगलियों से बादाम तोड़ कर चबा सकते हैं। बाकी आपके ये चार यार तो यों ही....." और वह आँचल का छोर मुँह में दबा कर हँसने लगी।

चार यार कुछ झेंप से गए।

वजीरअली खाँ बोले—"तू बड़ी शोख है नीलम!" फिर गम्भीर होकर कहा—"कल से इन लोगों को हम पंजाकशी भी सिखलाएँगे। इनकी उँगलियाँ फौलादी होकर चुटकी से बादाम तोड़ने लग जाएँगी।"

नीलम मुस्कराई और तिरछी नज़र से चार यारों को ताकती हुई बोली—"जी हाँ, हुजूर! इन सब की उँगलियाँ ऐसी फौलादी हो जाएँगी कि पहाड़ खोद कर फेंकने लग जाएँगी।"

चार यार बादाम चबा कर तथा दूध पीकर अपने-अपने घरों को चले गए।

नीलम दूध के बर्तन थाल में रखने लगी।

वजीरअली खाँ ने कहा—"नीलम तू बड़ी खराब है!"

नीलम थाल छोड़ कर सीधी खड़ी हो गई और आँखें घुमाती हुई बोली—"क्यों हुजूर? मैंने ऐसा क्या किया कि खराब होने की तोहमत मेरे सर पर लद गई है?"

"तूने सबों को झेंपा कर जल्द ही यहाँ से भगा दिया।" वजीरअली खाँ ने कहा—"आज उन लोगों से कुछ गप-शप न हो सकी।"

नीलम नवाबजादा मिरजा वजीरअली खाँ के महलों की मुँहलगी लौंडी थी। उन्नीस-बीस वर्ष की आयु, यौवन का आगाज था। उसके किसी कदर साँवले रंग पर

जवानी की वह चमक-दमक पैदा हुई थी कि देखने वालों की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न हो जाती थी। आँखों में तो मानो जादू ही भरा था। जरा-सी हेर-फेर गजब ढा देती थी। अंगों की बनावट भी आकर्षक थी।

नीलम लापरवाह लहजे से बोली—"ऐ, जाने दीजिए ? बेकार की गप-शप में क्या रखा है ?"

तभी पन्द्रह-सोलह वर्ष की एक परीजमाल अठखेलियाँ करती, जवानी उछालती, मदभरी चाल से बरामदे के सामने से गुजरी। उसने एक बार पलकें चढ़ा कर मिरजा वजीरअली खाँ की तरफ देखा और शीघ्र ही निगाह चुरा कर एक ओर को चली गई।

मिरजा वजीरअली खाँ ने पहली बार अपनी आँखों से वह अद्‌भुत रूप-सौन्दर्य देखा था जो आँखों में समा सा गया। लेकिन पलक मारते ही वह जाने कहाँ गायब हो गई। कौतूहल एकदम बढ़ गया। नीलम से पूछा—"नीलम ? ये कौन माहपारा थी जो अभी-अभी सामने से गुजर गई ?"

नीलम बन कर बोली—"अभी-अभी कौन यहाँ से गुजर गया ? मैंने तो किसी को नहीं देखा !"

"बन मत !" वजीरअली खाँ ने कहा—"बता, वह कौन थी ? गजब का हुस्न जमाल पाया है। जवानी जैसे फटी पड़ रही थी।"

"हुजूर की जवानी के आगे उसकी जवानी क्या रही होगी !" नीलम मुस्कराई।

"मजाक न कर ?" वजीरअली खाँ ने भी थोड़ा मुस्करा कर कहा—"बोल, कौन थी वह ?"

"कोई परिस्तान की परी लखनऊ घूमने आई रही होगी। अपनी झलक दिखा कर उड़ गई होगी।"

"बेमतलब का मजाक मत कर !" वजीरअली खाँ ने कुछ गम्भीर स्वर से कहा —"बता कौन थी ? हमने तो इससे पहले उसे कभी नहीं देखा।"

"यह तो और भी अच्छा था ?"

"क्यों ?"

"किसी बला को अपनी आँखों से देखना अच्छा नहीं हुआ करता।" और वह थाल उठाने के लिए झुकी।

वजीरअली खाँ ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—"नहीं बताएगी ?"

"छोड़िए बताती हूँ ?" नीलम ने मुस्करा कर कहा।

वजीरअली खाँ हाथ छोड़ कर उसके चेहरे की तरफ देखने लगे।

"हुस्न की एक देवी थी वह ?"

"यह तो हम भी जानते हैं। लेकिन थी कौन ?"

"अच्छा पहले हुजूर ये फरमाएँ ?" नीलम ने किंचित मुस्करा कर कहा—"उसके

बारे में इतनी जिद और इतनी दिलचस्पी से क्यों पूछा जा रहा है ? किसी राह चलने वाले से हुजूर का क्या मतलब है ?"

"ये सब हम पीछे बतलाएँगे । पहले तू उसका पता तो दे ।"

नीलम हँस पड़ी । बोली—"अच्छा, मैं समझ गई ।"

"क्या समझ गई ?"

नीलम होठों में मुस्कानें भर कर बोली—"शायद उसे भी अपना अखाड़ची साथी बनाने का इरादा है । उसके साथ भी जोर आजमाई करने को दिल मचल उठा है ? मगर याद रखिए उससे जोर आजमाई करना आसान नहीं है । वह चारों खाने चित्त कर देने वाली है ।"

"ओफ़ नीलम ?" वजीरअली खाँ ने बेचैनी भरे लहजे से कहा—"तेरी शोखियाँ तो बहुत बढ़ गईं । जरा सी बात के लिए हमें परेशान कर डाला । उँगलियों पर नचा डाला । अब सीधे तरीके से बता, वरना हमारे मिजाज को जानती है ?" लहजा गरम हो गया । तेवर बदल गए ।

नीलम के चेहरे का रंग फीका पड़ गया । शोखियों भरी मुस्कानें जाने कहाँ गायब हो गई । नीलम वजीर खाँ के मिजाज को अच्छी तरह जानती थी । समझ गई कि अगर पारा चढ़ गया तो लेने के देने पड़ जाएँगे । हँसी-हँसी में दुर्गति बन जाएगी । अतः दूसरा पैंतरा बदल कर बोली—"उसका पूरा पता देने को मैं तैयार हूँ । लेकिन हुजूर तो रूखे-सूखे में सब मालूम कर लेना चाह रहे हैं । न मुँह मीठा करा रहे हैं, न इनाम-इकराम से आँचल भारी किया जा रहा है ?"

"इसलिए तू परेशान कर रही थी ?" वजीरअली खाँ ने कहा और उँगली की अँगूठी उतार कर उसकी तरफ बढ़ाते हुए कहा—"ले, अभी इसे पहिन ले, फिर बाद में माला-माल कर देंगे ।"

"वह यहीं दौलतखाना आसफी में रहने वाली एक परीपैकर है ।" नीलम ने कहा ।

"यह तो हम भी समझते हैं कि वह कहीं यहीं किसी महल में रहती होगी । हमारे पूछने का मतलब है कि वह कौन है ? क्या नाम है ? किस महल में, किसके पास रहती है ? उसका किससे क्या ताल्लुक वगैरा है ।"

नीलम ने अँगूठी को चूम कर आँखों-माथे से लगाया और मुस्कराते हुए बोली—"अच्छा सुनिए, उसका नाम लालारुख है । दादी अम्माँ जनाब आलिया नवाब बहू बेगम साहिबा के महलों में रहती है । और एक तरह से उनकी लाड़ली भी कही जा सकती है ।"

वजीरअली खाँ ने नजर उठा कर नीलम की तरफ देखा, बोले—"नीलम ? वाकई वह बहुत खूबसूरत है । हुस्न की एक रंगीन तस्वीर है ।"

नीलम ने पहले अपनी आँखों के चमत्कार तथा होठों की मुस्कानों से उनके कहने का समर्थन किया। फिर मीठे लहजे से बोली—"मैं तो सिर्फ इतना ही कह सकती हूँ कि लखनऊ की इस जमीन पर हुस्नो-जमाल, नाज-अंदाज और जवानी की चमक-दमक में में लाली बेजोड़ है।"

"लाली कौन ?" वजीरअली खाँ ने पूछा।

"वही आपकी लालारुख ?" नीलम ने मुस्करा कर कहा—"यों सब लोग उसे लालारुख न कह कर लाली ही कहा करते हैं। क्योंकि दादी अम्माँ उसे इसी नाम से पुकारा करती हैं।"

"तो वह दादी अम्माँ हुजूर के पास रहती है ?" वजीरअली खाँ ने धीरे से पूछा।

"जी हाँ, अर्ज किया न ?" नीलम ने कहा—"दादी अम्माँ उसे अपनी लड़की से ज्यादा ही समझती हैं।"

वजीरअली खाँ एक क्षण चुप रहे फिर नजर उठा कर बोले—"नीलम ? उसने गजब का हुस्न पाया है। हमेशा आँखों के सामने रखने वाली एक जिन्दा तस्वीर है।"

नीलम आँखें फिरा कर बोली—"क्या वह हुजूर की आँखों में समा गई है।"

"बिलकुल जम कर बैठ गई है ?" वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए कहा।

"ऐ, गोली मारिए इस बेकार की बला को ?" नीलम ने चेहरे पर गम्भीरता लाकर कहा—"इस सरदर्द के फेर में आपको नहीं पड़ना चाहिए। आप तो अखाड़े में उतरने वाले पहलवान हैं। पहलवान, इस तरह के सरदर्द मोल नहीं लिया करते। इससे आपके अखाड़े का मशगला कहीं बेहतर है। उसी में मस्त रहिए।" फिर थोड़ा मुस्करा कर कहा—"कल से डन्ड-बैठक की तादाद दूनी कर दीजिएगा।"

"लेकिन हम यह पूछते हैं कि क्या किसी ताजा खूबसूरत फूल को हाथ में लेना, उसकी खुशबू से अपने दिल-दिमाग हर वक्त बाग-बाग करते रहना एक अखाड़ची कसरती पहलवान का मशगला नहीं हो सकता ?" वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए कहा।

"यह मशगला नहीं, घुन है। दिल-दिमाग को खोखला कर देने वाला घुन है।"

"नहीं," वजीरअली खाँ ने कुछ गम्भीर होकर कहा—"तेरा कहना गलत है नीलम ? वह हमारे दिल के लिए घुन नहीं एक गुदगुदी होगी। जिन्दगी का लुत्फ होगा।"

"आपका ख्याल गलत है।" नीलम ने मुँह बना कर कहा—"लाली आपके दिल को कभी नहीं गुदगुदा सकती। जिन्दगी लुत्फ हरगिज नहीं बन सकती। लाली, कोई बाजारी या ऐसी-वैसी माहपारा नहीं है हुजूर ?" नीलम ने उनकी नजर से नजर मिला कहा—"वह दादी अम्माँ नवाब बहू बेगम साहिबा की लाडली-दुलारी है। कहीं बहू बेगम साहिबा के कानों में आपके इस वहम की भनक जा पहुँची तो गजब हो जाएगा। आप दादी अम्माँ के रोब-दाब और मिजाज से शायद अभी वाकिफ नहीं हैं।"

"यह कुछ नहीं।" वजीरअली खाँ ने उपेक्षा के भाव से कहा—"उसका बेमिसाल-हुस्न-जमाल, अंग-अंग से इठलाती हुई जवानी एक नजर में हमारी आँखों में समा गई है। हम उसे हरगिज नहीं भूल सकते।" फिर धीरे से कहा—"वह दादी अम्माँ बहू बेगम साहिबा की लाडली हैं तो हम भी मुल्क-अवध के नवाब आसफुद्दौला के लाडले हैं।"

"गुस्ताखी माफ कीजिएगा?" नीलम ने कहा—"आप अभी मामले की गहराई तक नहीं पहुँच रहे। आपका ये इश्क-मोहब्बत का खेल नवाब आसफुद्दौला बहादुर के लाड़-दुलार का खेल नहीं है। इसका सीधा लगाव बहू बेगम साहिबा से है। और उनसे आला हजरत नवाब बहादुर भी घबड़ाते हैं। बहू बेगम के गैजो-गजब के आगे हजरत आप के लाड़-प्यार को एकदम भूल जाएँगे।"

सुन कर वजीरअली खाँ गम्भीर मुद्रा से कुछ देर तक खामोश बैठे रह गए। नीलम दो क्षण नजर गड़ाए उनके मुख की तरफ देखती रही, फिर बोली—"बेकार की परेशानी मोल लेना वाजिब नहीं है। इसके बदले में कोई ऐसा शगल अपना लीजिए जो आप को और ज्यादा चमका दे।" फिर थाल उठाने के लिए मुड़ते हुए कहा—"अब हूजूर मुझे इजाजत दीजिए।"

"जरा ठहर जा।" वजीरअली खाँ ने नजर उठा कर कहा। फिर नीलम की नजर से नजर मिला कर बोले—"अच्छा यह बता? तू हमारा साथ देगी? हमारी कुछ मदद करेगी इस मामले में?"

नीलम बोली—"लौंड़ी, यों हुजूर के लिए अपनी जान निछावर कर सकती है। मगर यह मामला कुछ ऐसा टेढ़ा-मेढ़ा है और ऐसों से लगा-लिपटा है जिनके नाम से मेरी रूह काँपती है। मैं आपकी कुछ मदद करूँ और दादी अम्माँ को पता चल जाए तो बस? मेरे सातो करम हो जाएँगे।"

वजीरअली खाँ अभी कम उम्र तो थे ही, जोर से हँस पड़े।

नीलम भी किंचित मुस्करा कर बोली—"आप हँसे रहे हैं और मैं सच ही अर्ज कर रही हूँ। नाक-कान कटवा कर महलों से निकाली जाऊँगी।"

वजीरअली खाँ हँसते हुए बोले—"सचमुच तेरा कहना सही है। तेज चाकू से जब तेरे दोनों कान और नाक काटे जाएँगे तो क्या शकल बन जाएगी?" और जोर से हँस कर बोले—"और उसी सूरत में हुजूर दादी अम्माँ के हुक्म से महलों से निकाली जाएगी, महलों में रहने वाले सभी लोग तालियाँ पीट कर कहेंगे—"नकटी-बूची जा रही है।" और वह पुनः ठहाका मार कर हँस पड़े।

"और आप भी उनका साथ देंगे?"

"क्यों नहीं? नकटी-बूची को देख कर कौन चुप बैठा रहेगा?"

नीलम ने तिरछी नजर से वजीरअली खाँ की ओर देखा और थाल उठा कर वहाँ से चली गई।

महाराजा झाऊलाल की कलम से लिखे गए मसौदे तथा मोहर लगी हुई उनकी नकलें अपने कब्जे में करके नायबुलरियासत मिरजा हसनरजा खाँ सरफराजुद्दौला बहादुर बहुत खुश थे। बिना किसी प्रयास व झगड़े-झाँसे तथा हाथ-पैर मारे ही झाऊलाल को जड़ से उखाड़ने का मौका हाथ आ गया था। वह इस समय किसी खास काम को लेकर नवाब आसफुद्दौला से मुलाकात करने आए थे। लेकिन उन्होंने उस खास काम को छोड़ दिया। नवाब से मुलाकात नहीं की। झाऊलाल के पत्रों को अच्छी तरह सँभाल-छिपा कर महल से बाहर आ गए। महल के बाहर उनकी बग्घी खड़ी थी। फौरन उस पर बैठ गए। और कोचवान से आगे बढ़ाने को कहा। कोचवान ने बग्घी को उनकी हवेली की सड़क की तरफ मोड़ना चाहा। किन्तु सरफराजुद्दौला ने कहा—"सीधे रजीडेन्सी ले चलो।" और घोड़े रजीडेन्सी की सड़क पर दौड़ने लगे।

रजीडेन्सी पहुँच कर नायबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ ने रजीडेन्ट से मुलाकात की। एक विशेष कमरे में जाकर दोनों कुर्सियों पर आराम से बैठे। कमरे के बाहर पहरा बैठ गया। नायबुल रियासत तथा रजीडेन्ट में तरह-तरह की भेद-भरी बातें हुआ करती थीं। उन्हें सुनने का किसी तीसरे व्यक्ति को अधिकार नहीं था। कुछ देर इधर-उधर की बातें करने के बाद रजीडेन्ट मिस्टर फुलेर ने कहा—"नवाब सरफराजुद्दौला साहब! मैं आप से एक बात पूछना चाहता हूँ।"

"फरमाइए!" सरफराजुद्दौला ने उनके चेहरे पर नजर जमा कर कहा।

"आज कल आलाहजरत नवाब आसफुद्दौला का मिजाज कुछ बदला हुआ-सा मालूम होता है, क्या वजह है?"

"किन मानियों में?" सरफराजुद्दौला ने कुर्सी पर चेतनता के साथ बैठते हुए पूछा।

मिस्टर फुलेर एक क्षण चुप रहे। फिर नजर उठा कर बोले—"शायद आपको मालूम होगा, अभी हाल में कलकत्ता से गवर्नर जनरल बहादुर का खरीता नवाब के पास आया था। उसमें गवर्नर-जनरल ने नवाब को लिखा था कि अवध दरबार में एक अंग्रेजी तथा एक हिन्दुस्तानी पल्टन और रखी जाए। इसका जवाब भी जल्द माँगा था, ताकि दूसरे ठिकानों से फौजें लखनऊ आ जाएँ।"

सरफराजुद्दौला बोले—"नवाब गवर्नर-जनरल बहादुर के उस हुक्मनामे का जिक्र आलाहजरत ने मुझसे किया जरूर था, मगर उसके बाद इस बारे में फिर कोई चर्चा नहीं चलाई। मालूम नहीं हजरत ने क्या जवाब दिया।"

"एक अर्से के बाद आज अभी कुछ देर पहले उसका तहरीरी जवाब उन्होंने हमारे

पास भेजा है। लिखा है—हम इस इसलाह को मंजूर करने से मजबूर हैं। अवध दरबार में दो पल्टनें और रखने के मानी यही है कि सर्फे की रकम का एक बहुत बड़ा हिस्सा हम और बर्दाश्त करें। अभी तक कम्पनी की पल्टनों का जो खर्चा हमारे सर पर बोझ बन कर लदा हुआ है, वही ढोना हमें मुश्किल गुजर रहा है। हाँ, अगर कम्पनी सरकार अपनी दो पल्टनें लखनऊ में और रखना मुनासिब ही समझती है, तो अपनी जिम्मेदारी पर रख सकती है। उन पल्टनों का खर्चा कम्पनी को ही बर्दाश्त करना पड़ेगा। हम एक पाई के देनदार न होंगे।" साँस लेकर मिस्टर फुलेर ने कहा—"इस तरह का रूखा-सूखा, दो टूक जवाब पाकर हमें हैरत हो रही है। अभी तक नवाब आसफुद्दौला ने ऐसा कोरा जवाब कभी नहीं दिया था।" और वह गौर से सरफराजुद्दौला की तरफ देखने लगे।

"क्या अर्ज करूँ? इस जवाब का मुझे कोई पता नहीं है।" सरफराजुद्दौला ने अनभिज्ञता प्रकट की।

"मैं तो समझता था कि शायद आपकी ही सलाह से उन्होंने ऐसा जवाब दिया होगा। क्योंकि उनके नजदीक नायबुल रियासत से बढ़ कर दूसरा कौन सलाहकार हो सकता है?"

सरफराजुद्दौला मुस्कराए। फिर बोले—"आप का ख्याल गलत है। ऐसे मामलों में आलाहजरत को सलाह-मशविरा देने वाले दूसरे लोग हैं।" फिर जरा रुक कर कहा—"हजरत का यकीन-ऐतबार उन्हीं पर है।"

"वह कौन लोग हैं?" रजीडेन्ट ने विस्मयभरी दृष्टि से उनकी ओर देखा।

"वह महाराजा झाऊलाल हैं।" सरफराजुद्दौला ने इतमीनान से कहा—"झाऊलाल पर उनको बड़ा विश्वास है। अपना सच्चा खैरंदेश समझते हैं। उनकी इसलाह को आँखें बन्द करके दिल में रख लेते हैं।"

"महाराजा झाऊलाल इस तरह का आदमी है?" रजीडेन्ट ने आश्चर्य भरे लहजे से पूछा—"वह अपने झूठे-सच्चे मशविरे से आसफुद्दौला का मिजाज बदल सकता है?"

"जी हाँ?" सरफराजुद्दौला ने कहा—"आप शायद अभी महाराजा झाऊलाल के करिश्मों से वाकिफ नहीं हैं।"

मिस्टर फुलेर दो क्षण खामोश बैठे कुछ सोचते रहे, फिर नजर उठा कर बोले—"नायबुल-रियासत साहब! हैरत है। नवाब आसफुद्दौला के पास महाराजा झाऊलाल ऐसा कोई फितरती व्यक्ति भी मौजूद है जो अपनी इसलाह से नवाब के दिल-दिमाग में कम्पनी सरकार की खिलाफत पैदा कर सकता है, यह मुझे आज ही मालूम हो रहा है।"

सरफराजुद्दौला एक क्षण की खामोशी के बाद धीरे से बोले—"सिर्फ आसफुद्दौला के दिल में कम्पनी की खिलाफत ही नहीं पैदा कर सकते, उससे कहीं ज्यादा कर सकते हैं।"

"क्या कर सकते हैं ?" रजीडेन्ट ने बड़े आश्चर्य से पूछा—"क्या वह कोई खतरनाक साजिश खड़ी कर सकते हैं ?"

सरफराजुद्दौला बड़े गम्भीर स्वर से बोले—"उन्होंने साजिश तो इतनी खतरनाक खड़ी की थी जो कम्पनी सरकार के लिए बहुत मुश्किल पैदा कर सकती थी। मगर गनीमत यही है कि वह....."

"हमें बेचैनी हो रही है, नायबुल-रियासत साहब ?" रजीडेन्ट कुछ आश्चर्य तथा कुछ उत्सुकता भरे लहजे से बोला—"आप साफतौर पर पूरी बात कहिए।"

सरफराजुद्दौला ने झाऊलाल के लिखे मसौदे, नकलों सहित, जिन पर महाराजा की मोहर भी अंकित थी, निकाल कर रजीडेन्ट के सामने रख दिए। बोले—"जरा इन मसौदों और उनकी नकलों का मुलाहजा फरमाइए ? झाऊलाल कितनी बड़ी और कितनी खतरनाक साजिश खड़ी कर सकते हैं। कम्पनी सरकार की हुकूमत को नेस्त-नाबूत करने की कितनी ज़ोरदार हिम्मत रखते हैं।" फिर साँस लेकर कहा—"खुदा का शुक्र है कि उनकी ये साजिश कामयाबी को नहीं पहुँच सकी। उनके ये खतूत ठिकानों को नहीं पहुँच सके। मेरे हाथ लग गए। वरना एक हंगामा खड़ा हो जाने में क्या देर थी ?"

रजीडेन्ट ने मसौदों को हाथ में लेकर देखा, पढ़ा और सहसा उसके मुँह से निकल पड़ा—"ओह, झाऊलाल कितना खतरनाक आदमी है ?" फिर सरफराजुद्दौला की तरफ नजर उठा कर कहा—"वह इतनी जबर्दस्त साजिश कर रहा था ?"

"मैं क्या अर्ज करूँ ?" सरफराजुद्दौला ने खुशामदाना लहजे से कहा—"उनकी फितरत आपके सामने मौजूद है।"

रजीडेन्ट ने एकबार पुनः मसौदों को उलटा-पलटा। फिर बहुत मीठे स्वर में सरफराजुद्दौला से कहा—"हम आप के बहुत एहसानमन्द होंगे। ये सभी मसौदे और उनकी मोहरें लगी हुई नकलें आप हमें दे दीजिए।"

"मैं आपको देने के लिए ही लाया हूँ।" सरफराजुद्दौला ने कहा।

रजीडेन्ट ने कहा—"हमारे लिए यह बहुत बड़ी चेतावनी है। हम इन सब को कल की डाक से कलकत्ता गवर्नर-जनरल के मुलाहजा के लिए रवाना करेंगे और चाहेंगे कि ऐसे खतरनाक साजिशी शख्स को मुनासिब सजा दी जाए।"

इसके बाद मुलाकात खतम हो गई। सरफराजुद्दौला ने समझ लिया कि झाऊलाल का पाया उखड़ गया। अब बिना नतीजे को पहुँचे हुए वह नहीं बच सकते। अगर नवाब आसफुद्दौला किसी तरह उन्हें बचाना भी चाहेंगे, तो वह भी मुसीबत में पड़ जाएँगे। और वह बग्घी पर बैठ कर अपने घर आ गए।

× × ×

महाराजा झाऊलाल के उन मसौदों आदि को पा कर गवर्नर जनरल लार्ड सर-जॉन शोर चकित रह गया। जितनी बार उन कागजातों पर उनकी निगाह जमती थी,

चेहरे का रंग बदल जाता था। सोचा—इस विषय में नवाब-अवध से लिखा-पढ़ी कर के कैफियत मालूम करना मुनासिब नहीं। खुद चल कर नवाब से बातें करनी चाहिए और साजिशी को अपने कब्जे में करना चाहिए।

लार्ड सर जॉन शोर कलकत्ता से रवाना हुए और कानपुर जाकर ठहरे। नवाब आसफुद्दौला को अपने आने की खबर दे कर उन्हें लखनऊ से कानपुर बुलाया।

अचानक गवर्नर का कानपुर आना तथा उन्हें बुलाना नवाब आसफुद्दौला के लिए एक अजीब-सी बात हुई। वह कुछ घबड़ा-से गए। शीघ्र ही लखनऊ से कानपुर पहुँच गए। एक एकान्त स्थान में दोनों की बैठक जमी।

सर जॉन शोर ने कहा—"एकाएक हमारे यहाँ आने तथा आप को मुलाकात के लिए लखनऊ से कानपुर बुलाने से आलाहजरत को कुछ हैरत का बाइस महसूस हुआ होगा?"

आसफुद्दौला बोले—"कुछ हैरत का वाइस तो जरूर महसूस हुआ था। मगर फिर हमने यह समझ लिया कि शायद आप किसी जरूरी काम से किसी दूसरी तरफ तशरीफ ले जा रहे होंगे। रास्ते में हमसे भी मुलाकात करना पसन्द आ गया होगा। और इसे हमने आपकी नजरे-इनायत ख्याल किया, इज्जत अफजाई समझा।"

"नहीं?" गवर्नर ने कहा—"हम खासतौर पर आपसे मुलाकात करने के लिए ही आए हैं। हमारे हाथों में एक बहुत ही पेचीदा मसला है और वह बिला आलाहजरत के बात किए हल नहीं हो सकता था?"

"ऐसा कौन-सा पेचीदा मसला है?" आसफुद्दौला ने गौर से उनके चेहरे की तरफ देख कर कहा—"फरमाइए?"

सर जॉन शोर एक क्षण खामोश रहे। फिर नजर उठा कर गम्भीरतापूर्वक कहा—"कम्पनी सरकार के साथ नवाब-अवध का जो अहदनामा तहरीर हुआ है, उसके जरिए आपस में एक गहरा दोस्ताना कायम हो चुका है और हम आप एक दूसरे के सच्चे वफादार दोस्त बन चुके हैं। इसे शायद आप भी महसूस करते होंगे?"

"बिला शक?" आसफुद्दौला ने कहा लेकिन उनका स्वर आश्चर्य में डूबा हुआ था।

सर जॉन शोर ने कहा—"हमारे कहने का मतलब यह है कि उस दोस्ताने के मुताबिक अवध दरबार का दुश्मन कम्पनी सरकार का दुश्मन है और अवध सरकार का दोस्त कम्पनी सरकार का दोस्त है।"

"इसमें जरा भी शक नहीं?" आसफुद्दौला ने कहा—दोस्ताने के मानी भी यही हैं।"

गवर्नर जनरल लार्ड सर जॉन शोर कुछ अधिक गम्भीर हो गए। और झाऊलाल के मसौदों को निकाल कर आसफुद्दौला के सामने रख कर बोले—"जरा इन कागजातों को मुलाहजा फरमाइए। इनमें आप के एक खास कारकुन और सलाहकार की कारगुजारी

मौजूद है ? क्या दोस्ताने के मानी यही है ?"

आसफुद्दौला ने उन सभी मसौदों को सतर्कतापूर्वक देखा-पढ़ा। महाराजा झाऊलाल की मोहर भी अंकित देखी। सन्नाटे में आ गए। आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कुछ समझ में न आया। कुछ कहने के लिए जबान नहीं खुल रही थी। चेहरे पर अनेक प्रकार के रंग दौड़ रहे थे। और बार-बार मसौदों को उलट-पलट कर पढ़ रहे थे।

गवर्नर जनरल ने कहा—"हम समझते हैं कि ये साजिश झाऊलाल ने आपकी इसलाह, इशारे से ही करनी चाही थी। वरना एक कारकुन इतनी बड़ी साजिश करने की कैसे हिम्मत कर सकता था ?"

"हमारा खुदा गवाह है ?" आसफुद्दौला ने पत्रों पर से नजर हटा कर कहा—"हम अपने धर्म-ईमान के साथ कहते हैं, हमें आज, इस वक्त के पहले तक इस मामले का जरा भी पता नहीं था। महाराजा झाऊलाल ने यह बेजा हरकत क्यों करनी चाही थी, हमारी समझ में नहीं आ रही।" फिर साँस लेकर कर कहा—"साहेब वाला खुद गौर फरमा सकते हैं कि कम्पनी सरकार की मुखालफत और किसी तरह की साजिश करने की ख्वाहिश क्या हम कर सकते हैं ? कम्पनी सरकार ने ही हमें अवध रियासत की मसनद बख्शी है। इस तरह से हमारी सर-परस्ती फरमा रही है और हम ऐसी बेजा हरकत करेंगे ?"

"अगर हम आप के इस कहने को सच मान लें तो हमें आश्चर्य होता है कि झाऊलाल ने ऐसा क्यों करना चाहा था।" लहजा अधिक गम्भीर था।

"हम आप को किस तरह यकीन दिलाएँ ? आसफुद्दौला ने मीठे और विनीत लहजे से कहा—"हम कुरान पाक की कसम खा कर कह रहे हैं कि झाऊलाल की इस फितरत से हमें जरा भी न इल्म है, न लगाव। हमें इस मामले में खुद हैरानी हो रही है।"

"आप खुद ख्याल फरमा सकते हैं कि अगर यह साजिश अपनी कामयाबी को पहुँच जाती तो मुल्क में कितना जबरदस्त हंगामा बरपा हो जाता और उसे दबाने के लिए कम्पनी सरकार को कितनी परेशानी उठानी पड़ जाती।"

आसफुद्दौला कुछ नहीं बोले।

दो क्षण खामोश रहने के बाद गवर्नर ने गम्भीर स्वर से कहा—"ऐसे साजिशी, ऐसे फितरती और कम्पनी सरकार के ऐसे मुखालिफ को आप अपने पास रखना पसन्द करते हैं ?"

नवाब आसफुद्दौला की साँप छछूंदर की गति हो गई। महाराजा झाऊलाल उनके सच्चे हितैषी, सलाहकार और अवध राज्य की दिल से भलाई चाहने वाले थे। वह सोच रहे थे—अगर वाकई झाऊलाल ने इस तरह से कम्पनी की हुकूमत की उखाड़ना चाहा था, तो किसके लिए ? अपने लिए ? हरगिज नहीं। आए दिन की कम्पनी की ज्यादती

और हमारी परेशानी को देख कर उनका खैरख्वाह दिल ऐसा करने के लिए मजबूर हो गया होगा। ऐसा विचार आसफुद्दौला के लिए गुड़ भरा छुरा हो गया। बोले—"महाराजा झाऊलाल एक शरीफ खानदान के हैं। बहुत काबिल भी हैं और शुरू हुकूमत से हमारे कारकुन हैं। कभी कोई हरकत ऐसी देखने-सुनने में नहीं आई कि हम उन पर किसी तरह का शक करते।"

लेकिन ये जो कागजात आप के सामने मौजूद हैं, क्या आपके उस झाऊलाल को अब भी सीधा-सच्चा साबित करते हैं? क्या आप इन मसौदों को झाऊलाल की कलम का लिखा और लगी हुई उनकी मोहर को गलत समझते हैं?" सर जान शोर का स्वर रूखा था।

आसफुद्दौला चुप बैठे रह गए।

गवर्नर जनरल भी एक क्षण चुप रहे। फिर नजर उठा कर कहा—"बेहतर यही होगा कि आप झाऊलाल को हमारे सिपुर्द कर दें।

यह सुनते ही आसफुद्दौला को लगा, मानो महा सेनापति ने उनके कलेजे से दिल को काट कर अलग कर देने के लिए छुरी रख दी है। गले में कुछ अटक-सा गया, न उसे निगल ही सकते थे, न मुँह से बाहर ही निकाल सकते थे। गवर्नर के आतंक को पीछे धकेल देने की उनमें शक्ति न थी और अपने परम मित्र, परम विश्वासी तथा परेशानियों में साथ देने वाले अपने एक सच्चे हितैषी महाराजा झाऊलाल को अपने से विलग करके उनका विछोह सहन करना भी उनके अधिकार की बात न थी। मुख से एक शब्द न निकल कर संकोच भरी दृष्टि से गवर्नर के चेहरे को ताकते बैठे रह गए।

उनकी यह दशा देख कर सर जान शोर ने कहा—"हम समझ रहे हैं कि महाराजा झाऊलाल आला हजरत के एक खास इनायतफरमा हैं। उनको हमारे सिपुर्द करने में आप को पसो-पेश ही नहीं एक दर्द महसूस हो रहा होगा। लेकिन यह एक ऐसा मामला है, झाऊलाल की एक ऐसी बदनीयत भरी कारस्तानी है जो झाऊलाल के साथ आप और आप की रियासत को भी ले डूबेगी। झाऊलाल को बचाना आला हजरत के गले अटक जाएगा। कम्पनी सरकार की हुकूमत को मुल्क से उखाड़ फेंकने के सच्चे मुजरिम आप ही साबित होंगे।" लहजा बहुत गम्भीर तथा रूखा-सूखा था।

बड़ी मुश्किल में आसफुद्दौला केवल इतना ही कह सके—"महाराजा झाऊलाल एक पुराने खानदानी और इज्जतदार आदमी हैं।"

'खैर।" गवर्नर ने एक कड़ुवा घूंट सा निगल कर कहा—आप के इस दर्द को महसूस करते हुए हम आप से वादा करते हैं, यकीन दिलाते हैं कि झाऊलाल की बेइज्जती नहीं की जायगी। कोई ऐसी सजा नहीं दी जाएगी कि उनकी खानदानी इज्जत-आबरू धूल में मिल जाए। झाऊलाल को अवध के इलाके से दूर ले जाकर कम्पनी के इलाके में रखा जाएगा।"

आसफुद्दौला खामोश रह गए।

सर जान शोर आतंक भरे लहजे से फिर बोले—"अपना बुरा-भला आपको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। एक झाऊलाल के पीछे अपने आप को आफत में फँसा देना अकलमन्दी नहीं कही जाएगी।" फिर जरा रुक कर कहा—"ये मामला किसी कीमत पर भी दर-गुजर नहीं किया जा सकता। अगर आप को हमारा कहना मंजूर नहीं है तो बेहतर है। इसका नतीजा देखने के लिए आप तैय्यार रहें।"

अब गवर्नर जनरल का आदेश सिर झुका कर मान लेने के अतिरिक्त आसफुद्दौला के पास कोई दूसरा उपाय न था। अतः आसफुद्दौला ने हृदय कड़ा कर के कहा—"हम आप के इर्शाद के खिलाफ न कभी गए हैं और न इस वक्त जा सकते हैं। आप जैसा मुनासिब समझें, करें। हमें कोई उजर न होगा।"

सर जान शोर ने पहली बाजी जीत ली। आसफुद्दौला को अपनी मुट्ठी में बन्द समझ कर उन्होंने दूसरा पाँसा फेंका, बोले—"इस वक्त एक मसला और हमारे सामने है। उसके बारे में भी हम आप के इरादे को जानना चाहते हैं।"

"फरमाइए ?" आसफुद्दौला ने प्रश्न भरी नजर से उनकी तरफ देखा।

गवर्नर जनरल ने कहा—"लखनऊ के रजीडेन्ट ने हमें खबर दी है कि आप से जो दो पल्टनें और लखनऊ में रखने के लिए कहा गया था उसे आपने मंजूर नहीं किया। हमारे कहने को एकदम ठुकरा दिया है।"

नवाब आसफुद्दौला इस समय पूर्णरूप से गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर के आतंक में थे। उनके कुछ भी कहने का विरोध करना उनकी शक्ति से बाहर की बात थी। ऊँट चाहे जिस करवट बैठे। अवध रियासत रहे या मिटे, इस विषय को सोचना उनके अधिकार से दूर हो रहा था। अतः धड़कते हुए दिल से बोले—"हमें आप का वह हुक्म भी मंजूर है। हम उन दोनों नयी पल्टनों का भी खर्च बरदाश्त करने को तैय्यार हैं।"

जरा देर की खामोशी के बाद सर जान शोर ने एक तीसरा तीर भी चला दिया। कहा—"हाँ, एक बात और आप से कहना है। इस वक्त कम्पनी सरकार को रुपयों की बहुत सख्त जरूरत है। इसलिए अवध दरबार पर जो अंग्रेजी पल्टनों के खर्चे चढ़े हुए हैं उन्हें बहुत जल्द अदा करने की तदवीर की जाए।"

"इसकी भी कोशिश करूँगा।" आसफुद्दौला ने धीरे से कहा।

इसके बाद मुलाकात खतम हो गई।

लखनऊ के रेजीडेन्ट मिस्टर फुलेर आसफुद्दौला के साथ ही कानपुर आए थे और गवर्नर जनरल की खिदमत में हाजिर थे। अतः गवर्नर जनरल में उन्हें अपना मंतव्य समझा कर आगे की कार्यवाही उनके हाथों सौंप कर खुद कानपुर से कलकत्ता वापस चले गए।

महा सेनापति को विदा करके नवाब आसफुद्दौला भी लखनऊ लौट आए। लखनऊ में उन्होंने कानपुर की विषय-वार्ता का किसी से कोई जिक्र नहीं किया। यहाँ तक कि महाराजा झाऊलाल से भी कुछ कहने-सुनने की हिम्मत नहीं पड़ी। उदास मन लेकर दौलतखाना आसफी में जाकर अपने कमरे में पलँग पर लेट गये। किसी से मिलते भी नहीं थे।

और लखनऊ से रेजीडेन्ट मिस्टर फुलेर ने कानपुर से लखनऊ लौटते ही अपना काम शुरू कर दिया। वह दिन भी आ गया जिस दिन महाराजा झाऊलाल बेबसी-बेकसी की हालत में अपने समस्त परिवार, बाप दादों की जायदाद तथा कुछ सच्चे स्वामिभक्त नौकर नौकरानियों सहित अंग्रेजी पल्टन की निगरानी में, अपनी जन्मभूमि लखनऊ से कम्पनी सरकार की अमलदारी अजीमाबाद की तरफ जा रहे थे। लखनऊ नगर में एक तहलका सा मच रहा था। नगरवासी उनके हाल पर आँसू बहा रहे थे। महाराजा झाऊलाल नायबुल-रियासत मिरजा हसन रजा खाँ के दिल का काँटा भले रहे हों। लेकिन लखनऊ की जनता में वे प्रिय थे। उनकी सज्जनता, ईमानदारी तथा वफादारी किसी से छिपी नहीं थी। उनका निर्वासन लखनऊ के बच्चे-बच्चे को खटक रहा था। सब की ज़बान पर था—आज अवध राज्य का एक मजबूत खम्भा गिर गया। लखनऊ के लोगों के लिए महाराजा का शहर से निकाला जाना एक समस्या थी। कारण का किसी को पता न था। दुखित हृदय से भाँति-भाँति के अनुमान ही लगाए जा रहे थे।

जाते समय झाऊलाल तथा आसफुद्दौला में भेंट भी न हुई। उधर नवाब अपनी उदासी लिए दौलतखाना आसफी में पड़े हुए चुपचाप आँसू बहा रहे थे। इधर महाराजा झाऊलाल अपनी सचाई तथा वफादारी का बोझ गर्दन पर सँभाले आँखों से आँसू बहाते जा रहे थे। उन्हें भी किसी से मिलने की इच्छा न थी।

७

नवाब आसफुद्दौला को किसी पहलू चैन न थी। झाऊलाल के विछोह का जख्म भरा नहीं था कि लखनऊ के रजीडेन्ट ने उन पर दबाव डालने शुरू कर दिए। अवध दरबार को कम्पनी की पल्टनों के खर्चे का जो कई लाख रुपया देना बाकी था, रजीडेन्ट ने नवाब से उसकी माँग शुरू कर दी। तकाजे की आवाज शैतान की धुन बन गई। हर सबेरे-शाम कानों में गूंजने लगी। खजाने में रुपयों का अभाव था। आसफुद्दौला को एक दूसरी परेशानी ने घेर लिया। और अन्त में उन्हें इधर-उधर हाथ फैलाने पड़ने लगे।

नवाब शुजाउद्दौला की अन्य बेगमों से जो चौबीस लड़के थे, अमीनुद्दौला सआदत अली खाँ उर्फ मिरजा मंगलू सबसे बड़े थे। सआदत अली खाँ बचपन से चुस्त-चालाक,

साहसी तथा समझदार थे। ऐसे-ऐसे साहसपूर्ण खेल खेलते और ऐसी समझ की बातें किया करते थे कि शुजाउद्दौला तथा उसके दरबारी देख कर आश्चर्य-चकित रह जाया करते थे। अक्सर शुजाउद्दौला अपनी प्रमुख बेगम आसफुद्दौला की माता से कहा करते थे—'बेगम अगर तुम अपना हाथ मंगलू के सिर पर रखोगी तो एक अजीब तमाशा देखोगी। मंगलू में वह साहस तथा वह समझ-बूझ मौजूद है कि वह तुम्हारे दुपट्टे का फुरहरा बना कर अपने लश्कर का झंडा नर्मदा के उस पार गाड़ेगा।'

शुजाउद्दौला ने अपनी जिन्दगी में ही सआदतअली खाँ को हर प्रकार से योग्य समझ कर अवध रियासत के एक सूबा कटेहर-बरैली रुहेलखण्ड का प्रबंधक बना दिया था। वहाँ पहुँच कर सआदत अलीखाँ ने अपने साहस तथा योग्यता का अच्छा परिचय दिया था। शीघ्र ही सूबे के कोने-कोने में अपनी धाक जमा दी थी। बल्कि एक प्रकार से वह उस सूबे के स्वयं मालिक मुख्तार भी बन गए थे। सूबे की जनता भी उनको ही वहाँ का शासक समझने लग गई थी। इसके अलावा धीरे-धीरे अपनी चुस्ती चालाकी के बल पर सआदत अलीखाँ ने ईस्ट इंडिया कम्पनी के विशेष अधिकारियों से राह-रसम पैदा कर करके अच्छी गोटी बैठा ली थी। सूबे में कुछ सिपाही भी एकत्रित करके शासन के नियमानुसार, दफ्तर अमले अहलकर तथा नौकर-चाकर आदि जमा कर लिए थे। इस प्रकार एक अर्से से सआदतअली खाँ सूबा कटेहर-बरैली के खुद-मुख्तार हाकिम बने हुए सपरिवार वहीं रह रहे थे।

शुजाउद्दौला की मृत्यु के बाद जब उनके बड़े लड़के आसफुद्दौला ने मसनद नशीन होकर अवध राज्य की बाग-डोर अपने हाथों में ली, उसके कुछ दिनों बाद राजधानी को फैजाबाद से लखनऊ भी उठा लाए, मगर इस सारे उथल-पुथल और नवीनता का सूबा कटेहर-बरैली के प्रबंधक-शासक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। सआदतअली खाँ के लिए मानो कुछ हुआ ही नहीं था। वह अपने सूबे को एक प्रकार से अवध की नवाबी से अलग ही समझे बैठे थे।

आसफुद्दौला समझते थे कि सआदतअली खाँ उनके छोटे भाई ही थे। इसलिए कभी उन्होंने उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया था। यदि भूले-भटके उस सूबे का ख्याल आ जाता था तो सहज भाव से दिल को समझा लिया करते थे कि सूबा कटेहर-बरैली है तो हमारा ही, सआदतअली खाँ का एक अर्से से उसका प्रबंध कर रहे हैं, अच्छा है। हमें भी उस तरफ से कोई परेशानी नहीं उठानी पड़ रही। जैसा चल रहा है बेहतर है।

इधर जब से कम्पनी सरकार ने उनको अधिक दबाना तथा आए दिन रुपयों की माँग आरम्भ कर दी थी तो उनका ख्याल सूबा कटेहर-बरैली की तरफ दौड़ा था। आज तक उस सूबे से कभी एक पैसा भी आकर अवध के खजाने में जमा नहीं हुआ था। अतः कम्पनी की माँग और अपनी मजबूरी को लेकर आसफुद्दौला ने अनेक बार सआदतअली खाँ को उस सूबे की आमदनी में से कुछ रुपया भेजने के लिए लिखा था। लेकिन सआदत

अली खाँ तो दूसरे ही बहाव में बह रहे थे। वह अपने सूबे का अवध राज्य से कोई ताल्लुक न समझ कर अपने को ही वहाँ का नवाब समझ रहे थे। इसलिए उन्होंने न आसफुद्दौला के लिखने की कोई परवाह की और न किसी प्रकार का जवाब ही दिया था। एकदम उपेक्षा कर गए।

महाराजा झाऊलाल के बिछोह ने आसफुद्दौला का दिल तो तोड़ ही रखा था। रजीडेन्ट के तकाजों और पल्टनों के खर्च की बाकी रकम चुकाने की ताकीदों ने उन्हें और अधिक झखझोर डाला। विवश होकर उन्होंने पुनः सआदतअली खाँ को कुछ रुपया भेजने को लिखा। लेकिन सआदतअली खाँ कानों में तेल डाले बैठे रहे।

दोपहर के आराम आशायश के बाद आसफुद्दौला दीवाने-खास में पहुँच कर मसनद नशीन हो जाया करते थे। इसी वक्त नायबुल-रियासत भी हाजिर होकर जरूरी कागजात मलाहजा कराया करते थे।

सहसा आसफुद्दौला ने नजर घुमा कर नायबुल रियासत की ओर देख कर कहा —"इस वक्त हमें एक बात याद आई। वह भी रजीडेन्ट की इस ताकीद और रुपयों की माँग से किसी तरह कम नहीं है।" हमें मालूम हुआ है कि मिरजा जंगलू, मिराज मेंडू और दूसरे सभी भाई अपनी-अपनी अलग-जागीरें-इलाके चाहते हैं। उसके साथ यह भी एक अजीब बात है कि वे लोग अपने इलाकों में पूरी खुदमुख्तारी भी चाहते हैं।"

नायबुल रियासत एक पल चुप रहे फिर बोले—"इस तौर-तरीके से तो अवध की रियासत जरा-जरा से टुकड़ों में बँट जाएगी। अवध का नवाब भी एक जरा से टुकड़े का मालिक रह जाएगा।"

"इसकी एक खास वजह भी है।" आसफुद्दौला ने कहा—"इस माँग के लिए उन लोगों के सामने एक मिसाल मौजूद है।"

नायबुल-रियासत बड़े गौर से नवाब के चेहरे की तरफ देखने लगे।

"वह मिसाल अमीनुद्दौला सआदतअली खाँ की है। सआदतअली खाँ एक अर्से से उस सूबे में जमे बैठे हैं और जमे क्या बैठे हैं, उस सूबे को अपना मौरुसी इलाका समझ कर खुद मुख्तार बन गए हैं। वहाँ अपनी पूरी शान-शौकत कायम कर रखी है। सभी दफ्तर कायम कर रखे हैं और कुछ फौज भी जमा कर ली है। इसके अलावा यह भी सुना गया है कि उन्होंने कम्पनी के खास-खास अफसरों से दोस्ताना भी कायम कर लिया है।"

एक क्षण बाद नायबुल रियासत ने कहा—"एक अजीब सी बात यह भी सुनने में आई है कि नजफखाँ के जरिए उन्होंने दिल्ली बादशाहत से वजारत का ओहदा अपने नाम कराना चाहा है और उसके लिए काफी कोशिश कर रहे हैं।"

"इसके मानी ये हैं कि वह हमें पीछे ढकेल कर खुद आगे बढ़ना चाहते हैं।" आसफुद्दौला ने गम्भीर लहजे से कहा—गोया वह खुद अवध का नवाब बनना चाहते हैं।"

नायबुल-रियासत ने कहा—"उनकी इन हरकतों के मानी तो यही होते हैं।"

"तब ?" आसफुद्दौला ने उनकी तरफ प्रश्नभरी नजर से देख कर पूछा।

"आला हजरत ?" नायबुल-रियासत ने मीठे और गम्भीर लहजे से कहा—"इस बारे में फिदवी की समझ में एक ही बात आ रही है। यानी उन्हें उस सूबे से बुला कर यहाँ लखनऊ में अपने पास रखा जाए। जिस तरीके से यहाँ जनाब आली के दूसरे भाई रह रहे हैं और उस इलाके के इन्तजाम के वास्ते कोई दूसरा शख्स सूबेदार बना कर वहाँ भेज दिया जाए। इस तरीके से उनकी वह खुदमुख्तारी और नाजायज हौसले अपने आप खतम हो जाएँगे। साथ ही दूसरे भाइयों के दिमाग में जो फितना पैदा हो रहा है वह भी ठन्डा हो जाएगा।"

"ये इसलाह हमें पसंद है ?" आसफुद्दौला ने कहा—"हमारे भी ख्याल में यही बात आ रही थी।" फिर जरा रुकने के बाद कहा—लेकिन जब वहाँ उन्होंने इस कदर हाथ-पैर फैला रखे हैं और खुद अवध का नवाब वजीर बनना चाहते हैं। ऐसी हालत में शायद वह हमारे हुक्म-पैगाम को भी ठुकरा सकते हैं।"

"रजीडेन्ट लखनऊ की मारफत उनको बुला कर यहाँ रखा जाए।" नायबुल-रियासत ने दृढ़ता के साथ कहा।

"ये सब हमारी ही गलती है।" आसफुद्दौला ने धीरे से कहा—"अगर हमने मसनद पर कदम रखते ही उन्हें वहाँ से बुला कर अपने पास रखा होता तो आज ये परेशानी न पैदा होती।"

"कुछ भी गलती नहीं हुई।" नायबुल-रियासत ने जोरदार लहजे से कहा—"अवध इलाके के मालिक और हुक्मरा जनाब अली हैं। कटेहर-बरैली का वह इलाका अवध की रियासत से अलग नहीं है। और न अमीनुद्दौला की वह कोई मौरुसी जागीर है। लाजमी तौर पर उन्हें जनाब आली का हुक्म मानना पड़ेगा और यहाँ आकर रहना होगा।" फिर धीरे से कहा—"सिर्फ एक बात ऐसी है जो कुछ झंझट पैदा कर सकती है ?"

"क्या ?" आसफुद्दौला ने उनके चेहरे की तरफ देखा।

नायबुल-रियासत ने गम्भीर स्वर से कहा—"जैसा कि सुना जा रहा है कि उन्होंने कम्पनी सरकार के खास-खास अफसरों से दोस्ताना बढ़ा रखा है। उस दोस्ताने के सिलसिले में मुमकिन हो सकता है कि कम्पनी सरकार उनकी कुछ तरफदारी करे। इसी लिए फदवी ने यह अर्ज किया है कि लखनऊ के रजीडेन्ट के जरिए यमीनुद्दौला को लखनऊ बुलाया जाए।"

सैर के लिए जाने का वक्त हो चुका था। इसलिए आसफुद्दौला मसनद से उठ कर दूसरे कमरे की तरफ चले गए।

दूसरे दिन तीसरे फहर के बाद आसफुद्दौला ने लखनऊ के रजीडेन्ट मेजर फुलेर को मुलाकात के लिए दौलतखाना आसफी में तशरीफ लाने का पैगाम भेजा। मेजर फुलेर घोड़े पर सवार होकर आ गए। स्वागत सत्कार के बाद बातचीत शुरू हुई।

आसफुद्दौला ने कहा—"आज हमने आप को एक खास और जरूरी मशविरे के लिए तकलीफ दी है। इसलिए हमें उम्मीद है कि आप माफ करेंगे।"

मेजर फुलेर मुस्कराते हुए बोले—"कोई बात नहीं आला हजरत! हमारा आप का मिल बैठना ही बड़े मतलब का होता है। फरमाइए?"

"हमारा एक खास काम है और वह आप के जरिए ही पूरा हो सकता है।"

"ऐसा कौन सा काम है, जिसे नवाब अवध आसफुद्दौला बहादुर खुद अपने जरिए पूरा नहीं कर सकते? मेरा तो ख्याल है कि अहम से अहम काम में भी आप किसी की मदद के मोहताज नहीं हैं।" मेजर मुस्करा रहे थे।

"लेकिन सभी काम एक ही तरह के नहीं हुआ करते।" आसफुद्दौला ने भी थोड़ा मुस्करा कर कहा—"हमारे सामने दरपेश काम कुछ ऐसा ही है जो आपकी इमदाद चाहता है।"

"खैर, फरमाइए? मैं अगर उस काम में कुछ आप को इमदाद दे सकता हूँगा तो जरूर दूँगा।"

आसफुद्दौला संभल कर बैठने के बाद बोले—"मेजर साहब? शायद आप को मालूम होगा कि हमारे एक सौतेले भाई सआदतअली खाँ एक अर्से से अवध रियासत के एक सूबा कटेहर-बरैली रुहेलखण्ड में रह रहे हैं।"

मेजर फुलेर जल्दी से बोल उठे—"हाँ-हाँ, अच्छी तरह जानता हूँ। नवाब सआदतअली खाँ अकसर कलकत्ता भी गवर्नर जनरल से मुलाकात करने के लिए जाया आया करते हैं। मुझसे उनसे कलकत्ता में ही जान-पहचान हुई थी। काबिल आदमी हैं।"

"वह हमारे भाई हैं?" आसफुद्दौला ने कहा—"हम चाहते हैं कि वह हमारे पास आकर यहीं लखनऊ में रहें। जिस तरह कि हमारे और दूसरे भाई यहाँ हमारे पास रह रहे हैं। हम बनिस्बत अपने दूसरे भाइयों के उनका ज्यादा लिहाज करेंगे। अपने दरबार में उनको इज्जत और मर्तबे को काफी ऊँचा उठा देंगे।"

"आप क्यों ऐसा चाहते हैं?" फुलेर ने थोड़ा गम्भीर होकर पूछा—"उनके वहाँ रहने से आपका क्या नुकसान है?"

"नुकसान की बात नहीं है मिस्टर फुलेर।" आसफुद्दौला ने भी गम्भीर होकर कहा—"यह हमारी रियासत और खानदान के दस्तूर-कायदे की बात है। अवध रियासत का पुराना कायदा-दस्तूर यह चला आ रहा है कि बाप की वफ़ात के बाद बड़ा लड़का रियासत का मालिक-वारिस और बाप का जांनशीन हुआ करता है। बाकी सभी लड़के यानी जांनशीन के दूसरे सगे-सौतेले भाई उसके फरमांबरदार हुआ करते हैं। उन भाइयों में कोई भी रियासत के किसी सूबे का खुदमुख्तार मालिक नहीं हुआ करता। इसलिए हम चाहते हैं कि सआदतअली खाँ यहाँ आकर हमारे पास रहें।"

"तब आप इस बारे में मुझसे क्या इमदाद चाहते हैं ?" फुलेर ने पूछा।

"आप उन्हें उस सूबे से यहाँ हमारे पास बुला दें।"

मेजर फुलेर चुप रह गए।

"आप खामोश क्यों रह गए ?" आसफुद्दौला ने उनके चेहरे पर नजर जमा कर कहा—"आप को उन्हें यहाँ बुला देने में कोई दिक्कत महसूस हो रही है ? यह तो एक कायदे-दस्तूर की बात है। फिर यहाँ आ जाने पर हम उनकी इज्जत अफजाई का वादा भी कर रहे हैं।"

मेजर फुलेर जरा संजीदा होकर बोले—"आला हजरत ने जो कुछ फरमाया मैं उसे समझ गया। लेकिन जब आपके बुजुर्गवार नवाब शुजाउद्दौला बहादुर अपनी जिन्दगी में सआदतअली खाँ को उस सूबे का मालिक मुख्तार बना गए हैं....।"

"आप का गलत ख्याल है ?" आसफुद्दौला ने बीच में टोक कर कहा—"पिदर बुजुर्गवार ने उन्हें उस सूबे की मुख्तारी हरगिज नहीं सौंपी थी और न उसका मालिक ही बना दिया था। सिर्फ इन्तजाम-बन्दोबस्त के लिए सआदतअली खाँ को वहाँ रख छोड़ा था।"

"खैर ऐसा ही सही ?" मेजर फुलेर ने इतमीनान से कहा—"लेकिन मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि सआदत अली खाँ काबिल मुंतजिम और एक बहादुर सिपाही हैं। अपनी काबलियत और बहादुरी से उन्होंने उस सूबे में सींक खड़ी कर रखी है। वहाँ के सरकश फसादियों को ऐसा दबाया है कि वे एकदम सर उठाना भूल गए हैं और सूबे के कोने-कोने में अपनी धाक जमा रखी है।" फिर साँस लेकर कहा—"माफ कीजिएगा, मेरा ख्याल है कि सआदतअली खाँ की यह कारगुजारी जनाब आली के लिए भी बाइसे नेकनामी है। इसके अलावा मैं समझता हूँ कि सआदत अली खाँ जैसा समझदार शख्स आपकी फरमाबरदारी से हरगिज इनकार नहीं कर सकता। क्योंकि आप मुल्क-अवध के मालिक और उनके बड़े भाई भी हैं।"

"हमारी फरमाबरदारी से इनकार नहीं कर सकते या अपनी खुदमुख्तारी और सूबे की हुकूमत से इनकार नहीं कर सकते ?" आसफुद्दौला ने धीरे से कहा। फिर मेजर फुलेर की तरफ रुख करके बोले—"मेजर फुलेर ! अभी आपने इस मसले-मामले पर अच्छी तरह गौर नहीं किया। जरा इसकी तह तक पहुँचने की कोशिश कीजिए। अगर सआदतअली खाँ मुल्क-अवध के एक सूबे के इसी तरह मालिक-मुख्तार बन कर वहाँ हुकूमत करते रहेंगे, तो इससे हमारी हुकूमत को धक्का लगेगा। इसके अलावा एक बात और भी सरदर्द पैदा करने वाली है और वह यह कि हमारे दूसरे सौतेले भाई जो दर्जनों की तयदाद में हैं, उनके दिलों में भी अवध के एक-एक सूबे में खुदमुख्तारी करने की लालच पैदा होगी और उस तूफान को रोकने का क्या इलाज होगा ? अवध के इस इलाके में कितने नवाब और कितने हुक्मरां नजर आएँगे ?"

मेजर फुलेर गम्भीर मुखमुद्रा में चुप बैठे रह गए।

आसफुद्दौला फिर बोले—"जब कम्पनी सरकार ने अपने हाथ में इन्साफ की तराजू लेकर हमें मुल्क-अवध का वारिस समझ कर हमें मसनद नशीन किया है और हमारी सरपरस्ती अपने हाथ में ली है, तो उसके लिए ये भी लाजिम है कि सभी भाइयों को हमारे सिपुर्द करे। हम खुद उनके ऐश—आराम और इज्जत-मर्तबे का ख्याल करके मुनासिब इन्तजाम करेंगे।" फिर साँस लेकर कहा—"अगर कम्पनी सरकार को ऐसा करना मंजूर नहीं है तो बेहतर होगा कि अवध इलाके के किसी कोने में हमें भी एक टुकड़ा दे दिया जाए और अवध का नवाब सआदतअली खाँ या किसी दूसरे को बना दिया जाए।" लहजा बहुत ठण्डा था।

मेजर फुलेर बहुत मीठे और ठण्डे लहजे से बोले—"आला हजरत! आप तो बहुत दूर तक पहुँच गए। ऐसा ख्याल फरमाना मुनासिब नहीं हैं।" फिर जरा रुक कर कहा—"आप जानते हैं कि मैं गवर्नर जनरल का एक छोटा मातहत हूँ। सआदतअली खाँ को उस सूबे से लाकर आपके पास लखनऊ में बैठा देना मेरे इख्तियार की बात नहीं है। फिर भी जो कुछ मैं कर सकता हूँ वह करने के लिए तैय्यार हूँ। आपके इस मामले को साफ तौर पर लिख कर गवर्नर जनरल के पास भेजूँगा और अपनी रिपोर्ट में आपके कहने की पूरी ताईद करूँगा। वहाँ से जो हुक्म आएगा उसकी वैसी तामील आपके और मेरे लिए लाजिमी होगी।"

इसके बाद मुलाकात खतम हो गई। मेजर फुलेर घोड़े पर बैठ कर दौलतखाना आसफी से रेजीडेन्सी की तरफ चले गए।

मेजर फुलेर ने दूसरे ही दिन नवाब आसफुद्दौला के मामले को सविस्तार लिख कर गवर्नर जनरल के पास कलकत्ता रवाना कर दिया। गवर्नर जनरल ने उस पर काफी विचार किया। उसके बाद गवर्नर ने सआदतअली खाँ को बतौर दोस्ताने के सलाह मशविरा दिया—"नवाब आसफुद्दौला बहादुर आप को लखनऊ बुला रहे हैं। अपने दूसरे भाइयों की तरह आपको भी अपने पास इज्जत-मर्तबे के साथ रखना चाहते हैं। शायद एक अर्से के बाद उन्होंने आपकी योग्यता, साहस तथा कार्य-कुशलता को महसूस किया है। और मुमकिन मालूम होता है कि वह आपके इसलाह-मशविरे से अपनी हुकूमत को आगे बढ़ाने, चमकाने के ख्वाहाँ हैं। हम भी मुनासिब समझ रहे हैं कि आप उस सूबे से किनाराकशी इख्तियार करके नवाब आसफुद्दौला के पास लखनऊ पहुँच जाइए और मुल्क के इन्तजाम में उनका हाथ बँटाइए। अच्छा मौका हाथ आ रहा है। क्योंकि नवाब आसफुद्दौला के बाद अवध की रियासत का वारिस और मसनद पर कदम रखने वाला आपके सिवा कोई दूसरा नहीं हो सकता। कोई भी आपकी तरह योग्य और होशियार वहाँ नजर नहीं आता। अवध की गद्दी खाली होने पर हम हकदार के हक पर गौर कर सकेंगे। इसलिए आप हमारे इस मशविरे को मान कर लखनऊ नवाब आसफुद्दौला के पास पहुँच जाइए।

बाद में जैसा जो कुछ होगा, देखा-ख्याल किया जाएगा।"

सआदतअली खाँ वास्तव में योग्य और समझदार थे। देश में अंग्रेज-हुकूमत के जोर-शोर को अपनी खुली आँखों से देख रहे थे। अच्छी तरह समझते थे कि कम्पनी के प्रमुख गवर्नर जनरल से दोस्ताना बनाए रखना और इस वक्त उसके मशविरे, इसलाह को मान लेना हमारे लिए बहुत जरूरी है। उनकी ये इसलाह आगे हमारे लिए बहुत नेक साबित हो सकती है।

यद्यपि उस सूबे को छोड़ने का मन नहीं हो रहा था। क्योंकि उन्होंने अपना खून पानी करके उसे चमकाया था। लेकिन उस मोह से गवर्नर जनरल के परामर्श का कहीं अधिक मूल्य मालूम होता था। उसके पीछे से उन्हें अपना भविष्य झाँकता दिखाई दे रहा था। अतः काफी विचार करने के बाद सआदतअली खाँ सपरिवार सूबा कटेहर-बरैली को खैराबाद कह कर लखनऊ की तरफ चल पड़े।

लखनऊ आकर सआदतअली खाँ मोहल्ला सआदत के निकट बुनियाद मंजिल नामक इमारत में मुकीम हुए। नवाब आसफुद्दौला से मुलाकात हासिल की। नवाब आसफुद्दौला ने बड़े स्नेह के साथ उन्हें लिया, गले लगाया और अपने दरबार का उन्हें एक विशेष इज्जत और मर्तबेदार ओहदेदार बना लिया। दरबारदारी और राज्य-काज में भी उनसे मशविरा लेने लग गए। दोनों ओर इतमीनान और भरोसा नजर आने लगा।

आसफुद्दौला को अपने इरादे में कामयाबी हासिल हो जाने की खुशी थी, संतोष था और सआदतअली खाँ को भी आसफुद्दौला का प्रेम-स्नेह तथा मान-सम्मान और नजरे इनायत को पाकर किसी प्रकार की कोई शिकायत नहीं थी। आसफुद्दौला ने सूबा कर्टेहर बरैली के प्रबन्ध के लिए राजा सूरतसिंह को वहाँ का सूबेदार बना कर रवाना कर दिया। राजा सूरतसिंह ने वहाँ पहुँचते ही एक बहुत बड़ी रकम वसूल करके नवाब आसफुद्दौला के पास रवाना की, जिससे उनकी कुछ परेशानी भी दूर हो गई।

१२८८ हिजरी को बुनियाद मंजिल में सआदतअली खाँ के बेटा पैदा हुआ। पहला बेटा था। जश्न और जलसों की धूम मच गई। नवाब आसफुद्दौला ने भी खुशी का इजहार किया। माता तथा बच्चे के लिए कीमती पोशाकें जेवर और दूसरे तोहफे भेजे। अपने दौलतखाना आसफी में दरबार सजाया और उस दरबार में सआदतअली खाँ को अपने हाथों से खिलअत पहनाई और बच्चे का नाम गाजीउद्दीन हैदर घोषित किया।

८

वह सौन्दर्य की साक्षात् मूर्ति ! जवानी की उठान से अठखेलियाँ करने वाली युवती ! नवाब शुजाउद्दौला की बेगम नवाब बहू-बेगम साहिबा की लाड़ली दुलारी लालारुख कौन थी ? कहाँ से इस जमीन पर आ गई थी और किस तरह नवाब बहू-बेगम की चहेती बन गई थी ? इस भेद का सर्वसाधारण को कोई पता न था। साधारण लोगों में वह नवाब बहू-बेगम की लड़की ही समझी जाती थी। कुछ अधिक सोचने-समझने वाले उसको नवाब बहू-बेगम की लैपालक समझते थे। किन्तु असलियत का सिर्फ दस-पाँच बूढ़े बुजुर्ग-वारों को ही पता था, जो नवाब शुजाउद्दौला के सच्चे साथी और हमराज कहे जाते थे।

नवाब बहू-बेगम साहिबा लाड़-दुलार में लालारुख को 'लाली' कह कर पुकारा करती थीं। उन्हें यह नाम बहुत प्यारा लगता था। उसका लालारुख नाम नवाब शुजा-उद्दौला का रखा हुआ था। अतः जानकार बूढ़े बुजुर्गवारों का कहना था—लाली अयोध्या फैज़ाबाद की एक विधवा ब्राह्मणी की लड़की है। जिस वर्ष नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु हुई थी, उसी वर्ष, उनकी मृत्यु से कुछ महीने पहले की बात है। लाली की माँ उसको साथ लेकर सरयू नदी स्नान करने गई थी और उसी नदी में डूब कर मर गई। उस समय लाली ढाई-तीन वर्ष की थी।

उसके डूब जाने के बाद नदी के घाट पर लोगों की भीड़ जमा हो गई थी। अपनी माँ को आँखों के सामने न पाकर बिलख-बिलख कर रो रही थी। लोग-बाग उसको बहलाने-फुसलाने की चेष्टा कर रहे थे। इत्तफाक से नवाब शुजाउद्दौला बहादुर घोड़े पर सवार उधर से निकले। नदी किनारे भीड़ देख कर कौतूहल बढ़ा और घोड़े की बाग मोड़ कर भीड़ के निकट जा पहुँचे। घटना को जाना-समझा। रोती-बिलखती लड़की पर नज़र डाली। नवाब शुजाउद्दौला की आँखों में वह समा गई। अपनी ही बच्ची-सी प्रतीत होने लगी। नवाब ने भीड़ के लोगों से उसकी माँ के सगे-सम्बन्धियों की जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा की। एक पड़ोसी ने बताया कि इसकी माँ एक गरीब ब्राह्मणी थी। घर में केवल माँ और यह बच्ची थी। पिछले वर्ष इस लड़की के पिता की मृत्यु हो गई थी। माँ मेहनत-मज़दूरी करके पेट पाला करती थी। किन्तु अपने नियम-धर्म तथा आचरण की सच्ची थी। रोज सबेरे सरयू स्नान करने आया करती थी। उसी प्रकार आज भी यहाँ स्नान करने ही आयी थी। लेकिन गहरे में डूब गई।

नवाब शुजाउद्दौला का उस लड़की को दीन-अनाथ समझ कर प्यार उमड़ आया। घोड़े से उतर कर उसे गोद में उठा लिया और उसे गोद ही में लिए हुए फिर घोड़े पर सवार होकर अपने महलों की तरफ चल पड़े। महल में आकर उन्होंने ने हरमसरा में जाकर बच्ची को नवाब बहू-बेगम की गोद में बैठा दिया। बच्ची का रूप तथा फूल-सा चेहरा देख कर बहू-बेगम भी उस पर मोहित हो गईं। नवाब से उसका अता-पता पूछा।

नवाब ने सारी कहानी सुना कर उसे अपनी ही बच्ची समझने का अनुरोध किया और उसी समय उस बालिका का नाम लालारुख रख दिया।

नवाब बहू-बेगम बड़ी सतर्कता के साथ उसका लालन-पालन करने लग गईं। और बड़े प्यार से उसे 'लाली' कह कर पुकारने लगीं, लाली दिन-दूनी रात-चौगुनी परवान चढ़ने लगी और उसी प्रकार उसके रूप-सौन्दर्य में भी निखार पैदा होने लग गया। धीरे-धीरे दिन आगे बढ़े और लाली भी उन्हीं के साथ कदम बढ़ाती हुई यौवन के द्वार पर आकर खड़ी हो गई।

लाली कुछ विचित्र ही सी थी। दौलतखाना आसफी में रहने वाली नवाब आसुफुद्दौला की ढेर सारी बेगमातें नवाबज़ादियाँ, लौंडियाँ तथा स्वयं बहू-बेगम और उनके महलों के सभी स्त्री-पुरुष उसे स्वर्ग की एक अप्सरा समझते थे। उसके अलौकिक सौन्दर्य पर मोहित होकर सदैव उसे हाथों-हाथ लिए रहते थे। लेकिन लाली इतना भी नहीं जानती थी कि सौन्दर्य किसे कहते हैं। होश सँभालने के बाद महलों की कुछ बूढ़ी नौकरानियों से उसे इतना मालूम हो गया था कि वह नवाब बहू-बेगम साहिबा की लैपालक है। उसके माँ-बाप कोई और ही थे, जिनका उसे कोई ज्ञान न था। वह देखती और महसूस करती थी कि नवाब बहू-बेगम साहिबा का लाड़-प्यार उसके प्रति अपनी कोखजाई लड़की से कहीं अधिक है। अतः वह उन्हें सच्चे दिल से अपनी माँ ही मानती थी। उनकी आज्ञा से जरा भी इधर-उधर होना या उनसे कोई बात छिपा कर रखना वह बहुत बड़ा गुनाह समझती थी।

लाली की दुनिया बहू-बेगम का महल और उसी से लगी हुई एक छोटी-सी बाटिका तक ही सीमित थी, अन्य किसी जगह का उसे कोई अता-पता न था। इतने बड़े दौलतखाना आसफ़ी के किसी ठौर-ठिकाने का या उनमें रहने वाले नवाब आसफुद्दौला के परिवार, बेगमात, शाहजादे तथा शाहजादियों का उसे थोड़ा भी पता न था। यदि कभी भूले-भटके बहू-बेगम किसी कार्यवश उसे किसी अन्य महल में जाने के लिए कहती थीं तो वह उनकी आज्ञा का उल्लंघन करना तो पाप ही समझती थी, किन्तु बड़े असमंजस में पड़ जाती थी। अपने महल की देहरी से बाहर कदम निकालते ही जैसे वह भूल-भुलइयाँ में फँस जाती थी। भूल-भटक कर बड़ी मुश्किल में अपने महलों में लौट पाती थी।

महलों में वह बहू-बेगम के पास बैठी रहती या अपने कमरे में घुसी रहती थी। उसकी यह दशा देख कर नवाब बहू-बेगम साहिबा ने नियमित रूप से साँझ-सबेरे उसे बाटिका में जाकर घूमने-फिरने के लिए विवश कर रखा था। इसलिए वह सुबह-शाम बाटिका की सैर को निकल जाती और घन्टे दो घन्टे वहाँ घूम-फिर कर वापस आ जाती थी। बाटिका में बहुधा वह अकेली ही घूमा-फिरा करती थी या कभी महल की कोई हम-उम्र लड़की उसके साथ हो जाती थी। इसके अलावा कभी-कभी नीलम भी आ जाया करती थी। लेकिन लाली यह नहीं जानती थी कि नीलम कौन है। कोई शाहजादी है

अथवा किसी अन्य दरबारी अमीर-उमरा की लड़की है। हाँ, नीलम की हँसी, गुदगुदी भरी मीठी-मीठी बातें उसे अच्छी जरूर लगती थी। और बनिसबत औरों के वह नीलम से कुछ अधिक बोल-बतिया लिया करती थी।

संध्या का समय था। लाली बाटिका में घूमने-फिरने आई थी। अकेली ही थी। घूमते-फिरते वह एक बेले के बड़े झाड़ के पास पहुँच गई। सोचा कुछ कलियाँ चुन लूँ। माला गूंथ कर नवाब बहू-बेगम साहिबा को पेश करूँगी। ऐसा सोच कर वह इतमीनान से झाड़ के पास हरी-हरी घास पर बैठ गई और कलियाँ चुन-चुन कर ओढ़नी के आँचल में रखने लगी। बेले के उस झाड़ के पास ही एक दूसरी क्यारी में गुलाब लगे थे। गुलाबी रंग के सैकड़ों बड़े-बड़े फूल खिल रहे थे। लाली बेले की कलियाँ चुनती हुई नजर घुमा कर कभी उन गुलाबों को देख लेती थी और देर तक उन पर से नज़र नहीं हटा पाती थी। उसे गुलाब के वे खिले हुए फूल बहुत सुन्दर प्रतीत होते थे, बड़े भले लगते थे उनकी भीनी-भीनी सुगंधि भी उसके दिमाग में पहुँच रही थी।

सहसा एक ओर से किसी के आने की आहट हुई। लाली ने देखा कि नीलम मुस्कराती हुई चली आ रही थी। पास आ जाने पर लाली ने कहा—"आओ नीलम बैठो। आज बहुत दिनों बाद इधर निकली हो। मैं तो रोज़ ही इसी वक्त यहाँ आया करती हूँ।"

नीलम उसके पास बैठ गई। बोली—"आने का इरादा तो कई दिन से कर रही थी। बहुत दिनों से तुम्हें नहीं देखा था। देखने के लिए दिल तड़प रहा था, मगर क्या करूँ, निगोड़ी फुर्सत ही नहीं मिली।"

"क्यों? तुम्हारे पीछे ऐसा कौन-सा काम लगा रहता है? शाम का वक्त तो सबके लिए फुर्सत का और घूमने, सैर करने के लिए हुआ करता है।" लाली ने कहा और कलियाँ चुनने लगी।

नीलम वजीरअली खाँ का दर्द सुनाने आई थी। लेकिन परेशान थी कि किस तरह बात शुरू करे। जानती थी कि लाली बहू-बेगम की दुलारी है। कहीं मेरे मुँह से निकली उलटी-सीधी बात वह बेगम से कह गुजरी तो मेरे सातो करम हो जाएँगे। फिर उसे वजीरअली खाँ का दिल भी रखना था। समझती थी कि अगर मैं उनका यह काम पूरा कर सकी तो सम्भव है कि कभी वह दिन आ जाए कि मेरी किस्मत का सितारा सातवें आसमान पर चमक उठे।

अन्त में वह दिल कड़ा करके बोली—"ऐ, बहिन लाली, शायद अभी तुम मेरे बारे में सही-सही नहीं जानती। इसीलिए ऐसा कह रही हो। एक खिदमतगुजार लौंडी की ऐसी किस्मत कहाँ कि वह रोजाना सुबह-शाम सैर-सपाटे के लिए आया करे। यहाँ दिन रात खिदमत और कामों से छुटकारा नहीं मिलता। आज बड़ी हिम्मत करके निकल भागी हूँ।"

"ऐ, तो तुम किसी के महल की खिदमतगुर्जार हो ?" लाली ने कुछ आश्चर्य से कहा—"हम तो समझते थे कि तुम कोई नवाबिजादी हो या किसी बड़े अमीर उमरा के घर की लड़की हो ?"

नीलम हँस कर बोली—"तोबा कीजिए ! ऐसी मेरी किस्मत कहाँ ?"

लाली थोड़ा गम्भीर होकर बोली—"खैर, मेरे नजदीक तुम एक शाहजादी नवाबजादी ही हो। शाहजादियों नवाबजादियों में कौन हीरा-मोती लगे रहते हैं। खुदा सबको एक ही तरह पैदा करता है। चाहे वह किसी अमीर के घर में पैदा हो या किसी गरीब फकीर के। वही एक सर, दो आँखें, दो कान, एक नाक, एक मुँह, दो हाथ और दो पैर सबके हुआ करते हैं।" फिर थोड़ा मुस्करा कर कहा—"जैसी मैं हूँ वैसी तुम हो ? बोलो क्या फर्क है ?"

"ऐसा मत कहो लाली ?" नीलम ने भी मुस्करा कर कहा—"सच्चे और कच्चे मोती में बहुत फर्क होता है।"

लाली आगे को हाथ बढ़ा कर झाड़ से बड़ी-बड़ी कलियाँ चुनती हुई बोली—"तो नीलम ! तुम किसके महल में और किसकी खिदमत में रहा करती हो ?" फिर धीरे से कहा—"मैं तो किसी को जानती भी नहीं।"

"नवाबजादे, जनाबआली आसफुद्दौला बहादुर के लाड़ले दुलारे मिरजा वजीरअली खाँ की खिदमत में रहती हूँ। तुम तो उन्हें जरूर जानती होगी ?"

"मैं किसी को नहीं जानती ?" लाली ने कलियाँ आँचल में रख कर कहा—"सुना जरूर है कि इस दौलतखाना आसफी में जनाबआली की सैकड़ों बेगमात, शाहजादियाँ और शाहजादे रहते हैं, मगर आज तक न मैंने किसी को देखा है न जानती-पहचानती हूँ। मैं तो सिर्फ अपने महल की नवाब बहू-बेगम साहिबा को जानती हूँ। दूसरों से मुझे मतलब ही क्या है।"

नीलम एक क्षण चुप रही फिर बोली—"तुमने हमारे नवाबजादे मिरजा वजीरअली खाँ को देखा जरूर होगा। कसरती बदन के बहुत खूबसूरत से हैं। तुम्हारी तरह इस वक्त उनकी भी जवानी उठान पर है। जनाबआली उन्हें बहुत चाहते हैं। शायद जनाबआली के जांनशीन, उनके बाद लखनऊ के वही नवाब होंगे।"

लाली कलियों पर नजर जमाए हुए बोली—"मैंने तुम्हारे उन नवाबजादे वजीरअली खाँ को कभी नहीं देखा। हाँ, उनके बारे में एक दिन नवाब आसफुद्दौला बहादुर अपनी वालदा नवाब बहू-बेगम साहिबा से कुछ ऐसी ही बातें कर रहे थे जैसा तुम उनकी जांनशीनी और लखनऊ के नवाब होने के बारे में कह रही हो।" फिर लापरवाही भरे लहजे से कहा—"खैर, होगा ? मुझे इन बातों से क्या मतलब गरज है। जो चाहे जांनशीन हो, जो चाहे लखनऊ का नवाब बने। मुझे तो सिर्फ एक अपनी बहू-बेगम साहिबा से मतलब है।"

नीलम जरा देर चुप रह कर उसके चेहरे की तरफ देखती रही। फिर बोली—"नवाबजादे मिरजा वजीरअली खाँ वही तो हैं जिनके पास खड़ी उस दिन मैं दूध पेश कर रही थी और उसी वक्त तुम उधर से निकल कर किसी दूसरी तरफ जा रही थीं। उन्होंने तुम्हें अच्छी तरह देखा था और शायद तुमने भी उन्हें खुली आँखों से देखा होगा।"

लाली हँस पड़ी और बोली—"ये खुली आँखों की अच्छी कही! क्या कोई आँखें बन्द करके कहीं जाया आया करता है? रास्ता तो खुली आँखों से ही चला जाता है।" फिर जरा रुक कर उपेक्षा के भाव से कहा—"मुझे याद नहीं आता, कब मैं कहाँ जा रही थी, और तुम किसको दूध पेश कर रही थीं?"

नीलम कुछ नहीं बोली। लाली एक गुलाब के फूल की तरफ झुक कर और उसकी टहनी हाथ में लेकर हिलाते हुए बोली—"देखो नीलम, ये कितना बड़ा और कितना खूबसूरत फूल है। इसका गुलाबी रंग कितना भला मालूम होता है और खुशबू तो जैसे दिमाग में भरी जा रही है।"

नीलम मुस्करा कर बोली—"शायद आपको बहुत पसंद आ रहा है।"

"ऐ, खूबसूरत तरोताजा फूल किसे पसंद नहीं आता?" लाली ने गम्भीर होकर कहा।

नीलम चुप रह गई। दो क्षण दोनों ओर की खामोशी में गुजर गए। फिर लाली ने नीलम की तरफ देख कर व्यंग भरे लहजे से कहा—"तो नीलम, तुम्हारे वे नवाबजादे जिनकी खिदमत में तुम रहा करती हो क्या सिर्फ दूध ही पिया करते हैं? उसी पर उनकी जिन्दगी कायम है?" और वह मुस्करा दी।

नीलम सँभल कर बोली—"दूध पीने से ही तो उनका चेहरा इस गुलाब के फूल की तरह ही खिला रहता है? अच्छे अखाड़ची हैं। अखाड़े में उतर कर कसरत और जोर आजमाई करने के बाद एक सेर ताजा गुनगुना दूध और एक पाव कागजी बादाम तोड़ कर चबाया-पिया करते हैं। वही दूध बादाम लिए मुझे वहाँ इन्तजार में खड़ा रहना पड़ता है। अगर एक सायत की भी देर हो जाए तो मेरी जान पर आ बने। बड़े तेज मिजाज भी हैं।"

लाली कुछ नहीं बोली। गुलाब के फूल से खेलने लगी।

नीलम भी जरा देर खामोश बैठी रही। फिर बोली—"उस दिन जब तुम उधर से निकल कर कहीं जा रही थीं, उन्होंने तुम्हें बड़े गौर से देखा था। और जब तुम उनकी नजरों से ओझल हो गई थीं तो तुम्हारे बारे में मुझसे पूछ रहे थे।"

लाली ने उसकी तरफ गर्दन घुमा कर कहा—"क्या पूछ रहे थे?"

"यही कि ये परी जमाल कौन हैं? कहाँ रहती हैं?" नीलम ने धीरे से कहा।

"तब तुमने क्या कहा?"

"जो कुछ जानती थी बता दिया। और क्या कह सकती थी?"

"लेकिन वह मेरे बारे में क्यों पूछ रहे थे ? मुझसे उनसे क्या गरज-मतलब है ?" उसने रूखे लहजे से कहा।

नीलम बोली—"गरज-मतलब तो कोई दूसरी चीज हुआ करती है। लेकिन जिसे कभी न देखा हो और जिसे देख कर एक हैरत-सी पैदा हो, उसके बारे में पूछना-जानना तो कोई बुराई नहीं कही जा सकती।"

"हैरत-सी पैदा हो जाने के क्या मानी ?" लाली ने उसकी तरफ देख कर कहा।

"क्या उन्होंने मुझमें कोई अजीब चीज देखी थी ?"

"और क्या ? तभी न हैरत पैदा हुई थी।" नीलम ने उसकी नजर से नजर मिला कर कहा—"किसी को देख कर हैरत उसी वक्त पैदा होती है जब उसके नक्शे में एक ग़ैरमामूली....." और वह थोड़ा मुस्करा कर चुप रह गई।

"पूरी बात कहो ?" लाली ने कहा—"क्या उन्हें मेरा नक्शा इस दुनिया जहान के इंसानों जैसा नहीं मालूम हुआ था ? कोई भूतिन-चुड़ैलिन समझ बैठे थे ?" और वह भी थोड़ा मुस्करा दी।

"भूतिन-चुड़ैलिन नहीं, जन्नत की हूर या परिस्तान की कोई परी समझ रहे थे।" नीलम ने सँभल कर कहा—"मैंने तुम्हारे बारे में जो जानकारी दी थी, उसे गलत करार देकर कह रहे थे; बिलकुल गलत है। एक इंसान में ये खूबसूरती, ये हुस्नो-जमाल और ये नाक-नक्शे की चमक-दमक आज तक कभी नहीं देखी गई। जरूर कोई परिस्तान की परी जमीन पर उतर आई है।"

लाली गम्भीर होकर बेले की कलियों को समेट कर आँचल के एक छोर में बाँधने लगी।

नीलम उसकी गम्भीरता को देख कर कुछ सहम-सी गई। उसने महसूस किया कि इस विषय को और अधिक बढ़ाने से जाने क्या उल्टा-सीधा पड़े। इसकी यह गम्भीरता जाती रहे, कुछ रंग पर आ जाए तब कुछ आगे बढ़ा जा सकता है। जरा देर खामोश रहने के बाद बोली—"आज ये बेला की इतनी बड़ी-बड़ी कलियाँ किसलिए चुनी हैं ?"

लाली ने उसकी तरफ देखा, बोली—"नीलम, वाकई बेले की ये कलियाँ बहुत बड़ी हैं और खासतौर पर इसी झाड़ में पाई गई हैं। मैं इनकी एक माला तैय्यार कर के हजूर बहू-बेगम साहिबा को पेश करूँगी।"

"ये सभी कलियाँ जब कुछ देर में खिल कर फूल बन जाएँगी, उस वक्त इनकी खुशबू से दिमाग तरोताजा हो जाएगा।"

लाली ने प्रसन्न मुख से कहा—"सच बात है। रात भर महका करेंगे वे फूल।" फिर नीलम की तरफ नजर उठा कर कहा—"नीलम ! आज कुछ सुनाओगी नहीं ? तुम्हारी लच्छेदार बातें सुनने में मुझे बड़ा मजा आता है।"

"ऐं, नहीं ?" नीलम सँभल कर बोली—"मुझे आता-जाता क्या है ? दो-चार

किताबें जो पढ़ लीं उन्हीं के बलबूते पर मुँह खोल दिया करती हूँ।"

"खैर, कुछ सुनाओ ?"

नीलम आँचल सँभाल कर बोली—"एक शेर याद आ रहा है। उसी को सुनाए देती हूँ—न नकाब रुख से हटती, न नजर नजर से लड़ती—न वह बेनकाब होते, न ये कत्लेआम होता।"

"तो क्या नजर से नजर लड़ जाने से कत्लेआम हो जाता है ?" लाली ने पूछा।

"जरूर ?" नीलम ने दृढ़ स्वर से कहा।

लाली बोली—"सुनते हैं कुछ दिन पहले नादिरशाह ने दिल्ली में कत्लेआम कराया था। तो क्या उसकी नजर किसी की नजर से लड़ गई थी ?"

"वह कत्लेआम और चीज था।" नीलम ने कहा—"इस शेर में जो कत्लेआम कहा गया है वह कुछ और है।"

"कत्लेआम के मानी तो एक ही हैं यानी आम लोगों की गरदनें काटी जाना।" लाली ने कहा—"तुम्हारे शेर में जो कत्लेआम आया है उसके क्या मानी-मतलब हैं ?"

"इस शेर के कत्लेआम के मानी आम लोगों की गर्दनें काटी जाना नहीं है। बल्कि दिल के टुकड़े-टुकड़े हो जाना है। किसी हसीना-माहरु की आँखों के करिश्मों से दिलों का कत्लेआम हुआ करता है।"

"ये कुछ बहुत गहरा शायराना ख्याल है ?" लाली ने कहा—"मेरी समझ में नहीं आ सकता। नजर से नजर मिलते ही खुदा जाने दिल के टुकड़े किस तरह हो जाया करते हैं ! इसकी कोई मिसाल देकर समझाओ।"

नीलम मुस्कराई। फिर बोली—"मिसाल देकर क्या समझाना है ? सच्चा वाकया अर्ज कर सकती हूँ।"

"कैसा ?" लाली ने उसके चेहरे पर नजर जमा कर पूछा।

नीलम बोली—"उस दिन जब तुम उधर से निकल कर कहीं जा रही थीं। शायद तुम्हारी नजर नवाबजादे मिरजा वजीरअली खाँ की नजर से मिल गई थी। और....."

लाली बीच में बोल उठी—"नजर तो कभी नहीं मिली थी। राह चलते हुए मैंने मामूली तरीके से उधर को देखा था और फिर सीधे अपनी राह चली गई थी। मैंने तो उनकी शकल-सूरत भी अच्छी तरह नहीं देखी थी। उन्हें पहचान भी नहीं सकती। खैर, उस देखने से क्या हुआ ? कोई बिजली टूट पड़ी थी उन पर ?"

"हाँ," नीलम ने कहा—"बिजली ही टूट पड़ी थी। उनके दिल के टुकड़े-टुकड़े हो गए थे और वे उसी वक्त से....."

लाली एकदम गम्भीर हो गई। रूखे लहजे से बोली—"नीलम ! शेर के मानी-मतलब के साथ तुम वजीरअली खाँ का दुखड़ा क्यों सुनाने लगी ? मुझसे उनसे क्या गरज

मतलब है ?"

"मैंने जो शेर सुना था वह इश्क-मोहब्बत और हुस्नो-जमाल से ताल्लुक रखता है। और वाकया यों हैं कि नवाबजादे वजीरअली खाँ को तुमसे इश्क हो गया है। तुम्हारा हुस्नो-जमाल उनकी आँखों में भर गया है। इसलिए मिरजा वजीरअली खाँ अकेले में तुमसे मिलने के ख्वास्तगार हैं। शायद अपना दिल खोल कर तुम्हारे सामने रखेंगे।"

नीलम की इन बातों को सुन कर लाली का चेहरा गम्भीरता के साथ सुर्खी पकड़ गया। नजर में गुस्सा-सा भर गया। नीलम सहम-सी गई। उसे लाली जितनी सीधी मालूम होती थी उतनी ही टेढ़ी नजर आने लगी और चेहरे की तमतमाहट ने तो नीलम का दिल-सा बैठा दिया। उसकी सारी आशाओं पर एकदम से पानी पड़ गया।

लाली उसी दशा में बहुत रूखे स्वर से बोली—"नीलम ! याद रखना, अब कभी मुझसे ऐसा जिक्र न छेड़ना। मैं उनसे अकेले में क्या, दस के साथ भी मैं उनसे नहीं मिल सकती। मुझे किसी से क्या सरोकार है ? वह जनाबआली नवाब आसफुद्दौला के दुलारे हैं तो हुआ करें।" फिर रुक कर कहा—"मुझे नवाबी खानदान के किसी भी शख्स से मतलब-गरज नहीं है। सिर्फ एक नवाब बहू-बेगम ही मेरी हैं, उन्हीं से मेरा वास्ता, लगाव और सभी कुछ है।"

नीलम कुछ देर नीची निगाह किए बैठी रहीं। फिर धीरे से कहा—"किसी से मिलने में कोई हर्ज तो नहीं होता। इंसान एक दूसरे से मिला ही करता है।"

"मैं इंसान नहीं हैवान हूँ।" लाली ने रुखाई से कहा—"मुझे ऐसे मिलने-मिलाने वाली दुनिया से नफरत है।" फिर दो क्षण खामोश रहने के बाद कहा—"मेरी समझ में नहीं आता कि आज तुमने ये ज़हर घोल कर रंग में भंग क्यों कर दिया ? अभी जाकर जनाब-आलिया बहू-बेगम साहिबा को उनकी ऐसी हरकत से आगाह करूँगी, हजरत को लेने के देने पड़ जाएँगे। मुलाकात का शौक एकदम हवा हो जाएगा। और अब मैं तुमसे भी कभी बात नहीं करूँगी।"

नीलम के पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई। कुछ कहने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। बड़ी मुश्किल में धीरे से बोली—"तुम मुझसे बेकार नाराज हो रही हो। बातों के सिलसिले में इत्तफाक से उनका जिक्र आ गया। निगोड़ी चमड़े की तो जबान है। हकीकत बयान कर गई।"

लाली उसी गम्भीरता में बोली—"शायद तुम आज उनका पैगाम लेकर मेरे पास आई थीं और एक शेर के साथ उनका दुखड़ा सुनाने लग गईं। हम तुम्हें ऐसा नहीं समझते थे।"

और लाली भारी मन-सा लिए उठ कर खड़ी हो गई। उसने जो बेला की बड़ी-बड़ी कलियाँ चुन कर आँचल में जमा की थीं, उठते ही जमीन पर बिखर गईं। मगर लाली ने उनकी कोई परवाह नहीं की। अपने महल की तरफ चली गई।

९

दूसरे दिन अखाड़े के बाद दूध के बर्तन लेकर नीलम जाने को तैय्यार हुई कि वजीरअली खाँ ने उसे रोक लिया। उनको पता था कि पिछले दिन नीलम लालारुख से मिलने गई थी और इसीलिए वे नीलम के मुँह से पैगाम का जवाब सुनने के लिए उत्सुक हो रहे थे।

वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए नीलम से कहा—"हाँ, नीलम ? अब कल की मुलाकात का किस्सा बयान कर। हमें उम्मीद है कि लालारुख ने जरूर ही अकेले में मिलने की कोई जगह, वक्त और दिन बता दिया होगा और तू जरूर कामयाब होकर लौटी होगी ?"

नीलम मुँह बना कर बोली—"ऐ इस कदर उतावली है, लाली से मिलने की ?" फिर मुस्कराकर कहा—"चलिए उसने इसी वक्त आपसे अकेले में मिलने का वादा किया था। कहा था, जैसे ही वह अखाड़े से फारिग हो जाएँ उन्हें अपने साथ ले आना।"

"सच ?" वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए पूछा।

"और नहीं क्या झूठ ?" नीलम भी मुस्करा कर बोली—"वह इन्तजार में बेचैन हो रही होगी।"

"कहाँ मिलने का वादा किया है ?"

"वही महलों में। अपने खास कमरे में। जहाँ वह रहा करती है।"

"लेकिन वहाँ महलों में तो नवाब बहू बेगम साहिबा होंगी ? हमें दादी अम्माँ से डर मालूम होता है। वह बहुत तेज मिजाज हैं।"

"तब हटाइए, उधर मत जाइए ?" नीलम ने मुँह बना कर कहा – "क्या पड़ी है ऐसी मुलाकात में ? लाली कोई राजा इन्द्र के अखाड़े की परी नहीं है। छोड़िए उसका किस्सा।"

"ऐसा नहीं नीलम ! जब उसने हमारे पैगाम को मंजूर करके मिलने का वादा किया है, वक्त दिया है, तो वह हमारे इन्तजार में बैठी होगी ?" और वह उठ कर बोले "चलो चलें नीलम।"

नीलम ने उनका हाथ पकड़ कर फिर से बैठाते हुए कहा—"जरा रुक जाइए। मेरे मुँह से पहले उसकी मुलाकात का किस्सा तो सुन लीजिए।" वजीरअली खाँ बैठ कर बोले—"अच्छा जल्द सुना। ऐसा न हो कि वह परेशान हो कि अभी तक हम क्यों नहीं आए ?"

नीलम ने अपनी मुलाकात का सारा ब्यौरा सुना कर कहा—"मैंने आपसे अर्ज किया था कि उसको पाना लोहे के चने हैं। छोड़िए उसका ख्याल। वह कह रही थी कि अभी जाकर नवाब बहू बेगम साहिबा से कहूँगी तो हजरत को नेने के देने पड़ जाएँगे।

और एक हिसाब से लाली का कहना सच भी था। बात जाने कहाँ तक पहुँच जाए। आप तो नवाबजादे हैं। जनाबआली नवाब के लाडले-दुलारे हैं। आपका सर्व दरगुजर हो जाएगा। लेकिन मेरा कबाड़ा हो जाएगा। नाक कान कटने का ख्याल आते ही दिल काँप उठता है। क्योंकि आपका पैगाम ले जाने वाली तो मैं ही निगोड़ी हूँ। मुझे कोई कैसे छोड़ सकता है। उस खुदाबन्द करीम से यही दुआ माँगती हूँ, यही इल्तजा करती हूँ कि लाली उस बात को मिसरी की डली की तरह निगल कर हजम कर जाए। बहू-बेगम के कानों तक न पहुँचाए वरना आज ही मेरी दुर्गति बन जाएगी। नाक कान से हाथ धोना पड़ेगा। ऐ खुदाबन्द करीम, अब तू ही मेरा महाफिज है।" और नीलम दोनों हाथ ऊपर को उठा फैला कर आँखें बन्द करके खुदाबन्द करीम से दुआ माँगने लगी।

वजीरअली खाँ नीलम का यह स्वाँग देख कर जोर से हँस पड़े। फिर मुस्करा कर बोले—"अरे नीलम ? तू तो बड़ी डरपोक है। जरा सी बात से इस कदर घबड़ा गई ? इतना डर गई ?"

नीलम बोली—"ऐ हुजूर ! डरूँ, घबड़ाऊँ नहीं तो क्या करूँ ? अपनी दुर्गति कराना किसे पसंद आएगा ? अपने नाक कान किसे प्यारे नहीं लगते ?"

वजीरअली खाँ सावधान होकर बोले—"ऐसा नहीं नीलम ? माशूक एक ही मुलाकात और एक दो बातों में राजी नहीं हो जाया करते। उनके नाज-नखरे अजीब हुआ करते हैं। सैकड़ों मनुहारें और ढेरों खुशामदें चाहा करते हैं। तब कहीं सीधे रास्ते पर आते हैं। तुझे हिम्मत न हारनी चाहिए। एक-दो बार फिर उसे हिलाना-झुलाना चाहिए। हमें उम्मीद है कि वह जरूर सीधी हो जाएगी।"

"ऐ, हरगिज नहीं ?" नीलम चटक-मटक और मुँह बना कर बोली—"अब नीलम उधर का रुख कभी नहीं कर सकती। लाली जैसी सूरत-शकल की चमकदार है वैसी ही दिल की काली और खौफनाक है। हाँड़ी का एक ही चावल परखा जाता है। मैंने भी उसे परख लिया है। अब आप ही जिस तरह चाहिए, डोरे डालिए और उसे हाथ चढ़ाइए।"

"तो तू अब इस बारे में हमारी कोई इमदाद नहीं करेगी ?"

"मुझे माफी दीजिए ?" नीलम ने हाथ बाँध कर कहा—"कल ही की बात याद करके मेरा दिल धक-धक कर उठता है।"

वजीरअली खाँ जरा देर खामोशी के साथ कुछ सोचते रहे। फिर सिर उठा कर बोले—"अच्छी बात है। हम खुद उससे निपटेंगे। देखें वह कितने पानी में है। हम उसका पीछा हरगिज नहीं छोड़ सकते। हम इतने बुजदिल नहीं हैं कि तेरी तरह डर जाएँ।"

"लेकिन....." नीलम धीरे से कह कर चुप रह गई।

"क्या ?" वजीरअली खाँ ने गहरी निगाह उसके चेहरे पर डाल कर पूछा।

"कुछ नहीं", नीलम सिर झुकाए हुए धीरे से बोली।

"कुछ कहना तो चाह रही थी ?"

नीलम सिर उठा कर बोली—"कहना चाहती थी कि मुनासिब यही मालूम होता है कि उसका पीछा छोड़ दीजिए। ऐसा न हो कि कहीं बात बहुत दूर तक जा पहुँचे। क्योंकि आप अखाड़ची पहलवान ठहरे, ताल ठोंक कर उससे कुश्ती लड़ने लग जाएँ और कहीं उसने पछाड़ दिया तो बड़ी नामूसी की बात होगी।"

"चल हट !" वजीरअली खाँ ने कहा—"वह मुझे पछाड़ देगी ? हस्ती है उसकी ?" फिर जरा रुक कर बोले—"क्या तूने ये शेर नहीं सुना—गिरते हैं शहसवार ही मैदाने जंग में, वह तिफ्ल क्या गिरेगा जो घुटनों के बल चले।"

"तब आप जानिए ? मैं तो अपना फर्ज अदा कर चुकी।" और वह वहाँ से चली गई।

लाली ने महलों में पहुँचते ही वजीरअली खाँ की बात नवाब बहू-बेगम साहिबा के कानों में डाल दी। सुन कर बहू-बेगम आग-बगूला हो गईं। उसी वक्त नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ को बुला कर पूछा, "ये मिरजा वजीरअली खाँ कौन हैं ?"

नवाब नाजिर ने अर्ज किया—"जनाबे आलिया, मिरजा वजीरअली खाँ वही तो हैं, जो अकसर जनाबआली नवाब आसफुद्दौला के साथ महलों में आया करते हैं। जनाब आली के जितने भी बेटे कहे जाते हैं उन सब में वजीरअली खाँ ही सबसे बड़े हैं। जनाब आली उन्हें बहुत चाहते हैं। इधर कुछ ऐसा भी सुनने में आया है कि जनाबआली आसफुद्दौला बहादुर वजीरअली खाँ को ही अपना जांनशीन बनाने की सोच रहे हैं। उनके बाद वही लखनऊ की नवाबी मसनद पर रौनक-अफरोज होंगे।"

सुन कर बहू-बेगम कुछ देर खामोश रहीं। फिर नवाब नाजिर की तरफ सिर घुमा कर कहा—"खैर, वजीरअली खाँ हरगिज अब हमारे महलों के अन्दर न आने पाए। साफ तौर पर उसे आने से मना कर दिया जाए।"

नवाब नाजिर की समझ में न आया कि इस हुक्म का क्या कारण है ? एक क्षण खामोश रहने के बाद उन्होंने अर्ज किया—"हुजूर के हुक्म की तामील की जाएगी। उन्हें महलों में आने से मना कर दिया जायगा। मगर एक अर्ज है ?"

"क्या ?" बहू-बेगम ने उनकी तरफ नजर घुमा कर पूछा।

"अगर वह आला हजरत नवाब आसफुद्दौला बहादुर के साथ महलों में तशरीफ लाए ? तब कैसा होगा ?"

"तुम हमारे हुक्म के जरिए उसे महलों में कदम रखने की मनाही सुना देना। फिर अगर वह मिरजा अमानी के साथ आएगा तो हम खुद मिरजा अमानी के सामने मना कर देंगी।" फिर धीरे से कहा—"उस बदतमीज की बेजा हरकत हमें जरा भी पसंद नहीं आई।"

लाली ने भी उस दिन से बाटिका में जाना बन्द कर दिया। दिन भर अपने महल में कभी बहू-बेगम के पास और कभी अकेली अपने कमरे में पड़ी रहती थी। मगर जाने क्यों इस मामले में लाली ने नीलम का बहू-बेगम से कोई जिक्र नहीं किया। और न बहू-बेगम ने ही कोई अधिक खोद-विनोद की। नीलम साफ बच गई।

मिरजा वजीरअली खाँ के दिल से लालारुख उतरने का नाम ही नहीं लेती थी। चौबीसो घन्टे उसी की धुन सवार रहती थी। जब-तब नीलम से उसका जिक्र करके कुछ करने के लिए कहते रहते थे। लेकिन नीलम हाँ, हूँ, करके कन्नी काट जाती थी। लाली की तरफ जाने की उसकी हिम्मत नहीं बँधती थी।

इधर मिरजा वजीरअली खाँ ने जिस दिन से लाली को देखा था, उसके बाद से एक दिन भी अब्बा हुजूर के साथ नवाब बहू-बेगम के महलों में नहीं गए थे। आसफुद्दौला भी बहुत कम ही उनसे मुलाकात किया करते थे।

जब नीलम ने कुछ नहीं किया तो मिरजा वजीरअली खाँ खुद ही कमर बाँध कर लालारुख की टोह लेने के लिए तैय्यार हो गए। नीलम से उन्हें मालूम हो चुका था कि लाली सुबह शाम बाटिका में घूमने आया करती है और वहाँ वह अकेली ही हुआ करती है। अतः वजीरअली खाँ ने चुपचाप सुबह-शाम उस बाटिका में जाना, चक्कर लगाना शुरू किया। कई दिन आए गए, मगर वहाँ उन्हें लालारुख की कहीं छाया भी न दिखाई दी। आसफुद्दौला राजकाज के झंझटों में फँसे रहते। विशेष रूप से उन्हें महाराजा झाऊ लाल का वियोग घेरे रहता था इसलिए वह बहुत कम अपने महल से बाहर निकलते थे। वजीरअली खाँ ने अब्बा हुजूर से एक-दो बार दादी-अम्माँ से मुलाकात करने के लिए कहा भी मगर आसफुद्दौला नहीं गए। टाल-टूल कर गए। अन्त में वजीरअली खाँ खुद लाली का कुछ अता-पता लेने के लिए नवाब बहू-बेगम के महल में जाने को तैय्यार हुए।

एक संध्या से कुछ पहले अपने महल से निकल कर पहले वह बाटिका में गए जिसमें लाली सैर के लिए आती थी। मगर वहाँ उन्हें लाली नजर नहीं आई। वहाँ से निकल कर वह सीधे नवाब बहू-बेगम के महल में आए। बाहर ड्योढ़ी पर नवाब नाजिर मौजूद थे। ज्यों ही वजीरअली खाँ ड्योढ़ी के अन्दर कदम रखने को हुए कि नवाब नाजिर ने रोक कर कहा—"आप कहाँ जा रहे हैं?"

"दादी अम्माँ, नवाब बहू-बेगम साहिबा की खिदमत नियाज हासिल करने के लिए।" वजीरअली खाँ ने साधारण भाव से कहा।

"नवाब बहू-बेगम साहिबा आप से मुलाकात नहीं करेंगी।" नवाब नाजिर ने कहा।

"क्यों?" वजीरअली खाँ ने कहा—"हम तो अकसर अब्बा हुजूर के साथ उनकी खिदमत में हाजिर हुआ करते थे। तब तो कभी कोई बात नहीं थी।"

नवाब नाजिर अदब के साथ बोले—"इस बारे में ज्यादा तो कुछ अर्ज नहीं कर

सकता। लेकिन इतना जरूर कह सकता हूँ कि जनाब आलिया बहू-बेगम साहिबा आपसे कुछ नाराज जरूर हैं। उन्होंने आपको महल में आने जाने की मनाही कर रखी है। इसलिए मैं आपको महल के अन्दर जाने से रोक रहा हूँ।"

"आखिर उनकी नाराजगी की कोई वजह आप बता सकते हैं ?"

"हमें खुद भी नहीं मालूम ?" नवाब नाजिर ने कहा—"उन्होंने हमें जो हुक्म दिया है, हम उतना ही जानते हैं।"

वजीरअली खाँ का माथा ठनक उठा। समझ गए कि यह सब उसी लालारुख की करामात है। मालूम होता है उसने हमारे उस पैगाम को बहू-बेगम के कानों तक पहुँचा दिया है और उसी के कारण महलों में हमारा आना-जाना बन्द कर दिया गया है। वजीरअली खाँ भुन्नास से हो गए और अपने महल में लौट आए।

धीरे-धीरे तीन महीने गुजर गए। उधर लाली की तरफ तो बात कुछ आई गई सी हो गई थी। नवाब बहू-बेगम के ध्यान से भी वह बात उतर गई थी। लेकिन इधर मिरजा वजीरअली खाँ लालारुख के फिराक में ही बेचैन रहा करते थे। कुछ समझ में नहीं आता था कि किस तरह वह काबू में लाई जाए।

अब मोहर्रम का महीना शुरू हो गया था। ताजियों, मजलिसों और मातमों की धूम थी। इमामबाड़ा आसफी में रोजाना बड़े धूम-धाम के मजलिसें हुआ करती थीं। मर्सिये पढ़े जाते थे और अजादारी हुआ करती थी। नवाब आसफुद्दौला भी बिला नागा मजलिस में शरीक हुआ करते थे। हरमसरा की बेगमात भी तशरीफ ले जाया करती थीं। रोजना तो नहीं, मगर दूसरे-तीसरे दिन जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम साहिबा भी मजलिस में शरीक होने के लिए वहाँ तशरीफ ले जाया करती थीं। उस समय लाली भी उनके साथ हुआ करती थी।

मोहर्रम की सातवीं तारीख थी। उस दिन बड़े जोर-शोर की मजलिस होने वाली थी। लखनऊ शहर में दो दिन पहले से खबर फैल रही थी कि सातवीं तारीख को इमामबाड़ा आसफी की मजलिस में मियाँ दिलगीर अपनी नई मरसिया पढ़ेंगे और मीर हसन उनके मुकाबले पर खड़े होंगे। मियाँ दिलगीर कायस्थ थे। छुन्नूलाल उनका नाम था और 'तरब' तखल्लुस से शायरी किया करते थे। उन्होंने हिन्दू मजहब तर्क करके इस्लाम अपना लिया था और अपना नाम बदल कर गुलाम हुसैन तथा 'दिलगीर' तखल्लुस रख लिया था। मर्सिये लिखना-पढ़ना अपना ध्येय बना लिया था और इस फन में मियाँ दिलगीर लखनऊ में बहुत मशहूर हो गए थे। मीर हसन पुश्तैनी मर्सियागो और मर्सिया ख्वाँ थे। उनका खानदान मर्सियागोई में मशहूर चला आ रहा था। अतः नवाब-आसफुद्दौला उस जोड़-तोड़ के बहुत शायक थे। उस दिन वह मजलिस शुरू होने से पहले ही इमामबाड़े में गए थे।

जनाब आलिया भी उस दिन की मजलिस में शरीक होने के लिए उत्सुक थीं।

तैय्यारी में लगी हुई थीं। मजलिस शुरू होने के कुछ पहले उन्होंने साधारण तरीके से लाली को अपने पास बुला कर कहा—"लाली, जरा जाकर इमामबाड़े में देख समझ आ, मजलिस शुरू होने में अभी कितनी देर है!"

रात का समय था। चिराग जल चुके थे। अतः लाली को अकेले महल से बाहर निकलने में संकोच हो रहा था। लेकिन नवाब बहू-बेगम का आदेश था। किसी प्रकार भी टाला नहीं जा सकता था। इसलिए वह महल से निकल कर इमामबाड़ा की तरफ चल पड़ी।

उसी समय मिरजा वजीरअली खाँ भी मजलिस में शरीक होने के लिए अपने महल से निकल कर इमामबाड़े की तरफ चले। राह में लालारुख अकेली उधर को ही जाते हुए उन्हें नजर आ गई। मजलिस में शरीक होना भूल गए। पागलों की तरह झपट कर उसे अपनी बाँहों में भर लिया, बोले—"ऐ, जानेमन? उस दिन के बाद आज इस वक्त नजर आई हो? हम तो तुमसे मुलाकात करके दीदार हासिल करने के लिए तरस-तरस गए। चलो, अब इस वक्त हमारे महलों में चलो। मिल-बैठ कर एक दूसरे का दिल गुदगुदाएँ।"

लाली के होश-हवास ठिकाने न रह गए। उस बेबसी की हालत में उससे और कुछ न बन पड़ा। एकदम चीख पड़ी। और अपने को उनकी बाँहपाश से छुड़ाने की भरसक चेष्टा करने लगी। वजीरअली खाँ पागल हो रहे थे। जितना वह छूटने को जोर लगाती थी वह अपने बाहुपाश को और अधिक कस लेते थे। अन्त में उसका हाथ पकड़ कर अपने महल की ओर खींचने ले जाने लगे। लाली और जोर-जोर से चीखने-चिल्लाने लग गई।

लाली को गए देर हो रही थी। मजलिस कहीं शुरू न हो गई हो। इस विचार से नवाब बहू-बेगम अपने महल से निकल कर इमामबाड़े की तरफ चलीं। सहसा लाली का चीखना-चिल्लाना उनके कानों में गूंज गया। वह चौंक पड़ीं। आँखें फैला कर इधर-उधर देखने लगीं। वजीरअली खाँ लाली को खींचते अपने महल की तरफ ले जाते हुए नजर आ गए। बहू-बेगम झपट कर वहाँ पहुँच गईं और कड़कदार आवाज से कहा—"एँ, ये क्या हरकत है?" दादी अम्माँ की आवाज सुनते ही वजीरअली खाँ का सारा जोश-खरोश हवा हो गया। लाली का हाथ छोड़ कर अपने महलों की तरफ भाग गए।

लाली बदहवास सी हो रही थी। उसका चेहरा आँसुओं से भरा था। हिचकियाँ बँध रही थीं। बहू-बेगम ने उसे पकड़ कर छाती से लगा लिया। अपने आँचल से उसके आँसू पोंछे। मजलिस में शरीक होना तर्क करके लाली को लेकर महलों में लौट आईं। फिर इतमीनान से बैठ कर लाली से घटना की पूरी कैफियत मालूम की। सुन कर बहू-बेगम साहिबा आपे से बाहर हो गईं। रात ज्यों-त्यों गुजरी। सुबह होते ही उन्होंने नवाब नाजिर तहसीन अली खाँ को भेज कर नवाब आसफुद्दौला को अपने पास बुलाया।

आसफुद्दौला के आ जाने पर बहू-बेगम ने उनको पैगाम से लेकर पिछली रात तक की सारी कैफियत सुना कर कहा—"ऐसे ही कमजर्फ वजीरअली खाँ को तुम चाहते हो ? हर तरह के लाड़ लड़ाते हो और सुना है उसे अपना जांनशीन बनाने का भी इरादा रखते हो ? बिलकुल गलत है। जिसकी ऐसी आदतें और हरकतें हैं वह अवध का नवाँब होगा ? तोबा-तोबा ! खानदान मंसूरिया के माथे पर काला दाग लग जाएगा और रियासत-हुकूमत तो जिस बहाव में वह जाएगी उसके बारे में तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता। अगर हम मौके पर न पहुँच गई होतीं तो वह मेरी लाली की जाने कैसी क्या दुर्गति कर डालता। वह हरगिज तुम्हारा जांनशीन होने लायक नहीं है। याद रखना तुम्हारी यह समझ-बूझ, तुम्हारा और खानदान का नाम बदनाम कर देगी। आगे अब मैं और कुछ नहीं कहना चाहती। हम एक तुम्हारा ख्याल करके इस मामले को दर-गुजर कर रही हैं। वरना तुम हमारे मिजाज को जानते समझते हो।"

आसफुद्दौला माँ का बहुत आदर करते थे। अतः विरोध में एक शब्द भी न कह सके। सिर्फ इतना ही कहा—"आप इतमीनान और खातिरजमा रखें। हम अपनी जान-शीनी के बारे में काफी गौर करके आगे कदम बढ़ाएँगे।"

१०

नवाब आसफुद्दौला को एक अर्से से अपने जांनशीन की तलाश थी और अभी तक उनकी निगाह इधर-उधर से भटक कर एक मिरजा वजीरअली खाँ पर ही जमी हुई थी। लेकिन अपनी वाल्दा, नवाब बहू-बेगम के मुँह से वजीरअली खाँ की कहानी तथा उनकी फिटकार सुन कर आसफुद्दौला के दिल को एक धक्का सा लगा था और खटक सी पैदा हो गई थी। अभी तक जिस वजीरअली खाँ को अपनी आँखों पर रखते और अपने बाद उसे अवध की नवाबी सौंपने वाले थे, बहू-बेगम की चेतावनी ने उसे खटाई में डाल दिया था।

इस समय नवाब आसफुद्दौला तथा सआदतअली खाँ में अच्छी पट रही थी। और उनकी मेहरबानियाँ तथा नजरे-इनायत पूर्णरूप से सआदतअली खाँ की तरफ लुढ़क रही थीं। दरबार में एक सआदतअली खाँ की ही तूती बोलती सुनाई देती थी। आसफुद्दौला के अन्य दूसरे भाइयों को यद्यपि यह अच्छा नहीं लग रहा था। अन्दर ही अन्दर कुढ़े जा रहे थे। मगर विवश थे। सआदतअली खाँ भी अपने सूबे कटेहर-बरेली रुहेलखण्ड से आकर और आसफुद्दौला की दरबारदारी में शरीक होकर एक प्रकार से सन्तुष्ट थे।

क्योंकि आसफुद्दौला राज-काज के सभी अहम मामले-मसले में बराबर उनसे मशविरा लेते रहते थे।

सआदतअली खाँ का बेटा गाजीउद्दीन हैदर परवान चढ़ रहा था। अक्सर बाप के साथ दरबारे आसफी में आया करता था। आसफुद्दौला उसे अपनी गोद में बैठा लेते थे और दूसरी बातें छोड़ कर उससे ही बातें करते रहते थे। बेशकीमती खिलौने, पोशाकें तथा दूसरी चीजें उसे अता फरमाते थे। गाजीउद्दीन सुन्दर था। होनहार भी मालूम होता था। आसफुद्दौला को उसमें बादशाही लक्षण भी नजर आते थे। अतः दिल उसकी ओर खिंचता रहता था।

वजीरअली खाँ की ओर से आसफुद्दौला के दिल में एक खटक पैदा हो ही चुकी थी। यद्यपि अभी लाड़-प्यार, प्रेम-स्नेह सब उसी तरह मौजूद था और उसमें कोई कमी न थी। लेकिन जांनशीनी का ख्याल डावांडोल था। उन्हें नवाब बहू-बेगम की फिटकार याद आ जाती और ख्याल बहक जाता। इधर उनका दिल सआदतअली खाँ के साहबजादे की ओर दिन-प्रतिदिन अधिक खिंचता चला जा रहा था। अतः आसफुद्दौला ने गुनताड़ा लगाया—जांनशीनी के मसले को लेकर हम क्यों इतना परेशान हों? क्यों न सआदत-अली खाँ से उनके बेटे को माँग लें और उसे अपना जांनशीनी वलीअहद घोषित कर दें। एक तो गाजीउद्दीन हैदर हमारे भाई की सही औलाद है। अवध की गद्दी तक उसका हक भी पहुँचता है फिर वह खूबसूरत और होनहार भी मालूम होता है।

अपने इन विचारों की मजबूती के लिए एक दिन चुपचाप अकेले में उन्होंने लखनऊ के प्रसिद्ध ज्योतिषियों, पंडितों और नजूमियों को अपने पास बुलाया और उसी वक्त गाजीउद्दीन हैदर को भी बुला कर अपनी गोद में बैठाया। जानकारों से लड़के के ग्रह-लक्षण आदि दरयाफ्त किए और उसके भविष्य के विषय में जानकारी प्राप्त करना चाही।

ज्योतिषियों, नजूमियों ने लड़के की हाथ की रेखाएँ आदि देख कर कहा—"बच्चे की हस्तरेखाएँ, मस्तक की लकीरें तथा दूसरे लक्षण साफ तौर पर पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि यह लड़का एक दिन लखनऊ की नवाबी मसनंद की जरूर शोभा बढ़ाएगा। इसके अलावा इसका भाग्य यह भी कह रहा है कि नवाबी मसनद पर आसीन होते ही मसनद का मर्तबा और भी ऊँचा उठा जाएगा।"

"ऐसा क्या होगा?" आसफुद्दौला ने पूछा—"लखनऊ की मसनद का मर्तबा किस तरह और ऊँचा उठ जाएगा?"

एक बूढ़ा नजूमी बोल उठा—"नवाबी मसनद का ऊँचा उठना यही हो सकता है कि वह नवाबी मसनंद न कहला कर बादशाही मसनद कहलाने लग जाए।"

ज्योतिषियों, नजूमियों के इस दृढ़ कथन से आसफुद्दौला के विचारों को और अधिक बल मिला। उन्होंने सआदतअली खाँ के उस भाग्यशाली बेटे को अपना उत्तरा-

धिकारी बनाने का निश्चय कर लिया। इसके बाद उन्होंने दरबार के विश्वासी और अपने राजदार अमीर नवाब कासिमअली खाँ तथा नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ को अपने पास बुला कर अपना इरादा जाहिर किया और कहा—"आप दोनों सआदतअली खाँ के पास जाकर हमारे इस इरादे को जाहिर करो और बच्चे को माँग लाओ।"

नवाब कासिमअली खाँ तथा नवाब तहसीनअली खाँ दोनों ने जनाबआली के इस इरादे को बहुत पसन्द किया और सआदतअली खाँ के पास जाने का मौका ताकने लगे।

इसके बाद ही आसफी दरबार में एक दिन एक घटना घट गई। आसफुद्दौला के सामने सआदतअली खाँ तथा अन्य दूसरे भाइयों-मिरजा जंगलू, मिरजा मेंडू से किसी बात पर काफी तू-तू, मैं-मैं हो गई। यद्यपि सआदतअली खाँ सचाई पर थे, किन्तु जाने क्या सोच समझ कर आसफुद्दौला ने मिरजा जंगलू तथा मिरजा मेंडू का पक्ष लेकर उन्हीं की बात कायम रखी। सआदतअली खाँ को यह बहुत बुरा लगा और वह भुन्नास से होकर दरबार से उठ कर अपने घर चले गए। कासिमअली खाँ तथा तहसीनअली खाँ को उस दिन की इस घटना का कोई पता नहीं था। क्योंकि वे दोनों उस दिन दरबार में मौजूद न थे।

इत्तफाक से नवाब कासिमअली खाँ तथा नवाब तहसीनअली खाँ दोनों मिल कर उसी दिन चिराग जलने के बाद बुनियाद मंजिल जा पहुँचे। नवाब सआदतअली खाँ के दिल पर सबेरे की घटना की खीझ अब भी सवार थी। उन्हें आसफुद्दौला का गलत पक्ष लेना खटक गया था। बल्कि इसे वह अपनी एक खुली तौहीन समझ बैठे थे। इस वक्त भी उनके दिमाग में वही घटना चक्कर काट रही थी। उसी हालत में उन्होंने उन दोनों से भेंट की। कासिमअली खाँ तथा तहसीनअली खाँ ने उनसे नवाब आसफुद्दौला की ख्वाहिश जाहिर करके कहा—"जनाबआली की यह दिली ख्वाहिश है कि गाजीउद्दीन हैदर को उनकी फरजिन्दी में दे दिया जाए। वे उसे अपना जांनशीन करार देंगे।"

सआदतअली खाँ कुछ देर तक गम्भीर मुद्रा में बैठे रहे। फिर धीरे से बोले—"अभी तो वह एक नाबालिग बच्चा है।"

"खैर, ये तो जाहिर है।" तहसीनअली खाँ ने कहा—"लेकिन जनाबआली का कहना है कि हम उसे अपना जांनशीन एलान करके और उसकी पूरी परवरिश करके बालिग बना लेंगे।"

सआदतअली खाँ फिर कुछ देर खामोश रहने के बाद बोले—"इस लेन-देन में बहुत-कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें शायद जनाबआली हरगिज पसन्द न करेंगे।"

"ऐसी कौन-सी बातें हो सकती हैं जो जनाबआली को पसन्द नहीं आ सकती या उन्हें वह मंजूर नहीं फरमा सकते?" तहसीनअली खाँ ने कह कर सआदतअली खाँ की तरफ देखा।

सआदतअली खाँ फिर जरा देर खामोश बैठे रहे। फिर तकिए का सहारा लेकर

उनकी तरफ नजर घुमा कर बोले—"पहली बात तो यह है कि जनाबआली मुझे अपना नायब बना कर रियासत का सारा कारबार मेरे हाथ में दे दें। जब तक गाजीउद्दीन नाबालिग रहेगा मैं रियासत का कारबार देखूंगा। दूसरी बात कि हमारे इन्तजाम-रियासत में जनाबआली जरा भी दखल न दें। किसी तरह की भी छेड़-छाड़ न पैदा करें।" फिर जरा सम्भल कर और उन दोनों की तरफ मुखातिब होकर कुछ दृढ़ स्वर से कहा—"अगर ये दोनों बातें जनाबआली को मंजूर खातिर हों तो मैं गाजीउद्दीन हैदर को बखुशी उनकी फरजिन्दी में देने के लिए तैय्यार हूँ।"

सुन कर तहसीनअली खाँ तथा कासिमअली खाँ सन्नाटे में आ गए। एक दूसरे का मुँह देखने लगे।

उन्हें इस हालत में देख कर सआदतअली खाँ ने कहा—"मैं जानता समझता हूँ कि जनाबआली को ये दोनों शर्तें कभी मंजूर न होंगी। इसलिए उनकी यह ख्वाहिश बेकार सी ही है।"

कासिमअली खाँ ने कहा—"आपकी ये दोनों शर्तें कुछ ऐसी हैं जिनके बारे में हमलोग कुछ अर्ज करने से मजबूर हैं। जाकर जनाबआली से अर्ज करेंगे। जैसा जो कुछ वह इर्शाद फरमाएँगे आपसे अर्ज किया जा सकेगा।"

"बेकार सी बात है?" सआदतअली खाँ ने रूखे-सूखे लहजे से कहा—"इन शर्तों के खिलाफ मुझे कोई तीसरी बात पसंद नहीं है और न मैं अपने बेटे को उनकी फरजिन्दी में दे सकता हूँ।" और वह उठ कर अन्दर जनानखाने में चले गए।

उनके जाने के बाद कासिमअली खाँ तथा तहसीनअली खाँ भी उठ कर दौलत-खाना आसफी की तरफ चल पड़े। रास्ता चलते हुए तहसीनअली खाँ ने कासिमअली खाँ से कहा—"सआदतअली की शर्तें क्या हैं एकदम रियासत-हुकूमत की कुर्की है। अवध रियासत पर बिलकुल अपना ही अख्तियार चाहते हैं।"

"जनाबआली इन शर्तों को हरगिज मंजूर नहीं फरमाएँगे और न मंजूर फरमाना चाहिए।" कासिमअली खाँ ने कहा।

तहसीनअली खाँ उनकी तरफ मुड़ कर बोले—"ऐसी शर्तें मंजूर करा कर और रियासत का सारा कार-बार अपने हाथ में लेकर सआदतअली खाँ जनाबआली को जीते जी दूध की मक्खी की तरह निकाल कर फेंक देना चाहते हैं।"

"बात यह है नवाब नाजिर?" कासिमअली खाँ ने कहा—"सआदतअली खाँ अभी तक रुहेलखंड के सूबे के मालिक और मुख्तार बने बैठे हुए थे। आजादी के साथ वहाँ हुकूमत कर रहे थे। मगर जनाबआली ने उन्हें लखनऊ बुला कर उधर का खेल खतम कर दिया है। इसलिए अब वह इस तरीके से लखनऊ में अपनी हुकूमत जमाना चाहते हैं।" फिर जरा उनकी तरफ झुक कर कहा—"हजरत यह मसला बहुत गहरे मानी रखता है। खुदा-न-ख्वास्ता जनाबआली बेहोश बन गए और उनकी शर्तें मंजूर कर लीं, तो

समझ लीजिएगा कि लखनऊ की नवाबी का तख्ता ही उलट जाएगा। सआदतअली खाँ मिजाज के जैसे और तबीयत के जैसे मक्खीचूस हैं किसी से छिपा नहीं है।"

नवाब नाजिर बोले—ऐसा हरगिज न होने पाए, वरना हम सब पर तबाही ही टूट पड़ेगी। उन्हीं के हाली-मोहाली दरबार में जोर पकड़ जाएँगे।"

कासिमअली खाँ एक क्षण खामोशी से चलते रहे, फिर बोले—"इस सब का इलाज यही है कि जनाबआली को उनकी शर्तें सुना कर उनके दिल-दिमाग से इस ख्याल को बिलकुल निकाल देना चाहिए। जिस तरह अभी तक वह मिरजा वजीरअली खाँ को अपनी औलाद मान कर उन्हें जानशीन बनाने की सोचते आए हैं उसी को मजबूत बना कर जांनशीनी का ऐलान कर दें। सारा टंटा खतम हो जाए।"

दोनों चलते-चलते दरे-दौलत पर आ गए। आसफुद्दौला को मालूम हो चुका था कि वह दोनों सआदतअली खाँ के पास हमारा इरादा लेकर बुनियाद मंजिल गए हुए हैं। कासिमअली खाँ तथा नवाब नाजिर ने उनसे मुलाकात हासिल की और सआदतअली खाँ की दोनों शर्तें उनके सामने पेश कर दीं। सुन कर आसफुद्दौला सन्नाटे में आ गए। मुंह से कुछ भी न कह सके।

मौका पाकर कासिमअली खाँ ने कहा—"जनाबआली किस गलत ख्याल में हैं? अमीनुद्दौला बहुत चुस्त-चालाक शख्स हैं। वह हजरत के सगे कभी नहीं हो सकते। जरा गौर फरमाने की बात है। आला हजरत उनके बेटे को अपनी फरजिन्दी में लेकर उसे अपना जांनशीन बनाना चाहते हैं और वह इस नेकी का ऐवज इस तरह चुकाना चाहते हैं कि हुजूर को ही बालाए-ताक रख देना चाहते हैं।"

नवाब नाजिर ने अपनी टीप जमाई—"आला हजरत नवाब कासिमअली खाँ बिलकुल सच अर्ज कर रहे हैं। अमीनुद्दौला सरासर ऐहसान-फरामोश हैं। इसके अलावा सच बात यों है कि हजरत की जानिब से उनका दिल साफ नहीं है। रुहेलखण्ड की हुकूमत उनके हाथ से निकल गई है ऐसी सूरत में वह जनाबआली से कैसे मेल खा सकते हैं।"

"वह तो उस सूबे की हुकूमत को छोड़ कर हरगिज लखनऊ न आते।" कासिमअली खाँ ने कहा—"चूंकि आला हजरत ने अंग्रेज रजीडेन्ट के जरिए बुलाया, इसलिए आ गए हैं।"

आसफुद्दौला कुछ उदास, कुछ चिन्तित और गहरे विचारों में डूबे बैठे रहे। मुंह से कुछ भी नहीं बोले। काफी देर हो गई।

तहसीनअली खाँ ने कहा—"कमतरीन की समझ में तो यही आ रहा है कि आला हजरत सआदतअली खाँ के बेटे गाजीउद्दीन हैदर को अपनी फरजिन्दी में लेने वाले ख्याल को एकदम तर्क कर दें।"

आसफुद्दौला ने कहा—"मगर जांनशीनी का मसला किस तरह हल होगा? उसे

भी तो हल करना जरूरी है। यह फिक्र तो हमारे दिल-दिमाग के लिए घुन बन रही है।"

"इसका हल बहुत पहले से मौजूद है।" कासिमअली खाँ ने कहा—"आला हजरत फिजूल इधर-उधर भटक रहे हैं। जांनशीन तो हजरत के पास मौजूद है।"

"कौन ?" आसफुद्दौला ने गौर से उनकी तरफ देखा।

"मिरजा वजीरअली खाँ।" कासिमअली खाँ ने गम्भीरतापूर्वक कहा।

तहसीनअली खाँ भी बोल उठे—"जी हाँ आला हजरत ! मिरजा वजीरअली खाँ को तो आप शुरू से प्यार करते और अपना जांनशीन समझते चले आ रहे हैं।"

कासिमअली खाँ फिर बोले—"दरबार के करीब-करीब सभी अमीर-उमरा और कुछ लखनऊ के शरीफ खानदानी लोग भी यही जानते-समझते हैं कि हजरत सलामत के बाद मिरजा वजीरअली खाँ ही अवध रियासत की मसनद पर रौनक अफरोज होंगे।"

आसफुद्दौला बोले—"इसमें तो कोई शक नहीं है कि वजीरअली खाँ से हमें दिली मोहब्बत है। शुरू से हम उन्हें अपनी औलाद और गद्दी का वारिस मानते आए हैं।"

"फिर आला हजरत का ख्याल उनकी जानिब से क्यों फिर गया ? जो सआदत-अली खाँ के बेटे को फरजिन्दी में लेना चाहने लग गए थे।" नवाब नाजिर ने पूछा।

आसफुद्दौला उनकी तरफ नजर घुमा कर बोले—"इधर उनकी तेज-मिजाजी और एक-आध किसी बेजा हरकत को सुन कर हमारी तबीयत डाँवाडोल सी हो गई थी। मगर यह बात हरगिज नहीं है कि हमने उन्हें एकदम अपने दिल-नजर से गिरा दिया है। उनके लिए अब भी हमारे दिल में उसी तरह जगह मौजूद है। हम उन्हें उसी तरह चाहते हैं।"

कासिमअली खाँ गम्भीर स्वर से बोले—"तब जनाबआली इस खाकसार का कहना मानें। अब किसी तरफ न भटकें। और मिरजा वजीरअली खाँ की जांनशीनी को जल्दी ही पुख्ता करके रख दें। बाकायदा ऐलान चाहे जब करते रहेंगे।"

नवाब कासिमअली खाँ आसफुद्दौला के मामू के लड़के तथा शुजाउद्दौला की बीवी नवाब बहू-बेगम के सगे भतीजे थे। इसलिए नवाब आसफुद्दौला उन्हें चाहते भी थे और उनके इसलाह-मशविरे को भी मानते थे।

आसफुद्दौला बोले—"तुम हमारे अजीज हो, भाई होते हो। भला हम तुम्हारा कहना क्यों न मानेंगे ?" फिर जरा रुक कर कहा—"इस मामले में हमें कुछ पशोपेश में डालने वाला सिर्फ एक ही ख्याल है।"

"क्या ?" कासिमअली खाँ ने पूछा।

"हमें बस वाल्दा माजिदा का खौफ है।" आसफुद्दौला ने कहा।

"हजरत सलामत उनसे जरा भी न डरें। उनकी जानिब से कोई रखना-अंदाजी नहीं हो सकती।" कासिमअली खाँ ने कहा—"इसकी जिम्मेदारी मेरी है। मैं उनकी

खिदमत में पहुँच कर इस बारे में मशविरा करके बात को बिलकुल साफ-सुथरा बना लूंगा। कोई दिक्कत बाकी नहीं रह जाएगी। फूफीजान का मुझे भरोसा है कि वह कभी मेरी बात न टालेंगी।"

"तब ठीक है ?" आसफुद्दौला ने कहा—"आज कल में हम इस मसले पर काफी-गौर करके अपना वसीयतनामा लिख डालेंगे। तुम दोनों भी उस पर अपनी तस्दीक और गवाही के दस्तखत कर देना। बाद में बाकायदा जांनशीनी का ऐलान कर देंगे।"

कासिमअली खाँ तथा तहसीनअली खाँ एक जबान होकर बोले—"हम लोग इसी वक्त अपनी तस्दीक गवाही करने को तैय्यार हैं। हुजूर हमलोगों की तरफ से पूरा इतमीनान रखें।"

"बात एक और है ?" आसफुद्दौला ने भेद भरे लहजे से कहा—"ऐलान करने के पहले, हम चाहते हैं कि इस बात को हम लखनऊ के रजीडेन्ट के कान में डाल कर कलकत्ते के गवर्नर जनरल के कानों तक भी पहुँचा दें। जिससे आगे के लिए कोई खरखशा बाकी न रह जाए। हमारे बाद मिरजा वजीरअली खाँ आसानी से मसनद-नशीन हो सकेंगे।"

"आली जनाब का यह ख्याल बहुत खूब है।" कासिमअली खाँ ने कहा—"ऐसा हो जाने पर आला हजरत के कोई भी सौतेले भाई रियासत पर अपना हक दावा नहीं पेश कर सकते। सबको मुँह की खानी पड़ जाएगी।"

इसके बाद कासिमअली खाँ तथा तहसीनअली खाँ आदाब-सलाम बजा कर अपने-अपने घर चले गए।

दूसरे दिन बड़े सुबह ही कासिमअली खाँ दौलतखाना आसफी में आ पहुँचे और नवाब आसफुद्दौला से मुलाकात चाही। आसफुद्दौला मुँह-हाथ धोकर नाश्ते पर बैठे थे। उसी समय खिदमतगार ने आकर उनके आने की इत्तला की। आसफुद्दौला ने सोचा कि जरूर कोई जरूरी काम है जो वह इतने सबेरे आकर मुलाकात चाह रहे हैं। मुमकिन है रात वाले मसले पर ही कोई बात करना चाहते हैं। इसलिए उन्होंने वहीं अपने रूबरू बुला लिया। कासिमअली खाँ ने आकर कायदे से आदाब बजाया और कालीन का कोना दबा कर अदब कायदे से बैठ गए।

आसफुद्दौला ने जल्दी-जल्दी नाश्ता खतम करके उनकी तरफ देख कर कहा—"क्या बात है ? कोई जरूरी अहम मसला दरपेश आ गया है ? या रात वाले मसले पर कुछ और गौर किया है ?"

कासिमअली खाँ इतमीनान से बोले—"अहम मसला कोई नहीं है। रात वाले मसले पर ही कुछ अर्ज करने के लिए हाजिर हुआ हूँ।"

"क्या ?" आसफुद्दौला ने कुछ चिन्तित नजर से उनकी तरफ देखा।

कासिमअली खाँ बोले—"अर्ज यों है कि फिदवी के पेट में चूहे कूद रहे थे। उस

मसले को नवाब बहू-बेगम से तय करने के लिए बेचैन हो रहा था। इसलिए हुजूर के पास से जाकर मैं और नवाब नाजिर सीधे ही फूफीजान की खिदमत में हाजिर हुए....।"

नवाब आसफुद्दौला उत्सुकता भरे लहजे से बीच में ही बोले—"तब उन्होंने क्या कहा ? मंजूर कर लिया या कोई रखना पैदा कर दिया ?"

कासिमअली खाँ थोड़ा मुस्करा कर बोले—"आला हजरत का इकबाल है। उन्होंने सारी बात सुन कर बड़े इतमीनान से फरमाया—सआदतअली खाँ के बेटे की फरजिन्दी हमें हरगिज पसन्द न थी। बहुत अच्छा रहा जो मिरजा अमानी ने उस ख्याल को तर्क कर दिया। मिरजा वजीरअली खाँ की मसनद-नशीनी के बारे में हमें कोई एतराज न होगा। वह बखूशी अपने इरादे को पुख्ता बना कर रख दें।—कासिमअली खाँ जरा रुक कर बोले—"फूफीजान ने इसके बाद दबी जबान एक बात जरूर कही थी, लेकिन बाद में उन्होंने खुद अपनी जबान से उसे खतम कर दिया ?"

"क्या बात कही थी उन्होंने ?" आसफुद्दौला ने जरा चिन्ता के भाव से पूछा।

"फरमाया था कि वजीरअली खाँ की एक हरकत को देख कर हमें उनसे कुछ नफरत-सी जरूर हो गई थी। लेकिन वह बात आई-गई सी हो गई। अब हमें उसका कोई मलाल नहीं है। मिरजा आमानी बड़े शौक से उन्हें अपना जांनशीन बना सकते हैं। इतना कहने के बाद फूफीजान जरा देर खामोश रहीं फिर मेरी तरफ देख कर एक राज भरे लहजे से कहा—देखो कासिमअली खाँ! वजीरअली खाँ की पैदायश जैसी है वह हमसे छिपी नहीं है। वह मिरजा अमानी की औलाद नहीं कहे जा सकते। इसलिए मिरजा अमानी को हमारी रजामन्दी सुना के साथ इतना और कह देना कि बात को काफी मजबूत बना देंगे। वजीरअली खाँ को अपनी औलाद साबित करने की हर बात को पुख्ता कर देंगे। अगर उनके वसीयतनामें में तुम लोगों की मोहर की जरूरत समझी जाए तो तुम और नवाब नाजिर बिला किसी हिचक के अपनी मोहर कर देना। तुम दोनों अपने बहुत करीबी अजीज, राजदार, वफादार सभी कुछ हो।"

सुन कर आसफुद्दौला के चेहरे पर एकदम प्रसन्नता बरस पड़ी। उन्होंने हाथ बढ़ा कर कासिमअली खाँ को पकड़ लिया और छाती से लगा कर बोले—"भाई कासिम-अली खाँ, तुमने बहुत बड़ा काम किया। हमारी एक लम्बी फिक्र दूर कर दी।" फिर बैठ कर कहा—"अब हम आज ही इतमीनान से बैठ कर वसीयतनामा लिखे डालते हैं।"

इसके बाद कासिमअली खाँ चले गए।

आसफुद्दौला ने वसीयतनामा लिख डाला। उस पर कासिमअली खाँ तथा तहसीन-अली खाँ की तस्दीक गवाही की मोहरें भी लग गईं।

इसके बाद एक दिन उन्होंने रजीडेन्ट को मुलाकात के लिए बुलाया। वह दौलत-खाना आसफी में आ गया। आदर-सत्कार के बाद आसफुद्दौला ने बड़े इतमीनान के साथ रजीडेन्ट से कहा—"कम्पनी सरकार ने हमें अवध की मसनद पर बैठाया था। उसके

बाद आपकी कोशिश तथा नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की मेहरबानी ने हमारी एक दूसरी ख्वाहिश भी पूरी कर दी है यानी सआदतअली खाँ को रुहेलखण्ड से बुला कर हमारे पास रख दिया है। हम कम्पनी सरकार के बहुत ऐहसानमन्द हैं। और इस ऐहसान के ऐवज में हम जौनपुर, गाजीपुर का इलाका जिसकी आमदनी बाइस लाख रुपया सालाना है कम्पनी सरकार को अता फरमाते हैं।"

रजीडेन्ट ने मुस्करा कर कहा—"हम कम्पनी सरकार की तरफ से आपकी इस बखशीश का शुक्रिया अदा करते हैं।"

आसफुद्दौला जरा देर खामोश रहे फिर बोले—"इस वक्त एक बात और भी हम आपके कान में डाल देना चाहते हैं। मिरजा वजीरअली खाँ ही एक हमारी सही औलाद है। हमारे बाद रियासत पर उसी का हक पहुँचता है। इसलिए हमारे बाद वजीरअली खाँ ही अवध की नवाबी मसनद पर रौनक अफरोज होगा। इस बारे में हमने अपना वसीयत-नामा भी लिख कर रख दिया है।"

बाईस लाख का इलाका पाकर रजीडेन्ट फूला नहीं समा रहा था। इस समय नवाब आसफुद्दौला उसे उदारता की एक मूर्ति मालूम हो रहे थे और उनके मुख से निकलने वाली हर एक बात, सही मालूम हो रही थी। वजीरअली खाँ की जांनशीनी की बात को सुन कर रजीडेन्ट ने बिना किसी सोच-विचार तथा संकोच के कहा—"आला हजरत जिसे अपनी सही औलाद फरमा रहे हैं, बिला शक आपके बाद वही मसनद नशीन होगा। दूसरा कोई कैसे हो सकता है? बाप के बाद उसका बेटा ही तो रियासत का हकदार हुआ करता है।" फिर जरा रुक कर कहा—"हम आपके इस फरमाने को आज ही जनाब गवर्नर जनरल के पास भी पहुँचा देंगे।" फिर रजीडेन्ट चला गया।

और आसफुद्दौला को अपनी जांनशीनी की बात से पूर्ण सन्तोष हो गया।

•

११

सआदतअली खाँ को नवाब आसफुद्दौला की ओर से अपनी शर्तों का कोई जवाब नहीं मिला था। बल्कि इसके विपरीत दरबारे आसफी में सआदतअली खाँ का अब वह आदर सम्मान नहीं रह गया था। धीरे-धीरे यहाँ तक नौबत आ पहुँची कि आसफुद्दौला ने उनकी तरफ रुख करना-बोलना भी छोड़ दिया। दरबारियों ने जो यह हाल देखा तो वे लोग भी सआदतअली खाँ से किनाराकशी करने लग गए।

सआदतअली खाँ अपनी इस तौहीन को समझ रहे थे और इसकी वजह भी उन्हें कहीं ढूंढने-खोजने नहीं जाना था। जानते थे कि यह सब गाजीउद्दीन को उनकी फरजिन्दी

में न देने का नतीजा है। अगर हम बिना किसी शर्त के अपने बेटे को उनके हवाले कर देते तो वह खुश रहते।

सआदतअली खाँ भी ऐंठ-अकड़ वाले आदमी थे। रुहेलखण्ड के सूबे में रह कर उन्होंने हुकूमत की थी। शान से रहे थे। किसी के आगे सिर नहीं झुकाया था। अपनी ही बहादुरी से तलवार के जौहर दिखला कर वहाँ के फसादियों को नीचा दिखाया था और शासन की सींक खड़ी कर दी थी। वह बू-बास उनके दिल-दिमाग से एकदम दूर नहीं हो गई थी। अब भी ज्यों-की-त्यों मौजूद थी।

आसफुद्दौला तथा दरबार का यह रंग देख कर उनका जी ऊब उठा। नवाब आसफुद्दौला की फरमांबरदारी से उनका दिल भर गया। पहले दरबार में जाना-आना बन्द कर दिया। अपनी बुनियाद मंजिल ही में पड़े रहने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि आसफी दरबार में पीठ-पीछे उनकी खिल्ली उड़ाई जाने लगी। आसफुद्दौला को खुश करने के लिए दरबारी लोग दिल खोल कर उनका मजाक उड़ाते थे और यह मजाक यहाँ तक बढ़ गया कि एक दिन एक भाँड़ ने सरे दरबार में नकल करके सआदतअली खाँ का मजाक उड़ाया।

सआदतअली खाँ को आसफी दरबार के रोज-रोज के मनोविनोद तथा अपने प्रति दुर्भावनाओं का पता चलता रहता था। क्योंकि नवाबी दरबार में दो-चार लोग ऐसे भी मौजूद थे जो उनके दोस्त थे। वे लोग बराबर सआदतअली खाँ के पास पहुँचते रहते थे और दरबार की हर एक बात सुनाते रहते थे। अतः सआदतअली खाँ ने लखनऊ में न रहने का इरादा कर लिया। लखनऊ के रजीडेन्ट से मिले और उससे अपना इरादा जाहिर किया कि मैं लखनऊ से जाकर बनारस में रहना चाहता हूँ। यहाँ मेरी तबीयत नहीं लगती।

रजीडेन्ट ने पूछा—"तब आप इस बारे में मुझसे क्या इमदाद चाहते हैं?"

"आप नवाब आसफुद्दौला से मुझे लखनऊ छोड़ने और बनारस जाने की इजाजत दिलवा दीजिए।"

रजीडेन्ट अच्छी तरह जानता-समझता था कि सआदतअली खाँ किस कॅडे के आदमी हैं। कम्पनी सरकार के अफसरों से जैसा उनका हेल-मेल था वह भी उससे छिपा नहीं था। फिर इधर आसफुद्दौला तथा उनके मनमुटाव की बात भी उसके कानों तक पहुँच गई थी। अतः रजीडेन्ट इजाजत दिला देने के लिए राजी हो गया। और एक दिन मौका पाकर उसने नवाब आसफुद्दौला से मुलाकात करके कहा—"आला हजरत के वह सौतेले भाई नवाब सआदतअली खाँ जो कुछ दिन पहले सूबा रुहेलखण्ड से आकर लखनऊ में आपकी फरमांबरदारी में रहने लगे थे, वह अब लखनऊ छोड़ कर बनारस जाकर कयाम करना चाहते हैं। क्योंकि उनकी तबीयत यहाँ नहीं लगती। वह कुछ दूसरे ही मिजाज के आदमी हैं।"

नवाब आसफुद्दौला को रेजीडेन्ट के इस कहने का मतलब समझने में देर न लगी। उन्होंने रजीडेन्ट से कहा—"आपके इस कहने का मतलब हमारी समझ में नहीं आया कि आप हमसे क्या चाहते हैं ?"

रजीडेन्ट बोला—"आला हजरत उन्हें लखनऊ छोड़ने और बनारस में जा कर रहने की इजाजत अता फरमाएँ।"

आसफुद्दौला मुस्करा कर बोले—"बनारस का इलाका तो अब कम्पनी सरकार के इख्तियार में है। उनको वहाँ कयाम करने की इजाजत तो आप लोग दे सकते हैं।"

"खैर," रजीडेन्ट ने कहा—"बनारस में रहने की इजाजत तो उन्हें ब-आसानी मिल जाएगी।"

"तब लखनऊ छोड़ने की इजाजत हम उन्हें बखुशी देते हैं। बल्कि यहाँ रहने पर जो हम उनको गुजारे के तौर पर तीन लाख रुपया सालाना दिया करते थे, वही उनको बनारस रहने पर भी दिए जाएँगे। वह जब चाहें बखुशी लखनऊ से जा सकते हैं।"

इसके बाद रजीडेन्ट चला गया। सआदतअली खाँ के इस इरादे से नवाब आसफुद्दौला को एक प्रकार से राहत ही मिली। क्योंकि दोनों के दिलों में एक दूसरे के प्रति नफरत पैदा हो चुकी थी। अतः आसफुद्दौला को भय था कि अगर वह यों खामोश लखनऊ में जमे बैठे रहेंगे, तो न जाने क्या तूमार कर बैठें। फिर कटेहर-बरैली का सूबा उनसे छीना ही जा चुका था। वहाँ राजा सूरतसिंह सूबेदारी कर रहे थे। इलाके की आमदनी बराबर लखनऊ के खजाने में जमा हो रही थी, अतः आसफुद्दौला के लिए यह भी एक बड़े सन्तोष की बात थी। बनारस अब उनके कब्जे में भी नहीं था। कम्पनी की अमलदारी में चला गया था। इसलिए लखनऊ से दूर जाकर गैर इलाके में सआदतअली का कयाम करना उन्हें पसन्द था।

सआदतअली खाँ को लखनऊ छोड़ कर बनारस चले जाने की इजाजत मिल गई। इसलिए वह एक दिन बुनियाद मंजिल को खैरवाद कह कर अपने बाल-बच्चों तथा साज-सामान सहित लखनऊ से बनारस की ओर चल पड़े। आसफुद्दौला की ओर से न कोई पूछ-ताछ या छेड़-छाड़ ही हुई और न ही कोई आसफी दरबार का रईस-अमीर ही उन्हें विदा करने आया।

बनारस पहुँच कर सआदतअली खाँ वहाँ ठहरे नहीं। वहाँ से बजरे में सवार होकर सीधे कलकत्ता गए। कलकत्ता में उन्होंने एक कोठी किराए पर ले ली और इत-मीनान के साथ उसमें ठहर गए। कलकत्ता उनकी जानी-मानी जगह थी। अकसर रुहेलखण्ड में रहते हुए वहाँ आया-जाया करते थे। इसलिए किसी प्रकार की अड़चन नहीं हुई।

इसके बाद एक दिन उन्होंने कम्पनी सरकार के प्रधान, गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर से मुलाकात हासिल की और मिल बैठ कर नवाब आसफुद्दौला के सलूक-

व्यवहार तथा उनके दरबार का हाल खूब नमक-मिर्च लगा कर बयान किया। लार्ड सर जान शोर ने उनकी पूरी तसल्ली-तशफ्फी की। हर तरह से इतमिनान दिलाया और वक्त का इन्तज़ार करने के लिए कहा। सआदतअली खाँ बिना नागा दूसरे-तीसरे गवर्नर जनरल के पास पहुँचने लगे और इस प्रकार दोनों में एक अच्छा दोस्ताना रिश्ता बन गया।

धीरे-धीरे कलकत्ता की जनता भी उनको जान-पहचान गई और उन्हें अवध-लखनऊ का नवाब समझ कर उनकी इज्जत करने लगी, सलाम बजाने लगी। उनके नौकर-चाकर कलकत्ता के बाजारों, गली-कूचों में अकड़-ऐंठ के साथ हथियार बाँधे फिरा करते थे, किन्तु कभी कोई छेड़-छाड़ नहीं करता था। सभी जानते थे कि उनके मालिक अवध-लखनऊ के नवाब तथा कम्पनी सरकार के गवर्नर जनरल के दोस्त हैं। रोजाना उनसे मुलाकातें और बैठकें हुआ करती हैं। सआदतअली खाँ अपने काले जानदार घोड़े पर सवार होकर सुबह-शाम घूमने जाया करते थे। इत्तफाक से एक दिन एक विचित्र-सी घटना घट गई।

सआदतअली खाँ अपनी कोठी से सूरज निकलने से बहुत पहले घूमने निकले थे। सूरज निकल चुका था। सबेरे की मीठी-मीठी धूप फैल रही थी। सआदतअली खाँ अपना घोड़ा नचाते हुए कलकत्ता के किले के सामने आ कर रुक गए। उस समय वहाँ किले का अंग्रेज अफसर जनरल मार्टन तथा अन्य दस-बीस अंग्रेज किले के बाहर खड़े हुए धूप का आनन्द ले रहे थे। किले के चारों ओर बहुत गहरी तथा चौड़ी खाई थी। सआदत-अली खाँ अपना चंचल घोड़ा नचाते हुए खाई के किनारे पहुँच गए और खाई की चौड़ाई पर कौतूहल भरी निगाह डालने लगे। जनरल मार्टन तथा अन्य अंग्रेज भी उनके पास आ गए। बातें शुरू हो गईं।

जनरल मार्टन ने कहा—"नवाब साहब! आप खाई को बड़े गौर से क्यों देख रहे हैं?"

सआदतअली खाँ ने कहा—"कुछ नहीं, यह खाई बहुत गहरी मालूम होती है और खाई की चौड़ाई भी बहुत काफी है।"

एक दूसरा अंग्रेज बोला—"खाई की गहराई ३०० फीट है।"

सआदतअली खाँ का घोड़ा चंचलता पर उतारु था, सँभाले नहीं सँभल रहा था। उसकी चंचलता को देख कर जनरल मार्टन ने कहा—"आपका घोड़ा बहुत चंचल और जानदार मालूम होता है। किसी अच्छी नसल का लगता है।"

सआदतअली खाँ ने घोड़े की रास खींच कर उसकी गर्दन को सहलाते हुए कहा—"हमारा यह घोड़ा इधर का नहीं है। काबुल का है। जात और नसल तो इसकी आला दर्जे की है ही, अभी जवानी पर आया है इसलिए जोश से भरा रहता है।"

जनरल मार्टन मुस्कराया, फिर बोला—"क्या आपका यह काबुली जानदार घोड़ा

हमारे किले की यह खाई लाँघ सकता है ? आप इसे कुदा कर खाई के उस पार ले जा सकते हैं ?"

सआदतअली खाँ ने खाई की चौड़ाई पर नजर डाली, उस पार के किनारे को देखा। फिर कहा—"कोई मुश्किल बात तो नहीं है।"

"तब कुदा कर उस किनारे पर ले जाइए।" जनरल मार्टन ने मुस्कराते हुए कहा।

सआदतअली खाँ बोले—"ऐसे नहीं, कुछ शर्त लगाओ, बाजी बदो, फिर हमारी हिम्मत और हमारे इस जानदार काबुली घोड़े का तमाशा सब लोग अपनी आँखों से देखो।"

जनरल मार्टन तथा अन्य सभी मौजूदा अंग्रेज जानते थे कि किले के खाई की चौड़ाई इतनी अधिक है कि न कोई वीर-बहादुर योद्धा उसे पार कर सकता है और न कोई घोड़ा अपने सवार को लेकर उस पार जा सकता है। अगर कोई बहादुर सिपाही ऐसी हिम्मत करेगा तो दोनों सवार तथा घोड़े की हड्डियों का भी पता नहीं चलेगा। खाई बहुत गहरी है। बिलकुल असम्भव सी बात है। भला ये लखनऊ के नवाब तथा इनका घोड़ा क्या खा कर इस खाई को पार करेंगे ?

जनरल मार्टन सगर्व बोला—"हाँ-हाँ मैं शर्त लगा सकता हूँ, बाजी बदला हूँ।"

सआदतअली खाँ मुस्करा कर बोले—"फिर दाँव लगाओ ? रखो, शर्त के एवज में क्या रखते हो ? फिर हम अपना और घोड़े का तमाशा दिखाएँ।"

जनरल मार्टन बोला—"किले की चारदीवारी के अन्दर वह सामने लम्बी चौड़ी लाजवाब कोठी खड़ी हुई है। वही दाँव पर लगाई जाती है। अगर आप अपने घोड़े को कुदा कर खाई के उस पार ले जाएँगे तो शर्त के एवज में उस कोठी पर आपको कब्जा दे दिया जाएगा।"

"पक्की शर्त है ?" सआदतअली खाँ ने खड़े हुए अंग्रेजों की तरफ देख कर पूछा।

सभी अंग्रेज एक जबान होकर बोल उठे—"हाँ, हाँ, बिलकुल पक्की शर्त है।"

जनरल मार्टन ने भी दृढ़तापूर्वक कहा—"अब किस तरह से आपको यकीन दिलाया जाए ? सभी लोग तो सुन, कह रहे हैं। आप उस किनारे पर जाने की हिम्मत तो कीजिए।"

सआदतअली खाँ जम कर घोड़े पर बैठ गए। फिर घोड़े की गर्दन ठोंक कर कहा—"बेटे अपना तमाशा इन लोगों को दिखाना।" घोड़ा एकदम कनौतियाँ खड़ी करके दूसरे किनार को देखने लगा।

इस दरमियान में किला के अड़ोस-पड़ोस में रहने वाले बहुत से लोग वहाँ आकर जमा हो गए और तमाशा देखने के लिए उत्सुक नजर आने लगे।

सआदतअली खाँ ने जनरल मार्टन की तरफ देख कर कहा—"अपनी शर्त याद

रखना, भूलना मत ? अब मैं अपना और अपने घोड़े का तमाशा दिखलाता हूँ।"

और सआदत अली खाँ ने घोड़े को पुचकार कर एड़ लगाई। घोड़ा सबके देखते हुए आगे के दोनों पैर उठा कर पीछे के पैरों पर खड़ा हो गया और वह छलाँग मारी कि खाई लाँघ कर दूसरे किनारे पर खड़ा नजर आया।

तमाशबीन लोगों ने 'वाह-वाह' की आवाज के साथ तालियों की तड़तड़ाहट की। जनरल मार्टन तथा अन्य अंग्रेजों के चेहरे लटक गए। उन्हें स्वप्न में भी यह आशा न थी कि सआदतअली खाँ तथा उनका घोड़ा हवा में उड़ कर खाई के दूसरे किनारे पर पहुँच जाएँगे। अब शर्त पूरी करने की बात याद करके जनरल मार्टन का दिल धक-धक करने लगा। चुपचाप अन्य अंग्रेज साथियों सहित किले के अन्दर चला गया। सआदतअली खाँ भी वहाँ जा पहुँचे और शर्त के अनुसार कोठी पर अपना अधिकार चाहा। जनरल मार्टन किले का अफसर जरूर था मगर किले को यों शर्तों में बेच देने का उसे कोई अधिकार हासिल नहीं था। किला कम्पनी सरकार का था और जनरल मार्टन कम्पनी का एक नौकर था। अतः वह शर्त पूरी करने से विवश हो कर बगलें झाँकने लगा। उस वक्त तो सआदत अली खाँ लौट कर अपनी कोठी में आ गए। दूसरे दिन उन्होंने कम्पनी सरकार की आदलत में किले का दावा पेश कर दिया।

अदालत ने मामले की पूरी छान-बीन करने के बाद फैसला दिया—"किला कम्पनी सरकार का है। जनरल मार्टन की कोई निजी जायदाद नहीं है। किले को दाँव पर रखने का जनरल मार्टन को कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। अतः शर्त के ऐवज में किला तथा उसकी कोठी वगैरह का दावा खारिज किया जाता है। फिर भी अदालत तुम्हारी जवाँमर्दी और हिम्मत व बहादुरी की तारीफ करती है और उसके बदले में इस कदर लिहाज करती है कि किले का वह दरवाजा जिसके सामने की खाई को तुमने लाँघा है एक तरह से तुम्हारी मिलकियत समझ कर हमेशा के लिए बन्द कर दिया जाए। बिना तुम्हारी इजाजत कभी न खोला जाए।" और वह किले का फाटक हमेशा के लिए बन्द करके ताला लटका दिया गया। ताली सआदतअली खाँ के हवाले कर दी गई।

इस प्रकार सआदतअली खाँ का कलकत्ता नगर में एक आतंक-सा छा गया। कुछ दिन बाद इत्तफाक से एक दूसरी घटना घटी। जिसके कारण सआदतअली खाँ को कलकत्ता का कयाम छोड़ना पड़ गया।

एक दिन का सबेरा था। सआदतअली खाँ घोड़े पर सवार होकर हस्बमामूल मुलाकात के लिए गवर्नर जनरल की कोठी पर पहुँचे। उस दिन कोठी के फाटक पर एक नया अपरिचित नौजवान गोरा पहरे पर खड़ा हुआ था। उसने उस वक्त से पहले न कभी सआदतअली खाँ को देखा था और न उनके विषय में उसे कुछ मालूम था। अतः उसने सआदतअली खाँ को कोठी के अन्दर जाने से रोका। सआदतअली खाँ भला कब रुकने वाले थे। उन्होंने उसके रोकने-मना करने की कोई परवाह न करके आगे कदम

बढ़ाया। फौजी गोरा सिपाही भी ताव खा गया। अकड़ कर सामने आ गया और कुछ कड़े शब्द मुँह से निकाल कर एक धक्का देकर उनको पीछे धकेल दिया।

सआदतअली खाँ को कहाँ बर्दाश्त थी! एकदम गरम हो गए। आँखों में खून उतर आया। कमर में विलायती तलवार लटक रही थी। शीघ्र ही म्यान से बाहर निकाल कर गोरे पर कड़ा हाथ मारा। गोरा घायल होकर एक चीख के साथ जमीन पर गिर गया। जख्म से खून की धारा बह रही थी। उसकी चीख सुन कर कई अंग्रेज गोरे वहाँ आ गए। शोर मच गया। सआदतअली खाँ रक्त-रंजित तलवार हाथ में लिये अब भी अपने स्थान पर निर्भीक खड़े थे। उनके चेहरे पर किसी प्रकार के भय की एक भी रेखा नजर नहीं आ रही थी।

घटना की खबर लार्ड सर जान शोर तक पहुँची। वह अपनी कोठी से चल कर घटनास्थल पर आए। सबसे पहले उन्होंने उस घायल बेहोश गोरा सिपाही को मरहम-पट्टी के लिए अस्पताल भिजवाया। उसके बाद सआदतअली खाँ को अपने साथ कोठी के अन्दर ले गए। अपने विशेष कमरे में इज्जत के साथ उन्हें सोफे पर बैठाया और खुद बैठ कर सआदतअली खाँ के मुँह से आदि से अन्त तक घटना को सुना-समझा।

सआदतअली खाँ के दिमाग में अब भी गुस्सा भरा हुआ था। सारा किस्सा सुना कर उन्होंने गवर्नर से कहा—"आप जानते हैं मैं शुजाउद्दौला की औलाद हूँ। उनका खून और उनकी बहादुरी मेरे खून की हर बूंद में मौजूद है। एक मामूली पहरेवाले गोरे-सिपाही की बदजुबानी मैं किस तरह बर्दाश्त कर सकता था? फिर आपने मुझे इजाजत दे रखी है। आज तक मेरे आने-जाने में कभी कोई रोक-टोक पैदा नहीं हुई।" फिर सांस लेकर कहा—"मुझे अपनी इज्जत का ख्याल हर वक्त रहता है और उसकी हिफाजत के लिए ही तलवार मेरी कमर में लटकती रहती है।"

लार्ड सर जान शोर दो क्षण खामोश रहे। उसके बाद बड़े ठण्डे लहजे से बोले—"हम जानते हैं कि आप नवाब शुजाउद्दौला बहादुर के एक बहादुर और दिलेर साहबजादे हैं। इसीलिए हम आपकी इज्जत करते हैं और हर तरह से आपकी इमदाद करने को कमरबस्ता रहे हैं। लेकिन···" सर जान शोर कुछ सोचने-से लगे।

सआदतअली खाँ ने एक क्षण के इन्तजार के बाद कहा—"आगे फरमाइए? बात तो अधुरी ही रह गई।"

सर जान शोर बोले—"हम आपको इस बात से आगाह करना चाहते थे कि आपको यह समझना चाहिए था कि कलकत्ता अवध का इलाका नहीं है। यह कम्पनी सरकार की अमलदारी है। यहाँ इस तरह दिन दहाड़े और हमारे सर पर खून-खराबी पैदा करना, गुस्से में तलवार चलाना हरगिज मुनासिब नहीं था। चूंकि हम आपको अपना दोस्त मानते-समझते हैं इसलिए आज की इस वारदात को दरगुजर करते हैं। लेकिन अब आपको हमारा एक मशविरा मानना मंजूर करना लाजिमी होगा। हम आपको दोस्ताना

तरीके से ही वह इसलाह दे रहे हैं और चाहते हैं कि हमारा आपका दोस्ताना बदस्तूर कायम बना रहे।"

सआदतअली खाँ बड़े गौर से उनके चेहरे की तरफ देख कर बोले—"फरमाइए? हम आपकी इसलाह-वशविरे को हर तरह से मानने को तैय्यार हैं।"

"हमारा मशविरा ये है।" सर जान शोर ने जरा गम्भीर होकर कहा—"अब आप यहाँ कलकत्ता में कयाम न फरमाएँ। बनारस जाकर वहाँ आराम के साथ कयाम फरमाएँ। जिस तरह यहाँ रहने पर हम आपका ख्याल रखते आए हैं, वहाँ रहने पर भी वैसा ही ख्याल रखेंगे।"

"हमें आपकी इस इसलाह से जरा भी इनकार नहीं है। जब हमने आपके मशविरे से अपना मौरुसी इलाका सूबा कटेहर-बरैली छोड़ दिया था और उसकी बदौलत आज इस आवारागर्दी में भटक रहे हैं, तो कलकत्ता छोड़ देने में हमें क्या पशोपेश हो सकता है?" फिर सांस लेकर कहा—"मगर इसके साथ साहबेवालाशान से हमारी एक अर्ज भी है।"

"शौक से कहिए।" लार्ड सर जान शोर ने उत्साह के साथ कहा।

"मौके-मसले पर हम आपसे इसी तरह मिलते, मुलाकाते करते रहें जैसा कि अभी तक करते चले आए हैं। उसमें कोई फर्क न पैदा हो।"

"हरिगज फर्क नहीं पैदा हो सकता?" सर जान शोर ने दृढ़ता के साथ कहा। "हमारे आपके दोस्ताने में कोई फर्क पैदा नहीं हो सकता। जब चाहें बनारस से कलकत्ता आकर हमसे मिल सकते हैं।" फिर जरा मुस्करा कर कहा—"आपके दोस्ताने और मिलते रहने से हमें कुछ उम्मीदें भी हैं। उनके लिए हम भी इन्तजार कर रहे हैं और आप भी इन्तजार कहते रहें।"

इसके बाद मुलाकात खतम हो गई। सआदतअली खाँ अपनी कयामगाह पर लौट आए।

फिर दो-चार दिन बाद कलकत्ता से सपरिवार कूच करके वे बनारस आ गए। बनारस के मोहल्ले दुर्गाकुण्ड को पसंद करके वहाँ एक आलीशान कोठी तामीर करा कर उसमें रहने लग गए। नवाब आसफुद्दौला की जानिब से जो तीन लाख रुपया सालाना गुजारे के लिए मिला करता था, संतोष करके किफायत के साथ गुजर-बसर करने लगे। लेकिन हर वक्त दरबार आसफी तथा लखनऊ की खबरों की तरफ अपने कान खड़े किए रहते थे।

१२

एक तरह से नवाब आसफुद्दौला को अब कोई चिन्ता न थी। उन्होंने लखनऊ के रजीडेन्ट से अपने बाद अवध की गद्दी पर बैठने वाले का नाम जाहिर कर दिया था और उसने भी बखुशी उसे मान लिया था।

एक दिन नवाब आसफुद्दौला ने मिरजा वजीरअली खाँ की शादी करके खुशियाँ मनाने का निश्चय कर लिया। अपने आसफी दरबार के एक खानदानी पुश्तैनी रईस और अवध-राज्य के इज्जतदार नवाब अशरफअली खाँ की बेटी कुमारी बन्नो बेगम के साथ शादी तय कर दी। निसबत करार पा गई। पहली रसम बड़े उत्साह और शान-शौकत के साथ अदा हो गई। दरबार के लोगों तथा लखनऊ के लोगों में चर्चा होने लगी।

नवाब अशरफअली खाँ की साहबजादी बन्नो बेगम जवानी के द्वार पर खड़ी थीं। हुस्नो-जमाल में उस समय अपने जोड़ की आप ही कही जाती थीं। सितार बहुत लाजवाब बजाती थीं। गला भी बहुत सुरीला पाया था। मिरजा वजीरअली खाँ उनसे परिचित भी थे और उन्हें पसंद भी करते थे।

निसबत करार पा जाने के बाद आसफुद्दौला ने अपने अजीज तथा विश्वासी नवाब कासिमअली खाँ, नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ, नवाब जाफरीअली खाँ तथा जवाहरअली खाँ को बुला कर अपने पास बैठाया। शादी का पूरा प्रबंध इन्हीं लोगों के हाथों में सौंपने के अभिप्राय से प्रसन्न मुद्रा तथा खुले हृदय से कहा—"हमारे नजदीक आप लोग ही हमारे सच्चे राजदार, अजीज और हमारे यकीन-ऐतबार को कायम रखने वाले हैं। इसलिए हम बिला किसी छिपाव के अपने दिल की बात जाहिर करते हैं। हम चाहते हैं कि मिरजा वजीरअली खाँ की यह शादी अपना नजीर आप ही होकर रहे। पिदर बुजुर्गवार नवाब शुजाउद्दौला बहादुर ने हमारी शादी भी फैजाबाद में बड़े धूम-धाम के साथ की थी। जिन्होंने उसे देखा था आज तक उसे भूले नहीं हैं। मगर हम इस शादी को और शान-बान से करना चाहते हैं। यह भी सुना है कि शाहजहानाबाद में वालिद मरहूम की शादी भी यादगार जमाना हुई थी, उसका जिक्र अकसर वालिदा-माजिदा साहिबा किया करती हैं। लेकिन हमारी यह दिली ख्वाहिश है कि यह शादी सभी से बढ़-चढ़ कर हो।" फिर जरा ठहर कर कासिमअली खाँ की नजर से नजर मिला कर कहा—"हम समझते हैं कि तुम फुरसत से अपनी फूफी नवाब बहू-बेगम साहिबा से उनकी शादी की पूरी कैफियत जान समझ लो। इसके अलावा वालिद मरहूम के बचपन के एक साथी नवाब जुलफिकारअली खाँ भी अभी मौजूद हैं, उनसे भी उस शादी की पूरी कैफियत समझ लो, जिससे इस शादी में कोई कोर-कसर बाकी न रह जाए। सौ कदम आगे ही दिखाई दे। खर्च की जरा भी परवाह न की जाए। उसके लिए हमारे खजाने का दरवाजा खुला है। लेकिन शादी की धूम-धाम, हर रसम

की आरायश, शान-शौकत ऐसी रहे कि लखनऊ के लोगों ने कभी अपनी आँखों से न देखी हो और न फिर आगे भी उन्हें कहीं देखने को मिले।"

उसी दिन-घड़ी से शादी की तैय्यारियाँ शुरू हो गईं।

लड़की के बाप नवाब अशरफअली खाँ की हवेली यहियागंज में थी। वह हवेली ऐसी न थी कि इतनी बड़ी धूम-धाम की शादी को बर्दाश्त कर सके। एक साधारण नवाबी परिवार की हवेली थी। इसीलिए नवाब आसफुद्दौला ने शादी के लिए ऐशबाग तथा चारबाग की कोठियाँ नवाब अशरफअली खाँ को दे दीं। अशरफअली खाँ सपरिवार यहियागंज की हवेली से उठ कर ऐशबाग की कोठी में पहुँच गए।

लखनऊ शहर में धूम मच गई। चारों तरफ से मेहमान आकर लखनऊ की नवाबी इमारतों, तथा खीमों-शामियानों में उतरने-ठहरने लगे। खातिर-तवाजा, आदर-सत्कार शुरू हो गया। लोग इधर से उधर दौड़ लगाते अपने-अपने कामों में व्यस्त नजर आने लगे। गली कूचों तक में रेल-पेल मच गई। चर्चाएँ चलने लगीं :—

"नवाब आसफुद्दौला के लाडले बेटे की शादी है। बाप का हृदय उमंगों से भरा है।"

"तभी न खजाना खोल दिया है। एक के बदले सौ खर्च किए जा रहे हैं।"

"बेटे के ब्याह में न खर्च करेंगे तो कब खर्च करेंगे ?"

"मगर कुछ लोग तो कहते हैं कि नवाब आसफुद्दौला के कोई सही जायज औलाद नहीं हैं।"

"ऐसा कहने वाले मूर्ख और नासमझ हैं। उन्हें इतना ज्ञान नहीं है कि किसी दूसरे की औलाद के लिए कोई खजाना खोल देगा ? पानी की तरह रुपया बहाएगा ? बजीरअली खाँ आसफुद्दौला का सगा लड़का है। किसके मुँह में जबान है जो उसके खिलाफ एक शब्द कह सके ?"

इसी प्रकार की चर्चाएँ चलते-चलते शादी की रस्में शुरू हो गईं। मांझे का दिन आ गया। दौलतखाना आसफी से लेकर ऐशबाग तक सड़क के दोनों किनारों पर बाँस के ठाठर गड़े नजर आने लगे। उनके पीछे इधर-उधर, जहाँ जैसा मैदान था शामियाने खड़े हो गये और उनके नीचे फर्श-कालीन भी लग गए। दौलतखाना आसफी से ऐशबाग तक सत्तरह त्रिपोलिए भी खड़े हो गए। लाल, पीले, नीले, हरे, छोटे बड़े झन्डे शामयानों त्रिपोलियों की शोभा को बढ़ा रहे थे।

साँझ होते ही दीवाली जगमगा उठी। सड़क के किनारे जो बाँस के ठाठर खड़े हुए थे उन पर सजी हुई दीपकों की कतारें जल उठीं। ठाठरों के नीचे सड़क के दोनों किनारों पर तेल की नहरें बह रही थीं। बीस-बीस कदम पर ठाठरों के निकट हाथों में तेल का बर्तन लिए लोग सचेत खड़े थे। क्या मजाल थी कि किसी दीपक में तेल की कमी हो जाए और उसकी बाती बुझने लग जाए। इसके साथ तेल की लूट भी मची हुई थी। लोग घड़ों में भर-भर कर तेल घर ले जा रहे थे।

उधर जगह-जगह छोटे-बड़े मैदानों में जो शामियाने खड़े हुए थे, उनके नीचे नाज-नखरों की सजीव आकृतियाँ, लखनऊ की नव-यौवन-रंडियाँ, कसबियाँ-पतुरियाँ, हाव-भाव दिखातीं तथा अपने सुडौल अंगों को फड़काती, आँखों का चमत्कार दिखातीं नजर आने लगीं। एक-एक शामियाने के नीचे बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस रंडियों की भीड़ थी। उनका बनाव सिंगार बरबस ही नजरों को अपनी ओर खींच रहा था। सहसा किसी ओर से एक पुकार सुनाई पड़ी—मांझा ऐश बाग से चल पड़ा है। इस पुकार को सुनते ही शामियानों के नीचे तबलों पर थापें पड़नी शुरू हो गईं। सारंगियों ने स्वर भरना शुरू किया और रूप-कला की मदमातियों ने अपने पैर पटकना आरम्भ कर दिए। घुंघरू बज उठे—छन्, छन्, छन्। कोई उन मदमातियों की कला को परखे या न परखे। उनके कमर की लचक, हाथों की मुद्राएँ, आँखों के चमत्कार तथा होठों की मुस्कानों को देखे या न देखे, उन्हें इससे न कोई मतलब था न कोई परवाह। वे तो शाही आदेश से बँधी थीं। इसलिए अपनी धुन में नाचे-गाए जा रही थीं।

ऐशबाग से दरेदौलत की तरफ मांझा भी बड़ी शान के साथ चला था। लखनऊ के लोगों ने बड़ी-बड़ी सजावटदार और शान-शौकत के मांझे दुलहिन के घर से दुल्हा के घर जाते देखे थे। लेकिन ऐसा अनोखा, दिल में कौतूहल तथा आँखों में चकाचौंध पैदा करने वाला मांझा उन्होंने कभी नहीं देखा था। समारोह देखने के लिए सारा लखनऊ उमड़ पड़ा था। जिधर देखो दर्शकों की भीड़ ही भीड़ नजर आती थी। लोग अपनी-अपनी टोलियाँ बनाए जिधर से मांझा आ रहा था, उधर ही उत्सुकता भरी दृष्टि से देख रहे थे। और मांझा अपनी आन-बान के साथ धीरे-धीरे ठुमक चाल चलता हुआ चला आ रहा था।

सब से आगे रँगा-चँगा, जेवरों, झूलों तथा हौदा अमारी से लदा-फँदा एक भारी भरकम हाथी था। कहा जाता था उस हाथी की ऊँचाई और शान-शौकत का दूसरा हाथी हिन्दुस्तान की किसी भी रियासत में नहीं है। नवाब शुजाउद्दौला बहादुर ने उस पर मोहित होकर एक लाख पच्चीस हजार रुपया नकद देकर खरीदा था। हाथी पर एक बाँका तिर्छा जवान जर्क-बर्क चमचमाती पोशाक पहने, दोनों हाथों से अवध राज्य का भारी भरकम निशान थामे हुए अकड़ा बैठा था। हाथी के पीछे लगभग सौ डेढ़ सौ कोतल घोड़े थे। सभी चमचमाते हुए चारजामों तथा जेवरों से लदे छम, छम, छम, करते चले आ रहे थे। उन कोतल घोड़ों के साईसों की भी छटा निराली ही थी। घोड़ों के पीछे ऊँटों पर नौबतखाना था। नौबतखाना के पीछे ताशे, ढोल-ढोलक, तुरही आदि जाने कितने बाजेवालों की खासी भीड़ थी। सभी बाजे इतनी तेजी से बज रहे थे कि सुनने वालों के कान बहरे हुए जा रहे थे। बाजे वालों के पीछे सैकड़ों बनी-ठनी, कंघी चोटी से लैस, घांघरों-दुपट्टों में लिपटी हुईं नवयौवनाओं के घेरे में आरायशी चौकियों पर मांझा सजा हुआ था। चौकी को चमकदार पोशाकें पहने आठ कहार कंधों पर सँभाले हुए थे।

मांझा की चौकी के बाद लखनऊ के हिंजड़ों की एक भारी भीड़ चली आ रही थी। उस भीड़ को देखते ही दर्शकों के होठों पर मुस्कान दौड़ रही थी। हिजड़ों ने विचित्र प्रकार का स्वांग बना रखा था। आठ-दस हिजड़ों ने आधा जनाना आधा मर्दना भेष धारण कर रखा था। यानी कमर तक सफेद चूड़ीदार पायजामा, मखमली कामदार जूते थे। कमर में लाल, हरे रंग के चमकदार दुशालों के फेंटे बँधे हुए थे। फेंटों में बड़े-बड़े खंजर तथा छुरियाँ खुँसी हुई थीं। इस मर्दानी बनावट के बाद जनाना भेष था। चुस्त गोटे-किनारीदार अँगिया कसी हुई थी। गले में कंठा, कटवा, बिचौली बँधी थी और आठ-आठ, दस-दस लड़ी वाली मोतियों की लम्बी-लम्बी मालाएँ छाती पर झूल रही थीं। कानों में बड़े-बड़े झुमके-बाले बालियाँ थीं। नाकों में बड़ी-बड़ी नथें पड़ी थीं जिनके डोरे कानों में बँधे थे। नाथों में बड़े-बड़े लटकन लटक रहे थे। आँखें काजल से अच्छी कज-रारी हो रही थीं, सिर के बाल तेल-फुलेल तथा कंघी चोटी से लैस थे। सिरों के ऊपर दुपट्टा इस अन्दाज से ओढ़ा गया था जो केवल कमर के फेंटे के ऊपर तक ही आ सका था। नीचे के मर्दाने भेष को उससे कोई धक्का नहीं लगता था। इन सभी मर्दाने-जनाने भेषधारी हिजड़ों ने एक खूबसूरत चौकी को सिरों पर सँभाल रखा था। चौकी पर कालीन बिछा था। मसनद तकिए लगे थे। उन पर दो नौजवान हिजड़े दुल्हा-दुलहिन का स्वाँग भरे एक दूसरे से लिपटे बैठे थे। बाकी समस्त हिजड़ों की भीड़, ढोलकें, तालियाँ बजाती नाचती-गाती और दुल्हा-दुलहिन पर फूलों की वर्षा करती हुई चल रही थीं।

हिजड़ों के इस स्वांग के पीछे लखनऊ के भांड़ों का हुजूम था। भला भाँड़ हिजड़ों से कैसे पीछे रह सकते थे। एक भाँड़ दूसरे को घोड़ा बनाए। वाकायदा उस पर चार-जामा कसे, लगाम लगाए, हाथ में चाबुक लिए उसकी पीठ पर सवार था। इस प्रकार उनके तीस चालीस घोड़े दौड़ते चले आ रहे थे।

मांझा का समारोह बढ़ता चला आ रहा था। लखनऊ की जनता उसे देख कर आनन्द विभोर हो रही थी। कहकहे लगा रही थी। एक स्थान पर लखनऊ की पच्चीस-तीस कुजड़िनें खड़ी मांझा के जलूस का इतन्जार कर रहीं थी। मांझा का आधा जलूस उनकी आँखों के सामने से गुजर कर आगे बढ़ गया। लेकिन वे सब जरा न हिलीं-डुलीं। शान्त भाव से चुपचाप खड़ी देखती रहीं, किन्तु जैसे ही हिजड़ों का स्वांग उनके निकट आया, वे सब खामोश खड़ी न रह सकीं। चेहरों पर मुस्कानें दौड़ पड़ीं। हाथों को आगे बढ़ा कर तथा तालियाँ पीट कर उछलने-कूदने लगीं। साथ ही जोरदार आवाज से गाने लगीं—'दुल्हा को मुबारक हो दुलहिन।' हिजड़े तो फिर हिजड़े ही थे। कुंजड़िनों की इस प्रति-क्रिया को देखते ही उनकी भारी भीड़ में से बहुत से कुंजड़िनों की तरफ दौड़ पड़े। एक-एक कुंजड़िन को एक-एक हिजड़ा दाब-घसीट कर अपनी भीड़ में ले गया और उन्हें भी अपने साथ नचाने लगा। कुंजड़िनों ने कोई विरोध नहीं किया। बड़ी प्रसन्नता तथा उत्साह के साथ उनके साथ नाचने-गाने लगीं। लेकिन दूसरे दर्शकों ने इस पर खूब कहकहे लगाए।

ठहाके ऊँचे किए। धीरे-धीरे मांझा दरे-दौलत पहुँच गया। रसमें अदा होने लगीं।

अब साचक का दिन आ गया। बड़े सबेरे से ही दौलतखाना आसफी में दुलहिन के घर साचक भेजी जाने की तैय्यारियाँ आरम्भ हो गई थीं और दिन चढ़ते-चढ़ते तो चिल्ल-पों मच गई। चाँदी-सोने के गंगा-यमुनी चौघड़े हजारों की संख्या में अन्दर से बाहर आने लग गए। बाहर आरायशी तख्तों की सजावट हो रही थी। अतः सजावट करने वाले चौघड़ों को अन्दर से बाहर आता देख कर तख्तों की सजावट में जी जान से तत्परता दिखाने में जुट गए।

इसी सिलसिले में एक अच्छा मजाक हो गया। नृत्य-संगीत, नकली-तमाशों के लिए रंडी-पतुरियों तथा भाँड़-बाहुरुपियों को बुला कर जमा करने का प्रबंध नवाब आफरींअली खाँ के हाथों में दिया गया था। उन्होंने अपनी समझ के अनुसार लखनऊ शहर में जितनी भी रंडी-पतुरियाँ थीं, एक को भी बाकी नहीं छोड़ा था। लेकिन आफरींअली खाँ का ख्याल देहाती पतुरियों की ओर नहीं गया था। किसी गाँव की कोई रंडी-पतुरिया नहीं बुलाई गई थी।

लखनऊ के पड़ोस में एक समूचा गाँव रंडी-पतुरियों का था। जितने भी घर थे उन सब में रंडी-पतुरियाँ ही रहती थीं। वे सभी वंश-जाति की पतुरियाँ अवश्य थीं, लेकिन उनका धंधा केवल नाचना-गाना ही न था। वे सब खेतों में काम करती थीं। नाचना-गाना वे सब देहात गाँव के अनुसार ही जानती थीं। यद्यपि सूरत-शकल, नाज-नखरे तथा हाव-भाव भी उनके देहाती ही थे फिर भी अपने वंश का उन्हें गर्व था।

जिस दिन से लखनऊ में नवाब आसफुद्दौला बहादुर के लाडले मिरजा क्जीरअली खाँ की शादी की धूम-धाम आरम्भ हुई थी, उसकी खबरें लखनऊ से बाहर सारे अवध इलाके में फैल गई थीं। हर इलाके तथा गाँवों में इस समय उसी की चर्चा गरम रहा करती थी। गाँवों की प्रजा भी इस मौके पर बहुत कुछ आशा लगाए बैठी थी। अपनी आँखों से शादी की धूम-धाम तथा नाच-तमाशे देखने के उत्सुक थी।

उस पड़ोसी गाँव की रंडी-पतुरियों ने भी नवाबजादे की शादी की खबर सुनी थी। और उनके हृदय भी उमंगों से भर गए थे। सोच रही थी कि नवाब आसफुद्दौला के बेटे का ब्याह है, अतः इस ब्याह की कुछ खुशियाँ, कुछ इनामें-इकरामें हमलोगों के पल्ले भी पड़ेंगी। सोने-चाँदी के टुकड़ों से हमारे भी आँचल भारी हो जाएँगे। हमलोग देहात में रहती हैं तो क्या हुआ हमारी वंश-परम्परा तो वही है जो लखनऊ में रहने वाली रंडी-पतुरियों की है। पेशा धंधा भी किसी न किसी रूप में वही चला आ रहा है। जब लखनऊ में रहने वालीं हमारी सभी बहनें बुलाई जाएँगी, तो हमलोग भी अवश्य बुलाई जाएँगी। अतः जैसे-जैसे शादी के दिन उँगलियों पर गिने जा रहे थे उन सबकी आशाएँ भी बलवती होती जा रही थीं। विशेष रूप से उस गाँव की नवयौवनाओं के पेट में तो चूहे से कूद रहे थे।

मांझा की रसम अदा हो गई। दुलहिन के घर से मांझा दुल्हा के घर पहुँच गया। उस गाँव की पतुरियों ने यह खबर सुनी और उसके साथ यह भी सुना कि लखनऊ में रहने वाली एक भी पतुरिया नहीं छोड़ी गई। सभी के घरो में हुन बरसेगा। सभी सोना बटोर कर रखेंगी। लेकिन हमलोगों को किसी ने नहीं पूछा। ऐसा क्यों? क्या हमारा वंश पतुरियों का नहीं है? हमारा धंधा नाचने-गाने का नहीं है? हम देहात गाँव में रहती हैं तो क्या हुआ। लखनऊ की अनेक खानदानी पतुरियाँ हमारी मौसी चाची बुआ बहनें हैं। इस प्रकार की धारणा से नव-यौवनाओं के पेट में खलबली पड़ गई। किस प्रकार लखनऊ पहुँचा जाए? और वहाँ की पतुरियों के कंधे से कंधा मिला कर बैठा जाए। सोते-जागते, उठते-बैठते उन्हें यही धुन, यही चिन्ता घेरे रहने लगी।

साचक जाने के दिन सरकारी सिपाही मजदूरों को जमा करने के लिए पड़ोसी गाँवों में घुस-फैल रहे थे। उधर उस गाँव की नव-यौवनाओं ने भी लखनऊ पहुँचने की जिद पकड़ ली। निश्चय किया कि लखनऊ तथा दरे-दौलत तक पहुँचा जाए। उसके बाद आगे की बात देखी जाएगी। अतः तीस-चालीस यौवन की मदमातियों से मिल कर पुरुषों का भेष बनाया; धोती, पाजामे, कुरते पहने और सिर पर टेढ़ी-मेढ़ी पगड़ियाँ लपेट लीं। उस दिन बड़े तड़के मुँह-अँधेरे ही वे सब अपने घरों से निकल कर गाँव से बाहर लखनऊ जाने वाली सड़क पर आ खड़ी हुईं। उधर उसी समय लखनऊ से सरकारी सिपाही मजदूरों की तलाश में निकल पड़े थे और कुछ इसी गाँव की तरफ चले आ रहे थे। इस भीड़ को देख कर एक सिपाही ने कड़कदार आवाज से पूछा—"कौन हो तुम लोग और कहाँ जा रहे हो?"

पुरुष भेषधारी एक युवती ने निधड़क स्वर से कहा—"हम लोग इसी गाँव के रहने वाले, खेती-बारी करने वाले किसान हैं। और अपने खेतों में काम करने जा रहे हैं?"

"हमारे साथ लखनऊ चलना पड़ेगा?" सिपाही ने कहा—"आज खेतों का काम बन्द रहेगा।"

"ऐसा क्यों?" एक दूसरी युवती ने सवाल पेश किया—"हमलोग अपने खेतों का काम छोड़ कर लखनऊ क्यों चलें?"

"तुम लोगों को आज तक पता नहीं है? आखिर देहाती गँवार ही तो ठहरे।" सिपाही ने धीरे से कहा, फिर उन सब की तरफ नजर उठा कर कहा—"नवाब आसफुद्दौला बहादुर के शाहजादे की शादी हो रही है। आज दुल्हा के घर दौलतखाना आसफी से ऐशबाग दुलहिन के घर साचक जाना है। चौघड़े तथा आरायशी तख्ते वगैरह ढोने—पहुँचाने के लिए मजदूरों की जरूरत है। इसलिए आज तुम लोगों को अपना काम बन्द रख कर हमारे साथ चलना पड़ेगा।"

एक ने थोड़ा मुस्करा कर पूछा—"साचक के चौघड़े और आरायशी के तख्ते

ढोने के ऐवज में हमलोगों को मजदूरी भी मिलेगी या बेगारी में काम लिया जाएगा ?"

"अरे ? कैसे मूर्ख हो तुम लोग ?" सिपाही ने कहा—"नवाब आसफुद्दौला वैसे ही दान-खैरात में धन लुटाया करते हैं। फिर अपने शाहजादे की शादी में किसी से बेगार में काम कराएँगे ? एक के बदले दस पाओगे।"

बिना किसी विरोध संकोच के गाँव की पतुरियों का वह पुरुष भेषधारी समूह सिपाहियों के साथ लखनऊ की ओर चल पड़ा। और पहर दिन चढ़ते-चढ़ते दरे दौलत के सामने आ खड़ा हुआ।

दरे दौलत पर, शामियाने के नीचे लखनऊ की ढेर सारी पतुरियाँ मुजरा के लिए जमा हुई थीं। उस पुरुष भेषधारी नव-यौवनाओं के समूह में मुस्कानों भरे होठों से आपस में इशारेबाजी हो रही थी। शामियाने के नीचे बैठी उन पतुरियों को वे भी पहचान गई थीं। उनमें से कोई किसी की खाला कोई फूफी और कोई बहिन होती थीं। अन्त में दोनों ओर से निगाहें उठीं और आपस में लड़ गईं। शामियाने के नीचे खिलखिलाहट शुरू हुई और फिर जोर से कहकहे शुरू हो गए। तालियाँ पिटने लग गईं। लखनऊ की रंडियों ने उन सबको पहचान लिया था। और एक-एक का नाम ले-लेकर अपने पास बुलाने लग गईं। फिर क्या था, नव-यौवनाओं का वह समूह शामियाने की तरफ दौड़ पड़ा। सिरों की पगड़ियाँ उतार कर फेंक दीं। काली नागिनों की तरह चोटियाँ पीठों पर लहराने लगीं। सूरतें बदल गईं। नवयौवनाएँ उनके गले से लिपट गईं। इसके साथ हँसी-ठहाकों ने वह रूप धारण किया कि शामियानों के नीचे लोट-पोट मच गई।

उस समय दरे दौलत पर हजारहा लोग उपस्थित थे। इस तमाशे को देख-समझ कर चकित हो रहे थे। विशेष रूप से सरकारी सिपाही जो उन्हें वाकई देहाती किसान समझ कर साचक ढोने के लिए अपने साथ लाए थे, वे सभी कौतूहल से भरे हक्के-बक्के से खड़े देख रहे थे। कुछ समझ नहीं पा रहे थे कि ये किस तरह क्या हो गया है।

नवाब आफरींअली खाँ को इस मजाक की खबर हुई। कमरे से बाहर आ गए और इस मजाक को आदि से अन्त तक अच्छी तरह समझा। उनके भी होंठों पर मुस्कान नाच गई। उन्होंने उन सभी देहाती नौजवान पतुरियों को भी लखनऊ की पतुरियों के गिरोह में शामिल कर दिया। चूंकि उनके पास पोशाकें नहीं थीं इसलिए नयी-नयी पोशाकें भी उन्हें मिल गईं।

बाद में यह मजाक नवाब आसफुद्दौला के कानों तक भी पहुँच गया। वह भी सुन कर हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए। और आफरींअली खाँ को हुक्म दिया कि पड़ोस के देहातों की रंडी पतुरियाँ भी बुला कर जलसे की रौनक बढ़ाने में शरीक कर ली जाएँ। वे भी इस शादी की इनामों-इकरामों से महरूम न रहें। आखिर वे लोग भी तो हमारी प्रजा हैं। आफरींअली खाँ ने उसी समय आदेश का पालन किया।

साचक दुलहिन के घर पहुँच गई। उसके बाद वहाँ से मेंहदी दुलहा के घर

आई। उसका भी अनोखा ही रंग रहा। रंडी-पतुरियाँ और उनके साजिन्दे जो नाचती-गाती मेंहदी के समारोह के साथ चल रही थी, उनकी बुरी गत हो गई। धक्कम-धक्का में उनका शीराजा ही बिखर गया।

अन्त में खुशियों-उमंगों को उछालती हुई बारात की रात भी आ गई। माने शबेबरात आ गई। संध्या होते ही आतिशबाजी का प्रदर्शन दरेदौलत पर हुआ। धूम मच गई। महतावों की रोशनी से दिन खिल गया। सैकड़ों चाँद-सूरज जमीन पर उतर आए। देखने वालों में से बहुतों को चक्कर आने लगे। एक-एक पर झूम-झूम कर, गिरने लगे। बाणों तथा बम के गोलों की तड़तड़ाहट, गड़गड़ाहट, गरज, धमक दिलों को हिलाए दे रही थी। इसके अलावा आतिशबाजों ने अपनी कला दिखाने के लिए कुछ ऐसी विचित्र आतिशबाजी की चीजें भी तैय्यार की थीं, जिनमें महताब छुलाते ही एक गोरख-धन्धा नजर आने लग जाता था। एक बड़े से गोले के अन्दर से हजारहा सफेद काले, चितकबरे कबूतर निकल कर आकाश की ओर उड़ान लेते दिखाई देते थे। किसी गोले से हिरनों की भीड़ निकल कर चौकड़ी भरती नजर आती और किसी से भारी भरकम शेर भी निकल कर खड़ा हो जाता था। लोग दाँतों तले उँगलियाँ दबा कर रह जाते थे।

आसफी सरकार के छोटे-बड़े जितने भी मुलाजिम थे उन सब को पहले ही शादी की तड़कीली-भड़कीली पोशाकें अता हो चुकी थीं। फौजी सिपाहियों, रिसालों के सवारों आदि को भी नयी-नयी अर्क-वर्क वर्दियाँ अता फरमाई जा चुकी थीं। बारात के दिन सबेरे से ही अमीर-उमरा तथा नौकर-चाकर उन चमचमाती रंगीन पोशाकों को पहने हुए इधर से उधर घूमते-दौड़ते फिर रहे थे।

इधर आतिशबाजी का प्रदर्शन समाप्त हुआ और उधर सारा लखनऊ जगमगा उठा। दौलतखाना आसफी से लेकर ऐशबाग तक रोशनी का वह ठाट था, ऐसा मालूम होता था; मानो हजारों सूर्य आकाश से उतर कर जमीन को चमका रहे हैं। किसी सड़क पर यदि कहीं कोई सुई पड़ी थी तो साफ चमकती नजर आ रही थी।

बारात के निकलने का समय आ गया। ताश-ढोल-ढोलकें झाँझ-शहनाई तो बहुत पहले से ही बज रहे थे। कानों पड़ी आवाज नहीं सुनाई दे रही थी। लेकिन अब उसमें और भी तेजी पैदा हो गई।

दौलतखाना आसफी से ऐशबाग को दौड़ने वाली सड़क पर छिड़काव हो चुका था। केवड़ा तथा गुलाबजल की महक से दिमाग तर हो रहे थे। इसके अलावा बारातियों तथा नौकरों-चाकरों ने जो भाँति-भाँति के कीमती इत्र अपनी पोशाकों में मल रखे थे उनकी खुशबू से सारा वातावरण सुगन्धित हो रहा था।

बारात का जलूस आगे बढ़ा। पहले भारी-भरकम अनेक हाथियों पर नौबतखाना चला। उसके बाद दूसरे हाथियों पर निशान, माही मरातब आदि निकला। उनके पीछे डंका, नक्कारा बजाने वाले चार-चार की कतार में डंके नक्कारों पर चोवे मारते हुए

आगे बढ़े। इसके बाद रेजीडेन्सी का फौजी बैण्ड चला। उन गोरों की अपनी निराली वर्दियों में कदम-से-कदम मिलाकर चलना बड़े आनन्द का था। बैण्ड-बाजे के पीछे अंग्रेजी, हिन्दुस्तानी रिसालों के घुड़सवार तथा सिपाहियों के पैदल दल पर दल आगे बढ़े।

फौजी सिपाहियों से लगभग पचास कदम पीछे जहाज की शकल-शूरत की बहुत बड़ी खुली बग्घी निकली, जिसे सोलह घोड़ों की जोड़ियाँ खींच रही थीं। उस बग्घी पर लखनऊ की चुनी हुई एक ही आयु-कद की, परम सुन्दरी, जवानी से अठखेलियाँ करने वाली रंडियाँ सवार थीं। उनका बनाव-सिंगार, कंघी-चोटी, तेल-फुलेल तथा सुर्मा-मिस्सी की छटा देखते ही बनती थी। चेहरों पर दर्शकों की नजरें फिसल-फिसल जाती थीं। पोशाकों की चमक-दमक तो आँखों में चकाचौंध भरे दे रही थी। वे सभी बड़े ठस्से के साथ बग्घी पर बैठी हुई थीं। जिस ओर को उनकी निगाहें उठ जाती थीं, बिजलियाँ सी टूट पड़ती थीं। लोग दिल थाम के रह जाते थे।

इन सारी जमालों के बाद भाँड़ों का दल था। उन्हें किसी प्रकार की सवारियों की जरूरत न थी। वे स्वयं अपने घोड़े दौड़ाते तथा हिनहिनाते चल रहे थे। लखनऊ के हिजड़े भला कैसे घर पर बैठे रह सकते थे। जबरदस्ती भाँड़ों के पीछे लग गए थे। और चटकते-मटकते तथा हाथों की चूड़ियाँ खनखना कर अपने को जनाना साबित कर रहे थे।

हिजड़ों के पीछे स्वाँगधारी बहुरुपियों का समूह था। उनके बाद आसफी सरकार-दरबार के नकीब, चोबदार, असाबरदार, चँवरबरदार, पंखाबरदार तथा पेचवान, उगाल-दान, खासदान वालों की भारी भीड़ थी।

चोबदारों के ठीक पीछे एक बहुत ही खूबसूरत रँगा-चँगा तथा जरदोजी की मखमली झूल-मस्तकी और कीमती सोने-चाँदी के जेवरों से लदा हुआ हाथी आया। उस पर बहुत ही सुन्दर गंगा-यमुनी सोने-चाँदी का हौदा कसा हुआ था। उस लम्बे गज भर के दोनों सफेद दाँतों पर दो कँवल जला कर बाँधे गए थे। अभी तक उस पर कोई सवार नहीं हुआ था, इसलिए वह अपनी जगह पर अचल खड़ा था। कुछ क्षणों बाद आला-हजरत नवाब आसफुद्दौला बहादुर नौशह मिरजा वजीरअली खाँ को गोद में उठाए महल के अन्दर से आकर हाथी के पास आए। मिरजा वजीरअली खाँ के चेहरे पर मोतियों का सेहरा झूल रहा था। आसफुद्दौला के अन्य सभी बेटे भी उनके साथ थे। महावत ने हाथी बैठाया। जीना लग गया और आलाहजरत नौशा तथा उसके अन्य सभी भाई हाथी पर सवार हो गए। मौका देख कर दरबारी शायर मिरजा सौदा ने शेर पढ़ा—

क्या खूब है ये शुभ लगन ऐशो तरब दिन रात है,
शमशो-कमर इक साथ रोशन हैं, अनोखी बातें है।

नवाब आसफुद्दौला के पीछे एक दूसरा हाथी चला, उस पर लखनऊ का अंग्रेज रजीडेन्ट तथा उसके अन्य साथी सवार थे। रजीडेन्ट के हाथी के पीछे दो-दो का जोड़ा

बना कर हाथियों का दस-पन्द्रह जोड़ा और चला। इन पर अराकाने दौलत नायबुलरियासत, अजीज रिश्तेदार तथा बाहर से आ कर शादी में शरीक होने वाले विशेष मेहमान, नवाब रामपुर आदि सवार थे। इन सभी हाथियों की सजावट दर्शनीय थी। हरी, लाल, मखमली ज़रदोजी के काम वाली झूलें पड़ी थीं। उन पर चाँदी के नक्शदार हौदे कसे हुए थे, जिन पर रेशमी मसनद तकिए लगे थे। हाथियों के जेवरों की खनक तथा घण्टों की आवाजें तहलका-सा मचाए हुए थीं। हाथियों के झुण्ड के पीछे बीस-पचीस हथनियाँ भी थीं जो झूमती-मटकती चल रही थीं। उन सब पर अवध रियासत के जमा हुए मेहमान, इलाकेदार, नवाब, राजे और जमींदार अपना-अपना ठाट बनाए झकड़े-बैठे मुस्करा रहे थे। हाथी-हथिनियों के दल-बादलों के पीछे अनेक खूबसूरत बग्घियाँ, घोड़ा-गाड़ियाँ सेज-गाड़ियाँ, पीनसें, मयाने और पालकियाँ थीं जिन्हें जर्क-बर्क वर्दी पहने कहार कंधों पर उठाए थे। उन पर जनानी सवारियाँ हँसी-ठिठोली में मस्त थीं। सबके पीछे सौ-डेढ़-सौ सवारों का रिसाला था।

बारात का जलूस दौलतखाना आसफी से रवाना होकर धीरे-धीरे ऐशबाग की तरफ बढ़ चला। समारोह का आनन्द लूटने के लिए लखनऊ की जनता संध्या से ही उमड़ी थी। रास्ते के दोनों किनारों पर, मकानों, भवनों, हवेलियों की छतों तथा छज्जों पर पुरुषों पर पुरुष, स्त्रियों पर स्त्रियाँ तथा बच्चों पर बच्चे डटे खड़े थे। उनके दिलों में उत्साह-उमंग था और नजरों में कौतूहल भरा था। सब लोग खुली आँखों से देख रहे थे। आलाहजरत नवाब आसफुद्दौला बहादुर अति प्रसन्न मुद्रा के साथ अपने लाडले वजीर-अली खाँ को गोद में लिए बैठे हैं। और दोनों हाथों से मुट्ठियों में भर-भर कर अशरफियाँ तथा रुपये लुटाते जाते हैं। सोने-चाँदी के टुकड़ों का मेह सा बरस रहा है।

बारात दुलहिन के घर पहुँच गई। वहाँ दौड़-पुकार मच गई।

दुलहा का हाथी बैठाया गया। ख्वाजासराओं की एक विशाल भीड़ भी आ कर वहाँ मौजूद हो गई। सबने मिल कर दुल्हा मियाँ को हाथी पर से उतार कर सुखपाल पर बैठाया। डंके पर चोब पड़ी। नकीबों ने अपनी आवाजें ऊँची कीं। मुबारक-सलामत की आवाजें लोगों की जबानों तथा बाजों की धुनों से एक साथ गूँज उठीं। और दूसरी तरफ डोमनियों ने मुबारकबाद गाना शुरू किया। दुल्हा सुखपाल पर चढ़ा खड़ा था और नव-यौवनाओं ने सुखपाल को चारों ओर से घेर रखा था। अनेक परीजमालें टोटके करने में लगी थीं। कुछ सदके उतारने में व्यस्त थीं। ज्यों-त्यों करके उनके ये टोटके-सदके खतम हुए। सुखपाल कोठी के अन्दर दाखिल हो गया। वहाँ दुल्हा-दुलहिन एक साथ मसनद नशीन हुए। आरसी सामने आई। चाँद-तारे एक ही आईने में नजर आए। रसमें पूरी की जाने लगीं।

इधर लड़की के बाप नवाब अशरफअली खाँ अपने सैकड़ों हाली-मोहाली, यार-दोस्तों तथा खानदानी अजीजों के साथ आगे बढ़ कर आलाहजरत नवाब आसफुद्दौला के

पास आए। अदब-कायदे के साथ उनको हाथी पर से उतारा और कोठी के विशेष कमरे में ले गए। दूसरे सभी बाराती भी आदर के साथ सवारियों पर से उतार कर कोठी के कमरों में ले जाए गए। सब लोग अपने-अपने स्थानों पर मसनद तकियों पर जम गए। इत्र, पान, आदर-सत्कार की धूम मच गई। मजलिस जम गई। नाच-गाना आरम्भ हो गया। सैकड़ों रण्डियों ने एक साथ मिल कर तथा घुँघरुओं की छम-छमाहट के साथ अलापें भरनी शुरू कर दीं।

शादी सम्पन्न हो गई। रुखसती की घड़ी आ गई। दुल्हा मियाँ ने चेहरे पर से सेहरा सरकाया। दुल्हिन को गोद में उठा कर सुखपाल पर बैठा दिया। नवाब आसफुद्दौला बहादुर ने सोने-चाँदी के फूल तथा अशर्फियों की थैलियों पर थैलियाँ लुटा दीं। लूटने वाले गरीब-मोहताज आदि मालामाल हो गए। बारात ऐशबाग से दरे-दौलत को लौट पड़ी। दुल्हा-दुलहिन दौलतखाना आसफी में दाखिल हुए। परम्परा और प्रथा के अनुसार बकरे की कुर्बानी की गई। और अँगूठे में खून लगाया गया। उसके बाद खरिनोश फरमाने के बाद शादी की रसमें समाप्त हो गईं।

१३

नवाब आसफुद्दौला ने अपनी इच्छानुसार मिरजा वजीरअली खाँ की शादी कर-के एक बहुत बड़ी चिन्ता से छुटकारा पा लिया था। जिस शान-शौकत, धूम-धाम तथा अवध खजाने का तीस-पैंतीस लाख रुपया पानी की तरह बहा कर शादी की गई थी उसने आसफी सरकार के कारकुनों से लेकर लखनऊ की जनता तथा अवध रियासत की प्रजा के दिलों में यह साबित कर दिया था कि नवाब आसफुद्दौला के बाद लखनऊ की गद्दी की वारिस, सही सन्तान मिरजा वजीरअली खाँ ही हैं।

लेकिन मुल्क-अवध में अपनी नवाबी-हुकूमत, कम्पनी सरकार द्वारा वक्त-बेवक्त हुकूमत में अड़ंगे डालना, जा-बेजा रौब जमाना और उस रौब-दाब के जरिए आए दिन उनसे रुपयों की माँग करना तथा इन सबसे लिपटी हुई चिन्ताए, मानसिक वेदनाएँ आसफुद्दौला जैसे सीधे शान्तिप्रिय नवाब के जीवन के लिए घुन बन गई थी। यह कुछ ऐसी बीमारियाँ थी जिनका इलाज न किसी हकीम के पास था और न खुद आसफुद्दौला उनसे छुटकारा पाने की कोई तरकीब सोच सकते थे। एक जरा सी बात पर कम्पनी सरकार के प्रधान ने उनके परम विश्वासी, सलाहकार, शुभचिंतक तथा अवध-राज्य के परम हितैषी महाराजा झाऊलाल को उनसे छीन लिया था। मुल्क-अवध से दूर ले जाकर अपनी अमलदारी में रखा था और उसके साथ यह भी जबरदस्त शर्त लगी हुई थी कि

न महाराजा झाऊलाल कभी लखनऊ आकर नवाब से मिल सकते हैं न नवाब आसफुद्दौला बहादुर उनके पास पहुँच सकते हैं। इतना ही नहीं, दोनों ओर से पत्र-व्यवहार में भी जबरदस्त प्रतिबन्ध लगा हुआ था।

महाराजा झाऊलाल का विछोह नवाब आसफुद्दौला के लिए असह्य था। उनके चले जाने से आसफुद्दौला की कमर-सी टूट गई थी। ऐसा महसूस हो रहा था मानो कोई उनके कलेजे से दिल निकाल कर ले गया है, भाई से भाई एक जिन्दगी के लिए अलग हो गया है। जब भी उनकी याद आ जाती थी वह व्याकुल होकर मछली की तरह तड़पने लग जाते थे। उस समय उन्हें अपनी जिन्दगी भार मालूम होने लग जाती थी और वह आँखें फैला कर अपनी मौत को इधर-उधर तलाशने लग जाते थे। राज्य के सभी काम-काज ढीले-ढाले से चल रहे थे। एक झाऊलाल की याद ही उनके दिल की धड़कनों को बढ़ाती-घटाती रहती थी।

कभी-कभी अपनी ऐसी ही अवस्था में नवाब आसफुद्दौला बहादुर मिरजा वजीर-अली खाँ को अपने पास बुला लेते थे। उन्हें अपने पास बैठा कर राज्य-काज की बातें करते थे। हुकूमत के कायदे-कानून समझाते थे और उसके साथ कम्पनी सरकार की सत्ता मुल्क अवध की हुकूमत में उनके आये दिन के अड़ंगे और रुपयों की माँग का जिक्र करके अंग्रेजों से सचेत रहने की सीख भी दिया करते थे। इसी सिलसिले में उन्होंने एक दिन महाराजा झाऊलाल की कहानी, उनका राज्यहित के लिए अपने दिल में विरोध भावना को जागाना, अंग्रेजों की सत्ता को धक्का देना, उसके लिए एक योजना बना डालना और उसका भंडाफोड़ हो जाने के कारण उनको लखनऊ से सदैव के लिए विदा हो जाना आदि सभी बातों को सविस्तार कह डाला था। मिरजा वजीरअली खाँ सभी कुछ समझते थे, अतः उन्होंने झाऊलाल की कहानी को सुन कर मुँह से तो कुछ नहीं कहा, लेकिन उनके दिल में अंग्रेजों के प्रति तीव्र घृणा पैदा हो गई और वह गले में जहर जैसा घूंट लेकर रह गए थे। आसफुद्दौला ने उन्हें बातों-बातों में यह भी बता दिया था कि महाराजा झाऊलाल का विछोह हमारी जिन्दगी के लिए घुन बन गया है। हम विवश हैं, कुछ कर-धर नहीं सकते। इसलिए हमें संसार सूना दिखाई दे रहा है और हम ऐसी जिन्दगी से शीघ्र छुटकारा चाहते हैं।

सबेरे का समय था। नवाब आसफुद्दौला का दरबार जमा हुआ था। दरबार में अमीर उमरा, कारकुन, कवि-शायर, विद्वान-पंडित तथा हकीम आदि सभी लोग अदब कायदे के साथ अपने-अपने स्थानों पर बैठे थे। हकीमों के जमघट में आसफुद्दौला के विशेष हकीम मम्राजिज हकीम शिफाई खाँ भी बैठे थे। हकीम शिफाई खाँ अस्सी-पचासी वर्ष के बयोबृद्ध तथा अपनी हकीमी विद्या में बेजोड़ प्रसिद्ध हकीम थे। उस समय उनके मुकाबले का लखनऊ क्या दिल्ली की बादशाहत में भी कोई हकीम नहीं था। हिकमत में उनका ज्ञान बहुत ऊँचा था और दवा-इलाज का तो यह हाल था कि कठिन से कठिन

रोग को अपनी एक दो खुराक द्रवा में हमेशा के लिए भगा देते थे। लखनऊ में प्रसिद्ध था कि हकीम शिफाई खाँ का इलाज एक बार आई हुई मौत का मुँह मोड़ सकती है। अतः नवाब आसफुद्दौला उनके इलाज पर पूर्ण विश्वास रखते थे।

दरबार लगा था, किन्तु वातावरण बिलकुल खामोश था। नवाब आसफुद्दौला भारी भरकम गद्दे-तकिए का सहारा लिए गहरे विचार सागर में डूबे हुए थे। इस समय उनके अंतस में महाराजा झाऊलाल की याद जोर-जोर से चुटकियाँ भर रही थी। महाराजा झाऊलाल के बिना उन्हें अपना वह आसफी दरबार बिलकुल सूना नजर आ रहा था। यद्यपि दरबार में नायबुल रियासत तथा अन्य दूसरे बड़े-बड़े कारकुन बैठे थे, किन्तु नवाब को वे सभी झाऊलाल का पासंगा भी नहीं मालूम होते थे। कुरेदन बढ़ती चली जा रही थी। नवाब के दिल में तरह-तरह के विचार उठ रहे थे।

हकीम शिफाई खाँ ठीक नवाबी मसनद के सामने बैठे हुए थे। सहसा आसफुद्दौला की नजर उठी और हकीम शिफाई खाँ के चेहरे पर जम गई। एक क्षण नजर जमाए रहने के बाद उन्होंने धीरे से कहा—"हकीम शिफाई खाँ साहब ?"

हकीम शिफाई खाँ पहले से उन्हें अपने चेहरे पर नजर गड़ाए देख कर हैरत में थे। हजरत सलामत की जबान से अपना नाम सुन कर चौंक से पड़े। संभव कर बैठ गए और कहा—"आला हजरत ? इर्शाद।"

"हम इस वक्त आपसे कुछ दरयाफ्त करना चाहते हैं ?" आसफुद्दौला ने कहा।

"इर्शाद फरमाएँ ?" हकीम साहब ने कहा—"बन्दा हाजिर है।"

"आपने अपनी इस उम्र तक करीब-करीब तिब-हिकमत की सभी किताबें पढ़-देख डाली होंगी और उनके जरिए आपका तजुर्बा भी हद्दे कमाल तक पहुँच चुका है। इस बारे में किसी को कोई शुबहा ही नहीं है।"

हकीम साहब बोले—"खुदा का फजल, उसका करम और हुजूर का इकबाल है, वरना मैं क्या और मेरी हस्ती क्या है ?"

"इंसान के पीछे पड़ कर उसे जल्द ही मौत के घेरे के अन्दर खींच ले जाने वाली मुश्किल बीमारियों का भी आपको पूरा पता होगा ? हम जानना चाहते हैं कि ऐसा कौन-सा सख्त खतरनाक मर्ज या बीमारी है जिसके आगे हकीम भी मजबूर हो जाए। उसे अपनी हिकमत में उस मर्ज के मरीज को छुटकारा दिलाने की कोई भी दवा ढूँढे न मिले। एक मौत ही उसका इलाज हो ?"

नवाब के इस सवाल को सुन कर दरबारी हैरत में पड़ गए। किसी की भी समझ में न आया कि आज हजरत सलामत किस ख्याल में है और कैसे सवाल कर रहे हैं। सब लोग खमोश बैठे दोनों के सवाल-जवाब सुन रहे थे।

नवाब आसफुद्दौला का सवाल सुन कर हकीम शिफाई खाँ ने अपनी लम्बी सफेद डाढ़ी पर हाथ फेरा। थोड़ा मुस्कराए और बोले—"ऐसा मर्ज या बीमारी तो मौत की

ही सूरत कही जा सकती है। और मौत की उस खतरनाक सूरत इंसान के आगे आ जाने का तरीका भी बहुत आसान है। जिन्दगी से बहुत जल्द छुटकारा पा सकता है।"

"किस तरह ?" आसफुद्दौला ने गौर से उनके चेहरे की तरफ देखा।

हकीम शिफाई खाँ इतमीनान से बोले—"मौत को जल्द ही अपने करीब बुला कर उससे हमआगोश होने का आसान तरीका यही है कि दोपहर में खाना खाने के बाद ही दरिया में कुछ देर तक गरकाब रहा जाए यानी डुबकियाँ ले-लेकर देर तक नहाया जाए। इस तरीके से बगैर बुलाए ही मौत आकर उससे हमआगोश हो जाती है। ऐसा करने से वह लाहक खतरनाक मर्ज पैदा हो जाता है जिसका इलाज न किसी तिब-हिकमत की किताब में मौजूद है न हकीम इफलातूं को ही मालूम था।" फिर जरा रुक कर कहा—"इस नाचीज बन्दे के ख्याल से ऐसे लाइलाज मर्ज को वही इंसान बुला सकता है जो अपनी जिन्दगी से एकदम ऊब चुका हो।"

आसफुद्दौला गम्भीर होकर चुप रह गए।

हकीम शिकाई खाँ की समझ में न आया कि आला हजरत ने आज ऐसा सवाल क्यों किया है। इसके पीछे क्या कैसा राज है। उनके जी में तो आया कि उस भेद को उनकी जबान मुबारक से सुनूं ? लेकिन फिर ख्याल किया कि कहीं गुस्ताखी न ख्याल फरमा ली जाए। इसलिए खामोश रहे।

कुछ देर बाद आसफुद्दौला ने नजर उठा कर हकीम साहब की तरफ देखा, थोड़ा मुस्कराए फिर कहा—"हकीम साहब ? जैसा कि आपने इस वक्त कहा, अगर मौत को अपने करीब बुलाने का वह तरीका इतना आसान है, तो जो शख्स अपनी जिन्दगी से ऊब चुका हो, जिसे इस दुनिया में रहना पसंद न हो, वह मजबूर इंसान आपके बताए हुए तरीके से बहुत आसानी के साथ अपनी बेकार जिन्दगी से छुटकारा पा सकता है।"

शिफाई खाँ कुछ नहीं बोले। गम्भीर होकर रह गए।

दस्तरख्वान पर बैठने का वक्त हो चुका था। इसलिए एक खिदमतगार ने हाजिर होकर अर्ज किया—"आलीजाह ! दस्तरख्वान लग चुका है।"

सुन कर आसफुद्दौला ने मसनद छोड़ दी और गुसलखाने की तरफ चले गए। उनके जाते ही दरबार खतम हो गया।

आसफुद्दौला ने दस्तरख्वान पर बैठ कर बड़े इतमीनान के साथ खाना खाया। दस्तरख्वान से उठ कर महल से बाहर आ गए। मोहम्मदअली खिदमतगुजार ने देखा। समझा हजरत सलामत कहीं बाहर जा रहे हैं। पीछे हो लिया। आसफुद्दौला ने पीछे मुड़ कर उसकी तरफ देखा और बोले—"हमारी एक जोड़ा पोशाक लेकर हमारे पीछे चलो।"

मोहम्मदअली दौड़ कर पोशाक ले आया। हजरत ने महल से सीधे गोमती दरिया की तरफ कदम बढ़ा दिया। खिदमतगुजार पोशाक बगल में दबाए पीछे था। गोमती के

किनारे पहुँच कर आसफुद्दौला ने कपड़े उतारे, लँगोटबन्द बन गए और बड़े संतोष के साथ गहरे पानी में धँस गए। लगभग डेढ़-दो घंटे तक गोमती की गहराई में गोते लगाते और तैरते रहे। इस किनारे से उस किनारे के अनेक चक्कर लगाए। उसके बाद पानी से बाहर निकल कर घाट पर आए। मोहम्मदअली से लेकर दूसरे कपड़े पहने और दौलतखाने की तरफ वापस चल पड़े। मोहम्मद अली भी गीले-सूखे कपड़े लेकर पीछे-पीछे लौट पड़ा। किन्तु उसके दिल में नवाब की इस जल-क्रीड़ा का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। उसने उस क्रीड़ा को एक साधारण नदी-स्नान की इच्छा ही समझा।

उस दिन के बाद से यह एक नियम बन गया। प्रतिदिन दस्तरख्वान से उठ कर नवाब आसफुद्दौला सीधे गोमती पर पहुँच जाया करते और गहराई में धँस कर घन्टों डूबते-उतराते रहते तथा जल-क्रीड़ा किया करते थे। गोमती के दूसरे किनारे पर उसी समय हाथियों की लड़ाई हुआ करती थी। हजरत पानी में धँसे हुए बड़े इतमीनान के साथ हाथियों की लड़ाई का भी लुत्फ उठाते रहते थे। मोहम्मदअली तो नई पोशाक लेकर रोजाना ही उनके पीछे चला करता था। कभी-कभी दो-एक मुसाहिब भी हजरत के साथी बन कर दरिया पर पहुँच जाते थे और जब तक हजरत सलामत जल-क्रीड़ा में मग्न रहते थे, वहाँ मौजूद रहते थे। लेकिन वह लोग भी हजरत के इस नए मशगले की तह तक नहीं पहुँच पाते थे। वे लोग भी इसे साधारण जल-क्रीड़ा का शौक ही समझे हुए थे। विशेष रूप से उनका एक ख्याल यह भी था कि इस वक्त हजरत सलामत खास तौर पर हाथियों की लड़ाई देखने के लिए दरिया पर तशरीफ लाया करते हैं। नहाना-तैरना तो दरिया की गहराई, पानी की धारा तथा लहरों का उभार देख कर ही चलता रहता है।

हकीम शिफाई खाँ का बताया हुआ नुसखा गलत नहीं था। कुछ ही दिनों की जल-क्रीड़ा के बाद नवाब आसफुद्दौला को भयंकर रोग ने दबोच कर पलँग पर लिटा दिया। हजरत सलामत की बीमारी की खबर हवा के साथ लखनऊ में फैल गई। दौड़-धूप शुरू हुई। दवा इलाज का प्रबन्ध होने लगा।

हकीम शिफाई खाँ ने आकर हजरत सलामत की नब्ज अपने हाथों में पकड़ी और उसके साथ मर्ज के शुरू होने का सारा किस्सा मोहम्मद अली खिदमतगुजार तथा मुसाहबों से सुना। पछता कर हाथ मलने लगे। सोचा उस दिन के सवाल का सही मतलब आज समझ में आ रहा है। हजरत सलामत खुद ही अपनी जिन्दगी से ऊब उठे थे। अपनी हस्ती को मिटाने के लिए मौत के नुसखे को तलाश रहे थे? मुझे क्या मालूम था। मैंने तो एक हकीम की हैसियत से उनके सवाल का सीधा सच्चा जवाब दे दिया था। मौत का नुसखा बता दिया था....मगर अब पछताने-अफसोस करने से क्या होता है। इस मर्ज का इलाज मेरे हाथ में क्या, दुनिया के किसी हकीम-वैद्य के पास न होगा।

फिर भी हकीम शिफाई खाँ बुजुर्ग खानदानी हकीम होने के अलावा पुश्तों से अवध राज्य के नमकख्वार थे और बजातखुद नवाब आसफुद्दौला के शुभचिंतक थे। वह

खामोश होकर हाथ पर हाथ धरे बैठे न रह सके। उन्होंने तिब-हिकमत की पुरानी किताबों को निकाल कर एक-एक वर्क उलटा। मर्ज का दवा-इलाज ढूंढा। जो कुछ भी किताबों से हाथ लग सका, उसमें अपनी लम्बी उम्र का तजुर्बा शामिल करके आसफुद्दौला की बीमारी का इलाज शुरू किया। खुद अपने हाथों से दवा बनाते और खुद ही आला हजरत को खिलाते थे। लेकिन दवा अपना उलटा असर दिखाने लगी। मर्ज दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा। चारों तरफ नाउम्मेदी का वातावरण छा गया। सभी लोग उनकी जिन्दगी के लिए खुदावन्द करीम से दुआएँ माँगने लगे।

२ शहर रबी-उल-अव्वल १२१२ हिजरी का दिन आ गया। उस दिन सुबह से ही नवाब आसफुद्दौला बहादुर की तबीयत बहुत ज्यादा खराब थी। बेहोशी का आलम था। पलँग पर लेटे हुए थे। घन्टे-दो-घन्टे की बेहोशी के बाद जरा देर से लिए होश में आ जाते थे। आँखें खोल कर मायूस नजर से चारों तरफ देखते थे। हजरत सलामत के पास हकीम शिफाई खाँ, नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन, नवाब कासिमअली खाँ नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ तथा नवाब जवाहरअली खाँ उदास चेहरे लिए बैठे थे। हकीम शिफाई खाँ जरा-जरा सी देर बाद हजरत की नब्ज हाथ में लेते थे और अपने हाथ से दवा खिला रहे थे। मगर दवा का कोई प्रभाव नजर नहीं आ रहा था।

धीरे-धीरे सुबह से दोपहर गुजरी। तीन बजने का वक्त आया। आसफुद्दौला की चेतना लौटी। आँखें खोल कर उपस्थित लोगों की तरफ देखा फिर नवाब कासिमअली खाँ के चेहरे पर नजर जमा कर रह गए।

कासिमअली खाँ ने उनकी तरफ झुक कर अर्ज किया—"आला हजरत ? इर्शाद फरमाएँ ? खुदा हाजिर नाजिर है। उसी के फजल की जरूरत है।"

आसफुद्दौला के होंठ हिले। टूटती भाषा में धीरे-धीरे बोले—"....कासिम.... अली खाँ....तुम....हमारे....अजीज हो....हमारे....खैरअन्देश हो....वसीयतनामा....लिखा रखा है....हमारा....चिराग गुल....हो रहा है....हमारी....मसनद....खाली....हो रही है ....हमारी....वसीयत के....मुताबिक....मुल्क अवध के....वारिस....हकदार....मिरजा.... वजीरअली खाँ हैं....उन्हीं को हमारी....मसनद पर....बैठा देना....।"

और मुल्क अवध के हुकमरां, शान्ति प्रिय, दानी नवाब आसफुद्दौला बहादुर ने अपने प्रिय मित्र, शुभचिंतक तथा सच्चे सलाहकार महाराजा झाऊलाल के वियोग में अपने हाथों मौत को आमन्त्रित करके दिन के ठीक ३ बजे सदैव के लिए आँखें बन्द कर लीं, खुदा को प्यारे हो गए।

१४

नायबुलरियासत खान अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ बहुत चतुर तथा अनुभवी व्यक्ति थे। नवाब आसफुद्दौला बहादुर की जिन्दगी का दीपक बुझते ही, उन्होंने सबसे पहले लखनऊ के अंग्रेज रेजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन को इत्तला दी। उसके बाद ही दौलतखाना आसफी से जनाबआली की मृत्यु की खबर बाहर निकल सकी।

लखनऊ शहर में खबर फैलते ही कोहराम मच गया। अपने उदार, महादानी, सरल स्वभाव तथा सहृदय मालिक के बेवक्त कूच कर जाने, दुनिया से उठ जाने से लखनऊ की जनता धाड़ें मार-मार कर गिरने और पछाड़ें खाने लगी। हर छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष तथा बच्चे की आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी।

लेकिन नवाबी परिवार तथा खानदानियों में एक दूसरे ही प्रकार की हलचल पड़ रही थी। शायद उन लोगों को नवाब आसफुद्दौला की मृत्यु का उतना अफसोस, दुख-दर्द न था, जितना नवाबी गद्दी पर बैठने वाले मुल्क अवध के वारिस-हकदार की फिक्र थी। आसफुद्दौला के जितने भी सौतेले भाई लखनऊ में मौजूद थे यानी मिरजा जंगली, मिरजा मेंडू तथा मिरजा हापड़ आदि सभी उमंगो, उम्मीदों से भर कर, अपने-अपने साथियों, मददगारों को साथ लेकर दौलतखाना आसफी की तरफ दौड़ पड़े। हर पूरे भरोसे तथा विश्वास के साथ अपने को नवाबी गद्दी का वारिस तथा सच्चा अधिकारी समझ रहा था। दौलतखाना आसफी में पहुँच कर उन सभी लोगों में आपस में कानाफूसी आरम्भ हो गई :—

"जनाबआली नवाब आसफुद्दौला की जायज और सही कोई औलाद नहीं है। जितने भी लड़के, नवाबजादे उनके नाम से लगे-लिपटे हैं, सब ऐसे-वैसे ही हैं। मसनद-नशीनी का हक सही तरीके पर हमीं लोगों को पहुँचता है।"

"इसमें तो किसी तरह का शक-शुभा नहीं है। जरूरत सिर्फ इस बात के जाँच-पड़ताल और छान-बीन की है कि इस वक्त कौन मसनद पर बैठ सकता है? पहिला हक किसका पहुँचता है?"

"इस बारे में पहली मर्जी, पहिली जबान जनाबआलिया नवाब बहू-बेगम साहिबा की ही हो सकती है। उसके बाद लखनऊ के अंग्रेज रजीडेन्ट की राय है।"

"लखनऊ के अंग्रेज रजीडेन्ट की राय, उसका इन्साफ और उसकी इच्छा सबसे जोरदार कही जा सकती हैं। क्योंकि अंग्रेजों की सत्ता ही इस वक्त सारे मुल्म पर छा रही है। जिसको वह मसनद पर बैठा दें वही अवध का नवाब बन सकता है। आसफुद्दौला को भी उन्हीं ने मसनदनशीन किया था।"

अभी इस प्रकार की कानाफूसी चल ही रही थी और मन के लड्डू खाए ही जा रहे थे कि लखनऊ के रजीडेन्ट जनरल लिम्सडन कई गोरी कम्पनियों तथा रिसाले,

तोपखाने के साथ दरे-दौलत पर आकर मौजूद हो गए। दौलतखाना आसफी से लेकर हसनबाग तथा मच्छी भवन तक अंग्रेजी फौज फैली नजर आ रही थी।

चूंकि नवाब आसफुद्दौला बहुत पहले ही अपनी जांनशीनी की बात रजीडेन्ट के कानों में डाल चुके थे और रजीडेन्ट ने उसकी सूचना कलकत्ता गवर्नर जनरल के पास भेज कर उस विषय की मंजूरी मँगा कर अपने पास रख ली थी। इसलिए इस बारे में रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन बिलकुल निश्चित से थे। फिर भी जैसे ही उन्हें आसफुद्दौला की मृत्यु का समाचार प्राप्त हुआ था, उन्होंने दफ्तर की फाइलें उलट-पलट कर गवर्नर जनरल की उस मंजूरी को निकाल कर अपनी जेब में रख लिया था। इस प्रकार उनकी नजर में गद्दी का हकदार और कोई दूसरा न होकर मिरजा वजीरअली खाँ ही थे। उन्हें इस विषय में किसी प्रकार की तहकीकात या छानबीन करने की जरूरत नहीं मालूम होती थी।

नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ ने आगे बढ़ कर रजीडेन्ट का स्वागत किया। लाकर दौलतखाने के खास कमरे में बैठाया।

रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन ने नायबुल रियासत से कहा—"अगरचे नवाब आसफुद्दौला बहादुर की मसनद पर कदम रखने वाले अवध के नये नवाब और आसफुद्दौला के जांनशीन का फैसला हमारे पास मौजूद है। फिर भी हम जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम साहिबा और नवाब खासमहल हजरत आला नवाब आसफुद्दौला की बेगम साहिबा से मुलाकात करके मसनदनशीनी के बारे में उनका भी मंशा जानना-समझना चाहते हैं?"

तफज्जुल हुसैन ने जनानखाने में पहुँच कर नवाब बहू-बेगम तथा नवाब खासमहल साहिबा को रजीडेन्ट के आने की खबर की और उनका कहना अर्ज करके मुलाकात की इजाजत चाही। नवाब बहू-बेगम तथा नवाब खासमहल दोनों मिल कर एक जगह बैठ गईं। सामने चिलमन का पर्दा गिरा दिया गया। फिर नवाब बहू-बेगम के आदेश से मोहरिमअली खाँ, कासिमअली खाँ, तहसीनअली खाँ तथा जवाहरअली खाँ आकर रजीडेन्ट को जनानखाने के अन्दर ले गए। पर्दे के इधर मिस्टर लिम्सडन कुर्सीनशीन हुए और बेगम साहिबान के सामने मसनदनशीनी का प्रश्न रख कर कहा—"अगरचे जांनशीनी का पक्का फैसला हमारे पास मौजूद है। हमारे पास जो लिखा-पढ़ी मौजूद है, उससे साफ जाहिर है कि नवाब आसफुद्दौला अपनी जिन्दगी में मिरजा वजीरअली खाँ को अपनी जायज-सही औलाद बता कर अवध रियासत का वारिस तथा मसनदनशीनी का हक अता फरमा गए हैं। फिर भी आप दोनों साहिबान अपनी जबान से फरमाएँ कि आपकी राय में किसको मसनदनशीन होना चाहिए?" फिर जरा रुक कर कहा—"हम देखते हैं कि दरे-दौलत पर गद्दी के वारिस खानदानी भाई-बन्धुओं की बहुत बड़ी भीड़ जमा है।"

बहू-बेगम साहिबा गहरे शोक में थीं। उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। उनकी जिन्दगी में ही उनका बेटा संसार से कूच कर गया था। दुख-दर्द सँभाले नहीं सँभल रहा था। बड़ी मुश्किल के साथ दिल थाम कर उन्होंने रजीडेन्ट को जवाब दिया—"इस वक्त हमारा दिल काबू में नहीं है। हमारी आँखों के आगे अँधेरा छा रहा है। इस वक्त कुछ भी सोचने-समझने की हमारी हिम्मत नहीं है। जब होश-हवास ही ठिकाने पर नहीं है, तो हम क्या कहें कि किसको मसनदनशीन किया जाए। आप इस मुल्क-अवध के सरपरस्त और मोहाफिज हैं। आप ही ने आसफुद्दौला को मसनद पर बैठाया था। इसलिए आप जिसे मुनासिब समझें उसे मसनदनशीन करें। बेहतर यही होगा कि जिसे मिरजा अमानी कह गए हों, जिसको अपना जांनशीन बना गए हों, वही मसनद पर बैठा दिया जाए।"

"और इस बारे में जनाब आलिया नवाब खासमहल साहिबा का क्या इर्शाद है?" लिम्सडन ने कहा—"हम उनकी जवान से भी कुछ सुनना चाहते हैं।"

खासमहल ने भरे गले से धीमे स्वर से कहा—"जनाब नवाब आलिया बहू-बेगम साहिबा हमसे बड़ी हैं। उन्होंने जो कुछ फरमाया है वही हमारा भी कहना समझ लिया जाए?"

मिस्टर लिम्सडन जनानखाने से उठ कर दीवानेखास में आ गए। वहाँ पर खानदानी वारिस हकदारों की भीड़ जमा थी। मिरजा जंगली, मिरजा मेंडू तथा मिरजा हापड़ वगैरा बड़ी उत्सुकता के साथ जनानखाने से रजीडेन्ट के लौटने का इन्तजार कर रहे थे। दिलों में हलचल पड़ी हुई थी। चेहरों पर आशा-निराशा के रंग चढ़-उतर रहे थे। रजीडेन्ट के लौटते ही सबकी उत्सुकता भरी निगाहें उसके चेहरे पर जम गईं।

मिस्टर लिम्सडन दीवानेखास में आकर कुर्सीनशीन हो गए। नायबुल रियासत खान अल्लामा तफज्जुल हुसैन ने उनके पास पहुँच कर धीरे से पूछा—"जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम साहिबा तथा नवाब खासमहल साहिबा ने नवाबी मसनद पर जलवा अफरोज किए जाने के लिए अपना क्या फैसला दिया? किसका नाम अपनी जनान मुबारक से फरमाया?"

मिस्टर लिम्सडन गम्भीर होकर ऊँचे स्वर से बोले—"नवाबी मसनद पर दूसरा कौन कदम रख सकता है? जिसे नवाब आसफुद्दौला बहादुर अपनी जिन्दगी में रियासत का वारिस करार दे गए हैं, अपनी कलम से वसीयतनामा लिख कर रख गए हैं, वही नवाबी-मसनद पर जलवा-अफरोज होगा।" फिर एक नजर उपस्थित भीड़ पर डाल कर तफज्जुल हुसैन की तरफ देख कर कहा—"नवाब आसफुद्दौला के सही नवाबजादे मिरजा वजीरअली खाँ साहब कहाँ हैं? उन्हें बुलाया जाए। आकर मसनद पर रौनक-अफरोज हों!"

रजीडेन्ट का कहना सुन कर दीवानेखास में सन्नाटा छा गया। अपने को हकदार

समझने वाले तथा मसनद पर बैठने की उम्मीदों को लेकर आए हुए व्यक्तियों के चेहरे एकदम फीके पड़ गए। पैरों के नीचे से जमीन सी खिसक गई। अंग-अंग ढीले पड़ गए। एक क्षण हसरत भरी निगाहों से एक दूसरे का मुंह ताका। लेकिन मुंह से कुछ कहने, जबान हिलाने अथवा अपना हक साबित करने की किसी की हिम्मत न पड़ी। चुपचाप दीवानेखास से निकल कर इधर-उधर हो गए।

मिरजा वजीरअली खाँ अपने चार यारों के साथ पंचमहला में उदास आँखों में आँसू लिए बैठे थे। उनके भी पेट में चूहे कूद रहे थे। क्योंकि गद्दी के हकदारों का शोर-गुल सुन कर उन्हें अपनी मसनदनशीनी का कोई भरोसा न था। सोच रहे थे—'जिसे दादी अम्मां और नवाब खासमहल पसंद करेंगी वही मसनदनशीन होकर अवध का नवाब बनेगा। वैसे अब्बा हुजूर मुझी को चाहते थे। मुझे ही अपना जांनशीन करार दिए हुए थे। मगर इस वक्त तो मामला कुछ और ही नजर आ रहा है। खुदा जाने किस करवट ऊँट बैठता है।'

सहसा नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ ने उनके पास आकर कहा—"हजरत सलामत! उठिए चलिए, रजीडेन्ट आपको नवाबी मसनद पर बैठाने के लिए देर से इन्तजार कर रहा है।"

वजीरअली खाँ का चेहरा एकदम खिल गया। दिल में खुशियाँ उछल पड़ीं। उठ कर नवाब नाजिर के साथ चल पड़े। चार यार पीछे लग गए। उनके भी चेहरे चमक रहे थे।

दीवानेखास में आकर मिरजा वजीरअली खाँ मसनदनशीन हो गए। नवाब कासिमअली खाँ नवाबी मंदलि लिए खड़े थे। उन्होंने आगे आकर मंदलि सिर पर पहना दिया। नकीबों, चोबदारों ने अपनी आवाजें बुलंद कीं। दीवानेखास की छत ने उनकी आवाजों को दोहराया। बाहर सलामी की तोपों की गड़गड़ाहट आरम्भ हो गई। दस्तूर कायदे के अनुसार नये नवाब के सामने नजरें पेश होनी आरम्भ हो गयीं। सबसे पहले नायबुल रियासत खान अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ ने नजर पेश की। उनके बाद नवाब कासिम खाँ, नवाब नाजिर, नवाब मोहरिमअली खाँ, जवाहरअली खाँ और आफरी-अली खाँ वगैरह ने नजरें पेश कीं। उनके पीछे अन्य खानदानी अजीज रिश्तेदारों की बारी आई। लेकिन नवाब आसफुद्दौला के सौतेले भाइयों मिरजा जंगली, मिरजा मेंडू वगैरह में से वहाँ एक भी मौजूद न था।

नजरों के बाद दरबार जम गया। नाच-गाना शुरू हो गया। एक निहायत हसीन सत्तरह-अठारह वर्ष की रहीमन नामक तवायफ ने नवाब साहब के सामने आकर मुबारकबाद गाना शुरू किया—

मुबारक हो मसनद ये इज्जत की घड़ियाँ,
ये दरबार दुरबार खुशियों की झड़ियाँ।

एक पहर रात गए तक दरबार जमा रहा। उसके बाद अवध राज्य के युवक नवाब मिरज़ा वजीरअली खाँ बहादुर मसनद से उठ कर सीधे जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम की खिदमत में हाजिर हुए। बड़ी श्रद्धा के साथ दादी अम्माँ के चरणों पर माथा टेक दिया। दादी अम्मा ने छाती से लगा कर दुआएँ दीं। उनसे निपट कर नवाब खास-महल की खिदमत में पहुँच के उनके भी कदम चूमे और उनसे भी दुआएँ लेकर बड़े संतोष के साथ अपने महलों में आए। महल के द्वार पर खड़ी नीलम सदके उतारने के लिए उनका इन्तजार कर रही थी। चार यार भी वहीं मौजूद थे और नीलम के साथ छेड़खानियाँ, हँसी ठठोलियाँ चल रही थीं।

हजरत सलामत के द्वार पर पहुँचते ही नीलम ने दो कदम आगे बढ़ कर मुस्कराते हुए सदके उतारे। फिर दो कदम पीछे हट कर बड़े अदब-कायदे के साथ सिर झुक दिया। हजरत सलामत ने मुस्कराते हुए नीलम के फूले-फूले गाल पर उँगली छुला दी। नीलम धीरे से बोली—"वादा न भूलिएगा।"

हजरत वजीर अली खाँ मुस्कराते हुए महल के अन्दर दाखिल हो गए। नशिस्त पर तशरीफ फरमा हो गए। चार यार भी पीछे लगे चले आए। और इजाजत पाकर कायदे के साथ अपने-अपने स्थानों पर बैठ गए। और बड़ी प्रसन्नता के साथ मसनद-नशीनी की बधाई दी। जवाब में हजरत ने सिर्फ इतना ही कहा—"खुदा का फजल है।"

एक क्षण खामोशी का वातावरण रहा। उसके बाद दिलावर अली ने बड़े विनीत भाव से अर्ज किया—"हजरत सलामत अगर इस वक्त इस बन्दा नाचीज की गुस्ताखी माफ फरमायें तो एक अर्ज पेश करूँ?"

"हाँ, हाँ, जरूर कहो?" वजीरअली खाँ प्रसन्न मुद्रा से उसकी तरफ देख कर कहा।

दिलावरअली गम्भीर होकर बोला—"मसनदनशीनी के दरबार में एक गलती ऐसी नजर आई जो कमतरीन के दिल पर चोट सी लगा कर रह गई।"

"क्या?" वजीरअली खाँ ने थोड़े आश्चर्य के साथ पूछा।

"लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन तथा उसके दूसरे अंग्रेज साथियों ने आला हजरत को नजरें क्यों नहीं पेश की थीं? और मसनद के आगे सर क्यों नहीं झुकाया था? क्या उनका ये फर्ज नहीं था?"

वजीरअली खाँ के कुछ कहने के पहले मर्दानअली ने बात का समर्थन करते हुए कहा—"वाकई, रजीडेन्ट ने यह एक बहुत बड़ी गुस्ताखी का काम किया है। उन्हें बिला शक नजरें पेश करनी चाहिए थीं।"

दिलावरअली फिर बोला—"आला हजरत, जरा ख्याल फरमाने की बात है। लखनऊ का रजीडेन्ट और रजीडेन्सी में रहने वाले सभी अंग्रेज नवाब अवध के एक नौकर ही तो हैं। उनकी तनखाहों की शकल में लाखों करोड़ों रुपया सालाना अवध रियासत

के खजाने से निकाल कर कम्पनी सरकार को दिया जाता है। वाकया अर्ज कर रहा हूँ। एक दिन मेरे अब्बा बुजुर्गवार अपने एक मिलने वाले से फरमा रहे थे—लखनऊ की रजीडेन्सी में रहने वाले सभी अंग्रेज ओहदेदार और गोरी हिन्दुस्तानी पल्टनों रिसालों का सारा खर्चा नवाब अवध को बर्दाश्त करना पड़ता है। एक करोड़ से भी ज्यादा रकम हर साल अवध के खजाने से निकाल कर कम्पनी सरकार को चुकाई जाती है।"

मर्दानअली ने धीरे से कहा—"कितने बदजात हैं ये अंग्रेज बच्चे। हमारा दिया खाते हैं और हमारी ही बेइज्जती करते हैं।"

"यह तौहीन हमारे दिल में भी चुभ सी गई है?" वजीरअली खाँ ने कहा—"हम इस बारे में नायबुल रियासत से दरयाफ्त करेंगे?"

इसके बाद दस-पाँच क्षण खामोशी में गुजरे। फिर रुस्तम खाँ ने मुस्करा कर कहा —"दरबार में उस नौजवान कसबी ने बहुत खूब मुबारकबाद गाई थी। सुन कर तबीयत फड़क उठी थी।"

"कौन थी वह?" वजीरअली खाँ ने उसकी तरफ देख कर पूछा।

"यहीं लखनऊ की रहने वाली है। अभी हाल ही में अँगड़ाई लेकर जागी है।"

मर्दानअली ने कहा—"हजरत सलामत? कभी उसे खिदमत में तलब फरमा कर इतमीनान के साथ वह मुबारकबाद फिर सुनी जाए।"

वजीरअली खाँ मुस्कराते हुए नशिस्त से उठ कर खड़े हो गए और जनानखाने की तरफ बढ़ते हुए धीरे से बोले—"देखेंगे?"

उनके जाते ही चार यारों ने भी अपने-अपने घरों की राह ली।

१५

लखनऊ में नया वातावरण बह उठा था। नवाब आसफुद्दौला का जमाना खतम हो चुका था। युवक नवाब मिरजा वजीरअली खाँ ने नवाबी मसनद पर आसीन होकर अवध-राज्य की बाग-डोर अपने हाथों में सम्हाल ली थी।

युवक नवाब मिरजा वजीरअली खाँ स्वभाव के तेज और गुस्सेवर तो बचपन ही से थे। फिर उनका शरीर कसरती व हृष्ट-पुष्ट था। चेहरे पर रौब-दाब तथा शाही जलाल हर समय चमकता नजर आता था। सरकारी अहिलकार तथा विशेष रूप से जिनको उनके स्वभाव का पता था या कभी कोई छोटा-मोटा साबिका पड़ चुका था उनके दिल में कुछ भय और कुछ चिन्ता सी उत्पन्न हो रही थी। वे लोग सोचते थे कि युवक नवाब तेज मिजाज तो हैं ही, जाने कैसा क्या हो? कौन अपने पद से हटाया जाता है,

किसको नया पद प्रदान किया जाता है ? कुछ पता नहीं किसके घर में घी के चिराग जलते हैं और किसके घर में अंधकार छाता है ?

लेकिन नवाब अवध मिरजा वजीरअली खाँ ने राज-काज दफ्तरों आदि में किसी प्रकार का कोई भी परिवर्तन नहीं किया। नवाब आसफुद्दौला के समय में जो पदाधिकारी जिस पद पर था या जो अहिलकार जिस काम को कर रहा था, सब उसी प्रकार जमे हुए थे। इन्तजाम-बन्दोबस्त उसी तरह चल रहा था। किसी भी बात में कोई उलट-फेर नजर नहीं आता था। नयाबुल रियासत के विशेष पद पर वही खान-अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ जो आसफुद्दौला के समय से जमे चले आ रहे थे, जमे हुए थे। नवाबी दरबार भी बदस्तूर था। आसफुद्दौला के जितने भी दरबारी थे वही लोग अभी भी दरबार की शोभा बढ़ा रहे थे।

परिवर्तन के रूप में केवल इतना ही नजर आ रहा था कि नवाब आसफुद्दौला रोजाना सुबह नाश्ते आदि से फारिग होकर दीवाने-खास में आकर मसनदनशीन हो जाया करते थे। ग्यारह-बारह बजे तक रहते थे। उसी समय राज-काज तथा अन्य मामले मसले तय होते थे। किन्तु मिरजा वजीरअली खाँ ने उनके इस नियम की पाबन्दी नहीं की। किसी दिन भी दीवाने-खास में पधार कर मसनद पर आसीन नहीं हुए। यद्यपि दरबार के सभी लोग उसी पुराने नियम के अनुसार दिन चढ़ते ही दरबार में आकर जम जाते थे और बराबर ग्यारह-बारह बजे तक जमे बैठे रहते थे। मगर हजरत वजीरअली खाँ दौलतखाना आसफी के उस विशेष कमरे में जिसमें नवाब आसफुद्दौला बैठ कर अपने खास सलाहकारों से राज-काज की भेद भरी बातें किया करते थे नहीं जाते थे। उन्हें अगर किसी से कोई बात दरयाफ्त करने अथवा किसी मामले-मसले की जरूरत महसूस होती थी, तो उसे अपने पास बुला लिया करते थे। बिना बुलाए या मुलाकात की इजाजत हासिल किए कोई भी उनके पास नहीं पहुँच सकता था। दरवाजों पर पर्दे पड़े रहते थे और पर्दे से लगे हुए पहरेदार बैठे रहते थे।

अवध के तेज-तर्रार नवाब मिरजा वजीरअली खाँ को मसनदनशीन हुए तेरह दिन गुजर चुके थे। चौदहवें दिन का सबेरा था। पहर दिन चढ़ चुका था। हस्ब मामूल दीवानेखास में दरबारी अमीर-उमरा तथा पदाधिकारी अपने-अपने स्थानों पर जमे बैठे थे। लेकिन वहाँ की नवाबी मनसद खाली पड़ी थी। नायबुल रियासत की भी नशिस्त खाली थी, वह भी वहाँ न थे। बेकारी के इस समय में दरबारियों में दुनिया जहान के चर्चे चल रहे थे।

नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ ने अपने बगल में बैठे नवाब कासिमअली खाँ की तरफ मुड़कर कहा—"आज तक हजरत सलामत एक दिन भी दरबार में तशरीफ नहीं लाए। आकर मसनद पर रौनक अफरोज नहीं हुए।"

नवाब कासिमअली खाँ धीरे से बोले—"अभी लड़के हैं। बड़े-बूढ़ों और पुराने

लोगों के बीच में बैठने से कुछ झिझक महसूस करते होंगे। यह नव उमरी का जमाना कुछ ऐसा ही हुआ करता है। इस उम्र में अपनी उम्र के हमजोलियों में बैठना बातें करना सभी को पसंद आता है।"

"यह तो सही है ?" नवाब नजीर ने कहा—"लेकिन रियासत की लगाम हाथों में थाम कर उसे घुमाना-मोड़ना भी जरूरी होता है। नवाबी मसनद की जिम्मेदारी बहुत बड़ी होती है। हुकूमत बड़ी टेढ़ी खीर है और फिर इस जमाने में जबकि अंग्रेजों का रौब-दाब मुल्क की हर रियासत, हर हुकूमत में हाथ डाले हुए है। इसलिए रियासत के हुक्मराँ को हमेशा होशियार रहने की जरूरत है। उसके लिए हर दाँव-पेंच से वाकिफ होने की जरूरत है।"

"सीखते-सीखते सभी कुछ सीख समझ जाएँगे।" कासिमअली खाँ ने कहा—"अभी मसनदनशीन हुए कितने दिन ही गुजरे हैं? पन्द्रह दिन भी तो पूरे नहीं हुए। फिर उनमें फहम-फरात, समझ-बूझ की कोई कमी नहीं मालूम होती। नवाब आसफुद्दौला ने उनकी तालीम में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। मुझे इसका भी पता है कि इधर जनाब आली आसफुद्दौला बहादुर अकसर हजरत सलामत को अपने पास बैठा कर रियासत के मामले मसलों पर बातें किया करते थे और अंग्रेजों के रौब-दाब वगैरह से होशियार रहने के बारे में भी समझाया करते थे।"

नवाब नाजिर धीरे से बोले—"अंग्रेजों का रौब-दाब बड़ा जबरदस्त है। उनके अड़ंगे टालना और उनकी पेंचीदा चालों से निपटना बहुत मुश्किल है।"

आफरीअली खाँ नवाब नाजिर की दूसरी बगल में बैठे थे। सुन कर नवाब नाजिर की तरफ मुड़ कर जरा मुस्कराते हुए बोले—"आपने जो अंग्रेजों से निपटने की बात कही उसकी कमी हजरत सलामत में जरा भी नहीं है। हजरत पक्के अखाड़ची और दाँव-पेंचों से वाकिफ हैं। आन की आन में दुश्मन को चारो खाने चित्त कर सकते हैं।" फिर जरा गम्भीर होकर कहा—"मजाक नहीं ? मेरा तो यहाँ तक ख्याल है कि अर्श-मंजिल नवाब शुजाउद्दौला बहादुर से भी कहीं ज्यादा हजरत वजीरअली खाँ तलवार के धनी साबित होंगे। मिजाज में वह तेजी है, चेहरे पर वह तमतमाहट मौजूद रहती है कि अंग्रेजों के होश फाख्ता हो सकते हैं।"

नवाब नाजिर कुछ नहीं बोले। जरा देर वातावरण मौन रहा।

कासिमअली खाँ की बगल में नवाब जवाहरअली खाँ बैठे सबकी बात सुन रहे थे। उन्होंने मुड़ कर कासिमअली खाँ की तरफ देखा, बोले—"नवाब कासिमअली खाँ साहब ? और जो कुछ है वह तो सब ठीक ही है, मगर हजरत सलामत में एक बात ऐसी है जो कुछ खटक पैदा करती है।"

"क्या ?" कासिमअली खाँ ने उनकी तरफ देखा।

"अखाड़े के चार यारों की सोहबत एक खटक पैदा करने वाली मालूम होती

है। अखाड़े तक तो उनकी सोहबत कुछ ठीक भी कही जा सकती है। लेकिन अब हर वक्त उनकी बैठक बेहतर नहीं मालूम होती। उनकी सोहबत से हुकूमत को कोई फायदा नहीं पहुँच सकता। इधर यह भी सुनने में आया है कि चन्द मुसाहब भी हजरत ने बना लिये हैं। ये कोढ़ में खाज का पैदा होना कहा जा सकता है।"

कासिमअली खाँ सिर्फ मुस्करा कर रह गए। बोले कुछ नहीं।

जरा देर के लिए पुनः वातावरण मौन हो गया। फिर नवाब कासिमअली खाँ ने गम्भीर होकर कहा—"भाई साहिबान, सच बात यों है कि चाहे जैसा जो कुछ भी हो, अब हम सब लोगों का फर्ज यही है कि हर सूरत से हजरत सलामत का साथ दें। उनमें जो भी कमी देखें उसे पूरा करने की कोशिश करें। जो ऐब देखें उसे अपने काबू भर दूर करें। नवाब आसफुद्दौला का नमक हम लोगों की रग-रग, नस-नस में है। और हजरत सलामत मिरजा वजीरअली खाँ उन्हीं की एक यादगार हैं। इसलिए हर मुसीबत को उठा कर उनका साथ देना हम लोगों का फर्ज है, सभी लोगों को मालूम है कि हजरत वजीरअली खाँ की मसनद-नसीनी का मसला कितना दिक्कत तलब और उलझनें पैदा करने वाला था। उसे हमीं लोगों ने आसान बनाया था। उनके लिए अपने हाथ कटा कर वसीयतनामें पर मोहरें लगाई थीं। इसलिए हजरत की नवाबी और हुकूमत को सर-सब्ज बनाना भी अब हमी लोगों का काम है।"

सब लोग सुन कर गम्भीर हो गए।

तभी नायबुल रियासत खान सल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ बग्घी से उतर कर दीवाने-खास में तशरीफ लाए। सभी दरबारियों ने उठ कर उनको ताजीम दी। उन्होंने नवाबी मसनद पर एक उचटती नजर डाली। फिर एफ चौबदार को बुला कर कहा—"जाकर आला हजरत से अर्ज करो कि एक निहायत जरूरी काम की वजह से कमतरीन मुलाकात का ख्वास्तगार है। साथ ही इस गुस्ताखी की माफी भी चाह रहा है।"

चोबदार भाग कर हजरत वजीरअली खाँ के पास पहुँचा और उलटे पैरों वापस आकर नायबुल रियासत से कहा—"तशरीफ ले चलिए। हजरत सलामत वहीं अपने पास बुला रहे हैं।"

अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ हजरत सलामत के कमरे में दाखिल हुए। अदब-कायदे के साथ फर्शी सलाम अदा किया और हाथ बाँध कर खड़े हो गए।

आला हजरत नवाब वजीरअली खाँ मसनद पर जमे एक चमचमाती बिलायती तलवार का मुलाहजा फरमा रहे थे। मसनद की बाईं तरफ एक खिदमतगार हाथ बाँधे खामोश खड़ा था। मसनद के पीछे खड़ी नीलम एक छोटी-सी पंखड़ी हाथ में लिए हजरत सलामत को हवा दे रही थी।

चन्द सायत बड़े गौर से बिलायती तलवार को उलट-पलट कर मुलाहजा फरमाने के बाद हजरत ने धीरे से कहा—"यह बिलायती तलवार बहुत खूब है। हमें पसंद है।

वक्त पर अपना अच्छा काट दिखला सकती है।" फिर तलवार को खिदमतगार के हवाले कर दिया। उसने उसे मयान में बन्द किया और वहाँ से चला गया। उसके बाद हजरत ने नीलम से पान की गिलौरी तलब की। नीलम ने बड़ी तत्परता के साथ हाथ की पंखड़ी एक तरफ रख कर खासदान से सोने के वर्क में लिपटी हुई गिलौरी निकाल कर एक अन्दाज के साथ नवाब—अवध के मुँह में रख दी। मुँह में गिलौरी दबा कर उन्होंने धीरे से नीलम से कहा—"अच्छा, अब तू यहाँ से जा।"

नीलम ने सिर झुकाया और लचकती, बलखाती कमरे से चली गई।

नवाब वजीरअली खाँ ने बड़े इतमीनान के साथ मुँह में दबा पान एकरस किया। फिर नायबुल रिआसत की तरफ नजर उठा कर देखा, बोले—"आप खड़े क्यों है? अपनी नशिस्त पर तशरीफ रखिए।"

तफज्जुल हुसैन खाँ मसनद के कुछ करीब नशिस्त पर बैठ गए।

हजरत सलामत ने बड़े इतमीनान के साथ उनकी तरफ देख कर फरमाया—"कहिए? किस जरूरी काम के लिए आपने मुलाकात चाही है?"

नायबुल रियासत ने बड़े नरम लहजे से अर्ज किया—"आलाहजरत! फिदवी को आज सुबह ही लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन ने पैगाम देकर रजीडेन्सी में बुला भेजा था और इस वक्त सीधा रजीडेन्सी से आकर हजरत-सलामत की खिदमत में हाजिर हुआ हूँ।"

"रजीडेन्ट ने आपको क्यों बुलाया था? क्या काम था?"

"रुपयों के तकाजे के लिए। रुपए माँग रहे थे।" तफज्जुल हुसैन ने कुछ धीरे से कहा।

"रुपयों का तकाजा कैसा?" वजीरअली खाँ ने कुछ खुश्क लहजे से कहा—"क्या अवध रियासत उनकी कर्जदार है?"

"ऐसा ही समझ लिया जाए आलाहजरत?" अल्लामा ने ठण्डे लहजे से कहा—"इस कर्ज और तकाजा के बारे में हजरतसलामत को शायद अभी तक कोई जानकारी नहीं है। यह कर्जा...."

वजीरअली खाँ ने बीच में टोक कर कहा—"वही तो हम जानना चाहते हैं कि रजीडेन्ट का कैसा क्या कर्जा हमारे जिम्मे है?"

"आलाहजरत?" तफज्जुल हुसैन ने गम्भीर होकर कहा—"यह कर्जा रजीडेन्ट का वजात खुद नहीं है! कम्पनी सरकार का है। और उसकी हकीकत यह है कि रजीडेन्सी में जितने भी अंग्रेज ओहदेदार, उनसे लगे लिपटे दूसरे मुलाजिम नौकर-चाकर हैं और उनके अलावा जिस कदर भी अंग्रेजी-हिन्दुस्तानी पल्टनें, रिसाले वगैरा वहाँ मौजूद हैं, उन सबका खर्चा हमारी अवध सरकार को ही चुकाना पड़ता है। रियासत के खजाने से निकाल कर एक बहुत बड़ी रकम हर साल रजीडेन्ट की मारफत कम्पनी सरकार को देनी

पड़ती है।"

"हमारी अवध रियासत को रजीडेन्सी के मुलाजिमों का सारा मसारिफ बर्दाश्त करना पड़ता है ?" हजरत वजीरअली खाँ ने आश्चर्य भरे लहजे से उनकी तरफ देख कर पूछा।

"जी हाँ, आलाहजरत ?" अल्लामा ने कहा—"पहले यह सब खर्चा पचास लाख देना पड़ा करता था। लेकिन कम्पनी के मौजूदा गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर ने उसे बढ़ा कर दुगने से भी ज्यादा कर दिया है। और वह इस तरीके पर किया है कि एक यूरोपीयन और एक हिन्दुस्तानी पल्टन और लखनऊ की रजीडेन्सी में रख दी है। और उनके खर्च का बोझ भी अवध रियासत के सिर लाद दिया है। इस तरीके से अब वह खर्चा बढ़ कर एक करोड़ सोलह लाख रुपया सालाना हो गया है। उसी रक़म की अदायगी का तकाजा रजीडेन्ट लिम्सडन कर रहे थे।"

"ओफ ! इतनी बड़ी रकम ?" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा। एक क्षण खामोश रहने के बाद नजर उठाई। अल्लामा की तरफ देख कर कहा—"अभी तक हमारी समझ में यह नहीं आया कि रजीडेन्सी के मुलाजमों और वहाँ रहने वाली अंग्रेजी-हिन्दुस्तानी पल्टनों और रिसालों वगैरह का सर्फा हमें क्यों उठाना पड़ता है ? कम्पनी की पल्टनों वगैरह की हमें जरूरत क्या है ? हमारी रियासत में भी तो फौजें मौजूद हैं। कम्पनी अपनी पल्टनें यहाँ से हटा क्यों नहीं ले जातीं ?" हजरत का चेहरा गम्भीर हो रहा था।

"सुलहनामा से कम्पनी ने अपनी पल्टनें यहाँ रखी हैं ? कैसे हटाई जा सकती हैं।" अल्लामा ने धीरे से कहा।

वजीरअली खाँ चौंक से पड़े। बोले—"यह सुलहनामा क्या बला है ?"

"शायद अभी आलाहजरत को कम्पनी और अवध रियासत का भीतरी-बाहरी ताल्लुक मालूम नहीं है।" अल्लामा ने नजर उठा कर अर्ज किया—"यों तो वह ताल्लुक एक दोस्ताने की सूरत में है। लेकिन उस दोस्ताने की लिखा-पढ़ी जो सुलहनामा कहलाती है बहुत खतरनाक है। उसकी शर्तें कुछ ऐसी हैं जिनके जरिए कम्पनी सरकार एक तरह से अवध रियासत पर हावी है। यहाँ तक उसकी शर्तों ने जकड़ बाँध रखा है कि कोई हकदार रियासत मसनद खाली होने पर खुद कदम नहीं रख सकता। कम्पनी का गवर्नर जनरल ही छान-बीन और अपनी जाँच-पड़ताल के बाद मसनदनशीन करता है।"

"वाह, यह अच्छा मजाक है ?" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा—फिर नजर उठा कर बोले—"कौन नहीं जानता कि मुल्क अवध हमारा है। हमारे बुजुर्गों ने अपना खून पानी करके उसे कमाया है, रियासत कायम की है। ऐसी सूरत में एक हकदार को खाली मसनद पर कदम रखने से रोकने वाले और अपनी जाँच-पड़ताल पसन्द को लेकर मसनदनशीन करने वाले अंग्रेज कौन होते हैं ?"

अल्लामा तफज्जुल हुसैन खामोश रह गए।

एक क्षण वजीरअली खाँ भी कुछ सोचते से रहे। फिर नजर उठा कर कहा—"नायबुल रियासत साहब ! आपने जिस सुलहनामा का जिक्र किया है, उसे कलमबन्द किए जाने की क्या जरूरत आ पड़ी थी ? अवध के हुक्मरां और कम्पनी के दरमियान दोस्ताना कायम क्यों किया गया ?"

"आलाहजरत ?" अल्लामा ने नजर उठा कर शान्त भाव से कहा—"इसकी बहुत बड़ी कहानी है। उसे फिर कभी काफी फुर्सत के वक्त हजरत-सलामत को सुनाऊँगा। वैसे वह दोस्ताना अर्शमंजिल नवाब शुजाउद्दौला मरहूम के वक्त में कायम हुआ था और तभी वह सुलहनामा भी तहरीर किया गया था।" फिर जरा रुक कर धीरे से कहा—"उस वक्त हजरत नवाब शुजाउद्दौला बहादुर पर कुछ ऐसी ही मजबूरी आ पड़ी थी कि अंग्रेजों से दोस्ताना कायम करना पड़ा। और उनकी हर एक शर्त मंजूर करके अंग्रेजी पल्टनों को भी अपनी रियासत के अन्दर रखना पड़ गया था।"

"तब, अंग्रेजों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिए और अवध के हुक्मरां को दबाए रखने के लिए अंग्रेजी फौजें यहाँ रख छोड़ी हैं। लेकिन उन पल्टनों वगैरह का कुल खर्चा कम्पनी को ही बर्दाश्त करना चाहिए। हमें उनकी पल्टनों से क्या मतलब सरोकार है ?" वजीरअली खाँ ने कहा।

"हजरत-सलामत का फरमाना सही और बजा है।" अल्लामा ने कहा—"मगर कम्पनी की उन पल्टनों और दूसरे अंग्रेज ओहदेदारों वगैरह का कुल सफी नवाब शुजा-उद्दौला बहादुर और उनके बाद हजरत नवाब आसफुद्दौला बहादुर बिला किसी हीला-बहाना और झिझक संकोच के बराबर अदा करते चले आए हैं।"

वजीरअली खाँ दो-चार क्षण गम्भीर मुद्रा में बैठे कुछ सोचते से रहे। फिर धीरे से कहा—"हमने सुना है कि बुजुर्गवार नवाब शुजाउद्दौला साहब बड़े हिम्मतवर और तलवार बहादुर थे। जाने क्यों वह इन बदजात अंग्रेजों से दब गए थे और हमेशा के लिए अवध रियासत के सिर पर एक बला मौजूद कर ली थी ?"

"आलाहजरत ! वक्त की बात हुआ करती है। सियासत भी एक बहुत बड़ी बला हुआ करती है। ऐसा मौका लाकर खड़ा कर देती है कि बड़े-बड़े हुक्मरानों-बादशाहों को मजबूर हो जाना पड़ता है।" अल्लामा ने कहा।

"गलत बात है ?" वजीरअली खाँ ने सर उठा कर जोश के साथ कहा—"यह मुट्ठी भर अंग्रेज कर ही क्या सकते हैं ? एक दिन भी मुकाबले पर नहीं ठहर सकते। यह दूसरी बात है कि अभी तक किसी ने इनका रोब-दाब उखाड़ने की हिम्मत नहीं की। वरना हिन्दुस्तान के हुक्मरानों में ताकतों की कोई कमी नहीं है। अगर सब इनको मार भगाने के लिए एका करके, अपनी-अपनी ताकतें लेकर इनके मुकाबले पर आ जाएँ तो कम्बख्तों को भागते राह न मिले।"

खान अल्लामा हजरत वजीरअली खाँ के विचारों को सुन कर सन्नाटे में आ

गए। आश्चर्य का ठिकाना न रहा। सोचने लगे—अंग्रेजों के प्रति अभी से जब इनके ऐसे विचार हैं तो आगे जाने किस करवट ऊँट बैठे। आज मुल्क में अंग्रेजों की सत्ता को कौन डिगाने वाला है? कौन उसे उखाड़ कर फेंकने वाला है? उनकी सत्ता के आगे बड़ी-बड़ी शक्तियाँ पानी भर रही हैं। किसमें हिम्मत है कि उनके खिलाफ होकर किसी प्रकार की सरकशी गद्दारी कर सके? अवध रियासत की तो हस्ती ही क्या है? ऐसे ही विचार अगर हजरत-सलामत के दिल-दिमाग में घर बनाए बैठे रहें तो जरा भी शक नहीं कि एक दिन इन्हें तो ले ही डूबेंगे, अवध रियासत को भी मिटा देंगे। भविष्य अच्छा नहीं नजर आता....इस प्रकार अल्लामा अपने ख्यालातों में डूबे हुए थे।

हजरत वजीरअली खाँ भी खामोश बैठे तकिए का सहारा लिए किन्हीं ख्यालों में मस्त थे। सहसा वह चौंक से पड़े। मुँह से निकल पड़ा—"इस वक्त अच्छा याद आ गया।"

सुन कर अल्लामा की भी विचारधारा टूट गई? आश्चर्य भरी नजर से उनकी तरफ देखने लगे।

वजीरअली खाँ सँभल कर बैठ गए और अल्लामा की तरफ नजर उठा कर कहा—"इस वक्त हम आपसे एक बात पूछना चाहते हैं?"

"फरमाइए आलाहजरत?" अल्लामा ने कहा।

"आपको याद होगा और आपने अपनी खुली आँखों से देखा होगा कि मसनद-नशीनी के दरबार में लखनऊ के रजीडेन्ट और उसके दूसरे अंग्रेज साथियों ने हमारी कितनी बड़ी तौहीन की थी?"

"कैसी?" अल्लामा ने विस्मय भरी नजर से उनकी तरफ देख कर नरम लहजे से कहा—"अभी फिदवी की समझ में नहीं आया आलाहजरत?"

वजीरअली खाँ गम्भीर होकर बोले—"हमारे मसनदनशीन हो जाने और सर पर नवाबी मन्दील पहिन लेने के बाद जब आप सभी कारकुनों और अजीजों ने हमें नजरें पेश की थीं, मसनद के आगे सिर झुकाया था, रेजीडेन्ट और उसके साथी अंग्रेजों ने ऐसा क्यों नहीं किया था? उन्होंने क्यों नजरें पेश नहीं की थी, क्यों हमारे आगे सर नहीं झुकाया था?"

अल्लामा साधारण भाव से बोले—"आलाहजरत! हमलोग इस रियासत के पुश्तैनी नमकख्वार हैं, हजूर का बख्शा हुआ खाते हैं। इसलिए हमारा फर्ज है कि हम अपने मालिक, अपने आका को नजरें पेश करें। सर झुकाएँ और कदम चूमें। हम लोग अपने लाजिमी फर्ज को कैसे भूल सकते हैं।"

"और रजीडेन्ट का यह लाजिमी फर्ज नहीं था?" लहजा कुछ तेज और रूखा था। अल्लामा खामोश रह गए।

वजीरअली खाँ ने उसी लहजे से फिर कहा—"क्या अवध का नवाब रजीडेन्सी

में रहने वाले अंग्रेजों का मालिक और आका नहीं है ? ये सब अवध के नवाब के नमक-ख्वार नहीं हैं ?" फिर जरा रुक कर कहा—"आप नायबुल रियासत हैं, बुजुर्ग हैं और जमानादीदा भी हैं। आप हमें बताएँ, समझाएँ कि हमारी यह तौहीन क्यों की गई थी ?"

अल्लामा बहुत ठण्डे लहजे से बोले—"आलाहजरत, कमतरी की गुस्ताखी को माफ फरमाएँगे ! लखनऊ रजीडेन्सी के अन्दर रहने वाले अंग्रेज या दूसरे जो भी मुलाजिम पल्टनें-रिसाले वगैरह हैं, वे सभी अवध के नवाब के मातहत या मुलाजिम नमकख्वार नहीं कहे जा सकते। उन सबका सीधा ताल्लुक अपनी कम्पनी सरकार से है और कम्पनी का गवर्नर जनरल ही उनका मालिक और आका है।"

"आप यह क्या कह रहे हैं ?" वजीरअली खाँ ने कुछ और अधिक गम्भीर होकर कहा—"अभी चन्द सायत पहले आपने ही हमें बताया था कि रजीडेन्सी में रहने वाले अंग्रेजों और वहाँ की फौजों वगैरा के कुल खर्चे के बदले में हमारे खजाने से एक बहुत बड़ी रकम कम्पनी सरकार को अदा की जाती है। क्या आपका वह कहना गलत था ?" और वह अल्लामा के चेहरे पर निगाह जमा कर रह गए।

"कमतरी का वह अर्ज करना गलत नहीं था ?" अल्लामा ने कहा—"और उसी की माँग के लिए आज रजीडेन्ट ने बुलाया था।"

"तब, रजीडेन्ट वगैरह हमारे नौकर क्यों नहीं कहे जा सकते ?" हजरत ने लहजे को कुछ गरम करके कहा—"ये तो एक मामूली सी बात है। माहाना तनखाहें न दी जाकर साल के आखिर में एक मुश्त रकम चुका दी जाती है।" फिर तकिए का सहारा लेकर धीरे से कहा—"रजीडेन्ट ने खुले आम और पहले ही दिन हमारी तौहीन की थी।" चेहरा रौब-जलाल से तमतमा रहा था।

अल्लामा ने हजरत सलामत के चेहरे का रंग देखा। नीची निगाह कर के खामोश रह गए।

वजीरअली खाँ भी कुछ देर चुप रहे फिर बोले—"आप खामोश क्यों रह गए ? मसले को हमारे गले उतारिये ?"

अल्लामा ने निगाह उठाई, बोले—"आला हजरत ! गले क्या उतारूँ। ये बहुत पेचीदा मामला है।"

"कैसा पेचीदा मामला है ?" वजीरअली खाँ ने गौर से उनकी तरफ देख कर दोहराया।

"हजरत सलामत ?" अल्लामा ने कहा—"उस रकम की आदायगी सुलहनामा की शर्तों के मुताबिक की जाती है। मजबूरन हमें वह कसीर रकम चुकानी पड़ती है।"

"और अगर हम वह कसीर रकम अदा न करें ?"

"आला हजरत ऐसा ख्याल न फरमाएँ।" अल्लामा ने धीरे से कहा !

"क्यों ? तब क्या होगा ?" वजीरअली खाँ ने तकिया का सहारा छोड़ कर जोश के साथ कहा।

"बड़ा गजब हो जाएगा आलीजाह ?"

"क्या वह हमें नवाबी मसनद से हटा देंगे ? हमसे अवध की नवाबी छीन लेंगे ?" चेहरा सुर्ख हो रहा था।

इसके जवाब में अल्लामा कुछ कहने का साहस न कर सके। चुप बैठे रह गए।

वजीरअली खाँ जोश भरे लहजे से बोले—"नायबुल रियासत साहब ! आपको हमारी बात की ताईद करनी चाहिए। हमें ऐसा मशविरा देना चाहिए कि जिसके जरिए हम इन बदजात, खुले आम हमारी तौहीन करने वाले अंग्रेजों के जाल को काट कर फेंक दें। अपने को बिलकुल अजाद बना लें। लेकिन आप उसके बदले गजब हो जाने की बात कह कर हमें डरपोक बनाते हैं। मालूम होता है आप रजीडेन्ट से बहुत डरते हैं।"

"फिदवी तो हर तरह से हुजूर का ही नमकख्वार खिदमत गुजार है।" अल्लामा ने बड़े विनीत भाव से कहा—"और उसी ख्याल को लेकर अर्ज कर रहा हूँ कि सुलहनामा की शर्तों की मोखालफत हरगिज न की जाए। जैसा कि अभी तक होता आया है। बराबर वह रकम अदा होती चली आई है। चुका देने की इजाजत दे दी जाए। झगड़े को तूल देना मुनासिब नहीं है।"

"आप शायद कम उम्र समझ कर मुझे ऐसी गलत सलाह दे रहे हैं ? बल्कि ऐसा मालूम होता है कि अंग्रेजों से आपकी...." वह चुप रह गए। लहजा गुस्से से भरा हुआ था।

अल्लामा खामोश थे।

तभी नीलम ने कमरे में आकर हजरत के सामने कायदे से सिर झुका कर अर्ज किया—"दस्तरख्वान बिछ चुका है। हजरत सलामत तशरीफ ले चलें ? बेगम साहिबा इन्तजार कर रही हैं।"

वजीरअली खाँ ने झुंझलाहट भरी नजर से एक बार अल्लामा की तरफ देखा और मसनद से उठ कर नीलम के साथ जनानखाने की तरफ चल पड़े। अंतस में अंग्रेजों के विरोध की चिनगारी सी उड़ रही थी।

उनके जाते ही अल्लामा तफज्जुल हुसैन भी कमरे से बाहर हो गए।

१६

एक दिन तीसरे पहर के बाद नवाब मिरजा वजीरअली खाँ की खिलवत गरम हुई। मुजरा के लिए रहीमन जान बुलाई गईं। खिलवत में नवाब अवध के साथ केवल

उनके चार यार मर्दाने अली, दिलावर अली, रुस्तम खाँ तथा शेर खाँ ही शरीक थे। इनके सिवा और किसी को वहाँ ताक-झाँक तक की इजाजत न थी। कमरे के बाहर पहरे बैठे हुए थे।

रहीमनजान कुछ साँवले रंग की, यौवन की मदमाती तथा जवानी से खेलने-वाली कसबी थी। उस समय सारे लखनऊ में उसके रूप-सौन्दर्य तथा नाचने-गाने की शोहरत थी। रहीमन का रंग कुछ साँवला जरूर था; लेकिन चेहरे-मोहरे तथा अंगों की सुडौल बनावट ने उसके उस साँवले रंग में इस गजल की चमक पैदा कर दी थी कि उसके चेहरे पर नजर पड़ते ही आँखों में चकाचौंध सी भर जाती थी। इसके अलावा बड़ी-बड़ी आँखों के घुमाव-फिराव तथा होंठों की मुस्कानों में किसी कुशल जादूगरनी का जादू-टोना भरा मालूम होता था, फिर हाव-भाव, नाज-नखरे की तो वह जिन्दा तस्वीर ही कही जा सकती थी और उसके इन सब गुणों को और अधिक ऊँचा उठाने वाला उसका सुरीला राग-रागिनियों से भरा हुआ गला तो महफिल के लोगों पर बेहोशी का आलम पैदा करने वाला था ही।

मुजरा शुरू हुआ। सबसे पहले रहीमन के गले से वही मुबारकबाद सुनी गई, जो उसने मसनदनशीनी के दरबार में गायी थी। सुन कर उपस्थित चार यार तथा मिरजा वजीरअली खाँ झूम उठे। देर तक वाह-वाह की आवाजें गूँजती रहीं। इसके बाद उससे कोई गजल गाने की फरमायश की गई। रहीमन ने गजल गाना शुरू किया—

हुस्न की सूरत-व-सीरत देख ली—जिन्दगी ही में कयामत देख ली।
देखा घूँघट में कमर का शोर-शर—चाँदनी की भी शरारत देख ली।

इस शेर को पूर्ण हाव-भाव तथा बोलों को बता कर, उनका रूप खड़ा कर दिखलाने के बाद रहीमन ने एक अन्दाज तथा अपनी आँखों का चमत्कार दिखलाते हुए गजल का दूसरा शेर गाया—

माफ कीजे इक जरा सी बात पर,
आपके चेहरे की रंगत देख ली।

इस शेर को सुन कर तथा रहीमन की कला प्रदीणता को देख कर चार यार कट-कट गए। मगर मिरजा वजीरअली खाँ पर कोई प्रभाव न पड़ा। वह अपनी मसनद पर तकिए का सहारा लिए शांत ही बैठे रहे।

इसके बाद मुजरा खतम हो गया। रहीमन इनाम-इकराम अपने आँचल में बाँध कर रुखसत हो गई और उसके जाते ही महफिल भी खतम हो गई।

मिरजा वजीरअली खाँ वहाँ से उठ कर दूसरे कमरे में चले गए और चुपचाप पलंग पर लेट गए। इस वक्त उनके दिल में एक सोई हुई याद जाग उठी थी। उन्हें लालारुख याद आ रही थी। यद्यपि लालारुख की बात एक लम्बे अर्से से आई-गई सी हो गई थी। जिस दिन हजरत सलामत उसे घसीट कर अपने महलों के अन्दर ले जाने में

नाकामयाब रहे थे, उसी घड़ी से एक प्रकार से उन्होंने उसका पीछा छोड़ दिया था और उसे एकदम भूल से गए थे। आज तक एक दिन भी उसकी याद नहीं आई थी। लेकिन जाने क्यों आज उन्हें उसकी याद आ गई और तबीयत बोझिल सी हो गई। गरचे रहीमन का आकर्षण लालारुख के आकर्षण से बहुत दूर था। उसमें कोई बात ऐसी नहीं थी जो लालारुख की याद को उनके दिल में पैदा कर सकती। मगर याद आ ही तो गई।

संध्या हो रही थी। कमरे में हलका सा अंधकार छा रहा था और उसी अंधकार में हजरत सलामत खमोशी के साथ बोझिल सी तबीयत लिए पलंग पर लेटे हुए थे।

सहसा नीलम वहाँ आ पहुँची। नीलम लालारुख के सिलसिले में बहुत दिनों से हजरत सलामत की राजदार बन गई थी तथा पहले की बनिसबत बहुत अधिक उनके निकट पहुँच गई थी और इस निकट पहुँचने का परिणाम भी आशाओं से भरा हुआ था। हजरत सलामत ने उसे अपनी एक मुताई बेगम बना लेने का वादा कर दिया था। अतः उस आशा को अपने आँचल की गाँठ में बाँधे हुए नीलम हर वक्त हजरत के तलुवे सहलाने के लिए उनके पास मौजूद रहा करती थी।

नीलम ने कमरे में कदम रखते ही देखा कि कमरे में अंधकार भरा है और उसी अंधकार में हजरत सलामत चुपचाप पलंग पर लेटे हुए हैं। अतः आते ही उसने सबसे पहला काम यह किया कि कमरे में जितने भी झाड़, फानूस, कंबल आदि मौजूद थे सब को रोशन कर दिया। कमरा जगमगा उठा। इसके बाद नीलम हजरत सलामत के पलंग के पास आकर कायदे से खड़ी हो गई और बहुत मीठे स्वर से बोली—"ऐ, हुजूर, इस वक्त कैसे अकेले चुपचाप पलंग पर लेटे हुए हैं? अभी कुछ देर पहले तो महफिल गरम थी। रहीमन का मुजरा मुलाहजा फरमाया जा रहा था। गजलें सुनी जा रही थीं और उसके खतम होते ही लौंडी यह कैसी उदासी का आलम देख रही है?"

वजीरअली खाँ ने करवट बदली। नजर उठा कर नीलम की तरफ देखा और बोले—"नीलम! इस वक्त हमारे दिल में जोरों का दर्द हो रहा है।"

नीलम एकदम खजूर से नीचे गिर पड़ी। कुछ आश्चर्य और कुछ उदास लहजे से बोली—"या अल्ला? हुजूर इस वक्त यह क्या फरमा रहे हैं? अभी तक तो भले चंगे थे। उस छोकड़ी रहीमन का मुजरा मुलाहजा फरमा रहे थे। और उसके जाते ही दिल में दर्द पैदा हो गया? क्या वह निगोड़ी कोई मंतर पढ़ कर फूंक गई। अपने नाज नखरे और आँखों का जादू सिर पर चढ़ा गई? तब तो यह एक नया मर्ज पैदा हो गया?" फिर जरा मुस्करा कर—"लेकिन उसका चढ़ाया जादू कोई मुश्किल नहीं है। बहुत आसानी से उतारा जा सकता है।"

"यह दर्द, रहीमन का पैदा किया नहीं है?" वजीरअली खाँ ने कहा।

"तब?" नीलम ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"पुरानी चोट है। उसी में कसक पैदा हो गई है।"

"यह पुरानी चोट कौन सी है, जिसने एकाएक धरू दबाया है ?"

वजीरअली खाँ उठ कर बैठ गए और बोले—"सच बात यों है नीलम कि रहीमन की शकल-सूरत या हाव-भाव, नाज-नखरों का तो हमारे ऊपर कोई असर नहीं पड़ा। हमारी तबीयत जरा भी उसकी तरफ नहीं झुकी। हालाँकि उसने सैकड़ों तरह से, नयी-नयी अदाओं के साथ हमारे दिल को अपनी मुट्ठी में बन्द करने की काफी कोशिश की थी मगर नाकामयाब रही।"

नीलम मुस्करा कर बोली—"गुस्ताखी माफ फरमाएँ तो अर्ज करूँ....."

"क्या ?" वजीरअली खाँ ने उसके चेहरे पर नजर जमा दी।

नीलम बोली—"मेरी अर्ज यह है रहीमन का नाक-नक्शा, उसके छल-बल, नाज-अन्दाजे हुजूर को क्यों पसन्द नहीं आए ? उसकी जवानी और चेहरे पर के नमक ने तो एक तहलका मचा रखा है। आज सारा लखनऊ उस पर कटा-मरा जा रहा है। हजारों आशिकजार दिल थामें फिर रहे हैं।" फिर जरा मुस्करा कर कहा—"शायद हुजूर उसके नाज-नखरों को सँभालने से डर गए।"

वजीरअली खाँ मुस्करा कर बोले—"रहीमन के नाज-नखरे क्या चीज हैं ? हम तो दुनिया की बेजोड़ परीजमाल के नाज-अन्दाज और गमजे अपने हाथों पर सँभाल सकते हैं ?"

"तब फिर आज का यह दर्द कैसा क्या है ?" नीलम ने कहा—"कौन परी आसमान से उतर कर आपके दिल में दर्द पैदा कर गई ?"

वजीरअली खाँ एक क्षण चुप रहे। फिर नजर उठा कर नीलम की तरफ देखा, बोले—"नीलम ? आज वह सोई हुई पीर जाग उठी है। हमें लालारुख की याद आ रही है।"

"ऐ, उस कलमुँही का अब क्या नाम लेना ?" नीलम ने मुँह बिगाड़ कर घृणा भरे लहजे से कहा—"वह चुड़ैल गई जहाँ उसे जाना था। अब कभी ख्वाब में भी उसको याद न कीजिएगा।"

वजीरअली खाँ का चेहरा आश्चर्य से भर गया। उसी हालत में बड़े गौर से नीलम के चेहरे की तरफ देख कर कहा—"कहाँ गई वह ?"

"कहा न, जहाँ उसे जाना था।" नीलम उसी घृणा भरे लहजे से बोली—"जिसके साथ उसकी गाँठ बँधनी थी बँध गई, और अब तो वह एक बच्चे की माँ भी बन गई है। गोद में नौ-दस माह का बच्चा लिए पर्दों के अन्दर बैठी रहती है। अब उसके नाम पर थूक दीजिए।"

वजीरअली खाँ सकते में भरे कुछ देर तक खामोश बैठे रहे। फिर नजर उठा कर कहा—"जरा साफ तौर पर बता नीलम ? अभी हमारी समझ में कुछ नहीं आया। लालारुख कहाँ चली गई ? किसके साथ उसकी गाँठ बँध गई कि अब वह एक बच्चे को

गोद में लिए बैठी है ? यह तो हमें एक पहेली-सी मालूम होती है।"

"वाकई उस कलमुंही की कहानी एक पहेली ही है।" नीलम ने कहा।

"कैसी ? जरा उसे बयान तो कर ?" वजीरअली खाँ ने हैरत के साथ कहा।

नीलम एक सायत नीची नजर किए खामोश रही। फिर नजर उठा कर बोली—"क्या बयान करूँ, निगोड़ी की कहानी ? बात यों है—लौंडी पहले ही दिन से हजरत-सलामत के दर्द को अपने दिल का दर्द समझने लग गई थी। चाहती थी कि जिस तरह भी हो लाली को लाकर हुजूर के पहलू में बैठा दूँ। मगर क्या कहूँ, उस भुतनी के नाज-नखरों, खुद्दारी और बेतुके हुस्न की मतवाली को, किसी तरह भी हाथ न चढ़ा सकी। चोटी का पसीना ऐड़ियों से बहा देने पर भी कामयाबी हासिल न हो सकी। इसे उस निगोड़ी की बदकिस्मती कहूँ या अपनी दौड़-धूप की कमजोरी ? कुछ समझ में नहीं आता....."

वजीरअली खाँ बीच में बोल उठे—"तुमसे हमें कोई शिकायत नहीं है। हम जानते हैं कि तूने उसे लाने के लिए कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी थी।....खैर, अब यह बता कि वह किसके पल्ले पड़ गई ?"

"क्या अर्ज करूँ हुजूर ?" नीलम ने धीरे से कहा, फिर नजर उठा कर बोली—"जिस दिन हुजूर ने उसे घसीट कर अपने महल में लाना चाहा था और जाने कहाँ से नवाब बहू-बेगम साहिबा आ टपकी थीं, बन्दी ने उस वाकया को सुना था। गरचे दिल धक-धक करता था, लेकिन लौंडी तो हुजूर के दिल-दर्द से बँधी थी, इसलिए उस वारदात के आगे का हाल मालूम करने के लिए छटपटा उठी। खुद तो नवाब बहू-बेगम के महलों में पहुँचने को हिम्मत न कर सकी क्योंकि नकटी-बूची होने का डर दिल में समा रहा था। फिर भी जहूरन को सिखा-पढ़ा कर और हर तरह से सान पर चढ़ा कर नवाब बहू-बेगम के महलों की गुर्गी बना कर वहाँ भेज दिया था।"

वजीरअली खाँ ने फिर बीच में टोका—"यह जहूरन कौन थी ?"

"जहूरन मेरी एक मिलने वाली नवाब बहू-बेगम के महलों में खिदमतगुजारी पर मामू शमसुलनिसा बांदी की नौजवान लड़की है। खैर, अब हुजूर उस घसीट और खींचातानी की वारदात का नतीजा गोशगुजार फरमाएँ। लेकिन यह याद रखें कि जो कुछ मैं अर्ज करूँगी, वह एक-एक बोल जहूरन के मुँह से निकला हुआ है। मेरा उसमें एक हर्फ भी शामिल नहीं है।"

"खैर ?" वजीरअली खाँ ने कहा—"जहूरन ने कैसा क्या बयान किया ?"

नीलम कंधे पर आँचल सँभाल कर बोली—"जहूरन ने मुझे बताया कि वारदात की उसी रात की सुबह को जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम साहिबा ने आला हजरत नवाब आसफुद्दौला बहादुर को अपने रुबरू तलब फरमाया और इस वारदात के बारे में करीब एक घन्टे तक उनसे बात-चीत की। क्या बात-चीत की, उसका पता जहूरन को

नहीं लग सका। उसके बाद बहू-बेगम ने नवाब नाजिर मिरजा तहसीनअली खाँ को अपने पास बुलाया।"

वजीरअली खाँ फिर बीच में बोल उठे—"उस बदजात नवाब नाजिर तहसीन अली खाँ ने ही हमें दादी अम्माँ के महलों के अन्दर जाने से रोका था। कहा था कि आपके लिए ड्योढ़ी बन्द है। इस महल के अन्दर आपके कदम रखने का जनाब आलिया का हुक्म नहीं है।"

"वह तो मुझे भी उसी दिन मालूम हो गया था, क्योंकि मैं तो बराबर टोह में लगी रहती थी।....अब आगे की बात सुनिए। बहू-बेगम ने नवाब नाजिर को आपके पहले पैगाम से लेकर और पिछले रात तक की सारी वारदात सुना कर कहा—हम लाली को किसी सूरत में भी वजीरअली खाँ को नहीं सौंपना चाहते। लेकिन वह हाथ धोकर लाली के पीछे पड़ा है। मिरजा अमानी का दुलारा है, इसलिए किसी तरह का झगड़ा खड़ा करना भी हम मुनासिब नहीं समझते। अब इस बारे में तुम्हारा क्या मशविरा है, जैसा कहो वैसा हम करें। तब नवाब नाजिर ने अर्ज किया—जनाब आलिया, मैं क्या अर्ज करूँ? इतना जरूर दावे के साथ अर्ज कर सकता हूँ कि आलाहजरत के बाद मिरजा वजीरअली खाँ ही लखनऊ के नवाब होंगे। ऐसी सूरत में लाली के लिए खतरा जरूर पैदा हो सकता है। इसलिए बेहतर यही मालूम होता है कि लाली बहुत जल्दी किसी दूसरे के सिपुर्द कर दी जाए। बल्कि खामोशी के साथ उसका निकाह पढ़ा दिया जाए।"

"बड़ा फितरती है नवाब नाजिर?" वजीरअली खाँ ने धीरे से किन्तु गरम लहजे से कहा।

नीलम बोली—"ऐ, नवाब नाजिर के फितरती होने में क्या शक है। इस मामले में सारी कारिस्तानी उन्हीं की है। उन्हीं की इसलाह से उसी रात में चुपचाप बहू-बेगम ने लाली को निकाह पढ़ा कर ससुराल भेज दिया था। किसी को कानो-कान उस शादी की खबर नहीं हो सकी थी।"

"अच्छा तो किसके साथ उसका निकाह पढ़ा कर वह ससुराल भेज दी गई थी?" वजीरअली खाँ ने गौर से नीलम की तरफ देख कर पूछा।

नीलम बड़े इतमीनान से बोली—"जहूरन ने बताया था कि बहू-बेगम ने नवाब नाजिर से यही पूछा कि किसके साथ उसकी गाँठ बाँधी जाए? नवाब नाजिर ने दो-तीन नवाबजादों के नाम उनके सामने पेश किए। लेकिन उन्हें बहू-बेगम साहिबा ने पसंद नहीं फरमाया। बल्कि कहा कि इन नामों से तो हमें यही बेहतर मालूम होता है कि हम अपना दिल कड़ा करके वजीरअली खाँ से ही लाली का निकाह पढ़ा दें—ऐ, हुजूर अगर उस वक्त नवाब नाजिर आपकी मुखालफत न करते, जरा भी नमक की वजाते, आज के दिन का ख्याल रखते, तो इसमें तनिक भी शक-शुभा नहीं कि लाली उसी दिन आपको मिल जाती। मगर नवाब नाजिर जाने क्यों हुजूर के...."

वजीरअली खाँ के चेहरे पर सुर्खी दौड़ रही थी। गरम स्वर से बोले—"समझूंगा उस दोजखी कुत्ते नवाब नाजिर के बच्चे को ?" फिर नीलम की तरफ देख कर कहा—"तब क्या कहा उस मरदूद नवाब नाजिर ने ?"

नीलम बोली—"उन्होंने आपकी पूरी मुखालफत करने के बाद आप के सौतेले भाई रजाअली खाँ का नाम नवाब बहू-बेगम के सामने पेश करके काफी जोर डाला। बहू-बेगम उनके इसलाह मशविरे में आ गईं। नवाबजादे रजाअली खाँ को पसंद कर लिया, मगर उस काम को पूरा करने की सारी जिम्मेदारी नवाब नाजिर के सिर पर रख दी। और यह भी कह दिया कि आज रात में ही निकाह पढ़ा दिया जाए ? नवाब नाजिर ने उसी वक्त से दौड़ लगाना शुरू कर दिया। जाकर चुपचाप मिरजा रजाअली खाँ और उनकी वाल्दा को राजी कर लिया। इधर बहू-बेगम ने निकाह की सब गुप-चुप तैयारी कर लीं और आधी रात के सन्नाटे में काजी अयानतउल्ला को बुला कर निकाह पढ़ा दिया गया। लाली मिरजाअली के साथ उनके महल में चली गई।" फिर मुँह बिगाड़ कर कहा—"मुँह काला कर गई।"

वजीरअली खाँ गुस्से से भरे हुए दाँत पीस कर बोले—"खैर, लालारुख ससुराल गई या दोजख में, अब हमें उससे कोई मतलब नहीं। लेकिन हम उस नमकहराम, पाजी, दोजखी कुत्ते नवाब नाजिर को कल ही समझ लेंगे। देखें वह बदजात अपने को क्या समझता है ?"

"नवाब नाजिर ने हुजूर के साथ पूरी दगा की।" नीलम ने धीरे से नीची नजर किए हुए कहा।

वजीरअली खाँ का चेहरा सुर्ख होकर गुस्से से तमतमा रहा था वह चुप बैठे थे। नीलम ने धीरे से पलकें उठा कर उनकी तरफ देखा। सहम सी गई। धीरे से बोली—अब हुजूर मुझे इजाजत दें ?"

वजीरअली खाँ कुछ नहीं बोले। नीलम सिर झुका कर वहाँ से चली गई। वजीर-अली खाँ पलँग पर लेट गए।

१७

उस सारी रात नवाब वजीरअली खाँ को नींद नहीं आई। रह-रह कर लालारुख की याद के साथ नवाब नाजिर की बेजा हरकत याद आ जाती थी। बार-बार विचार आता—अगर वह पाजी नवाब नाजिर उस वक्त दादी अम्माँ को उलटा-सीधा न समझाता, उनके दिल में हमारी खिलाफत को और अधिक मजबूत न बनाता और रजाअली खाँ का

नाम उनके आगे न रखता तो निस्सन्देह लालारुख हमें मिल जाती। उस हरामी के पाजीपने और दगाबाजी के कारण ही लालारुख रजाअली खाँ को सौंप दी गई।

हजरत तेजमिजाज और नाक पर गुस्सा रखने वाले तो थे ही। इस प्रकार के विचारों के आते ही दाँत पीसने लग जाते थे। मुट्ठियाँ बँध जाती थीं और जी में यही आता था कि इसी वक्त उस हरामखोर दोजखी कुत्ते नवाब नाजिर को बुला कर उसकी हरामखोरी का बदला चुका लूँ। अपनी तलवार से उसकी गरदन उड़ा दूँ!

इसी प्रकार के विचारों तथा क्रोध के आवेश में करवटें बदलते हुए रात तो चली गई। सुबह का उजाला चमक उठा। लेकिन नवाब के दिल-दिमाग से नवाब नाजिर से बदला चुकाने की बात तिल बराबर भी इधर से उधर न हुई। उसी तरह घर बनाए जमी बैठी रही।

पहर दिन चढ़ जाने के बाद अपने कमरे की मसनद पर जम कर हजरत वजीर-अली खाँ ने चार-छः चुस्त बरकंदाज चोबदारों को अपने सामने बुला कर हुक्म सुनाया—"अभी जाकर उस नमकहराम नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ को पकड़-बाँध कर हमारे सामने ले आओ। वह हरामी का पिल्ला जहाँ भी जिस तहखाने में हो तलाश कर लाया जाए।" लहजा गुस्से से भरा हुआ था। फिर धीरे से उसी जोश की हालत में कहा—"देखूंगा उस दगावाज दोजख के कीड़े को, कैसा सलाहकार और कितना हमारा मुखालिफ है।" चेहरा लाल हो रहा था। क्रोध से नथुने फड़क रहे थे, तेवर चढ़ रहे थे। आँखों से खून-सा टपका पड़ रहा था।

आदेश पाकर बरकन्दाज चोबदार नवाब नाजिर की गिरफ्तारी के लिए उनके घर की तरफ दौड़ पड़े।

इधर चार यार आकर हजरत सलामत की खिदमत में हाजिर हुए और हजरत के चेहरे का रंग देख कर सहम गए। समझ न पाए कि आज सुबह-सुबह हजरत का रंग बेरंग क्यों है? खुदा खैर करे। चेहरे का यह गैजोगजब जाने किसको मिटा देने के लिए तुला बैठा है। खड़े के खड़े रह गए। वजीरअली खाँ ने उनकी तरफ देखा और आँखों के इशारे से बैठने की इजाजत दी। चार यार अपने-अपने स्थानों पर बैठ गए, लेकिन किसी की हिम्मत न हुई कि इस रंगत के बारे में हजरत से कुछ पूछ सके। चारो खामोश बैठे कभी एक दूसरे के चेहरे की तरफ देखते और कभी अपनी जिज्ञासा भरी नजरों को हजरत सलामत के चेहरे पर जमा देते थे। यारों के दिलों की धड़कने बढ़ने लगीं।

अन्त में नवाब अवध हजरत मिरजा वजीरअली खाँ ने अपनी नजर उठाई। मर्दानअली की तरफ रुख करके कहा—"देखा उस हरामी के पिल्ले नवाब नाजिर को? कितना बदजात बदनीयत और हमारा मुखालिफ साबित हुआ है वह?"

चार यारों में से कोई भी हजरत के इस फरमाने का मतलब न समझ सका। मर्दानअली तो हक्का-बक्का सा उनके चेहरे की तरफ देख कर रह गया। हाँ, हूँ, कुछ भी

न कर सका।

हजरत ने फिर कहा—"उसी की वजह से लालारुख हमें नहीं मिल सकी थी। उसी ने रखना अन्दाजी की थी।"

सुन कर मर्दान अली बोला—"यह तो आला हजरत की जबान से आज सुनने में आ रहा है। अगर ऐसा है, तो वाकई, बिला किसी शक-शुभा के नवाब नाजिर तहसीन-अली खाँ ने यह बड़ी बेजा हरकत की थी।"

दिलावर अली ने टीप जमाई—"नवाब नाजिर ने यह बहुत बड़ी गद्दारी की। काबिल माफी नहीं कही जा सकती।"

"काबिल माफी ?" वजीरअली खाँ ने उसकी तरफ निगाह फेरी और तैश भरे लहजे से कहा—"उस दोजखी कुत्ते का सर हम अपनी तलवार से उड़ाएँगे ? जब तक हम ऐसा नहीं कर लेते हमें चैन नहीं है।"

एक चोबदार ने कमरे में दाखिल होकर अर्ज किया—"आलीजाह ! नवाब नाजिर घर पर मौजूद नहीं हैं। नवाब बहू-बेगम साहिबा की तरफ जाने का पता चला था। वहाँ भी पहुँच कर उनकी तलाश की गई। मगर एक लौंडी की जबानी मालूम हुआ कि वह कुछ घबराए हुए से थे। यहाँ आकर चन्द सायत बेगम साहिबा से कुछ राजदार बातें कीं और चले गए। शायद वह यहाँ से नायबुल रियासत की हवेली की तरफ गए हैं। वहाँ·····

वजीरअली खाँ जोश भरे स्वर से बीच में बोल बठे—"जाने दो, तुम लोगों से कुछ नहीं हो सकेगा। हमारा घोड़ा मँगाओ। हम खुद वहाँ जाते हैं और नायबुल रियासत के सामने ही उसकी कुर्बानी करेंगे।"

चोबदार चला गया। उसके जाते ही नवाब अवध ने मसनद से उठ कर विलायती तलवार कमर में लटकाई और कमरे से बाहर आ गए। चार यार उनके पीछे लगे थे।

दोपहर का समय करीब था। नायबुल रियासत तफज्जुल हुसैन खाँ अपनी हवेली के दीवानखाने में कालीन पर बैठे तकिए का सहारा लिए हुक्के का मजा ले रहे थे। सहसा बदहवासों की सूरत बनाए, घबराए हुए से नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ आकर अल्लामा के कदमों पर लोट गए। उनकी साँस फूल रही थी, आँखों से आँसुओं का तार बँधा हुआ था। होश-हवास अपने ठिकाने पर नहीं थे।

खान अल्लामा ने हुक्के का मजा लेना छोड़ दिया। आश्चर्य भरी नजरों से उनकी हुलिया को देखा। फिर कदमों पर से उठा कर पूछा—"आखिर इस बदहवासी और घबराहट की वजह क्या है ?"

नवाब नाजिर ने सिर ऊपर को उठाया। आँखों में आँसुओं के मोती लिए बोले—"मेरी जान और इज्जत की हिफाजत कीजिए ? मुझे कहीं छिपाइए, उसके बाद सारी हकीकत अर्ज करूँगा।"

"अरे यह भी तो कहो कि तुम्हारी जान और इज्जत के पीछे इस वक्त कौन पड़ गया है ? किससे इस कदर डर रहे हो ?" अल्लामा ने पूछा।

"मुझ पर शाही अताब फट पड़ा है। नवाब वजीरअली खाँ अपनी तलवार से मेरा सर उड़ाना चाहते हैं।" नवाब नाजिर ने कहा—"अब इस लखनऊ में एक आप ही मेरी जान की हिफाजत कर सकते हैं।" और नवाब नाजिर ने पुनः अल्लामा के कदमों पर माथा टेक दिया।

खान अल्लामा यों तो हजरत सलामत की मिजाज की तेजी को पहले से जान-सुन चुके थे, और उस दिन अच्छी तरह से देख समझ भी चुके थे, जिस दिन वह रेजीडेन्ट के तकाजे की बात सुनाने गए थे। इसलिए उन्होंने नवाब नाजिर पर टूट पड़ने वाली विपत्ति को गलत न समझा। उसी समय नवाब नाजिर को अपनी हवेली की भीतरी बारहदरी में भेज दिया और उनकी रक्षा के लिए मीर मुजहर कुमैदान तथा चार-छः हट्टे-कट्टे हथियारबन्द खिदमतगारों को वहाँ तैनात कर दिया।

अभी इस कार्य से निपट कर अल्लामा ने इतमीनान की एक ही साँस ली थी कि देखा—नवाब अवध हजरत वजीरअली खाँ चार यारों सहित घोड़ों पर सवार उनके दीवानखाने के दरवाजे के सामने खड़े हुए हैं। सब की कमरों में तलवारें लटक रही हैं। हजरत सलामत का चेहरा गैजोगजब से भरा हुआ है।

अल्लामा तफज्जुल हुसैन उठ कर बाहर आ गए और अदब के साथ उनके आगे सिर झुका दिया।

युवक नवाब वजीरअली खाँ आवेश से भरे हुए तेज स्वर से बोला—"कहाँ है वह नमकहराम, दोजखी कुत्ता, हमारा मुखालिफ नवाब नाजिर ? जल्द उसे हमारे रुबरू लाइए।"

खान अल्लामा ने बहुत ठण्डे लहजे से कहा—"आला हजरत ? नवाब नाजिर कमतरी की हवेली की तरफ तो नहीं आए। और मैं अर्ज भी नहीं कर सकता कि इस वक्त वह कहाँ हैं।"

वजीरअली खाँ कुछ अधिक आवेश भरे स्वर से बोले—"आप झूठ बोल रहे हैं ? वह नाबकार, पाजी, कमीना, बदजात, नवाब नाजिर कहलाने वाला नमकहराम आकर आपके यहाँ छिपा है। उसे निकाल कर हमारे सामने लाइए। हम अपनी तलवार से उसकी गर्दन उड़ाएँगे।" और वह दायां हाथ तलवार की मूठ पर ले गए। चेहरा शाही तमतमाहट से भरा सुर्ख हो रहा था।

खान अल्लामा ने विनीत स्वर से इतमीनान के साथ अर्ज किया। "फिदवी झूठ नहीं अर्ज कर रहा। हुजूर के सिर की कसम देकर अर्ज कर रहा है। नवाब नाजिर मेरी हवेली में नहीं है।"

हजरत सलामत कुछ अधिक तेजी के साथ बोले—"आपकी कसम गलत है।

सरासर झूठ है ? यकीनन वह नौबकार आपके यहाँ छिपा है। हमें हमारे चोबदार बरकन्दाजों ने सही व सच्ची खबर दी है।"

अल्लामा फिर भी ठण्डे लहजे से बोले—"आला हजरत ! गुस्से को थूक दीजिए ? ख्याल फरमाइए, फिदवी आपसे गलत अर्ज कर सकता है ? हजरत सलामत को उन दो कौड़ी के चोबदार-बरकन्दाजों के कहने का ऐतबार है और कमतरी की अर्ज और कसम झूठी मालूम हो रही है ? हुजूर का बनाया हुआ एक नायबुल रियासत चोबदारों और बरकन्दाजों की भी हैसियत से नीचे गिरा हुआ समझा जा रहा है ?"

युवक नवाब हजरत वजीरअली खाँ ने खून का घूँट गले में लेकर कुछ बोलने के बदले अपने घोड़े की रास को दरेदौलत की तरफ मोड़ दिया। चार यार भी उनके पीछे थे।

हजरत सलामत के वहाँ से चले जाने के बाद खान अल्लामा ने इतमीनान के साथ नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ को एक जनाने मयाने में सवार करा कर तथा कुछ अपने खास विश्वासी व्यक्तियों-खिदमतगारों को उनकी हिफाजत की पूरी जिम्मेदारी सौंप कर रेजीडेन्ट के मीरमुंशी बख्शी मोहम्मद इसहाक खाँ के पास रेजीडेन्सी खाना कर दिया। एक रुक्के में वारदात की पूरी कैफियत भी लिख कर मीर मुंशी के पास भेज दी। मीर मुंशी मोहम्मद इसहाक खाँ ने नवाब नाजिर के पहुँचते ही जाकर सारा किस्सा रेजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन के गोशगुजार किया। फिर उन्हीं की इजाजत से रेजीडेन्सी के अहाते के अन्दर ही नवाब मिरजा खलील के बँगले में नवाब नाजिर को रख दिया और हर तरह से उन्हें इतमीनान भरोसा दिला दिया।

खान अल्लामा के यहाँ से दरेदौलत पर पहुँच कर मिरजा वजीरअली खाँ दस्तरख्वान पर बैठे लेकिन लिया-दिया-सा खा-पीकर पुनः अपने खास कमरे में आकर मसनद पर जम गए। उनका क्रोध अब भी शान्त नहीं हुआ था—जैसे का तैसा मौजूद था। उन्होंने अपने कुछ विश्वासी तथा चुस्त-चालाक गुर्गों को बुला कर नवाब नाजिर का पता लगाने के लिए लखनऊ में फैल जाने का हुक्म दिया। उन्हें काफी इनाम-इकराम देने का वादा करके ताकीद कर दी, समझा दिया कि तुम लोग सिर्फ इतना ही पता लेकर हमें आगाह करो कि वह मरदूद कहाँ जाकर छिपा है ? कहाँ मौजूद है ? आगे हम खुद देख-समझ लेंगे। आदेश पाकर गुर्गे लखनऊ के कोने-कोने में फैल गए और हर गली-कूचा घर-द्वार हवेली-महलों में पहुँच कर नवाब नाजिर की गंध सूँघने लगे।

इधर चार यार तथा हजरत के दो-चार अन्य मुसाहिब भी आकर हजरत की खिदमत में हाजिर हो गए और इधर-उधर की मनगढंत बातें करके हजरत के क्रोध को और बढ़ाने लगे। आग में घी की आहुति देने लगे। हजरत के क्रोध का पारा अपनी सीमा से आगे बढ़ने लग गया।

संध्या से कुछ पहिले दो गुण्डे गुर्गों ने हजरत के सामने हाजिर होकर पहले अपनी

कारगुजारी की हाँक लगाई। चोटी का पसीना ऐड़ी से बहा देने की बात कही कि नवाब नाजिर वाकई तौर पर पहले नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन की हवेली में छिपे हुए थे। जिस समय आला हजरत अल्लामा के यहाँ तशरीफ फरमाए हुए थे, नवाब नाजिर अन्दर हवेली में मौजूद थे। अल्लामा ने उनकी हिफाजत के लिए हजरत सलामत से झूठ बोल कर टाल दिया था। हजरत के वहाँ से चले आने पर अल्लामा ने नवाब नाजिर को बन्द जनानी पालकी के अन्दर बैठा कर बहिफाजत रेजीडेन्सी में भेज दिया था और इस वक्त नवाब नाजिर रेजोडेन्ट की हिफाजत में रेजीडेन्सी में मौजूद हैं।

सुनते ही युवक नवाब अवध का क्रोध बढ़ा। जोश में उबाल आया, चेहरे पर तमतमाहट ने जोर पकड़ा और वह मसनद से उठा कर खड़े हो गए, घोड़े मँगाए गए, तलवारें लटकाई गईं और हजरत चार यारों तथा मौजूदा मुसाहिबों सहित घोड़ों पर सवार होकर रेजीडेन्सी की तरफ चल पड़े।

रजीडेन्सी में पहुँच कर रेजीडेन्ट से मुलाकात चाही। रेजीडेन्ट ने अपनी कोठी से बाहर आकर कायदे से नवाब अवध का स्वागत किया। फिर अपने कमरे में ले जाकर कुर्सी पर बैठाया। चार यार तथा मोसाहब लोग भी हजरत के पीछे कुर्सियों पर जम गए। हजरत के चेहरे पर वही तमतमाहट, वही सुर्खी और वही क्रोध-आवेश मौजूद था।

चूंकि रेजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन सुबह से दोपहर तक की वारदात से वाकिफ हो चुके थे और इस वक्त नवाब नाजिर उन्हीं की इजाजत से रेजीडेन्सी में आराम के साथ छिपे बैठे थे। इसलिए लिम्सडन को हजरत सलामत के तशरीफ लाने की वजह ढूंढनी-खोजनी नहीं पड़ी। समझ गए कि हजरत सलामत नवाब नाजिर को अपने कब्जे में करने के लिए तशरीफ लाए हैं। फिर हजरत के चेहरे का रंग इस समझ-बूझ की पूरी गवाही भी दे रहा था।

अतः मिस्टर लिम्सडन ने बहुत मुलायम लहजे से हजरत की दिलजोई करते हुए और तसल्ली बँधाते हुए कहा—"हमने सुना है कि आज सुबह से आलाहजरत नवाब नाजिर की तलाश में परेशान हैं। हजरत सलामत बेकार यह परेशानी उठा रहे हैं। इधर-उधर दौड़ लगा रहे हैं और गुस्से की आग से अपने दिल को जला रहे हैं। नवाब नाजिर आपका पुश्तैनी नमकख्वार है, कहाँ जाएगा...."

"वह हमारा नमकख्वार नहीं नमकहराम है।" वजीरअली खाँ बीच में बोले।

"खैर ऐसा ही सही ?" रेजीडेन्ट ने मुस्कराते हुए ठण्डे-मीठे लहजे से कहा—"लेकिन आलाहजरत के मिजाज की तेजी, चेहरे का रौब-दाब और गुस्सा-गैजोगजब भी तो कोई चीज है। एक छोटे कारकुन में उसे बर्दाश्त करने की ताकत कहाँ से पैदा हो सकती है ? इसलिए नवाब नाजिर अपनी जान बचाने और इज्जत आबरू को कायम रखने के लिए कहीं छिप रहा होगा। जब आलाहजरत का मिजाज ठण्डा हो जाएगा, वह खुदबखुद हाजिर होकर हजरत सलामत के कदमों पर लोट जाएगा और अपने कसूरों

की माफी का ख्वास्तगार होगा।"

रजीडेन्ट की इस ठण्डी हवा ने हजरत वजीरअली खाँ के गैजोगजब के शोलों को और अधिक भड़का दिया। उसमें से चिनगारियाँ उड़ने लगीं। वजीरअली खाँ अच्छी तरह समझ गए कि गुर्गों ने हमें सही खबर दी है। रजीडेन्ट ने ही उस मक्कार को अपने यहाँ छिपा रखा है। और उसके मददगार बन कर मीठी-मीठी बातों से हमें तसल्ली दे रहे हैं। हमारे गुनाहगार कुसूरवार को इन्हें अपने यहाँ छिपा कर रखने, पनाह देने का इख्तियार क्या हासिल है ? हमारी हुकूमत में, हमारी अन्दरूनी बातों में दखल देने वाले यह कौन होते हैं ?

ऐसा सोच-विचार कर हजरत वजीरअली खाँ ने कुछ तेजी के साथ कहा—"हमें यकीन हो गया कि आपने ही उस मक्कार गुनाहगार को अपने यहाँ छिपा रखा है और उसके जान की हिफाजत करना चाहते हैं। यह बिलकुल गलत है। आपको कोई हक हासिल नहीं है कि हमारे अन्दरूनी मामले में दखल दें ? हमारे गुनाहगार को अपने यहाँ छिपा कर रखें और उसकी मदद करें। वह कसूरवार है। उसे मनचाही सजा देने का हमें इख्तियार हासिल है। अपनी रियासत और अपनी रिआया के मालिक-मुख्तार हम हैं, आप नहीं है ? इसलिए मुनासिब यही है कि आप उस पाजी, नमकहराम को हमारे हवाले कर दें। वरना वह यहाँ जहाँ छिपा होगा हम खुद तलाश कर उसे घसीट ले जाएँगे।"

युवक नवाब अवध की इस गर्मी ने रजीडेन्ट के मिजाज को भी आँच दी। उनके मिजाज को भी गरम करना चाहा। लेकिन मिस्टर लिम्सडन पचास वर्ष की आयु के तजुर्बेकार जमाना दीदा अंग्रेज थे। उन्होंने उस आँच का विशेष प्रभाव नहीं पड़ने दिया। केवल लहजे को ही थोड़ा रूखा बना कर कहा—"आलाहजरत को मालूम होना चाहिए कि यह रजीडेन्सी है। अवध के नवाब का घर नहीं है। यह कम्पनी सरकार का घर है। इस रजीडेन्सी की चारदीवारी के अन्दर कम्पनी सरकार की ही हुकूमत है। कम्पनी सरकार की ही ताकत यहाँ काम करती है। इस चारदीवारी के अन्दर से किसी को घसीट ले जाने की नवाब अवध के बाजुओं में ताकत नहीं है। इसलिए हजरत सलामत ऐसे गलत ख्याल को अपने दिल-दिमाग से निकाल दें।"

वजीरअली खाँ कुछ नहीं बोले। किन्तु उनका चेहरा गुस्से से कुछ अधिक लाल हो गया।

दो क्षण शान्त रहने के बाद रेजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन ने ठण्डे स्वर से कहा—"आलाहजरत, जरा ठण्डे दिल से गुस्से को थूक कर ख्याल फरमाएँ। अगर इस वक्त हम नवाब नाजिर को आपके हवाले कर दें और आप उसे अपने गैजे-गजब का शिकार बना लें, अपना हौसला पूरा कर लें, उसके बाद क्या होगा ? खूनखराबी के बारे में जब हमारी कम्पनी सरकार हमसे जवाब-तलब करेगी, तो हम क्या जवाब देंगे ?"

हजरत वजीरअली खाँ फिर भी कुछ नहीं बोले। उसी तरह गुस्से से भरे बैठे रहे।

लिम्सडन ने फिर कहा—"आलाहजरत का वह गुनहगार एक अमानत की शकल में हमारे पास मौजूद है। हम आजकी इस वारदात की पूरी कैफियत गवर्नर जनरल को लिख कर भेजते हैं। वहाँ से जो हुक्म आएगा उसकी तामील करना हमारा फर्ज होगा। अगर गवर्नर जनरल का हुक्म उसे आला हजरत के हवाले कर देने का आएगा, उस वक्त उसे आपके सिपुर्द कर देने में कोई उजुर न होगा। इसलिए इस वक्त यही मुनासिब मालूम होता है कि हम और आप दोनों गवर्नर के हुक्म का इन्तजार करें।"

वजीरअली खाँ उठ कर खड़े हो गए और आवेश से भरे हुए कमरे से बाहर आ गए। चार यारों तथा मुसाहिबों सहित घोड़ों पर सवार हुए और घोड़ों को दरेदौलत के रास्ते पर दौड़ा दिया।

संध्या के अंधकार ने धरती को अपना काला आवरण ओढ़ा दिया था। दीपक जलाए जा रहे थे। ठीक उसी समय अवध राज्य के भाग्य विधाता अपने चार यारों तथा मुसाहिबों सहित दरेदौलत पर आकर घोड़ों पर से उतरे। दौड़-झपट कर साईसों ने घोड़े थाम लिए। टहलाने के लिए एक तरफ ले गए। हजरत वजीरअली खाँ सीधे अन्दर जाकर अपने विशेष कमरे में मसनदनशीन हो गए। दूसरे सभी साथी भी उनके पीछे लगे आकर कालीनों पर जम गए। सभी लोग खामोश गम्भीर चेहरे लिए बैठे थे। नवाब अवध के चेहरे पर गर्मी की सुर्खी मौजूद थी। भौंहें खिच रही थीं, मगर नजर नीची थी। ऐसा मालूम हो रहा था मानो हजरत सलामत अपनी किसी खोई हुई वस्तु को मसनद पर ढूंढ रहे हैं। मन में अनेक प्रकार के विचार उठ रहे थे। उनके दिल पर अंग्रेजों की ओर से घृणा की एक पर्त तो उसी दिन जम गई थी जिस दिन नायबुल-रियासत ने उन्हें रेजीडेन्ट के तकाजे की बात सुनाई थी। मैल की उस पर्त पर आज यह दूसरी तह जमी। बल्कि आज अंग्रेज रेजीडेन्ट ने उनके गुनहगार को अपने यहाँ छिपा कर, उसके संरक्षक बन कर खुले तरोके पर उनकी शक्ति को चुनौती दी थी। उसे उनके सिपुर्द न करके साफ तौर से तौहीन की थी। इस तौहीन तथा जिल्लत को लेकर हजरत सलामत के पेट में खलबली सी पड़ रही थी। ऐसे ही पछतावे और सोच-विचारों में डूबे रहने के कारण उनके दिल में मतली सी होने लगी थी। खामोश बैठे रहना मुश्किल हो रहा था। अतः हजरत ने सिर उठा कर मौजूदा यारों-मुसाहबों की तरफ देखा। चार यार वगैरह संभल कर बैठ गए और हजरत के मुँह से निकलने वाले शब्दों को सुनने का इन्तजार करने लगे।

हजरत ने कहा—"कैसा मजाक है ?....इन अंग्रेजों ने हमारे घर में घुस कर कैसा रौब जमा रखा है ? इनके नजदीक नवाब अवध और उसकी हुकूमत कोई चीज ही नहीं है। गोया यही अवध रियासत के मालिक और सफेद-सियाह करने वाले खुदा हैं।"

दिलावरअली ने टीप जमाई—"अंग्रेज बच्चे अपने को एक मुल्क-अवध का ही नहीं सारी दुनिया का खुदा समझते हैं।"

"कितने हैरत की बात है?" वजीरअली खाँ ने होठों पर सूखी मुस्कान लाकर कहा—"रजीडेन्सी की चारदीवारी को हमारे कबजे और लखनऊ से अलग करार दे रखा है। उस जमीन पर नवाब अवध का कोई हक-इख्तियार ही नहीं? यह विलायत से उठा कर उसे यहाँ ले आए थे? वाह, अच्छा मजाक है? हमारी हुकूमत, हमारे लखनऊ का कोई भी बदमाश, कोई भी गुनहगार, डाकू, लुटेरा, खूनी और हमारा दुश्मन जाकर रजीडेन्सी की चारदीवारी के अन्दर बैठ जाए फिर उसे किसी का डर-खौफ नहीं है? अंग्रेज उसकी हिमायत और हिफाजत के लिए तैय्यार हैं।"

इसके बाद जरा देर खामोशी रही। फिर मर्दान अली ने हजरत की तरफ देख कर कहा—"आलीजाह? ऐसी सूरत में हजरत की नवाबी और हुकूमत कोई हैसियत नहीं रखती। आज नवाब नाजिर का मसला सामने आया, कल कोई दूसरा नजर आएगा।"

मुसाहब वारिसअली ने संभल कर हजरत के चेहरे की तरफ देखा और कुछ विस्मय भरे लहजे से कहा—"आलम पनाह! फिदवी को तो नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन साहब की याद आ रही है। वह हजरत के कितने खैरख्वाह, कितने सच्चे वजीर आजम और कितने वफादार हैं? नवाब नाजिर को उन्होंने किस तरह अपनी हवेली में छिपा रखा था और बाद में किस तरीके से रेजीडेन्ट के पास भेज दिया?....बड़े हजरत हैं नायबुल रियासत साहब।"

"वह हमारे खैरख्वाह, नमकख्वार और वफादार नहीं हैं। अंग्रेजों के दोस्त हैं। उन्हें उन्हीं का गुरूर भी है।" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा। फिर नजर उठा कर कहा—"उनकी आज की यह कारगुजारी हमारे दिल पर नक्श हो गई है।"

इसके बाद कुछ देर वातावरण शान्त रहा। फिर हजरत वजीरअली खाँ वहाँ से उठ कर दूसरे कमरे की तरफ चले गए।

•

१८

खान अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ बड़े चतुर, अनुभवी, व्यवहारिक, कार्य कुशल तथा दूरदर्शी नायबुल रियासत थे। नवाब शुजाउद्दौला उनकी योग्यता को जानते-मानते थे। लेकिन किसी बात पर नवाब की नजर बदल जाने के कारण खान अल्लामा फैजाबाद छोड़ कर कलकत्ता चले गए थे। कलकत्ता में वह जनरल पाटर साहब के पास मीर मुंशी का पद पा गए थे। उन दिनों मौलवियों तथा मुंशियों की अच्छी कदर थी। खान अल्लामा

विद्वान मौलवी थे, इसलिए जनरल पाटर साहब इनके कार्य से बहुत प्रसन्न रहते थे और काफी इज्जत भी किया करते थे। उन्हीं के जरिए अल्लामा की पहुँच तथा जान-पहचान दूसरे अंग्रेज अफसरों से भी हो गई थी। एक-दो बार जनरल पाटर अल्लामा को गवर्नर जनरल से भी मिला लाए थे।

नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु तथा आसफुद्दौला की मसनदनशीनी के कुछ दिनों बाद नायबुल रियासत सरफराजुद्दौला नवाब हसन रजा खाँ के समय में नवाब अमीरुद्दौला मिरजा हैदरबेग खाँ मुल्के बन्दोबस्त के ओहदे पर थे। वह किसी कार्यवश कलकत्ता गए हुए थे। वहाँ उनकी भेंट अल्लामा से हुई। जानते-पहचान तो पहले से ही थे, बहुत कुछ समझा-बुझा कर लौटते समय अल्लामा को अपने साथ लखनऊ ले आए। और मौका पाकर नवाब आसफुद्दौला से अल्लामा का जिक्र किया। आसफुद्दौला भी उनसे अनभिज्ञ न थे। फैजाबाद में जब नवाब शुजाउद्दौला ने अल्लामा को अमीनुद्दौला सआदत-अली खाँ का उस्ताद बनाया था, उस समय आसफुद्दौला उनसे तथा उनकी योग्यता से परिचित हो चुके थे। अतः अल्लामा के कलकत्ता से लखनऊ आ जाने से आसफुद्दौला खुश हुए थे और उन्हें अपने दरबारियों में शामिल कर लिया था।

जब अपने अन्तिम दिनों में नवाब आसफुद्दौला ने महाराजा झाऊलाल के निर्वासन के सिलसिले में सरफराजुद्दौला हसन रजा खाँ से नाराज होकर उनसे नायबुल रियासत का ओहदा छीन कर उनको घर बैठा दिया था। उस वक्त उन्हें नायबुल रियासत के ओहदे के लिए किसी योग्य व्यक्ति की तलाश हुई थी। बहुतों पर उनकी नजर जमी-हटी, अन्त में अलमासअली खाँ को उन्होंने नायबुल रियासत का खिलअत बख्शना चाहा और अपनी इस तजवीज के विषय में लखनऊ के रजीडेन्ट से मशविरा लिया। रजीडेन्ट ने आला हजरत को जरा रुक जाने की सलाह देकर इस विषय में गवर्नर जनरल को सूचित किया।

चूंकि अल्लामा तफज्जुल हुसैन काफी दिनों कलकत्ता में रह चुके थे। लाट साहब से भी जनरल पाटर साहब के जरिए दो-चार बार मिल चुके थे, अतः गवर्नर जनरल अल्लामा की योग्यता, स्वभाव से परिचित होने के अलावा यह भी जानते थे कि अल्लामा अंग्रेज सरकार के सच्चे खैरख्वाह तथा वफादार हैं। उनका अवध के नायबुल रियासत के पद पर आसीन हो जाना आगे कम्पनी सरकार के हित में भी साबित हो सकता है। इस-लिए गवर्नर जनरल ने उस पद के लिए अल्लामा तफज्जुल हुसैन का नाम लिख कर भेज दिया और नवाब आसफुद्दौला ने उनके नाम को सहर्ष पसंद करके अल्लामा को नायबुल रियासत के ओहदे की खिलअत पहिना दी थी। और इस प्रकार नवाब आसफुद्दौला के अन्तिम दिनों में खान अल्लामा ने नायबुल रियासत का कार-बार संभाला था और तब से बराबर उसी ओहदे पर चले आ रहे थे। युवक नवाब वजीरअली खाँ भी उन्हें अपना एक बुजुर्ग समझते थे। उनकी काफी इज्जत भी करते थे और इसलाह भी मानते थे।

लेकिन युवक नवाब के दिल में अल्लामा की ओर से पहली गाँठ तो यह पड़ी थी कि रजीडेन्सी के खर्चे की जो एक करोड़ सोलह लाख रुपया की रकम कम्पनी सरकार को चुकाई जानी थी और लखनऊ का रजीडेन्ट जिसे माँग रहा था, तकाजे कर रहा था, उस कसीर रकम को युवक नवाब वजीरअली खाँ अपने खजाने से हरगिज नहीं देना चाहते थे, लेकिन अल्लामा तफज्जुल हुसैन ने अंग्रेज सरकार का वफादार बने रहने के लिए तथा लखनऊ के रजीडेन्ट से अपनी पटरी बैठाए रखने के अभिप्राय से चुपचाप, बिना हजरत वजीरअली खाँ को सूचित किए हुए अपने नायबुल रियासत के अधिकार से वह रकम नवाबी खजाने से निकाल कर रजीडेन्ट के हवाले कर दी थी। इसकी खबर हजरत वजीरअली खाँ को लगने पर वह कुड़मुड़ा कर रह गए थे और अल्लामा की ओर से उनके दिल में एक शिकन पड़ गई थी। लेकिन फिर भी काम चल रहा था। ज़ाहिरा तौर पर कोई बात नहीं मालूम हो रही थी।

लेकिन नवाब नाजिर की घटना ने दूसरा ही रूप उपस्थित कर दिया था। युवक नवाब हजरत वजीरअली खाँ अल्लामा से इस कदर नाराज हो गए थे, उनसे इतनी नफरत हो गई थी कि हजरत ने अल्लामा से मुलाकात करना छोड़ दिया था और उनको ओहदे से हटाने की फिक्र में थे। खान अल्लामा को भी हजरत के इस इरादे का पता चल चुका था, लेकिन अल्लामा चतुर व दूरदर्शी थे। अपनी ओर से पहल नहीं होने देना चाहते थे। रोजाना दरेदौलत पर हाजिर होते थे। जब-तब मुलाकात भी हासिल करना चाहते थे मगर उधर से कोई न कोई हीला-बहाना सामने आ जाता था। मुलाकात की नौबत एक दिन भी नहीं आने पाती थी।

फिर भी खान अल्लामा सिनरसीदा थे, जमाना देखे हुए थे। युवक नवाब वजीरअली खाँ की तरह फौरन ही जोश और गुस्से से भर जाने वाले न थे। अपनी पचास-पचपन वर्ष की आयु में उन्होंने दुनिया के बहुत से रंग देखे थे। बड़े लोगों, रईस नवाबों की सोहबत से लेकर बड़े-बड़े अंग्रेज अफसरों का भी सत्संग किया था। अनेक हुकूमतों के चढ़ाव-उतार भी अपनी आँखों से देखे थे। नवाब शुजाउद्दौला जैसे साहसी, तलवार के धनी तथा राजनीतिज्ञ का भी साथ किया था। अंग्रेजों से जिस प्रकार शुजाउद्दौला को झुकना पड़ गया अल्लामा को उसकी पूरी जानकारी थी अतः अल्लामा अच्छी तरह समझते थे कि मौजूदा जमाने में अंग्रेज सत्ता हिन्दुस्तान में अडिग-अचल है उसे डिगाने की किसी भी हुकमरां में शक्ति नहीं है। युवक नवाब वजीरअली खाँ की क्या बिसात है कि अंग्रेजों के मुखालिफ होकर हुकूमत कर सकें या उनकी सत्ता को हलका सा धक्का भी दे सकें। सिर्फ ऐसा गलत इरादा दिल में लाने से ही चारों खाने चित नजर आ सकते हैं।

युवक नवाब वजीरअली खाँ की नादानी नासमझी तथा जवानी के अंधे जोश पर गौर करते ही अल्लामा के दिल में हलचल सी पड़ जाती थी और उनकी आत्मा पुकार उठती थी कि लखनऊ की यह नवाबी अधिक दिन टिकती नजर नहीं आती। हजरत वजीर

अली खाँ खुद तो तबाह बरबाद होंगे ही, उसके लपेट में कहीं अवध रियासत न हमेशा-हमेशा के लिए मिट जाए। खान अल्लामा को हजरत वजीरअली खाँ की इतनी चिन्ता न थी, जितना अवध राज्य के मिट जाने का दुख था। अवध राज्य का मिटना खान अल्लामा अपनी आँखों से नहीं देख सकते थे। सोचते थे मेरी वजारत में अवध रियासत का खतम हो जाना नवाब वजीरअली खाँ के माथे का न होकर मेरे माथे का काला दाग होगा। और अवध राज्य के इतिहास के पृष्ठों पर हमेशा चमकता रहेगा। मेरी जिन्दगी में ही लोग मेरे मुँह पर थूकेंगे। कहा जाएगा—अगर नवाब अवध कम उम्र नासमझ, नादान और मूर्ख था तो उसका मंत्री तो सिन रसीदा, जमाना दीदा, मोलवी मुंशी अल्लामा पुकारा जाने वाला अनुभवी विद्वान तो मौजूद था। उसने क्यों राज्य को मिट जाने दिया ? उनका पहला फर्ज था कि वह बहके हुए तथा गलत रास्ते पर चलने वाले अवध के हुक्मरां को सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश करते। मान लो कि यदि नवाब खुद अपने हाथों तबाह हो जाना चाहता था तो उसे छोड़ देते। अवध राज्य को बचाने की तरकीब सोचते, कोशिश करते। रियासत को कायम रखना नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ की पूरी जिम्मेदारी थी।

अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ इस प्रकार के विचारों से तिलमिला उठते थे। उनकी आत्मा उन्हें धिक्कारने झखझोरने लग जाती थी। लेकिन हजरत वजीरअली खाँ के दिल से उनकी सही या गलत भावनाओं को निकाल कर बाहर फेंक देना अल्लामा के काबू की बात न थी। हाँ अवध राज्य के प्रति अवश्य वह अपना कर्तव्य पालन कर सकते थे। और उसके लिए अल्लामा कमर कस कर तैयार भी हो गए।

कम्पनी सरकार का एक मोहरा तो उन्होंने पहले ही साध लिया था। तकाजे का रुपया अवध के खजाने से निकल कर रेजीडेन्सी के खजाने में दाखिल हो चुका था। अब दूसरा मोहरा अवध राज्य की मसनद कायम रखने का था। अल्लामा का ख्याल था, जब तक अवध राज्य की मसनद पर जमा बैठा हुआ व्यक्ति नहीं हटाया जाता, कोई दूसरा ऐसा व्यक्ति उस मसनद पर आकर नहीं बैठता जो योग्य, मुंतजिम तथा कम्पनी सरकार की सत्ता को सिर आँखों पर लेने वाला अंग्रेजों का सच्चा दोस्त हो, अवध की रियासत बनी रहने की आशा नहीं मालूम होती।

इस धारणा के अनुसार अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ के दिमाग में कुलबुलाहट शुरू हुई। अवध की मसनद पर बैठने वाले किसी नजदीकी खानदानी तथा योग्य व्यक्ति की खोज में उनके विचार दौड़ लगाने लग गए। नवाब शुजाउद्दौला के नवाबजादों की एक भीड़ ही ऐसी थी जो नजदीकी तथा खानदानी होने के अलावा मसनद की हकदार भी कही जा सकती थी। लेकिन उस भीड़ में मतलब का व्यक्ति ढूंढ़ना-खोजना आसान न था। अल्लामा ने शान्तचित्त होकर शुजाउद्दौला के एक-एक नवाबजादे की शकल-सूरत अपनी आँखों के सामने खड़ी की। शकल-सूरतें तो सभी की आकर्षक थीं लेकिन उस

आकर्षण में अपने मतलब की कोशिश अपने मतलब के गुण नजर नहीं आते थे। और अन्त में हताश होकर पलकें झुक जाती थीं।

बड़ी देर तक दौड़ लगाने तथा भटकने के बाद अल्लामा की आँखों के सामने एक सूरत आई। उसे देख कर वह चौंक से पड़े। सूरत पूर्णरूप से जानी-पहचानी थी और उस सूरत में मतलब के सभी गुण स्पष्ट तौर पर उभर रहे थे। अल्लामा का चेहरा संतोष से भर गया। मतलब सिद्ध हो गया। लखनऊ की मसनद पर बैठने वाले अवध राज्य के भावी मालिक अल्लामा के शिष्य अमीनुद्दौला नवाब सआदतअली खाँ थे।

यों तो अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ, सआदतअली खाँ के उस्ताद रह चुके थे। लेकिन वह एक लम्बे अर्से की बात थी। इस समय उसका जिक्र भी जबान पर लाना बेकार सा था। लेकिन एक दूसरा सिलसिला भी था। जब नवाब आसफुद्दौला के बुलाने पर सआदतअली खाँ सूबा कटेहर बरेली को छोड़ कर लखनऊ आ गए थे, अल्लामा भी आसफी दरबार के एक सदस्य थे, अक्सर सआदतअली खाँ से मुलाकात हुआ करती थी और सआदतअली खाँ उन्हें अपने बचपन का उस्ताद जान-समझ कर इज्जत भी किया करते थे।

लेकिन वह समय कुछ और था। न अल्लामा की कोई हैसियत हस्ती थी न स्वयं सआदतअली खाँ ही कोई विशेष हैसियत रखते थे। किन्तु इस समय सआदतअली खाँ की याद और उनका चेहरा मोहरा अल्लामा की आत्मा से कह रहा था—अवध राज्य के नाम को कायम रखने वाला, जमाने की चाल के साथ कंधा मिला कर चलने वाला एक सआदतअली खाँ ही है।

अल्लामा ने अपनी इस धारणा को खुदा की एक आवाज समझा और अपनी मसनद पर सँभल कर बैठ गए। उन्होंने कलमदान खोल कर मोलवी सद्दन को एक पत्र लिखा। मोलवी सद्दन सआदतअली खाँ के पास बनारस में रह रहे थे और इस समय अल्लामा की अपेक्षा मोलवी सद्दन से सआदतअली खाँ का अधिक याराना था। अपने पत्र में अल्लामा ने नवाब वजीरअली खाँ की सारी कैफियत और हरकतों का हवाला देकर अंग्रेजों के प्रति उनकी दूषित भावना को भी स्पष्ट किया और इस बात पर काफी जोर दिया कि वजीरअली खाँ की अन्य नादानियों से कहीं ज्यादा उनके दिल में जमी हुई अंग्रेजों की मोखालफत है। यह मोखालफत कुछ ऐसी है जो उन्हें तो बरबाद कर ही देगी उनके साथ अवध रियासत का भी हिन्दुस्तान से नाम-निशान मिट जाएगा। मुझे सबसे ज्यादा अवध राज्य की कलक है। उसके मिट जाने का भय सता रहा है। इसलिए आप मेरी तरफ से नवाब यमीनुद्दौला से अर्ज कीजिए कि वह अवध रियासत को बचाने, कायम रखने की बहुत शीघ्र कोई मुनासिब तदबीर ढूंढ़ निकालें। उनके सिवा इस वक्त अवध रियासत को मिटने से बचाने वाला दूसरा कोई नहीं है और पत्र के अन्त में लिखा—कमतरीन चाहता है कि हक हकदार को पहुँच जाए।

पत्र को लिफाफे में बन्द करके और उस पर अपनी मोहरें लगा कर एक विश्वासी नौकर अहमदअली खाँ के हाथ में देकर कहा—"इस पत्र को लेकर तुम चुपचाप घोड़े पर सवार होकर लखनऊ से बनारस को रवाना हो जाओ। वहाँ बनारस में दुर्गाकुन्ड की कोठी में नवाब सआदतअली खाँ कयाम फरमाते हैं। उन्हीं के पास मोलवी सद्दन साहब रह रहे हैं। हमारा यह खत मौलवी सद्दन के हाथ में देकर उनसे इसके पहुँचने की रसीद लाकर हमें देना।"

पत्र हाथ में लेकर अहमदअली खाँ ने पूछा—"इसी वक्त कूच कर जाऊँ ?"

"बिलकुल, जरा भी देर करने की जरूरत नहीं है।" अल्लामा ने कहा।

दोपहर का समय हो गया था। अल्लामा ने अन्दर जाकर खाना खाया और उसके बाद पलँग पर लेट गए। कुछ देर आराम किया। दो-चार करवटें बदलीं फिर उठ कर पुनः दीवानखाने में आकर जम गए। कागज हाथ में लेकर कलमदान से कलम उठाई और कम्पनी सरकार को भी अपनी वफादारी का सबूत देने के अभिप्राय से गवर्नर जनरल के नाम एक अर्जदाश्त लिखने बैठ गए।

अल्लामा ने विनय पत्र में गवर्नर को लिखा—चूंकि फिदवी कम्पनी सरकार का ही बनाया हुआ अवध रियासत का नायब है। इसलिए कमतरीन का कर्तव्य है कि यहाँ की हालात और नये नवाब की हरकतों की सूचना आपको पहुँचाता रहे।

इस भूमिका के बाद अल्लामा ने पत्र में युवक नवाब वजीरअली खाँ की तेज मिजाजी, गुस्सा तथा लड़कपन भरी समस्त हरकतें तथा बुरी सोहबत वगैरह का जिक्र करते हुए लिखा—कम्पनी सरकार नवाब शुजाउद्दौला के समय से मुल्क अवध की सरपरस्त तथा संरक्षक चली आ रही है। कम्पनी सरकार ने ही शुजाउद्दौला के बाद उनके बेटे आसफुद्दौला को रियासत का सही वारिस तथा हकदार समझ कर मसनदनशीन किया था। और साहबेवालाशान की वह जाँच-पड़ताल तथा फैसला बहुत सही था। हक हकदार के पहुँचा था। लेकिन आसफुद्दौला की मृत्यु के बाद गद्दीनशीनी में कुछ जल्दी हो गई। जाँच-पड़ताल तथा सही वारिस हकदार की पूरी छानबीन नहीं हो सकी और हजरत वजीरअली खाँ मसनदनशीन कर दिए गए थे। उस जल्दी का नतीजा आज यहाँ यह नजर आ रहा है कि अवध की रियासत गहरे गार-गड्ढ़े की तरफ चली जा रही है। हजरत वजीरअली खाँ न अपनी कोई जिम्मेदारी महसूस करते हैं न प्रजा का कोई ख्याल रखते हैं। रियासत के जितने भी कारकुन ओहदेदार तथा अहलेकलम हैं किसी पर उनको विश्वास नहीं। खुले तरीके से उन सबको नमकहराम और अपना दुश्मन ख्याल फरमाते हैं। उनकी इज्जत-आबरू दिन-दहाड़े धूल में मिलाई जा रही है। हजरत पर जवानी और तेज मिजाजी का जोश-जिनून सवार है। चूंकि फिदवी नायबुल रियासत है और साहबेवालाशान के जरिए ही इस ओहदे को पहुँचा था। इसलिए कमतरीन कम्पनी सरकार की वफादारी को महसूस करते हुए अपना फर्ज समझ रहा है कि इस वक्त की यहाँ की

कैफ़ियत से साहबेवालाशान को आगाह करे और इल्तजा करे कि यह रियासत बरबाद तबाह होने से बचा ली जाए। फिर से जाँच-पड़ताल और सच्ची तहकीकात की जाकर हक हकदार और सही योग्य वारिस को पहुँचाया जाए।

विनय पत्र समाप्त करके खान अल्लामा ने संतोष की साँस ली। पत्र को लिफ़ाफे में बन्द करके तथा अपनी मोहर लगा कर जेब में रख लिया। नौकर को आवाज देकर बग्घी मँगवाई और उस पर बैठ कर रजीडेन्सी की तरफ रवाना हो गए।

रजीडेन्सी में पहुँच कर खान अल्लामा ने रजीडेन्ट से मुलाकात हासिल की। दोनों मिल कर विशेष कमरे में बैठे। बाहर पहरे खड़े हो गए। खान अल्लामा ने अपना विनय पत्र निकाल कर रजीडेन्ट के हाथों में देते हुए कहा—"यह मेरा एक विनय पत्र है। मेहरबानी फरमा कर इसे जल्द ही नवाब गवर्नर जनरल की खिदमत में कलकत्ता पहुँचा दिया जाए।"

रजीडेन्ट ने किंचित मुस्करा कर पूछा—"इसमें क्या है? नायबुल रियासत ने कौन सा जरूरी विषय लिख कर अपनी विनय वहाँ तक पहुँचाई है।"

खान अल्लामा बोले—"इसमें मैंने अपना फर्ज अदा किया है। रियासत की मौजूदा कैफ़ियत से गवर्नर जनरल बहादुर को आगाह किया है। ताकि बाद में कमतरीन के सिर पर कोई इलजाम न आए।"

मिस्टर लिम्सडन कुछ अधिक मुस्करा कर बोले—"आप बहुत दूरदर्शी नायबुल रियासत हैं। एक जिम्मेदार वजीर आजिम को ऐसा ही होना चाहिए।" फिर गम्भीर होकर कहा—"ठीक है। हम आपके इस लिफाफे को आज ही की डाक से गवर्नर जनरल की खिदमत में रवाना किए देते हैं।"

अल्लामा खामोश रहे।

लिम्सडन बोले—"हमने भी नवाब नाजिर का सारा किस्सा लिख कर दूसरे ही दिन कलकत्ता भेज दिया है।" फिर जरा मुस्करा कर कहा—"अब हजरत वजीरअली खाँ के गैजोगजब का क्या हाल है?"

"गैजोगजब के बारे में आप क्या पूछते हैं?" अल्लामा ने कहा—"वह तो उनका स्वभाव है। वह कहाँ जा सकता है?" फिर संजीदा होकर कहा—"आपने यह बहुत अच्छा किया था कि उसी रात में नवाब नाजिर को जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम के पास पहुँचा दिया था। अब वह वहाँ महफूज हैं। कोई उसका बाल बाँका नहीं कर सकता और न किसी को पता चल सकता है कि वह वहाँ रह रहे हैं, क्योंकि नवाब बहू-बेगम साहिबा ने अपने महलों के सभी नौकर-नौकरानियों के कान गरम कर रखे हैं। सख्त ताकीद कर रखी है कि नवाब नाजिर के यहाँ होने रहने की खबर इस महल से बाहर न निकलने पाए।"

"हमने बहुत सोचने-समझने के बाद नवाब नाजिर को वहीं भेजना मुनासिब

समझा था।" फिर दो क्षण रुक कर कुछ सोचने के बाद कहा—"आज सबेरे ही जनाब आलिया ने भी एक बन्द लिफाफा गवर्नर-जनरल की सेवा में पहुँचाने के लिए हमारे पास भेजा है। पता नहीं उसमें क्या लिख कर भेजा है? आपके लिफाफे के साथ हम उनका वह लिफाफा भी रवाना कर देंगे।"

अल्लामा बोले—"शायद नवाब बहू-बेगम साहिबा ने भी नवाब नाजिर की वारदात लिख कर भेजी होगी, क्योंकि उसकी जान और इज्जत-आबरू की हिफाजत उन्हें हर तरह से मंजूर है।" फिर जरा रुक कर कहा—"मुमकिन है बेगम साहिबा ने हजरत सलामत की जानिब कुछ नाराजगी भी जाहिर की हो? क्योंकि वह तो बहुत पहले से हजरत से नफरत करती हैं।"

रेजीडेन्ट ने नजर उठा कर अल्लामा की तरफ देखा और मुस्कराते हुए कहा—"और अब आपसे नवाब साहब की कैसी पट रही है?"

"पटने का क्या जिक्र है? हजरत सलामत को मेरी सूरत से नफरत है? उस वारदात के दिन से मुलाकात बन्द कर रखी है।"

रजीडेन्ट ने कुछ विस्मय से पूछा—"और राज-काज कैसे चल रहा है?"

"आफरीअली खाँ को अपना लिया है। उन्हीं से काम लेते हैं। फिर हजरत को राज-काज से मतलब ही क्या है? उनके पास और भी तो सैकड़ों मशगले हैं!"

इसके बाद मुलाकात खतम हो गई।

१९

नीलम साधारण लौंडी न थी। बड़े करतबों वाली थी। आयु अधिक न थी किन्तु उसमें गुण बड़ी-बूढ़ियों तथा बड़ी-बड़ी चुस्त-चालाक शाही बेगमात से भी अधिक थे।

नीलम ने अपने नाज-नखरों, हाव-भावों तथा लच्छेदार मीठी-मीठी बातों से हजरत वजीरअली खाँ का हृदय एक अर्से से अपनी तरफ लुढ़का रखा था। फिर लालारुख के मामले में उनकी राजदार बन कर उनके दिल के और भी निकट पहुँच गई थी। और उसी सिलसिले में उसने हजरत के सिर पर अपनी अदाओं का जादू चढ़ा कर हजरत से उसे अपनी मुतायी बेगम बना लेने का वादा भी करा लिया था।

चूंकि नवाब वजीरअली खाँ की अपनी निकाही बेगम नवाब बन्नो बेगम साहिबा से पटरी नहीं बैठ रही थी, दिल मेल नहीं खा रहा था। इसकी वजह यह थी कि वजीरअली खाँ तो बचपन से तेज मिजाज और गुस्सैल थे। जरा-सी बात में मिजाज गरम हो जाता था। उसे ठण्डा करना भी आसान न था। मिन्नत आरजू से उसमें और अधिक

गर्मी पैदा होने लग जाती थी।

नवाब बन्नो बेगम भी कुछ कम न थी। पहले ही दिन से हजरत के ऐसे मिजाज को देख-परख कर समझ गई थी कि हमारी इनकी चूल हरगिज नहीं बैठ सकती। क्योंकि उनकी तबीयत में भी काफी गर्मी मौजूद थी। इसलिए तनातनी-सी रहती थी।

हजरत वजीरअली खाँ को बेगम की इस तनातनी से अपना दिल बहलाने, हँसने-बोलने और जवानी के बलबले निकालने के लिए एक प्रेमिका की जरूरत महसूस होने लग गई थी। चूँकि नीलम से उनका दिल किसी कदर मिल रहा था, उसकी अदाएँ दिल को भा जाती थीं, इसलिए हजरत ने उसे अपनी मुतायी बेगम बना लेने का वादा कर दिया था।

इधर जिस दिन से वजीरअली खाँ मसनदनशीन होकर अवध के नवाब बन गए थे, नीलम को हजरत की बेगम बन कर बेगमाती ठाट से रहने की धुन सवार हो गई थी। अपने पूरे हथियारों, छल-बलों तथा करतबों को लेकर हजरत के पीछे पड़ गई थी। जब भी मौका पाती उनके गले से लिपट जाती, ठुनकती, मचलती और अनेक प्रकार की ठग-विद्याओं के साथ वादा पूरा करने की इल्तजा किया करती थी। हजरत भी उसे चूम-चाट कर अपने वादे को मजबूत बना दिया करते थे।

मसनदनशीनी को जिस दिन पूरे तीस दिन गुजरे, ठीक उसी दिन नीलम के भाग्य का सितारा जमीन से उठ कर आकाश पर चमक उठा। अवध के युवक नवाब हजरत वजीरअली खाँ ने नीलम के साथ मुता की रसम अदा करके उसे अपनी बेगम घोषित कर दिया और नवाब बन्नो बेगम को चिढ़ाने के लिए उसका वह चढ़ावा चढ़ाया कि नवाबी हरमसरा देख कर दंग रह गई। उसको रहने के लिए अलग महल अता हो गया। महल में साज-सिंगार तथा नवाबी ठाट-बाट की हर एक चीज मौजूद हो गई। खिदमत के लिए नौकरानियाँ, ख्वाजासरा नियुक्त हो गए। हजरत ने खजाने से निकलवा कर पूरे पच्चीस लाख रुपये के जड़ाऊ जेवर और कीमती पोशाकें खुद अपने हाथ से अता फरमाई। इस प्रकार कल की लौंडी आज बेगम बन कर सात पर्दों के अन्दर बड़े ठस्से के साथ बेगमाती मसनद पर बैठी नजर आने लग गई।

बेगम बन कर नीलम का दिमाग भी आकाश से बातें करने लगा। मिजाज में गरमी आ गई और घमण्ड की मात्रा भी बढ़ गई। कभी किसी से सीधे मुँह बात न करती। वह शान दिखाती, मिजाज में वह गर्मी तथा चेहरे पर वह बेगमाती रौब-जलाल पैदा करती कि देखने वाले पसीने-पसीने हो जाते थे। महलों के जनानखाने में बहुत-सी उसकी साथिनें लौंडियाँ मौजूद थीं। नीलम कभी उनकी तरफ रुख भी न करती थी। किसी कार्यवश यदि कोई पुरानी साथिन उसके सामने आ जाती तो उस पर घृणा भरी दृष्टि डाल कर उसे अपने पास से हटा दिया करती थी। नीलम के इस व्यवहार से हरमसरा की पुरानी-नयी सभी लौंडियाँ-दासियाँ हसद की आग से फुंकी जाती थीं। हर समय उनके

दिलों में ईर्षा के काँटे चुभे जाते थे। मगर विवश थीं। सिवा नीलम के भाग्य को सराहने तथा अपने भाग्य को कोसने के उनके पास कोई दूसरा उपाय न था।

हजरत सलामत नवाबअली खाँ नीलम के महलों में ही रात व्यतीत किया करते थे। संध्या समय घूम कर लौटने के बाद हजरत सीधे उसके महलों में पहुँच जाते थे। वहीं दस्तरख्वान पर बैठते और रंगरेलियों में मस्त रहा करते थे। यदि किसी दिन नियमित समय पर नीलम के महलों में हजरत न पहुँच पाते, अपने ही महल में किसी मशगले में लीन हो जाते तो मौका ताक कर नीलम खुद उनके महलों में पहुँच कर मशगला ठण्डा करके हजरत को अपने महल में पकड़ कर ले जाया करती थी।

नीलम को बेगम बने लगभग बीस-पच्चीस दिन व्यतीत हो चुके थे। एक संध्या से कुछ पहले नवाब हजरत वजीरअली खाँ अपने चार यारों तथा मोसाहबों सहित घोड़ों पर सवार होकर सैर के लिए गए। लौट कर आने पर जाने क्यों हजरत का चेहरा उदास था। ऐसा प्रतीत होता था मानो किसी विशेष घटना ने उनके हृदय पर चोट की है। घोड़े से उतर कर हजरत ने उस दिन चार यारों तथा मुसाहिबों को उसी समय बिदा कर दिया और खुद सीधे अपने महल में जाकर पलँग पर लेट गए और सिर से पैर तक चादर तान ली। संध्या का अन्धकार फैल रहा था, अतः खिदमतगारों ने आकर झाड़फानूसों से महल का कोना-कोना रोशन कर दिया। मगर किसी खिदमतगार ने हजरत से इस बेवक्त चादर तान कर पड़ जाने की वजह पूछने की हिम्मत न की और न हजरत सलामत ने ही चादर हटाई।

हजरत के खिदमत में रहने वाली लौंडियाँ हाजिर हुईं। अपने-अपने स्थान पर पानी की सुराही, गिलास, खासेदान, पानदान और उगालदान लेकर खड़ी हो गईं। लेकिन वे सब भी खामोश थीं। पत्थर की मूर्तियाँ बनी खड़ी थीं। किसी का साहस किसी तरह की जबान हिलाने का नहीं हो रहा था।

उधर नीलम अपने महलों में कंघी-चोटी, साज-सिंगार से लैस, कीमती पोशाक पहने तथा जड़ाऊ जेवरों से लदी-गुँथी बैठी हजरत के आने का इन्तजार कर रही थी। रात का पहला पहर बीतने को आ गया था मगर हजरत सलामत का पता न था। अतः नीलम ने टोह लेने के लिए अपनी एक खास दासी को हजरत के महलों की तरफ भेजा। दासी ने हजरत के महलों में पहुँच कर वहाँ की कैफियत देखी-समझी और आकर नीलम से अर्ज कर दी। नीलम का माथा ठनका। लेकिन कुछ समझ न पाई। अपनी बेगमाती ठस्से तथा शान को सँभाल कर हजरत के महलों की तरफ चल पड़ी। हजरत का महल उसके महल के करीब ही था। केवल बीच की एक बारहदरी पार करना था।

नीलम शोख, चंचल और वजीरअली खाँ के मुंह तो बहुत पहले से लगी ही थी। हमेशा निधड़क होकर बात किया करती थी। इधर जब से वह बेगम बन गई थी उसके गुणों में और अधिक दृढ़ता पैदा हो गई थी। इसके अलावा उसके मस्तक में जो गर्व की

गंध भर गई थी। उसकी बू-बास कभी-कभी वह हजरत सलामत को भी महसूस कराने में नहीं चूकती थी। हजरत उसके इस गर्व के इजहार को अन्दाज-माशूकाना ही समझते थे। हँसते, खुश होते थे और वह उन्हें उँगलियों पर नचाया करती थी।

हजरत के कमरे में पहुँच कर नीलम ने देखा। हजरत सलामत सर से पैर तक चादर ताने लेटे हैं। कमरे का वातावरण बिलकुल खामोश है। लौंडियाँ अपना-अपना साज-सामान हाथों में सँभाले हुए नीची नजर किए चुपचाप अपने-अपने स्थानों पर खड़ी हैं। कोई साँस भी लेती नहीं जान पड़ती। नीलम आराम के साथ हजरत के पलँग पर बैठ गई। एक क्षण खामोश बैठी रही। लेकिन वजीरअली खाँ जरा भी न हिले-डुले। उसी तरह पड़े रहे।

नीलम ने कहा—"आज हजरत सलामत ने यह क्या नक्शा खींच रखा है? क्या दुश्मनों की तबियत नासाज है?"

कोई जवाब न मिला।

"बोलते क्यों नहीं?" नीलम ने कहा—"सर दबाऊँ?"

"ऊँ, हुँ।" धीरे से जवाब मिला।

"तलुवे सहलाऊँ?"

"न।"

"चेहरे पर से चादर तो हटाइए? देखूँ तो कैसा क्या रंग है?"

"नहीं, हमें चुपचाप यों ही पड़ा रहने दो?" हजरत ने उसी तरह चादर ताने हुए कहा।

"आखिर ऐसी क्या बात है?" नीलम ने मुस्करा कर कहा—"सिर पर से चादर हटा कर नजर क्यों नहीं मिलाना चाहते?"

"हमें लालारुख की याद सता रही है?"

"या अल्ला? यह क्या बेतुका सितम है? इतने दिनों बाद जब उस भुतनी के सातो करम हो गए, आपको उसकी याद सता रही है?" फिर उनके चेहरे पर से चादर हटा कर कहा—"छोड़िए उस चुड़ैलिन की याद को, उठ कर बैठिए।"

रुख पर से चादर हट जाने पर वजीरअली खाँ आँखें बन्द किए पड़े रहे।

"आँखें खोलिए?" नीलम ने कहा।

"नहीं?"

"मेरी नजर से नजर तो मिलाइए?" उसने मुस्करा कर कहा।

"ऊँ, हुँ!"

"क्यों?"

"यों ही।....हमें लालारुख की याद आ रही है। इस वक्त उसी की शकल-सूरत हमारी आँखों में समा रही है।" हजरत ने आँखें बन्द किए हुए कहा।

"क्या मैं बदशकल हूँ ? लालारुख की शकल-सूरत से मेरी शकल-सूरत कमतर हैं ? जरा इस वक्त का मेरा बनाव-सिंगार तो मुलाहजा फरमाइए ? सारी सुस्ती दूर हो जाएगी। लाली की याद गायब हो जाएगी ?"

वजीरअली खाँ ने आँखें खोल दीं।

नीलम ने होठों पर मुस्कान नचा कर तथा अपनी कजरारी बड़ी-बड़ी आँखों का चमत्कार दिखा कर कहा—"देखिए ! क्या लाली मुझसे ज्यादा खूबसूरत थी ?"

वजीरअली खाँ ने एक नजर उसके चेहरे पर डाली और फिर से चादर तान ली।

नीलम इस उपेक्षा से तिलमिला गई। रूखे लहजे से बोली—"ओहो ? आँखों के आगे चमकते हुए चौदहवीं के चाँद से इतनी नफरत ?"

कोई जवाब न मिला।

नीलम और अधिक शोखी पर उतर आई, बोली—"हजरत का यह नखरा मुझे पसंद नहीं आ रहा। कब से मना रही हूँ और हजरत ऐंठते ही जा रहे हैं।"

"तब ?"

"उठ कर बैठिए ?"

"और अगर हम उठ कर न बैठें ?"

"उठ कर बैठेंगे कैसे नहीं ?" नीलम ने दृढ़ स्वर से कहा—"मैं जबरदस्ती उठा कर बैठाऊँगी।"

वजीरअली खाँ ने चादर हटा कर आँखें खोलीं और गौर से नीलम के चेहरे को देखने लगे। उन्हें उसके चेहरे पर शोखी, गुस्ताखी, शरारत, गर्व, घमंड और जाने कितने तरह के रंग नजर आए। वह समझ न पाए कि यह हमारे महलों की वही लौंडी है, वही अदना नीलम है या कोई और ?

इस वक्त नीलम वाकई तौर पर बदल सी गई थी। उसमें शोखी और गर्व झलक रहा था। उसने गाल फुला कर अपने चेहरे को गम्भीर बना लिया।

वजीरअली खाँ उठ कर बैठ गए।

नीलम मुस्कराकर बोली—"देखा आपने मुझमें कितनी ताकत है ? मेरा जादू कितना जबरदस्त है ? आखिर आपको उठा कर बैठा दिया न ?"

वजीरअली खाँ के चेहरे पर सुर्खी दौड़ी, बोले—"तो तू जादूगरनी भी है ? हमारे सिर पर अपना जादू चढ़ाने आई है ?"

"अगर मैं जादूगरनी न होती, हजरत सलामत के सिर पर अपना जादू न चढ़ाया होता, तो एक अदना लौंडी से हजरत की बेगम कैसे बन जाती ? यह मेरे जादू ही का कमाल है।" और वह मुस्करा दी।

"ओहो, तब तो हमें तुझसे डर मालूम होता है। जरा पीछे खिसक कर बैठ।' हजरत ने भयभीत और रूखे लहजे से कहा।

नीलम ने भी कुछ रूखे स्वर से कहा—"क्यों ? आज मुझसे इतना डर क्यों लगता है ?"

"इसीलिए कि तू जादूगरनी है ?" वजीरअली खाँ ने कहा—"मुमकिन है तू हमें अपने जादू से तोता, चिड़िया, बैल, भैंसा बना दे।" स्वर में घृणा भरी थी।

नीलम ने भी तुर्की, बतुर्की जवाब दिया – "तोता, चिड़िया या बैल, भैंसा बन जाने से इतना डरते हैं ? इनसानी हबिसों से छुटकारा मिल जाएगा। उस कलमुंही लाली की याद तो न सताएगी ?"

वजीरअली खाँ ने घूर कर नीलम के चेहरे की तरफ देखा।

यद्यपि नीलम उनकी नजर पहचान गई, लेकिन इस समय उसके सिर पर गर्व सवार हो रहा था। शोखी के साथ मुस्करा कर बोली—"अच्छा बताइए, आप क्या बनना चाहते हैं ? हाथी, घोड़ा, शेर, हिरन, भेंड़ा, बकरी, तोता, मैना, तीतर, बटेर, मुर्गा-मुर्गी ? वही मैं आपको अपने जादू से बना दूँ।"

वजीरअली खाँ की आँखों में सुर्खी छा गई। बोले—"ओफ, तू इतना आगे बढ़ आई ?" फिर तेज तीखे स्वर से कहा—"तू हमें चरिन्दा-परिन्दा बनाने को तैय्यार है ? तेरी यह हिम्मत, यह ताकत ? यह मजाल और यह हौसला ?"

वजीरअली खाँ के चेहरे पर नवाबी तमतमाहट छा गई। धक्का देकर नीलम को पलंग से नीचे गिरा दिया।

पलंग के नीचे फर्श पर गिरते ही नीलम के होश-हवास ठिकाने पर आ गए। सारा गर्व, शोखी, गुस्ताखी और जबानदराजी हवा हो गई। चेहरे का रंग उड़ गया। फिर भी उठ कर बैठ गई और अपने को संभाल कर बोली—"आलाहजरत....."

वजीरअली खाँ क्रोध से भरे बोल उठे—"नहीं, नहीं, तू हमें चरिन्दा, परिन्दा बना। आज इस वक्त हम तेरा जादू भरा करतब देखना चाहते हैं।" हजरत का चेहरा आवेश से भरा हुआ था।

नीलम सहम गई। वजीरअली खाँ की लाल सुर्ख आँखें, तमतमाया क्रोध भरा चेहरा देख कर काँपते हुए स्वर से बोली—"जहाँपनाह....मेरी गुस्ताखी....शोखी, माफ फरमाएँ....मैं हजरत सलामत की....वही लौंडी....नीलम हूँ जिसे हजरत ने नकटी-बूची होने से बचाया था।"

वजीरअली खाँ पलंग पर से नीचे उतर कर बोले—"अच्छी याद दिलाई तूने ? हमने उस वक्त तुझे नकटी-बूची होने से बचा लिया था। लेकिन अब इस वक्त तेरी वह हविस पूरी किए देते हैं। सुबह नकटी-बूची होकर और गधे पर बैठ कर लखनऊ की सड़कों-गलियों में घूमती हुई नाके से बाहर जाती नजर आएगी।" स्वर गरम था।

वजीरअली खाँ की बड़ी-बड़ी आँखें लाल बीरबहूटी हो रही थी। चेहरा गुस्से तथा जलाल से भरा था। ऐसा लग रहा था मानो हजरत जो कर रहे हैं उसे अवश्य

पूरा कर दिखलाएँगे।

वजीरअली खाँ ने दूर खड़ी एक लौंडी की तरफ नजर घुमा कर कहा—"गुलशन, जा, दौड़ कर कटार ले आ। हम इसकी आरजू पूरी कर दें। इसने हमें घोड़ा, गधा या बकरा, भेड़ा नहीं बनाया तो क्या हुआ ? हम इसकी ख्वहिश पूरी कर दें। यह नकटी-बूची बनना चाहती है। बना दें। जा जल्दी से हमारी कटार उठा ला।"

आदेश पा कर गुलशन कटार लेने चली गई।

नीलम फर्श पर बैठी काँप रही थी। चेहरा भय से सफेद हो गया था। वजीर-अली खाँ ने धक्का देकर उसे चित गिरा दिया और उसकी छाती पर सवार होकर तेज आवेशमय आवाज से कहा—"गुलशन ? कहाँ मर गई ? ला, जल्दी कटार हमारे हाथ में दे।"

दूसरी लौंडियाँ, कनीजें अपने-अपने स्थान पर सहमी गुमसुम सी खड़ी थीं और हजरत सलामत के क्रोध-आवेश को देख कर काँपी जा रही थीं।

गुलशन ने कटार ला कर काँपते हाथों से हजरत के हाथों में दे दी। नीलम फटी-फटी आँखों से वजीरअली खाँ के चेहरे की तरफ देखने लगी। वजीरअली खाँ ने कटार म्यान से बाहर निकाली। और उसकी धार को देखने-परखने लगे।

उपस्थित सभी लौंडियों ने अपने दोनों हाथों में आँचलों को दबा कर आँख-मुँह ढाँक लिए।

तभी नीलम के मुख से एक चीख निकल कर कमरे में गूँज गई। लौंडियों ने चेहरे पर से आँचलों को हटा कर देखा कि नीलम नकटी-बूची होकर बेहोश पड़ी थी। हजरत सलामत उसके सीने पर से उतर कर कटार हाथ में लिए एक तरफ खड़े थे।

हजरत वजीरअली खाँ ने गुलशन से कहा—"जाकर बरकन्दाजों से कह, इसे उठा कर यहाँ से ले जाएँ। इसकी नाक और कानों की मरहम पट्टी करा दें। और सुबह इसे गधे पर बैठा कर लखनऊ की सड़कों-गलियों में घुमाने के बाद नाके से बाहर निकाल आएँगे।"

गुलशन ने भाग कर बरकन्दाओं-चोबदारों को खबर की और हजरत सलामत का आदेश सुनाया। उसी क्षण कई चोबदार-बरकन्दाज दौड़ कर कमरे में आ गए और नीलम को उठा कर ले गए।

हजरत सलामत भी कटार हाथ में लिए दूसरे कमरे की तरफ चले गए।

रात का पहला पहर खतम हो चुका था।

२०

जाड़ों के दिन थे। एक पहर दिन चढ़ चुका था। धूप फैल रही थी। रात भर लिहाफ-कम्बल में लिपटे रहने के बाद सूरज निकलते ही लोग घरों से बाहर निकल कर खुले धूप से भरे चबूतरों पर आ बैठे थे। धूप तापने तथा शरीर में गर्मी पहुँचाने, अंगों को सेंकने में छोटे-बड़े सभी को आनन्द प्राप्त हो रहा था।

लखनऊ शहर से बाहर कानपुर जाने वाली सड़क के नाके पर नाकेदार मियाँ गुलजारअली भी बाहर खुले धूप भरे चबूतरे पर चटाई बिछाए हुक्का गुड़गुड़ाते हुए मीठी-मीठी धूप का मजा ले रहे थे।

तभी अहमदबेग शाही महलों का फर्राश एक तरफ से आकर गुलजारअली के सामने से गुजारा। दोनों में काफी जान-पहचान थी। अकसर मिल बैठा करते थे। अतः गुलजारअली ने पुकार कर कहा—"अमां अहमदबेग! कहाँ जा रहे हो? हुक्का गरम है। आओ, दो कश लेकर फिर जहाँ जाना हो चले जाना।"

अहमदबेग चबूतरे पर आकर चटाई पर बैठ गया और हुक्का हाथ में लेकर बड़े इतमीनान के साथ ताबड़-तोड़ दो-तीन कश लेकर बोला—"जाने कहाँ की सर्दी आकर लखनऊ में फट पड़ी है। हड्डी हिलाए देती है।"

"मियाँ, ये चिल्ला जाड़ों की सर्दी है।" गुलजारअली ने कहा—"चालीस दिन यों ही चलेगी?" फिर हुक्के का कश लेकर कहा—"लेकिन इस गजब की सर्दी में सुबू-सुबू तुम निकल कहाँ पड़े?"

"क्या कहूँ? मजबूरन निकलना पड़ा है?" अहमदबेग ने कहा—"कल से बकरी गायब है। घर नहीं आई। उसी की तलाश में निकलना पड़ा है। अच्छी बकरी है। काफी दूध देती है। उसके खो जाने का बहुत अफसोस हो रहा है।"

"एक वक्त में कितना दूध निकाल लेते हो?"

"पक्का ढाई सेर।"

"तब तो वह बकरी क्या है भैंस है।" गुलजारअली ने थोड़ा हँस कर कहा—"ऐसी बकरी की तलाश-खोज तो बहुत जरूरी है।" फिर इधर-उधर नजर दौड़ा कर कहा—"कहीं किसी बड़ी-झाड़ी से अटक रही होगी। मिल जाएगी।"

"मिल तो जरूर जायगी?" अहमदबेग ने भरोसे से कहा—"इसी तरह एक दो बार और गायब हो चुकी है। लेकिन खुद ही घर आ जाती थी। हाँ, इस बार अभी नहीं आई।"

"तब उसकी कोई ज्यादा फिक्र मत करो।"

अहमदबेग कुछ नहीं बोला। हुक्का गुड़गुड़ाने लगा।

गुलजारअली बोला—"और दुनिया जहान की क्या खबर है?"

अहमदबेग ने मुँह का धुआँ फूंक कर कहा—"अमां, मैं तो लखनऊ में हूँ। दुनिया जहान की खबर से मुझे क्या मतलब है ?"

गुलजारअली हँस कर बोला—"दुनिया जहान से मेरा मतलब लखनऊ से ही है।"

"लखनऊ की क्या खबर बताऊँ ?" अहमदबेग ने कहा—"नौजवान तेज मिजाज और गुस्सेवर नवाब मिरजा वर्जारअली खाँ की नवाबी है, रोज ही एक ताजा खबर लखनऊ में फैलती रहती है।" फिर गुलजारअली की तरफ देख कर कहा—"नवाब नाजिर का किस्सा तो सुन चुके होंगे ?

"अमां अहमदबेग ?" गुलजारअली ने उसकी तरफ जरा झुक, मुड़ कर कहा—"नवाब नाजिर का वह किस्सा क्या सुना, बड़ी हैरत हुई। एक पुराने खान्दानी इज्जतदार को जान के लाले पड़ गए।"

अहमदबेग कुछ सोचने सा लगा। गुलजारअली भी एक क्षण हुक्का गुड़गुड़ाता और धुआँ फूंकता रहा।

तभी कुछ शोर-गुल सुनाई पड़ा और लखनऊ शहर की ओर से एक विचित्र, कौतूहलमय तमाशा आता दिखाई पड़ा। गुलजारअली तथा अहमदबेग अपनी बातें छोड़ कर उसी तरफ गौर से देखने लगे।

एक स्त्री कीमती लँहगे-दुपट्टे का जोड़ा पहने, अलंकार आभूषणों से लदी-गुँथी गधे की नंगी पीठ पर सवार थी। उसके चेहरे पर लम्बी काली नकाब पड़ी थी, जिससे उसका चेहरा दिखाई नहीं दे रहा था और पहचानी नहीं जा सकती थी। एक सरकारी चोबदार गधे की रस्सी खींचता हुआ आगे चल रहा था तथा पन्द्रह-बीस सरकारी बरकन्दाज-चोबदार गधे पर चढ़ी हुई स्त्री को अपने घेरे में लिए थे। पीछे लखनऊ के पचास-साठ शोहदे, गुण्डे-बेफिकरे तथा तीस-चालीस लड़के हँसते तालियाँ पीटते और बड़ी जोरदार आवाज लगाते चले आ रहे थे—"नकटी-बूची जा रही है—नकटी-बूची जा रही है।"

हुजूम धीरे-धीरे नाके के सामने से गुजर कर कानपुर की तरफ जाने वाली सड़क पर पहुँच कर आगे बढ़ गया।

इस अजीब-गरीब तमाशे को देख कर गुलजारअली के कौतूहल का ठिकाना न रहा। आश्चर्य भरी दृष्टि से अहमदबेग के चेहरे की तरफ देख कर बोला—"ऐं, मियाँ अहमदबेग ? यह क्या तमाशा आँखों के सामने से गुजर गया ? यह औरत कौन थी और नकटी-बूची उसे क्यों कहा जा रहा है ? मुझे तो ऐसा मालूम होता है यह कोई निहायत बदमाश औरत थी, जो गधे पर बैठा कर आज लखनऊ से निकाली गई है।"

"तुमने अभी कोई ताजा खबर सुनाने का सवाल किया था न ?" अहमदबेग ने मुस्कराते हुए कहा—"मैं इसी अजीब-गरीब तमाशे की कैफियत तुम्हें सुनाने वाला था

कि वह तमाशा खुद-ब-खुद सामने आ गया।"

"तमाशा तो जरूर सामने आ गया ?" गुलजारअली ने जिज्ञासापूर्ण लहजे से कहा। "मगर यह औरत थी कौन ?"

अहमदबेग मुस्कराया। फिर इतमीनान से बोला—"अच्छा यह बताओ मियाँ गुलजारअली, तुमने कभी अपने कानों से नीलम नाम सुना था ?"

"वाह, इस लखनऊ में नीलम का नाम किसने न सुना होगा ?" गुलजारअली ने कहा—"पहले वह शाही महलों में एक मामूली-सी कनीज लौंडी थी। हजरत वजीरअली खाँ की सेवा-टहल किया करती थी। लेकिन थी बहुत चुस्त-चालाक और करतबों वाली। मिरजा वजीरअली खाँ के सिर पर अपना जादू चढ़ा रखा था।"

गुलजारअली के साँस लेते ही अहमदबेग मुस्करा कर बोला—"बस तो, मियाँ गुलजारअली यह कोई दूसरी औरत न होकर वही नीलम तुम्हारी आँखो के आगे से निकल गई।"

"लेकिन अभी बीस-पच्चीस दिन पहले हमने नीलम के बारे में कुछ और सुना था।"

"क्या सुना था ?"

"सुना था कि नवाब वजीरअली खाँ ने नीलम का अदाओं पर रीझ कर उसके साथ मुता की रसम अदा कर ली है और अब नीलम लौंडी से बेगम बन कर नवाबी हरमसरा में सात पर्दों के अन्दर बैठ गई है। इसके अलावा यह भी सुनने में आया था कि नीलम ने हजरत सलामत का दिल कुछ इस तरह मुट्ठी में बन्द कर रखा है कि वह जरा भी टस से मस नहीं हो सकते।"

"जो कुछ तुमने सुना था हरफ-हरफ सही सुना था।" अहमदबेग ने मुस्करा कर कहा।

फिर वह सँभल कर बैठ गया, बोला—"अच्छा तो सुनो, कल शाम की बात है। हमारे नौजवान नवाब वजीरअली खाँ बहादुर अपने दोस्तों, मुसाहबों के साथ घोड़ों पर सवार होकर सैर को निकले थे। घूमते-फिरते शहर के उस कोने पर पहुँच गए जहाँ वह पुराना कब्रस्तान है और उसी कब्रस्तान से लगा मिला फकीर मजजूब अब्दुल्लाशाह का झोपड़ा है।"

"अब्दुल्लाशाह फकीर कौन ?" गुलजारअली ने बीच मे प्रश्न किया।

"अरे तुम अब्दुल्लाशाह फकीर को नहीं जानते ?" अहमदबेग ने विस्मय के साथ कहा—"अभी कोई बहुत दिन नहीं गुजरे। नवाब आसफुद्दौला के जमाने में वह लखनऊ की सड़कों, गली-कूचों में उल्टी आवाजें लगाया करता था—'जिसको न दे मौला उसको दे आसफुद्दौला।' यही थी उसकी आवाज।"

"कहाँ चला गया वह ? अब तो वह इस लखनऊ में एक अर्से से नजर नहीं आता ?"

"उसने फेरी देना, आवाज लगाना बन्द कर दिया था और दिन-रात कब्रस्तान में एक बड़ी कब्र के पास पड़ा रहता था। कुछ दिन बाद उसकी हालत मजजूबों की सी हो गई थी। कब्रस्तान से हट कर गोमती के किनारे घूमता-फिरता, कभी नाचता-गाता और कभी हँसता-रोता नजर आ जाता था। मगर एक अर्से से उसका कोई पता नहीं चलता। खुदा जाने कहाँ चला गया। हाँ, तो झोपड़े में अब भी अब्दुल्लाशाह की बीवी और एक जवान लड़की रह रही है। जिस वक्त हजरत सलामत वहाँ पहुँचे अनवरी झोपड़े के बाहर खड़ी हुई थी। उसे देखते ही हजरत सलामत को जाने किसकी कैसी याद आ गई। दिल थाम कर रह गए। चेहरे पर उदासी छा गई। हजरत की यह हालत देख कर साथियों ने उसका पूरा पता लिया। अनवरी की माँ झोपड़े के अन्दर थी, उसे बुला कर अनवरी के विषय में पूछ-ताछ की। उसके बाद हजरत सलामत भारी दिल लिए दरे-दौलत पर आए। दीपक जल चुके थे। आते ही हजरत पलँग पर सिर से पैर तक चादर तान कर लेट गए।"

"मालूम होता है कि वह लड़की हजरत की आँखों में समा गई थी।"

"गोलमाल तो कुछ ऐसा ही था।" अहमद बेग ने कहा—"खैर, सैर से लौटने के बाद हजरत सलामत नीलम के महलों में पहुँच जाया करते थे। रोज का नियम था। जब उस दिन नहीं पहुँचे तो नीलम खुद अपने महलों से चल कर उनके पास आ गई। हजरत को छेड़ना शुरू कर दिया। नीलम एक तो पहले ही बहुत शोख थी, इधर जब से बेगम बन गई थी उसकी शोखी के साथ घमंड भी मिल गया था। एकदम करैला नीम चढ़ा की कहावत सच हो गई थी। उस छेड़-छाड़ में भी नीलम ने अपनी काफी शोखियाँ दिखलाईं। घमंड भी जाहिर की और गुस्ताखी से भी पेश आई। हजरत सलामत तेज मिजाज और गुस्सेवर तो हैं ही, नहीं बरदाश्त कर सके। जोश में आ गए। गैजोगजब चेहरे पर छा गया। नीलम को धक्का देकर पलँग से गिरा दिया और कटार मँगा कर उसकी नाक और दोनों कान साफ कर दिए और चोबदारों को हुक्म सुना दिया कि सुबह यह गधे पर बैठा कर लखनऊ से कानपुर की तरफ निकाल दी जाए। वही नीलम है यह, इस वक्त जा रही थी।"

गुलजारअली दो क्षण खामोश रहा, फिर नजर उठा कर बोला—"अहमदबेग लेकिन यह नाक-कान काटे जाने की वारदात तो महल के अन्दर हुई होगी। तुम्हें पूरी कैफियत कैसे मालूम हो गई !"

अहमदबेग बोला—"क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि मेरी छोटी बहिन गुलशन हजरत सलामत की खिदमतगुजार कनीजों में है। उसी ने अपने आँखों देखा सारा किस्सा महलों से लौट कर बताया था।"

"और अब तो शायद सारे लखनऊ में नीलम का किस्सा फैल गया होगा ?" गुलजारअली ने धीरे से कहा।

"शायद की क्या बात है ?" अहमद बेग ने कहा—"जिस तरह गुलशन ने लौट कर मुझे बताया था उसी तरह दूसरी लौंडियों-कनीजों ने अपने घर जाकर अपने भाई-बाप को बताया होगा। फिर अच्छी बात देर से फैला करती है, मगर बुरी मनहूस बात तो हवा के साथ उड़ा करती है। और अब इस दिन चढ़े तो किसी से कुछ छिपा ही नहीं रहा। क्योंकि जब सूरज की किरण देख कर बकरी की खोज में मैं घर से निकला था नीलम का गधा लखनऊ के गली-कूचों का चक्कर लगा रहा था। लोग अपने घरों से निकल कर तमाशा देख रहे थे।" फिर मुस्करा कर कहा—"क्यों न देखते ? बे-पैसों का तमाशा तो था।"

गुलजारअली कुछ नहीं बोला। दो-चार क्षण कौतूहल में डूबा सा बैठा रहा। फिर उठा कर कहा—"उस अनवरी की बला नीलम के सर गई।"

अहमद बेग बोला—"अरे, उस अनवरी का तो सितारा चमक उठा। वह तो झोपड़े से आकर नवाबी हरम में दाखिल हो गई।"

"वह किस तरह ?" गुलजार अली ने विस्मय के साथ कहा।

"उसी रात में गुलशन ने अनवरी का किस्सा भी सुनाया था। कहा जब हजरत सलामत नीलम की नाक-कान तराश कर दूसरे कमरे में जा बैठे थे उसके कुछ ही देर बाद फिर दौड़ मची। बग्घी भेज कर अनवरी और उसकी माँ बुलाई गईं। अनवरी की माँ के आगे अशरफियों का पहाड़ खड़ा कर दिया गया और हजरत सलामत ने उसके आगे घुटने टेक कर अनवरी के लिए दोनों हाथ फैला दिये। अनवरी की माँ पानी की तरह बह पड़ी। फौरन अनवरी का हाथ हजरत को पकड़ा दिया। फिर क्या था। उसी वक्त मुता की रस्म अदा की गई। अनवरी का नाम बदल कर वजीरुन्निसा बेगम रखा गया। नीलम वाला महल रहने के लिए दिया गया। नीलम के जितने भी मर्द औरत खिदमतगुजार थे उन्हें सौंप दिए गए। हीरों-मोतियों के हार तथा चार-पाँच लाख कीमत के जेवरात और भारी शाही पोशाकें अता फरमाई गईं।"

"खुदा का करिश्मा अजीब है ?" गुलजारअली ने धीरे से कहा, "कब किस-को मिट्टी में मिलाता है, कब किसको आसमान पर चमकाता है ? वही जान सकता है।" फिर अहमद बेग की तरफ देख कर कहा—"अहमद बेग ! जवानी हुकूमत और दौलत। तीनों का मेल बहुत खतरनाक हुआ करता है। जिस तरह बात, पित्त और कफ तीनों मिल कर सन्निपात की बीमारी पैदा कर देते हैं। मरीज का बचना मुश्किल हो जाता है उसी तरह इसे भी समझो। यह सब कहने का मतलब यही है कि हजरत वजीरअली खाँ की नवाबी कुछ डाँवाडोल सी नजर आती है।"

"देखो आगे क्या होता है ?" अहमद बेग ने कहा—"हमारा तुम्हारा काम तो

चुपचाप आँखों से देखने का है।" फिर उठ कर कहा—"अच्छा, चल कर इधर-उधर देखूं, बकरी कहाँ अटकी हुई है।"

अहमद बेग चला गया। गुलज़ारअली फिर हुक्का गुड़गुड़ाने लगा। यद्यपि अब उसमें कुछ था नहीं। आग तक ठण्डी हो गई थी मगर वह गुड़गुड़ाए ही जा रहा था।

२१

नवाब अमीनुद्दौला सआदतअली खाँ कलकत्ता से आकर बनारस में दुर्गाकुण्ड की कोठी में कयाम फरमा रहे थे। और लखनऊ की ताजा खबरें सुनने के लिए सदैव कान खड़े किए रहते थे।

लखनऊ में जिस समय नवाब आसफुद्दौला ने बड़ी धूम-धाम, शान-शौकत तथा हौसले के साथ अपने जांनशीन मिरजा वजीरअली खाँ की शादी रचाई थी, अवध इलाके तथा अड़ोस-पड़ोस के समस्त रईसों, इलाकेदारों को लखनऊ बुला कर अपना मेहमान बनाया था, यद्यपि उनका दिल सआदतअली खाँ की तरफ़ से खट्टा था, फिर भी दुनिया के दिखावे के लिए आसफुद्दौला ने सआदतअली खाँ के पास भी पैग़ाम भेज कर शादी में शरीक होने की दावत दी थी। उनकी इस इच्छा में एक राज भरी बात भी थी। सोचा था कि यदि अमीनुद्दौला आकर इस शादी में शरीक होंगे, तो उन्हें भी पता चल जाएगा कि मेरे बाद लखनऊ का नवाब कौन बनेगा। लेकिन सआदतअली खाँ ने उनके उस पैगाम को ठुकरा दिया था। लखनऊ में कदम रखने से साफ इनकार कर दिया था।

वजीरअली खाँ की शादी सम्पन्न हो जाने के कुछ ही दिनों बाद जब आसफुद्दौला ने इस संसार से कूच किया और अवध रियासत की नवाबी मसनद पर मिरजा वजीर अली खाँ बहादुर जम गए तो खबर को सुन कर सआदतअली खाँ की छाती पर साँप लोट गया था। उन्होंने अपने हाली-मोहाली तथा मेली-मुलाकातियों से खुले शब्दों में कहा था—"वजीरअली खाँ की मसनद नशीनी बिलकुल गलत हुई है। आसफुद्दौला के एक भी जायज सन्तान नहीं थी। वजीरअली खाँ का मसनद पर बैठने का कोई हक नहीं था। इस बारे में सही छान-बीन नहीं की गई अगर सही जाँच-पड़ताल की जाती तो हक हकदार को पहुँच जाता। आसफुद्दौला के बाद नवाब शुजाउद्दौला बहादुर की ही औलाद को रियासत का मालिक मुख्तार बनना चाहिए था और उस सूरत में मेरा ही हक पहुँचता था। मैं ही रियासत का हकदार था।"

और उसी दिन से सआदतअली खाँ अपने सारे मशगले छोड़ कर लखनऊ की एक-

एक खबर, वजीरअली खाँ की नवाबी, उनकी दिनचर्या, वर्ताव-व्यवहार तथा जरा-जरा सी बातों की खबरें अपने दिल में संजो कर रखने लगे थे। इन खबरों को जमा करने के लिए उन्होंने अपने दो चार लोगों को भी लखनऊ में भेज दिया था, जो छोटी-बड़ी सभी खबरें रोजाना लिख कर लखनऊ से बनारस पहुँचाया करते थे। अतः लखनऊ के नवाब वजीर-अली खाँ की जवानी-दीवानी का जोश-खरोश, मिजाज की गरमी, अयोग्यता, नादानियाँ तथा लखनऊ राज्य के पुराने नमकख्वारों के प्रति घृणा, अविश्वास आदि और उसके फलस्वरूप उनकी इज्जत-आबरू की बरबादी, उनके साथ अनुचित व्यवहार की जो भी खबर उन्हें मिलती, उसे वह अपने दिल में संजो कर तो रखते ही थे। साथ ही उस खबर को अपने मित्र बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी के कानों में भी ठूँस दिया करते थे और जान चेरी उन्हें कलकत्ता तक पहुँचा दिया करते थे।

बनारस में रहते हुए भी सआदतअली खाँ की अँग्रेजों से अच्छी पटती थी। कलकत्ता से कानपुर जाने वाला जो भी कम्पनी सरकार का अंग्रेज अफसर बनारस में रुकता-ठहरता था, सआदतअली खाँ उससे अवश्य मिलते थे और उसे अपनी कोठी में बुला कर दावत भी दिया करते थे। उनके इस सद्व्यवहार से अंग्रेज अफसर बहुत प्रसन्न रहते थे। इसके अलावा गवर्नर जनरल से भी उनका याराना चलता था। जब-तब पत्र व्यवहार होता रहता था।

वजीरअली खाँ के लखनऊ के नवाब बन जाने के बाद सआदतअली खाँ ने एक पत्र लिख कर गवर्नर जनरल लार्ड सर जॉन शोर को याद दिलाई थी—'लखनऊ में यह मसनदनशीनी बिलकुल गलत हुई है। वजीरअली खाँ न आसफुद्दौला की सही औलाद हैं न रियासत के हकदार। हक हकदार को पहुँचना चाहिए था। अवध रियासत की सरपरस्ती नवाब शुजाउद्दौला के समय से कम्पनी सरकार के हाथों में है। शुजाउद्दौला की मृत्यु के बाद जिस प्रकार कम्पनी सरकार पूरी जाँच पड़ताल के बाद आसफुद्दौला को मसनद नशीन किया था, उसी तरह आसफुद्दौला के मरने बाद भी रियासत के सच्चे सही हकदार की तलाश होनी लाजिमी थी। मगर ऐसा न किया जाकर साधारण रूप से केवल एक आसफुद्दौला की वसीयत पर गैर हकदार को रियासत बख्श दी गई है। अतः इस मामले पर कम्पनी सरकार को लाजिमी तौर पर नजर-सानी करनी चाहिए।'

लेकिन उनके इस पत्र का गवर्नर जनरल ने अभी तक कोई जवाब नहीं दिया था। इधर सआदतअली खाँ के पास लखनऊ के नवाब वजीरअली खाँ के दिनचर्या, राज-काज तथा अल्लड़पने की जो बेतुकी खबरें पहुँच रही थीं, उन्होंने सआदतअली खाँ के अंतस में एक खलबली उत्पन्न कर दी थी। अभी तक उन्होंने बड़े जब्र के साथ गवर्नर जरनल के पत्र की प्रतीक्षा की थी, किन्तु अब वह असह्य हो रहा था। और वह स्वयं कलकत्ता जाने का इरादा कर रहे थे।

सआदतअली खाँ सोच रहे थे—अब गवर्नर जनरल के जवाब का इन्तजार

करना फिजूल है। हमें खुद कलकत्ता पहुँच कर इस विषय में उनसे बात-चीत करनी चाहिए। उन्होंने हमसे वादा किया था कि आसफुद्दौला के बाद अवश्य हक हकदार को पहुँचेगा। मगर वह अपने उस वादे को शायद भूल गए हैं। उन्हीं के कहने पर हमने रूहेलखण्ड का सूबा छोड़ा था। वरना उस सूबे की हुकूमत को मुझसे कौन छीन सकता था! वजीरअली खाँ की नवाबी की जैसी खबरें हमें मिल रही हैं, उनसे उम्मीदों भरा एक मौका नजर आ रहा है। अगर लार्ड सर जॉन शोर उधर ध्यान दें, इन्साफ की तराजू हाथ में ले लें, तो बिना किसी झिझक-संकोच के वजीरअली खाँ गद्दी से उतारे जाकर हकदार मसनदनशीन किया जा सकता है।

इस सोच-विचार तथा उम्मीदों भरे गुनताड़े के अनुसार सआदतअली खाँ ने गंगा नदी के रास्ते से बजरे में बैठ कर कलकत्ता जाने का पूर्ण निश्चय कर लिया। और अपने विशेषकर परदाज़ जफरुद्दौला फतहअली खाँ को बुला कर बजरा आदि का प्रबन्ध करने का आदेश दे दिया।

अभी सबेरे की धूप पूर्ण रूप से धरती पर नहीं उतरी थी। ऊँचे-ऊँचे मकानों की छतों, मुडेरों तथा दरख्तों की चोटियों पर चमक रही थी। सआदतअली खाँ सफर करने के इरादे से बड़े तड़के ही जाग उठे थे और इस वक्त अपनी कोठी के विशेष कमरे में सफर की तैय्यारी में व्यस्त थे। तभी उनके उस्ताद मौलवी सद्दन साहब कमरे में घुस आए। उस्ताद शागिर्द में अदब कायदे की विशेष पावन्दी न थी। मौके पर दोनों में चुहलबाजी और मजाक की बौछारें भी हो जाया करती थीं।

अतः मोलवी सद्दन ने उन्हें कहीं का सफर करने की तैय्यारी में व्यस्त देख कर पूछा—"हजरत यह कहाँ के सफर की तैय्यारी कर रहे हैं?"

छूटते ही सआदतअली खाँ ने उनकी तरफ मुख करके कहा—"दोजख का सफर कर रहा हूँ। क्या आपको भी हमारे साथ दोजख चलना है? खूब गुजरेगी जो मिल बैठेंगे दीवाने दो।" और वह मुस्करा दिए।

मोलवी सद्दन बोले—"लानत भेजिए दोजख पर। अभी इस रंगीन दुनिया की रंगीनियाँ देखिए।"

सआदतअली खाँ अपना काम छोड़ कर मसनद पर बैठ गए। बोले, "हजरत मोलवी साहब! दुनिया में अब रंगीनियाँ हैं कहाँ? किस उम्मीद पर यहाँ रहा जाए! इस दुनिया से बेहतर दोजख नजर आ रही है।" फिर जरा मुस्करा कर कहा—"आप हमारे उस्ताद हैं। यहाँ साथ रहते हैं; इसलिए चल कर दोजख में भी साथ रहिएगा।"

"तौबा कीजिए?" मोलवी सद्दन ने प्रसन्न मुद्रा से कहा—"मेरे लिए तो इस दुनिया में बहुत बड़ी-बड़ी उम्मीदों भरी रंगीनियाँ मौजूद हैं। इतनी लम्बी कतार में कि बनारस से लखनऊ तक....।"

"बेहतर है?" सआदतअली खाँ ने कहा—"तब आप संभालिए दुनिया की उन

उम्मीदों भरी रंगीनियों को ? मुझे अकेला ही सफर करने दीजिए।" फिर हँस कर कहा—"बनारस से लखनऊ पहुँच जाइएगा और नवाब वजीरअली खाँ के उस्ताद बन कर उनके साथ ही दुनिया की रंगरलियों का मज़ा लूटा कीजिएगा।"

मोलवी सद्दन भी मुस्कराए, बोले—"बात यों है हजरत कि उम्मीदों भरी वह रंगरलियाँ नवाब वजीरअली खाँ के साथ नहीं लूटी जा सकतीं। उनको लूटने के लिए तो अमीनुद्दौला नवाब सआदतअली खाँ का साथ होना चाहिए। इसलिए आप भी मेरे साथ लखनऊ चलिए।"

"ऐसा है ?" सआदतअली खाँ ने मुस्करा कहा—"आप अकेले बहिश्ते लखनऊ का मजा नहीं लूटना चाहते ? मेरा साथ चाहते हैं तो यही बेहतर है कि आप मेरे साथ दोजख का सफर कीजिए। वहाँ जो कुछ लूटने को मिलेगा, हम आप दोनों मिल कर लूटेंगे।"

"मैं न खुद दोजख जाने को तैय्यार हूँ और न हजरत को ही उधर का सफर करने दूँगा ?" मोलवी सद्दन ने भी मुस्करा कर कहा—"क्योंकि मैं आपका उस्ताद हूँ और उस्ताद का फर्ज होता है वह अपने शागिर्द को नेक रास्ते से ले चल कर ऊँची मंजिल पर बैठाए। इसलिए हजरत बहिश्ते लखनऊ चलने की तैय्यारी करें।" और वह जोर से हँस पड़े।

सआदतअली खाँ भी हँस कर बोले—"उस्ताद की यह अच्छी जबरदस्ती है।"

मोलवी सद्दन कुछ संजीदा होकर बोले—"अच्छा अब मजाक खतम हो गया। अब इस मजाक के पीछे जो हकीकत छिपी थी उसे मुलाहजा फरमाइए ?" और मोलवी सद्दन ने अल्लामा तफज्जुल हुसैन का पत्र निकाल कर सआदतअली खाँ के हाथ में देकर कहा—"इसे पढ़िए ?"

सआदतअली खाँ ने एक साँस में वह पत्र पढ़ डाला और लपक कर मोलवी सद्दन से लिपट गए। प्रसन्नता के जोश में मोलवी साहब को खूब दबाया-झकझोरा। फिर सावधान होकर कहा—"वाह उस्ताद ? मान गया। वाकई आपकी उम्मीदों की मंजिल सामने कुछ झलकती नजर आती है।"

"तब उस मंजिल पर पहुँचने का जोड़-तोड़ लगाना जरूरी है।" सद्दन ने कहा—"बिना जोड़-तोड़ लगाए, दौड़-धूप और मेहनत-मशक्कत किए कामयाबी हासिल नहीं हो सकती।"

सआदतअली खाँ ने एक बार पुनः बड़े गौर से उस पत्र को पढ़ा। फिर बोले—"इस खत का जवाब तो आज ही अल्लामा के पास भेज दिया जाए। उसके बाद अपने हाथ पैर हिलाए जाएँगे।"

"जवाब तो बन्दे ने कल ही लिख कर नामाबर के हवाले कर दिया और आज मुँह अंधरे वह लखनऊ की तरफ रवाना भी हो गया।" फिर मुस्करा कर कहा—"अब तो

हजरत दोजख का सफर नहीं करेंगे ?"

"अब तो हजरत उस्ताद जिधर ले चलें, उधर चलूंगा ?" सआदतअली खाँ ने भी मुस्करा कर कहा।

मोलवी सद्दन गम्भीर होकर बोले—"अब मेरी इसलाह यह है कि आप बनारस के रजीडेन्ट से मुलाकात हासिल करके इस बारे में बात कीजिए और जिस तरीके से भी हो सके सौदा पटा लीजिए।"

सआदतअली खाँ एक क्षण खामोश रह कर कुछ सोचते रहे। फिर मौलवी साहब की तरफ देख कर बोले—"वाह मौलवी साहब ? इस वक्त तो आप हमरी किसमत का एक चमकता हुआ सितारा ही नजर नहीं आ रहे बल्कि हमारे दिल की बात भी अपनी मुट्ठी में बन्द किए हैं। जो इसलाह आप दे रहे हैं पत्र को पढ़ कर वही बात मेरे भी दिलो-दिमाग में चक्कर काटने लगी थी।"

"खुदा का लाख-लाख शुक्र है। उसी ने रास्ता निकाला है, वही मंजिल-मकसूद तक भी पहुँचाएगा।" अब हजरत सब काम छोड़ कर रजीडेन्ट से मिलने की तैय्यारी करें।" इसके बाद मौलवी सद्दन वहाँ से अपने घर चले गए।

उसी दिन संध्या समय सआदतअली खाँ बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी के बंगले पर जा पहुँचे।

बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी पहले लखनऊ के रजीडेन्ट थे। लखनऊ के रजीडेन्सी की कोठी और दूसरी सारी इमारतें नवाब आसफुद्दौला के शासन काल में उन्हीं ने तामीर कराई थीं। उसके बाद लखनऊ से तबदील होकर बनारस में आ बैठे थे। जान चेरी लखनऊ के नवाबो खानदान के एक-एक व्यक्ति को अच्छी तरह जानते-पहचानते थे। इस तरह वह सआदतअली खाँ को भी पहले से जानते समझते थे, मगर इधर जब से सआदतअली खाँ बनारस में आकर रहने लगे थे और अकसर उनसे मिलते-जुलते रहते थे, अतः उस जान-पहचान ने दोस्ताने जैसा रूप धारण कर लिया था।

सआदतअली खाँ ने जान चेरी से मुलाकात हासिल की। दोनों की बैठक जम गई।

सआदतअली खाँ ने अपने मतलब को संभाल कर कहा—"आपने लखनऊ को क्या बिलकुल ही भुला दिया ?"

जान चेरी ने मुस्करा कर कहा—"नहीं नहीं, लखनऊ से तो हमको बहुत बड़ी मोहब्बत है। हम काफी दिन वहाँ रहे हैं, कैसे भूल सकते हैं ? वहाँ की खबरें बराबर हमें मिलती रहती हैं और हम बड़ी दिलचस्पी के साथ उन्हें सुना करते हैं ?" फिर किंचित मुस्करा कर कहा—"कुछ आप भी सुनाइए। आपका तो लखनऊ से बहुत लगाव है।"

"मैं क्या सुनाऊँ ?" सआदतअली खाँ ने कहा—"मैं तो लखनऊ से दूध की मक्खी

की तरह निकाल कर बाहर फेंक दिया गया हूँ। लखनऊ पर मेरा पूरा हक होते हुए भी आज कोई हक नहीं रह गया।"

जान चेरी जरा देर चुप रहने के बाद बोले—"लखनऊ के मौजूदा नौजवान नवाब वजीरअली खाँ के बारे में तो हम बहुत कुछ सुन रहे हैं। उनकी तेज मिजाजी और गुस्सा-चिढ़ बहुत जोर पकड़ रही है। अभी हाल में लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन के एक पत्र से मालूम हुआ था कि नवाब वजीरअली खाँ इतना आगे बढ़ आए हैं कि रजीडेन्सी की चारदीवारी के अन्दर भी अपनी हुकूमत चाहते हैं।"

"तब कम्पनी सरकार रजीडेन्सी के अन्दर उन्हें हुकूमत सौंप क्यों नहीं देती ?" सआदतअली खाँ ने कहा।

"यह कैसे हो सकता है ?" चेरी साहब ने गम्भीर होकर कहा—"वह हम लोगों पर हुकूमत करेंगे ? क्या कम्पनी सरकार उनकी तावेदार बन जाएगी ?"

"अगर ऐसा नहीं हो सकता तो कम्पनी सरकार चुप क्यों है ? अवध रियासत की सरपरस्ती तो कम्पनी सरकार पर है।"

"आपका कहना सही है। लेकिन कम्पनी सरकार जल्दबाज नहीं है। हमारे गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर बहुत सोच-समझ कर कदम आगे बढ़ाते हैं। जब उनके पास काफी वजूहात जमा हो जाते हैं तभी वह किसी काम में हाथ डालते हैं।"

"इसके मानी तो यह होते हैं कि जब रियासत बरबाद हो जाएगी, प्रजा तबाह हो जाएगी और लखनऊ के खान्दानी पुश्तैनी कारपरदाज लोग अपनी इज्जत-आबरू बचाने के लिए इधर-उधर भाग जाएँगे, नवाब गवर्नर जनरल बहादुर उस वक्त लखनऊ की तरफ अपना रुख करेंगे ?"

"ऐसा नहीं है अमीनुद्दौला साहब ?" लार्ड सर जानशोर बहुत समझदार और चारों तरफ झाँक कर कदम उठाते हैं। अवध रियासत की मौजूदा हालत, हजरत नवाब वजीरअली खाँ के हुकूमत की कोई बात उनसे छिपी नहीं है। रजीडेन्ट लिम्सडन भी मामूली रजीडेन्ट नहीं हैं। लखनऊ की रोज-रोज की खबर कलकत्ता भेजते रहते हैं। गवर्नर जनरल के सामने अवध रियासत के मसले की कुछ बातें ऐसी हैं जिन पर काफी गौर करने तथा सोचने समझने की जरूरत है। अवध रियासत की सरपरस्ती, हिफाजत और उसे कायम रखने के लिहाज से मौजूदा नवाब वजीरअली खाँ को गद्दी पर से हटाने के पहले एक-एक बात को तय कर लेना, उस पर विचार लेना लाजिमी है। वजीरअली खाँ को मसनद से हटा कर नये नवाब को मसनद पर बैठाने के पहले पेचीदा बातों को उनसे सुलझा लेना, अपनी शर्तें मंजूर करा लेना और कम्पनी सरकार की वफादारी का सौदा पटा लेना बहुत जरूरी है।"

सआदतअली खाँ जरा देर चुप रहे। फिर बोले—"मान लीजिए काफी सोचने-समझने के बाद लाट साहब आखरी नतीजे पर पहुँच गए। वजीरअली खाँ को गद्दी से

हटा कर दूसरे को बैठाने का इरादा कर लिया। उस सूरत में किसको गद्दी पर बैठाया जाएगा ? कौन हकदार समझा जाएगा ?"

सआदतअली खाँ के इस सवाल को सुन कर जान चेरी गम्भीर हो गए। दो क्षण खामोश रहे, फिर बोले—"लखनऊ की गद्दी के लिए हकदारों की क्या कमी है ? नवाब शुजाउद्दौला बहादुर की सही औलाद कही जाने वाली लखनऊ में काफी तादाद मौजूद है।"

"तब तो ऐसा मालूम होता है कि कम्पनी सरकार फिर वही गलती करेगी जो वजीरअली खाँ की मसनदनशीनी में की गई है।"

"कैसी ?" जान चेरी ने गौर से और कुछ विस्मय के साथ उनकी तरफ देखा।

"यानी किसी गैरहकदार को रियासत सौंप दी जाएगी। इंसाफ की तराजू एक तरफ पड़ी रहेगी ? ऐसा तो न होना चाहिए ?"

"आपकी नजर में सच्चा हकदार कौन है ?"

"इस बारे में आप मुझसे क्यों पूछते हैं ?" सआदतअली खाँ ने कहा—"आप खुद बरसों लखनऊ में रजीडेन्ट रह चुके हैं। नवाब शुजाउद्दौला के सभी लड़कों को जानते-पहचानते हैं। असफुद्दौला के बाद शुजाउद्दौला बहादुर का दूसरा बड़ा लड़का मैं हूँ। मेरा ही हक अवध रियासत पर पहुँचता है और सच पूछा-कहा जाए तो आसफुद्दौला के बाद मुझे ही मसनदनशीन किया जाना चाहिए था। मगर उस वक्त जाने क्यों इस बारे में न तहकीकात की गई न किसी तरह की जाँच-पड़ताल से काम लिया गया। सिर्फ आसफुद्दौला के एक गलत-सलत वसीयतनामे पर वजीरअली खाँ को मसनदनशीन कर दिया गया था।" फिर साँस लेकर कहा—"गवर्नर जनरल बहादुर को भी यह बात अच्छी तरह रोशन है कि आसफुद्दौला के बाद अवध रियासत का हकदार मैं ही था।"

"और लखनऊ में शुजाउद्दौला के जो लड़के मिरजा जंगली, मिरजा मेंडू और मिरजा हापड़ वगैरा मौजूद हैं, क्या वह लोग मसनद के हकदार नहीं हैं ?"

"हरगिज नहीं ?" सआदतअली खाँ ने कहा—"वह लोग मुझसे छोटे हैं। उनका हक मेरे बाद कहा जा सकता है।"

जान चेरी जरा देर खामोश बैठे कुछ सोचते रहे फिर सिर उठा कर सआदतअली खाँ की तरफ देख कर कहा—"मान लीजिए, अगर गवर्नर जनरल बहादुर आपको ही हकदार समझ लें और आपको ही नवाबी मसनद पर बैठाने का इरादा कर लें उस हालत में आप उनके मशविरे के मुताबिक हुकूमत करने का वादा करेंगे ? जो शर्तें वह आपके सामने रखेंगे, उन्हें आप बिला किसी हीले-वहाने के मंजूर करेंगे ? क्योंकि गवर्नर जनरल के सामने मुल्क अवध के निसबत कई बातें ऐसी चली आ रही हैं जो कम्पनी सरकार को एक उलझन में डाल देती हैं। दो-चार की मिसाल मैं इस वक्त आपके सामने रख सकता हूँ—अवध दरबार के खजाने से रजीडेन्सी का खर्च, वहाँ रहने वाली अंग्रेजी

हिन्दुस्तानी पल्टनों के मसारिफ का रुपया कभी वक्त पर अदा नहीं किया जाता, उसके लिए कोई ऐसा आसान तरीका निकालना होगा कि कम्पनी सरकार को रकम की वसूली में कोई अड़चन न पड़े। नवाब अवध से उस रकम का तकाजा न करना पड़े। दूसरी बात यह है कि अभी तक देखा जा रहा है कि अवध रियासत में कुछ कामों में बेकार रुपया खर्च किया जाता है, जैसे अपनी निजी फौजें, घोड़ों के रिसाले वगैरा वहाँ मौजूद हैं। जब लखनऊ में कम्पनी सरकार की पल्टनें और रिसाले मौजूद हैं उस हाल में अवध दरबार को अपनी फौजें कायम रखना गलत है। सिर्फ इतनी फौज रियासत में रखी जाना चाहिए जिसके जरिए रियासत का जरूरी काम चलता, निकलता रहे। तीसरी बात अवध के नवाब को वहाँ के रजीडेन्ट की इसलाह से अपनी रियासत का काम-काज इन्तजाम-बन्दोबस्त करना होगा। जिससे कोई गड़बड़ी पैदा न हो सके।" फिर जरा देर खामोश रह कर कहा—"यह चन्द बातें हमने अपने ख्याल के मुताबिक जाहिर की हैं। सही मशविरा और मुनासिब शर्तें गवर्नर जनरल बहादुर ही कर सकते हैं।"

सआदतअली खाँ खामोश बैठे सुन रहे थे। अंतस में आशा और निराशा में संघर्ष छिड़ा था। विचारों की भी खिचड़ी पक रही थी। इस वक्त सौदा चाहे जितना मँहगा पड़े उसे पटा लेना बहुत जरूरी है। वरना अपना हक गढ्ढे में पड़ जाए। मिरजा जंगली-मेंडू वगैरह आँखें बन्द करके हर बात को मंजूर कर लेंगे।

रजीडेन्ट जान चेरी के चुप होते ही सआदतअली खाँ बोले—"हम तो एक अर्से से कम्पनी सरकार के फरमांबरदार रहे हैं। इसलिए हम गवर्नर जनरल के इसलाह मशविरे या उनकी शर्तों को कैसे टाल सकते हैं? जो कुछ भी वह कहेंगे हमें मंजूर होगा।" फिर बड़े मीठे लहजे से कहा—"आप हमारे दोस्त और मेहरबान हैं। इसलिए इस बारे में आप हमारी मदद करें।"

"बेहतर है।" जान चेरी ने इतमीनान से कहा—"आप अपने इस वादे को कल कागज पर लिख कर लाइए। हम उसे अपनी शिफारिश के साथ कलकत्ता भेज देंगे।"

इस प्रकार सौदा पट गया। सआदतअली खाँ खुश-खुश अपनी कोठी में लौट आए।

२२

कम्पनी सरकार के महासेनापति लार्ड सर जान शोर कलकत्ता में बैठे हुए मुल्क अवध के नवाबी शासन की उड़ती हुई खबरें सुन रहे थे। लेकिन उन खबरों ने अभी तक महासेनापति को किसी प्रकार से चौंका कर सचेत नहीं किया था। एक दिन भारत के

चारों कोने से आने वाली डाक जैसे ही लाकर उनकी मेज पर चुनी गई। सहसा उनकी दृष्टि सर्वप्रथम लखनऊ के रजीडेन्ट द्वारा भेजे गए एक बड़े से लिफाफे पर पड़ी। उन्होंने तत्परता से उसे हाथ में लेकर खोला। उसमें दो-दो पत्र थे। एक लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन का था, जिसके साथ एक छोटी सी तहरीर नवाब शुजाउद्दौला बहादुर की बेगम नवाब बहू-बेगम साहिबा की भी सम्मिलित थी। दूसरा पत्र लखनऊ के नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ का था। महासेनापति के लिए वे दोनों पत्र ध्यान देने योग्य तथा उन पर विश्वास करके सोते से जगा देने वाले थे। क्योंकि कम्पनी सरकार ने लखनऊ राजधानी में रजीडेन्ट को इसीलिए बैठा रखा था कि वह अवध रियासत पर खुली नजर रखते हुए वहाँ के शासन तथा शासक दोनों की भीतरी-बाहरी जानकारी प्राप्त करके उन्हें सूचित किया करे। अतः रजीडेन्ट का वह पत्र उनके लिए बड़े महत्व का था। उसमें लिखी हुई किसी बात पर सन्देह अथवा अविश्वास करने की गुंजायश न थी। उसके साथ जो एक छोटी सी तहरीर बहू-बेगम की शामिल थी वह भी कुछ कम कीमती न थी।

दूसरा पत्र लखनऊ के नायबुल रियासत का लिखा हुआ भी अमूल्य था क्योंकि लखनऊ के नायबुल रियासत भी एक प्रकार से उन्हीं के आदमी थे। उन्हीं की शिफारिश पर उस पद पर आसीन किए गए थे, अतः उनकी लिखी हुई बातें भी शर्बत के घूंट की तरह उतार लेने योग्य कही जा सकती थी। बल्कि रजीडेन्ट के पत्र की अपेक्षा नायबुल रियासत का पत्र महासेनापति के लिए अधिक विश्वासनीय तथा ध्यान देने योग्य था। क्योंकि महासेनापति की धारणा थी कि वहाँ के शासन के सम्बन्ध में लखनऊ के रजीडेन्ट की वह सच्ची जानकारी प्राप्त नहीं हो सकती जो नायबुल रियासत की हो सकती है। रजीडेन्ट फिर भी उन सवातों से दूर ही कहा जा सकता है।

लार्ड महोदय ने सर्वप्रथम अल्लामा तफज्जुल हुसैन का पत्र पढ़ा, फिर रजीडेन्ट तथा नवाब बहू-बेगम की तहरीर पढ़ी। तीनों पत्रों में लगभग एक ही विषय को लेकर उन्हें सचेत किया गया था। पत्रों में मुख्य रूप से अवध रियासत के वर्तमान नवाब वजीरअली खाँ की गलत मसनदनशीनी, उनकी जवानी-दीवानी की अनुचित हरकतों, अयोग्यता, उदण्डता, तेजमिजाजी तथा राज-काज की ओर से लापरवाही आदि पर जोर दिया गया था। रजीडेन्ट ने अपने पत्र में उन्हीं बातों को नमक-मिर्च लगा कर अधिक चटपटा बना दिया था। पत्रों को कई बार पढ़ने के बाद उनके दिल में एक हलचल सी पड़ गई। किन्तु तत्काल उनके बारे में कोई विशेष निश्चय न कर सके। कहीं ऐसा न हो कि मुल्क अवध में युवक नवाब की अयोग्यता, उदण्डता के कारण कोई विशेष गड़बड़ी न उत्पन्न हो जाए। कहीं कोई भारी फसाद न खड़ा हो जाए। रियासत में नवाबी फौज-फाटे की भी कमी नहीं है। सेना हमेशा अपने मालिक, राज्य के शासक की आज्ञाकारी हुआ करती है। शासक के इशारे पर खून खराबी के लिए तैय्यार हो सकती है। उसे

आगा-पीछा देखने की जरूरत नहीं हुआ करती। सेना के लिए अपने मालिक की आज्ञा तथा उसके इशारे पर टूट पड़ने के लिए काफी हुआ करती है। मुमकिन नवाब अपनी जवानी-दीवानी के जोश-खरोश तथा तेजमिजाजी की गरमा-गरमी में कोई भयानक उत्पात खड़ा कर दे....जैसा कि रजीडेन्ट ने अपने पत्र में लिखा है कि नवाब अवध लखनऊ रजीडेन्सी के अन्दर अपनी हुकूमत चाहते हैं। अतः सम्भव है कि किसी दिन वह अपनी सेना को लेकर रजीडेन्सी पर चढ़ दौड़े! खून खराबी की नौबत आ जाए।

इस प्रकार के विचारों ने लार्ड सर जान शोर को बहुत बड़ी परेशानी में डाल दिया। इस बारे में वह जितना सोचते थे, उलझन को जितना सुलझाने की चेष्टा करते थे उतना ही अधिक उलझ जाते थे। उनके सामने कुछ ऐसी अन्य उलझनें आकर खड़ी हो जाती थीं जो उन्हें किसी निश्चय पर नहीं पहुँचने देती थीं। कई दिन इसी उधेड़-बुन में व्यतीत हो गए।

हसनमामूल जब एक दिन की डाक फिर लाकर उनके सामने रखी गई, उसमें सबसे ऊपर एक सीलबन्द बड़ा-सा लिफाफा था। उठा कर खोला उसके अन्दर के कागजों पर नजर डाली। पहले कागज के लेख को अभी पूरा नहीं पढ़ पाए थे कि एकदम लार्ड महोदय के चेहरे की रंगत बदल गई। मानो उन्हें अपनी उलझन का छोर बड़े आसान तरीके से प्राप्त हो गया था। वह जैसे-जैसे आगे पढ़ते चले जा रहे थे, उनका चेहरा प्रसन्नता से भरता जा रहा था। वह लेख-पत्र बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी का था। उन्होंने अवध रियासत के सच्चे हकदार सआदतअली खाँ से अवध की मसनदनशीनी का सौदा पटा कर, लखनऊ के गैरहकदार तथा उदण्ड नवाब वजीरअली खाँ को गद्दी से हटा कर और सआदतअली खाँ को गद्दी पर बैठाने की जोरदार शिफारिश की थी। लखनऊ में रजीडेन्ट रहते हुए नवाब खानदान की जितनी जानकारी उन्हें प्राप्त थी उसका सविस्तार वर्णन करते हुए अन्त में लिखा था कि सआदतअली खाँ के सिवा दूसरा कोई भी इस वक्त हकदार रियासत नहीं ठहराया जा सकता। अपने इस पत्र के साथ जान चेरी ने सआदतअली खाँ की लिखित तहरीर भी शामिल करके भेजी थी, जिसमें उन्होंने हर इसलाह तथा हर शर्त को मंजूर करने का वादा किया था।

लार्ड सर जान शोर ने बड़ी उत्सुकता के साथ एक सांस में ही सआदतअली खाँ की तहरीर को भी पढ़ डाला। सआदतअली खाँ की लिखी हुई तहरीर का अन्तिम वाक्य स्पष्ट रूप में लार्ड महोदय के मुँह से निकल पड़ा—'कम्पनी सरकार मेरी मसनद के विषय में जैसी भी शर्तें मेरे सामने रखेगी, उन्हें स्वीकार करने में मुझे किसी प्रकार की झिझक न होगी।

लार्ड सर जॉन शोर उछल पड़े। मानो उनको बहुत बड़ी सम्पत्ति प्राप्त हो गई हो अथवा बहुत बड़ी मुसीबत से छुटकारा मिल गया हो। उन्होंने मन ही मन बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी की सराहना की और धन्यवाद दिया। इसके बाद सआदतअली खाँ

की तहरीर को पुनः बड़े ध्यान से आदि से अन्त तक दो बार पढ़ा। एक शब्द को गले उतार कर धीरे से कहा—मसला बड़ी आसानी से और सहज ही में आसान हो गया। वजीरअली खाँ को गद्दी से हटा कर उस पर सआदतअली खाँ को बैठा देने से कम्पनी सरकार तथा अवध के नवाब के दरमयान जो लिखा-पढ़ी होगी वह कम्पनी सरकार के लिए बड़े हित की होगी। वह संधि-पत्र ऐसा लिखा जाएगा, उसमें कुछ ऐसी धाराएँ रखी जाएँगी, जिनके अनुसार अवध का कम से कम आधा राज्य कम्पनी राज्य में सम्मिलित हो जाए और अवध का नवाब हमेशा-हमेशा के लिए पंख कटे पक्षी की भाँति पिंजड़े में बन्द होकर फड़फड़ाया करे।

लार्ड महोदय का चेहरा एक विचित्र प्रकार की प्रसन्नता से भरा हुआ था। रह-रह कर मुस्कान होंठो के कोनों में आकर विलीन हो जाती थी।

दूसरे दिन ही गवर्नर जनरल ने अपने अंग-रक्षकों, सेक्रेटरी, कुछ अन्य अंग्रेज अफसरों तथा एक यूरोपीयन पल्टन अपने साथ लेकर कलकत्ता से बनारस की ओर गंगा नदी के मार्ग से कूच कर दिया।

बनारस पहुँच कर उन्होंने वहाँ के रजीडेन्ट को उनकी कारगुजारी पर हार्दिक धन्यवाद दिया। फिर उन्हीं के जरिए नवाब सआदतअली खाँ को मुलाकात के लिए बुलाया।

सआदतअली खाँ तो जिस दिन से अपनी तहरीर बनारस के रजीडेन्ट के हाथ में दे आये थे उसी दिन से उसके नतीजे के लिए बेचैन रहते थे। अकसर मौलवी सद्दन से उस बारे में घण्टों आशापूर्ण बातें किया करते थे। गवर्नर जनरल के बनारस तशरीफ लाने की खबर पाकर तथा मुलाकात का पैगाम पाते ही खुशियों से भर गये। आत्मा पुकार उठी; शायद हमारी तहरीर का परिणाम खुशियों से भरा नजर आयेगा। गिरते-पड़ते बग्घी में सवार होकर गवर्नर जनरल की सेवा में पहुँच गये। फिर भी हृदय धड़क रहा था। क्योंकि उन्हें अभी तक इसका थोड़ा भी पता न था कि लार्ड सर जान शोर दल-बल सहित कलकत्ता से रवाना होकर नवाब वजीरअली खाँ को मसनद से हटाने के इरादे से सीधे लखनऊ आ रहे हैं। वह समझ रहे थे कि शायद वह मेरी तहरीर तथा बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी की शिफारिश को पाकर कलकत्ता से बनारस तक ही आए हैं और खुद दू-बदू होकर इस बारे में अपने विचार प्रकट करेंगे। अपनी शर्तें मेरे सामने रखेंगे।

लार्ड सर जान शोर ने सआदतअली खाँ से मुलाकात की। मुलाकात में जान चेरी भी शामिल थे।

गवर्नर जनरल ने सबसे पहले मसनदनशीनी का जिक्र करते हुए सआदतअली खाँ के सामने कम्पनी सरकार की कुछ मोटी-मोटी शर्तें उनके सामने रखीं।

सआदतअली खाँ ने सिर झुका दिया। वह तो किसी भी मूल्य पर अवध की नवाबी का सौदा पटा लेना चाहते थे। नम्रतापूर्वक अर्ज किया—"मैं अपनी तहरीर

लिख कर साहबे वालाशान के पास भेज चुका हूँ। हरगिज उससे इधर-उधर नहीं हो सकता। फिर आप खुद जानते हैं कि मैं हमेशा से कम्पनी सरकार का फरमांवरदार रहा हूँ। ऐसी सूरत में ख्याल फरमाने की बात है कि जब कम्पनी सरकार मेरे हक पर गौर करने को तैयार है तथा साहबे आलीशान अपनी मेहरबानियाँ मुझ पर उछाल रहे हैं, मेरी क्या हस्ती है कि मैं कम्पनी सरकार के सलाह-मशविरे तथा शर्तों के खिलाफ एक इंच भी इधर से उधर हो सकूँ, किसी भी हुक्म को मानने में कुछ चूँ-चरा कर सकूँ।"

लार्ड सर जान शोर सआदतअली खाँ का कहना सुन कर सन्तोष के साथ बोले—"तब ठीक है? जब आप हमारी हर एक शर्त मानने को तैयार हैं, हमारे मशविरे पर चल कर अवध रियासत में हुकूमत करने का सच्चा-पक्का वादा कर रहे हैं तो हम जरूर आपका हक आपको दिलाएँगे।" फिर जरा रुक कर कहा—"हम इसी इरादे से कलकत्ता से निकले हैं और लखनऊ के नवाब वजीरअली खाँ का फैसला करने के लिए लखनऊ जा रहे हैं। इसलिए बेहतर होगा कि आप बनारस से कानपुर पहुँच कर वहाँ हमारी छावनी में ठहरें। मौके पर हम आपको लखनऊ बुला लेंगे।"

मुलाकात खतम हो गई। सआदतसली खाँ फूला कलेजा लिए अपनी कोठी को लौट गए।

इधर गवर्नर जनरल ने बनारस से खुशकी के रास्ते जौनपुर चाँदे से लखनऊ की तरफ अपने लाव-लश्कर को कूच करने की आज्ञा प्रदान की। और कम्पनी सरकार का लाव-लश्कर काली बला की तरह लखनऊ की तरफ बढ़ चला। अवध इलाके के जिस गाँव से लश्कर गुजरता था, वहाँ न किसी प्रकार की गड़बड़ी पाई जाती थी न प्रजा को युवक नवाब में कोई शिकायत थी। बल्कि गाँव के लोग आपस में अंग्रेजों के इस दल-बल को देख कर कहते सुनते पाये जाते थे :—

"अंग्रेजों की ये गोरी पल्टन क्यों लखनऊ की तरफ जा रही है? कोई विशेष कारण मालूम होता है?"

"लेकिन हमारे नवाब वजीरअली खाँ तो शान्तिपूर्वक राज्य-काज चला रहे हैं। किसी को कोई शिकायत नहीं है। सब काम उसी प्रकार चल रहा है जैसा कि नवाब आसफुद्दौला के समय में चलता था।"

"किसी ने कोई लूका लगाया होगा?"

"लूका लगाया होगा तो कम्पनी सरकार के इस फौज फाटे को हमारी अवध सरकार से क्या मतलब है? हमारे नवाब हर तरह से अपने राज्य के मालिक मुख्तार हैं।"

"एक बात अवश्य है। नवाब वजीरअली खाँ के कार्यकरता नमकहराम हैं। सुना जाता है कि सच्चे दिल से नवाब का साथ नहीं दे रहे। कल जगन काका लखनऊ से आए हैं। वह बता रहे थे कि नवाब वजीरअली खाँ के प्रधान कार्यकरता खान

अल्लामा नवाब के खिलाफ हैं। अपनी डफली दूसरी तरह बजा रहे हैं। अतः ऐसा आभास होता है कि उन्होंने ही कोई लूका लगाया होगा और ये गोरी पल्टनें वहाँ पहुँच कर कुछ उत्पात खड़ा करेंगी।"

एक गाँव के निकट से लाव-लश्कर के गुजरने पर वहाँ गुहार मच गई—"होशियार हुई जाओ जमींदार काका हरो ? दिन दहाड़े गोरंटे सिपाही गाँव का लूटैं आय रहे हैं।"

और कुछ क्षणों में डेढ़ दो सौ लाठीबन्द जवान गाँव के बाहर आकर मोर्चा बाँध कर खड़े हो गए। उनके चेहरों पर गोरी सेना का मुकाबला करने का जोश चमक रहा था। बाजू फड़क रहे थे और लाठियाँ सँभाली जा रही थीं। सब की निगाहें अंग्रेजी पल्टन पर जमी हुई थीं और उसकी गतिविधि को ताक-समझ रही थीं।

लार्ड सर जान शोर ने इस दृश्य को अपनी आँखों से देखा। शीघ्र ही पल्टन के कप्तान को अपने निकट बुला कर समझाया—"किसी से कोई छेड़छाड़ न की जाएं। चुप-चाप अपनी राह चला जाय। अगर गाँव के किसी जमींदार या किसान वगैरह से कोई भूल भी हो जाय, तो उस पर कोई ध्यान न देकर तरह दे दी जाए। हमें रास्ते में किसी तरह का फसाद पैदा नहीं करना है। लोग जो कुछ कह-सुन रहे हों उन्हें कहने दिया जाय।"

अंग्रेजी पल्टनें बड़े शान्त भाव से चुपचाप गाँव से आगे निकल गईं। किसी ने उन मोर्चा बाँधे खड़े लाठी बन्द देहातो जवानों की तरफ निगाह भी नहीं घुमाई।

जब अंग्रेजी लाव-लश्कर आँखों से बिलकुल ओझल हो गया। उनकी गर्द भी बाकी न रह गई, गाँव के लोगों ने अपना मोर्चा तोड़ कर घरों की ओर मुख मोड़ा।

एक नवयुवक ने मुस्कराते हुए एक अधेड़ व्यक्ति से कहा—"मनकू काका ! हम तो जानी ई गोरंटे हमार गाँव लूटै आए हैं। पै वई सब तो मूड़ औंधाए, कूकुर अस पूंछ दबाए भागे चलेंगे ?"

एक दूसरा देहाती युवक सगर्व बोल उठा—"अरे हमार मोर्चा देख कै गोरंटन का जीव सूखगा होई। तबहीं कूकुर अस पूंछ दबाए भागे चले गे हैं। जानत रहे हुई हैं कि ऐकै लाठी की मार माँ दस पच्चीस गोरंटे धरती सूंघै लगिहै।" और वह हँस पड़ा।

मनकू काका ने कहा—"भैया ! इन गोरंटन का भेद-भाव जानब बड़ा कठिन है। जाने कऊन भेद लैके लखनऊ जाय रहे हैं ?"

एक दूसरा अधेड़ व्यक्ति बोला—"फुर कहत हौं मनकू भाई ! हुवां लखनऊ मां जायकै ई गोरंटे जरूरै काऊनौ उत्पात खड़ा करिहैं।"

एक तीसरा अधेड़ व्यक्ति बोला—"हुवां जायकै जो कऊनौ ऊधम मचईहैं तो भुट्टा अस भूंज डारे जइहैं ? हमारे नवाब के पास फौज-फाटा की कमी नाहीं है।"

एक तरुण धीरे से बोला—"हमारे गाँव की ओर तनिको मुंह फैरतें तो लाठिन की ऐसन मार परत...." और वह हँस पड़ा !

कुछ दूसरे तरुण-युवक भी हँस पड़े। और सब अपने-अपने घरों की ओर मुड़ बढ़ गए।

महासेनापति लार्ड सर जान शोर का लश्कर कूच करता हुआ लखनऊ के निकट पहुँच गया।

युवक नवाब वजीरअली खाँ हस्बमामूल अपनी रंगरलियों में मस्त थे। एकाएक लाट साहब के लखनऊ आ पहुँचने की खबर पाकर चौंक पड़े। समझ में न आया कि ये बेवक्त की शहनाई कैसे बज उठी ? लाट साहब बिना किसी सूचना-खबर के गुप-चुप तरीके से किस काम के लिए लखनऊ आये हैं ? चूंकि नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ से तो हजरत सलामत को दिली नफरत थी, उन्हें एक अर्से से अपने पास नहीं फटकने देते थे, इसलिए हजरत ने एक प्रकार से नायबुल रियासत का काम आफरीअली खाँ को सौंप रखा था। उन्हीं को अपने पास बुला कर राज्य का काम-काज समझा करते थे और हुक्म अहकाम जारी कराते रहते थे।

लाट साहब के आने की खबर पाकर भी उन्होंने आफरीअली खाँ को तलब करके पूछा—"लाट साहब किस लिए लखनऊ तशरीफ लाए हैं ? उनके आने की पहले तो कोई खबर थी नहीं ? लखनऊ के रजीडेन्ट ने भी कोई इत्तला हमारे पास नहीं भेजी थी ?"

"कमतरीन भी उनके एकाएक आ पहुँचने से हैरानी-परेशानी में पड़ा हुआ है।" आफरीअली खाँ ने अनभिज्ञता के भाव से कहा—"ऐसा तो कभी नहीं हुआ। हमेशा उनके तशरीफ लाने की इत्तला बहुत पहले से हो जाया करती थी। इस तरह चुपचाप तशरीफ लाने का शायद यह पहला ही मौका है।"

"खैर," वजीरअली खाँ ने कहा—"वह आ तो गए ही हैं। अब हम ये जानना चाहते हैं कि रियासत के दस्तूर-कायदे के मुताबिक उनके साथ कैसा क्या सलूक बर्ताव किया जाना चाहिए ?"

"आला हजरत ?" आफरींअली खाँ ने कहा—"अवध रियासत के पुराने दस्तूर कायदे के मुताबिक उनका इसतकबाल किया जाना चाहिए।"

"ठीक है ?" वजीरअली खाँ ने साधारण तरीके से कहा—"तुम जाकर रियासत के दस्तूर कायदे के मुताबिक लाटसाहब के इस्तकबाल, पेशवाई का जल्दी इन्तजाम करो। हम गुसल लेकर तैय्यार हो रहे हैं। पेशवाई का इन्तजाम हो जाने पर हमें खबर की जाना चाहिए।"

आफरींअली खाँ चले गए। उनके जाने के बाद हजरत सलामत ने गुसलखाने में जाकर गुसल लिया। पोशाक बदली, विलायती तलवार कमर से लटकाई और तैय्यार हो गए। दरे-दौलत के बाहर लाटसाहब की पेशवाई का इन्तजाम हो चुका था। हजरत सलामत नवाब अवध मिरजा वजीरअली खाँ बहादुर बड़े कर-व-फर के साथ महल से बाहर तशरीफ लाए। हाथी पर सवार हुए। चार यार बतौर हजरत के अंग-रक्षकों के उनके

पीछे अकड़-ऐंठ के साथ बैठ गए। कायदे के अनुसार दूसरे लोग भी सवारियों पर बैठ कर चाँदा प्रतापगढ़ पर जा पहुँचे। नियमानुसार लाटसाहब की पेशवाई की गई। स्वागत सत्कार हुआ और भेंट मुलाकात की गई। चाँदा प्रतापगढ़ से चल कर लाटसाहब लखनऊ में दाखिल हुए। नवाब वजीरअली खाँ ने उन्हें अपना मेहमान बना कर चारबाग की कोठी में ठहराना चाहा। लेकिन लार्ड महोदय ने रजीडेन्सी में ठहरना पसंद किया और जाकर वहीं ठहर गए।

अभी तक लखनऊ के लोगों को गवर्नर जनरल के आने का कोई कारण नहीं मालूम हुआ था और आम लोगों में एक सन्नाटा सा छा रहा था। लेकिन नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन तथा उनसे लगे-लिपटे रियासत के दूसरे ओहदेदार और अफसर तथा विशेष रूप से नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ का पूरा विश्वास जमा हुआ था कि लार्ड महोदय लखनऊ की नवाबी का तख्ता उलटने के लिए ही तशरीफ लाए हैं। इसके अलावा यह भी अच्छी तरह समझ रहे थे कि इस विषय में हमलोगों से अवश्य पूछताछ होगी। अतः वे सबलोग अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ के यहाँ जमा होकर गुप-चुप रूप से अपनी खिचड़ी पका रहे थे।

पहला दिन शान्तिपूर्वक गुजर गया। दूसरे दिन सवेरे से ही लार्ड सर जान शोर की आज्ञा से रजीडेन्सी के अहाते के बाहर तथा भीतर भी कड़े पहरे खड़े हो गए। और लार्ड महोदय ने चुप-चाप अपना काम शुरू कर दिया। सबसे पहले नायबुल रियासत तथा नवाब नाजिर को उनके सामने बुलाया गया। उन्हें इज्जत के साथ कुर्सियों पर बैठाया गया। दो चार क्षण खामोशी का वातावरण रहा। लार्ड महोदय के हाथों में कुछ कागजात थे। उन्हीं पर उनकी नजर जमी हुई थी।

कुछ देर बाद लार्ड सर जान शोर ने कागजों पर से नजर हटा कर बड़े इतमीनान के साथ नायबुल रियासत अल्लामा तफज्जुल हुसैन की तरफ देखा। अल्लामा सँभल कर बैठ गए।

लार्ड महोदय ने कहा—"आपकी तहरीर जो हमें कलकत्ता में मिली थी उसमें नवाब वजीरअली खाँ की गलत मसनदनशीनी के साथ गद्दी का हक हकदार को पहुँचने का जिक्र किया गया है। हम जानना चाहते हैं कि वजीरअली खाँ की मसनदनशीनी में क्या गलती हुई है? क्या वह नवाब आसफुद्दौला बहादुर के सही और जायज बेटे नहीं हैं?" उनका हक अवध रियासत की मसनद पर बैठने का नहीं था?"

खान अल्लामा ने नम्रतापूर्वक कहा—"साहबे आलीशान! सभी लोग जानते हैं कि नवाब आसफुद्दौला बहादुर के एक भी जायज औलाद नहीं थी। जितने भी नवाबजादे हजरत के नाम से वास्ता हैं, उनकी ही औलाद कहे जाते हैं, वे सभी ऐसे-वैसे ही हैं। हजरत के नुत्फे से एक भी पैदा नहीं हुआ। हजरत वजीरअली खाँ भी उन्हीं में से एक हैं।

"लेकिन इस बात पर किस तरह यकीन किया जाए ? इस बात की पूरी तस्दीक तहकीक किस तरह हो सकती है ? नवाब आसफुद्दौला अपनी वसीयत में वजीरअली खाँ को अपनी सही औलाद बता गए हैं और एक तहरीर के जरिए हमें भी ऐसी ही इत्तला दी गई थी। लिखा गया था कि मेरे बाद मिरजा वजीरअली खाँ ही रियासत के वारिस और हकदार हैं। इसीलिए उनकी उस वसीयत को सही मान कर उस वक्त बिला किसी संकोच या जाँच-पड़ताल के नवाब वजीरअली खाँ मसनदनशीन कर दिए गए थे।"

"नवाब आसफुद्दौला बहादुर की उस वसीयत के बारे में फिदवी कुछ भी अर्ज नहीं कर सकता।" अल्लामा ने कहा—"क्योंकि उस वसीयतनामे का हाल आमतौर पर किसी को मालूम नहीं है। शायद दो-चार लोग ही उससे वाकिफ हों ? फिर फिदवी उस वक्त नायबुल रियासत के ओहदे पर भी नहीं था। मुमकिन है नवाब नाजिर साहब उस वसीयत के बारे में कुछ जानते हों।"

सर जान शोर एक क्षण खामोश रहे। फिर नवाब नाजिर से कहा—"कहिए ? आप उस वसीयत के बारे में कुछ कह सकते हैं या नवाब आसफुद्दौला की सही औलाद के विषय में सही बात हमारे गले उतार सकते हैं ?"

नवाब नाजिर सँभल कर बैठ गए और बड़े इतमीनान से बोले—"साहबे वालाशान ? नवाब आसफुद्दौला बहादुर के नुत्फे से सिर्फ एक लड़का एक खानदानी बेगम की कोख से बुरहानअली खाँ नामी पैदा हुआ था। जो उनकी सही औलाद कहा जा सकता था। लेकिन वह बचपन में ही कजा कर गया था और उसके रंजोअलम में दो माह बाद उसकी वाल्दा माजिदा बेगम साहिबा भी कजा कर गई थीं। उसके बाद हजरत के नुत्फे से किसी भी बेगम से कोई औलाद पैदा नहीं हुई ?"

"और वसीयतनामे के बारे में आप क्या जानते हैं ?" सर जान शोर ने पूछा।

"वसीयतनामे के बारे में अर्ज यों है कि वह वसीयतनामा बहुत गुपचुप तरीके से जनाबअली ने तहरीर किया था।"

"उसमें गवाहों की शकल में सिर्फ दो तीन शख्सों के दस्तखत कराए गए थे। अगरचे उस पर फिदवी की भी मोहर मौजूद है, मगर अर्ज है कि ब-मजबूरी जनाबआली के दबाव और चश्म मुरव्वत से उस पर मोहर लगानी पड़ गई थी।"

"ये मामला तो बहुत उलझा हुआ सा है ?" सर जान शोर ने धीरे से नवाब नाजिर की तरफ निगाह फेर कर कहा—"इसकी सही तहकीक किस तरह की जाए ? किसी के जरिए यह उलझन सुलझ सकती है ?"

"इसकी तहकीक के दो ही जरिए हैं ?" नवाब नाजिर ने बड़े इतमीनान से कहा "एक नवाब बहू-बेगम साहिबा नवाब आसफुद्दौला की वालिदा माजिदा के जरिए। दूसरी नवाब आसफुद्दौला की मनकूहा बेगम नवाब खासमहल साहिबा से। चूंकि इस वक्त नवाब बहू-बेगम साहिबा लखनऊ में मौजूद नहीं हैं। हजरत वजीरअली खाँ की कुछ बेजा हर-

कर्तों की वजह से नाराज होकर फैजाबाद चली गई हैं और वहीं तशरीफ फरमा हैं, लेकिन नवाब खासमहल साहिबा अपनी खास कयामगाह मच्छी भवन में मौजूद हैं। उनसे मुलाकात की जाकर सचाई की तस्दीक फरमाई जा सकती है।"

"नवाब बहू-बेगम साहिबा की इस बारे में हमारे पास एक छोटी सी तहरीर मौजूद है। इसलिए इस वक्त हमें उनसे कुछ दरयाफ्त करने की जरूरत नहीं मालूम होती।" सर जान शोर ने धीरे से कहा। "बेहतर है। हम नवाब खासमहल साहिबा से मिलना चाहेंगे।"

उस वक्त की बैठक खतम हो गई।

उसी दिन संध्या समय लार्ड सर जान शोर चुपचाप मच्छी भवन जा पहुँचे। नवाब खासमहल साहिबा से मुलाकात चाही।

नवाब खासमहल को लाट साहब के आने का पता हो चुका था और इसका भी उन्हें कुछ आभास मिल गया था कि हजरत वजीरअली खाँ की गलत मसनदनशीनी का मसला हल करने के लिए लाट साहब एकाएक लखनऊ पधारे हैं। अतः उनके मुलाकात चाहने पर उन्होंने कोई हीला बहाना नहीं किया। कायदे के अनुसार मुलाकाती कमरे में पर्दे के पीछे आकर मसनदनशीन हो गईं। लौंडियाँ-बाँदियाँ कायदे से अपने-अपने स्थान पर मौजूद थीं। पर्दे के दूसरी तरफ लाट साहब आकर कुर्सी नशीन हो गए। और अपना प्रश्न उनके सामने रख कर सचाई की ख्वाहिश जाहिर की।

नवाब खासमहल ने बड़े इतमीनान के साथ कहना शुरू किया—"इस दुनिया जहान में जो शौहर और बीवी का ताल्लुक मशहूर है वह हमें कभी नसीब नहीं हुआ। न नवाब हमसे कभी मिले, न हमने ही कभी उनसे मिलने की ख्वाहिश जाहिर की। ऐसी सूरत में सही औलाद और रियासत के सही वारिस हकदार का क्या सवाल पैदा हो सकता है। ये बात दूसरी है कि नवाब के नाम के साथ जिन नवाबजादों का ताल्लुक-लगाव मौजूद है, उन सबको हम अपना समझा करें। क्योंकि दुनिया में रहते हुए इंसान को ऐसा करने के लिए मजबूर हो जाना पड़ता है।"

नवाब खासमहल की जबान से ये साफ-सुथरा सच्चा बयान सुन कर लार्ड महोदय नतीजे पर पहुँच गए। उन्हें इतमीनान हो गया कि हजरत वजीरअली खाँ किसी सूरत में भी नवाब आसफुद्दौला की सही सच्ची औलाद नहीं हैं और लखनऊ की नवाबी तक उनका कोई हक नहीं पहुँचता।

अतः लार्ड सर जान शोर जिस मतलब को लेकर लखनऊ आए थे उसे डिगाने की किसी में हिम्मत न थी। उन्होंने जो विचार कर लिया था, जो धारण बना ली थी अब उसके लिए अधिक छान-बीन, जाँच-पड़ताल की आवश्यकता भी नहीं प्रतीत होती थी। सआदतअली खाँ से सौदा पट ही चुका था। कम्पनी सरकार का बहुत बड़ा स्वार्थ पूरा हो रहा था और नवाब वजीरअली खाँ को मसनद से उतार कर सआदतअली खाँ को

बैठा देना ही ठीक था। अभी तक उन्होंने जो छान-बीन का एक साधारण सा नाटक रचा था वह एक दिखावे की बात थी। और इसलिए भी था कि जिसमें कम्पनी सरकार दूध की धोई प्रसिद्ध रहे। उसकी न्यायप्रियता का संसार में बोलबाला रहे।

लार्ड सर जान शोर नवाब खासमहल साहिबा को धन्यवाद देकर मच्छी भवन से रजीडेन्सी में लौट आए। चिराग जल चुके थे।

दूसरे दिन पहर दिन चढ़े लार्ड महोदय ने अपने रंगमंच का दूसरा पर्दा उठाया। एक नवीन दृश्य प्रस्तुत किया। रजीडेन्सी के अहाते के अंदर लखनऊ के नवाब वजीर-अली खाँ की सरकार के जितने भी लोग कर्मचारी, मुंशी, दूत तथा अन्य नौकर-चाकर महाप्रभु के आदर सत्कार और मेहमानदारी के अभिप्राय से वहाँ मौजूद थे। उन सबके सामने लखनऊ की नवाबी सरकार के प्रति अपनी महान नाराजगी जाहिर की और उसके फलस्वरूप उसी समय अपने समस्त साथी पल्टन आदि सहित रजीडेन्सी से कूच करके बीबीपुर पहुँच गए और वहाँ की कोठी में डेरा डाल कर बैठ गए।

इस नवीन दृश्य के पीछे महाप्रभु का एक विशेष विचार छिपा था।—यदि रेजी-डेन्सी के अहाते के अन्दर बैठ कर नवाब वजीरअली खाँ को गद्दी से उतारने का कोई नाटक खेला जाएगा। सम्भव है कि लखनऊ शहर के अन्दर बहुत बड़ा बलवा-फसाद खड़ा हो जाए। खून-खराबी की नौबत आ जाए। क्योंकि लखनऊ की जनता में युवक नवाब के शासन का न कोई शोर-गुल पाया जाता है न किसी को कोई शिकवा-शिकायत है। सारी जनता उसके शासन से उसी तरह संतुष्ट है जिस प्रकार नवाब आसफुद्दौला के शासन से थी। इस सबका एक विशेष कारण यह भी मालूम होता है कि यहाँ की जनता वजीर-अली खाँ को नवाब आसफुद्दौला की सही औलाद ही समझ रही है और उन्हें उसी नजर से देख रही है जिस नजर से आसफुद्दौला को देखती थी। दूसरी बात यह है कि लखनऊ में अभी नवाबी फौज-रिसाला भी काफी तादाद में मौजूद है। सिपाह हमेशा हाकिमे वक्त की फरमाबरदार हुआ करती है। उसमें भी जोश-उबाल पैदा हो सकता है और बजाय सहूलियत के बहुत बड़ी दिक्कत का सामना करना पड़ जाएगा।

ऐसा सोच-समझ कर ही सर जान शोर ने रजीडेन्सी से हट कर बीबीपुर में जा बैठना मुनासिब समझा था।

२३

जवानी की रंगभरी उमंगों से खेलने वाले तथा उन्हें अपनी प्रेयसि की ओर उछालने वाले नवाब वजीरअली खाँ बहादुर अपनी नवीन मुताथी बेगम, लालारुख की

उस रंगीन तस्वीर के रंगों को फीका साबित करने वाली यौवन की मदमाती, नवाब वजीरुन्निसा बेगम को बगल में लिए बैठे अपना तथा उसका हृदय गुदगुदा रहे थे।

नवाब वजीरुन्निसा बेगम हजरत सलामत की बख्शी हुई मोतियों तथा अमूल्य जवाहरातों और सोने के तारों से गुंथी हुई बेशबहा पोशाक पहने, जड़ाऊ हीरा, पन्ना, मानिक आदि रत्नों के आँखों में चकाचौंध उत्पन्न करने वाले गहने पहने, हजरत से लगी बैठीं मुस्करा रही थी। इस समय नवाब वजीरुन्निसा का ठाठ तथा अनोखी रूप-राशि को देख कर ऐसा लग रहा था मानो वह फकीर अब्दुल्ला शाह की, कब्रस्तान के उस झोपड़े में पली-पोसी साधारण सी लड़की अनवरी नहीं, बल्कि हमेशा ठाठ से पली-पोसी जन्मजात नवाबजादी ही है। वजीरुन्निसा का सौन्दर्य फटा पड़ रहा था और युवक नवाब प्रेम-भरी दृष्टि से टकटकी बाँधे उसके अपूर्व रूप-छवि को निहार रहे थे। उनकी आँखों की प्यास बुझाए बुझ नहीं रही थी। पलकों को झपकाने तक की खबर न थी।

वजीरुन्निसा ने अपनी काली कजरारी बड़ी-बड़ी बिरौनियों वाली आँखों के जादू को होठों की मुस्कानों में समेट कर धीरे के कहा—"हजरत सलामत! इस तरह खामोश बैठे हुए किस खामोशी के बहाव में बह रहे हैं?"

वजीरुन्निसा के माथे पर झूमने वाला जड़ाऊ झूमर कुछ टेढ़ा हो रहा था। उसे अपने हाथ से सँभालते हुए बोले—"इस वक्त हमारी आँखों के सामने हुस्नोजमाल का एक दरिया बह रहा है। हम उसी में गोते लगा रहे हैं। लेकिन उसकी गहराई तक नहीं पहुँच पा रहे।" फिर मुस्कराते हुए बेगम का हाथ अपने हाथों में लेकर कहा—"हमें एक यही हैरत है कि अभी तक तुम लखनऊ के एक ऐसे कोने में छिपी बैठी रहीं जहाँ किसी का पहुँचना ही मुश्किल था। वह तो इत्तफाक से उस दिन हम उधर पहुँच गए और तुम्हें देख लिया। अगर न देखा होता तो जाने कब तक....." और वह हँस पड़े।

वजीरुन्निसा ने शरमा कर निगाह नीची कर ली। कुछ नहीं बोली। वजीरअली खाँ बेगम के कोमल हाथों की उँगलियों में अपना हाथ फँसा कर बोले—"भई, यह नीची निगाह के साथ शरमो-हया भरी खामोशी हमें पसन्द नहीं है। हम तो चाहते हैं कि तुम बाग की बुलबुल की तरह हमारे सामने चहकती रहो! बुलबुले हजार दास्तान बनी रहो।"

वजीरुन्निसा ने निगाह उठा कर कहा—"अच्छा, वह बात तो पूरी कीजिए?"

"कौन-सी बात?" वजीरअली खाँ ने नजर मिला कर कहा।

"वाह हजरत सलामत?" बेगम ने धीरे से अपना हाथ उनके हाथों से अलग करके कहा—"ऐसी बेहोशी? इतनी जल्दी बात दिल से उतर गई?"

"जरा याद दिलाओ?"

"याद क्या दिलाएँ?" बेगम ने मुस्करा कर कहा—"अभी आपने फरमाया था न कि इत्तफाक से हम उस दिन उधर पहुँच गए और तुम्हें देख लिया। अगर न देखा होता

तो जाने कब तक····इसके आगे की बात पूरी कीजिए।''

वजीरअली खाँ हँस पड़े। बोले—''हमारे कहने का मतलब यह था कि इस बहिश्ती हुस्नोजमाल के लिए हमारी आँखें जिन्दगी भर तरसती ही रहतीं।'' और हजरत ने बेगम को पकड़ कर अंक में भर लिया और उसके मुँह पर मुँह रख दिया। बेगम लज्जा से सिकुड़ कर रह गई।

इधर नवाबी महल में यह हो रहा था। उधर लाट साहब के नाराज होकर बीबीपुर चले जाने की खबर सारे लखनऊ में फैल गई थी। सैनिकों में तो कुछ खिचड़ी सी पक रही थी। एक ठिकाने पर बैठे रिसालदार अब्दुल रहमान खाँ तथा दारोगा तोपखाना इब्राहीम बेग में खुल कर बड़ी देर से बातें चल रही थीं। उन्हीं बातों के सिलसिले में अब्दुल रहमान ने कहा—''भाई, इब्राहीम बेग! कोई खास बात जरूर है। लाट साहब का एकाएक लखनऊ आना और साथ में लाव-लश्कर पल्टन का होना मामूली बात नहीं है। कोई गड़बड़ी जरूर पैदा होने वाली है फिर आज नाराज होकर उनका रजीडेन्सी से बीबीपुर चला जाना क्या मानी रखता है? मुझे तो इसके पीछे कोई बहुत बड़ा भेद छिपा मालूम होता है।''

''कुछ दूध में काला जरूर है?'' इब्राहीम बेग ने कहा—''दरे दौलत पर चलकर इसकी टोह लेना चाहिए। क्योंकि अगर कोई वारदात हो गई, नवाब वजीरअली खाँ फिरंगियों के किसी जाल में फँस गए तो उस जाल को तोड़ना मुश्किल हो जाएगा।'

''बिलकुल सही कहना है तुम्हारा।'' रिसालदार ने कहा—''फिर कुछ कहते-धरते न बनेगा।''

''तब यों ही चला जाए कि कुछ सैनिक सिपाही भी साथ ले लिए जाएं?''

''मैं समझता हूँ कि अभी सैनिकों को साथ लेने की जरूरत नहीं है। पचास सवार मैं साथ लिए लेता हूँ। जरूरत होगी तो इन्हीं को दौड़ा कर सैनिक बुला लिए जाएँगे।''

इसके बाद रिसालदार ने पचास सवारों को दरे-दौलत की तरफ आने की आज्ञा दी और स्वयं तथा दारोगा तोपखाना घोड़ों पर बैठ कर दरे-दौलत की तरफ चल पड़े।

इधर मच्छी भवन के जनानखाने में बैठी हुई आसफुद्दौला की बेगम नवाब खासमहल ने भी सुना कि लाट साहब नाराज होकर रजीडेन्सी से बीबीपुर चले गये हैं, उनकी नाराजगी को खबर सुन कर बेगम का हृदय शंका-संदेह भर गया। फैजाबाद में रहते हुए सर जान शोर का आतंक तथा उनकी ज्यादतियों को वह अपनी आँखों देख भुगत चुकी थीं अतः उनका ख्याल दौड़ने लगा था कि अवश्य लखनऊ में कोई उलट-फेर होने वाला है। यद्यपि बेगम को वर्तमान नवाब वजीरअली खाँ से न विशेष प्रेम था न द्वेष। राज-काज से भी अपना कोई सम्बन्ध नहीं रखती थीं। फिर भी वजीरअली खाँ का नाम नवाब आसफुद्दौला के नाम से जुड़ा हुआ था। उनके बेटे कहे जाते थे और उन्हीं की मसनद पर आसीन थे।

इसलिए बेगम नवाब खासमहल चाहती थीं कि यदि किसी प्रकार का उत्पात न खड़ा हो तो बेहतर है। वजीरअली खाँ कैसे भी सही आखिर कहलाते तो नवाब आसफुद्दौला के बेटे ही हैं। यही सब सोच समझ कर नवाब खासमहल ने जवाहरअली खाँ को अपने पास बुलाया। पूछा—"हमने सुना है कि आज सुबह लाट साहब किसी बात पर सख्त नाराज होकर रजीडेन्सी से हट कर बीबीपुर की कोठी में कयाम करने चले गए हैं।"

जवाहरअली खाँ ने अर्ज किया—"हुजूर आलिया ने जो कुछ सुना है सच और सही है। लाट साहब अपना सारा लाव-लशकर लेकर बीबीपुर चले गए हैं। इसके अलावा एक खबर यह भी सुनी गई है कि लखनऊ सरकार की मेहमानदारी से भी उन्होंने अपना कोई ताल्लुक नहीं रखा। उनकी खातिर तवाजा के लिए जितने भी लोग लखनऊ सरकार के उनकी खिदमत में हाजिर थे सबको हटा-भगा दिया है।"

'तब तो जरूर कोई गहरी बात है।" आखिर उनकी यह नाराजगी है किस बात पर ? इसकी वजह तो कुछ जरूर होना चाहिए ?"

"हुजूर का फरमाना सही है।" जवाहरअली खाँ ने कहा—"मगर नाराजगी की वजह अभी तक कुछ भी नहीं मालूम हो सकी। सिर्फ इतना ही सुनने में आया है कि वह सख्त नाराज हैं और इसी वजह से लखनऊ से हट कर बीबीपुर में जा बैठे हैं।"

"वजीरअली खाँ ने इस खबर को सुना है ?"

"मेरा ख्याल है कि जब इतने जोर-शोर के साथ सारे लखनऊ में खबर फैल रही है तो हजरत सलामत ने भी जरूर सुनी होगी।"

"तब उन्होंने उनकी नाराजगी जानने की कोई कोशिश की ? बीबीपुर जाकर लाट साहब से कुछ पूछताछ भी की ?"

"इस बारे में फिदवी कुछ अर्ज नहीं कर सकता ?" जवाहरअली खाँ ने कहा—लेकिन ख्याल यही कह रहा है कि हजरत सलामत बीबीपुर अभी तक तशरीफ नहीं ले गए।"

नवाब खासमहल जरा देर खामोश रहीं, फिर बोली—"हमारा मयाना तैय्यार कराओ और जाकर वजीरअली खाँ से कहो हम बीबीपुर चल रही हैं, वह भी हमारे साथ चलें। लाट साहब की इस नाराजगी की वजह मालूम करना बहुत जरूरी है।"

आदेश पाकर जवाहरअली खाँ मच्छी भवन से दरे-दौलत को रवाना हो गये।

दिन का तीसरा पहर खतम हो रहा था। मगर नवाब वजीरअली खाँ तथा सौन्दर्य की प्रतिमा नवाब वजीरुन्निसा की रंगरेलियाँ अभी खतम नहीं हुई थीं। उसी तरह चल रही थीं। कहकहे तथा खिलखिलाहटों से कमरा गूंज रहा था।

तभी अलमासअली खाँ ख्वाजासरा ने कमरे में दाखिल होकर कायदे से नवाबी जोड़े के आगे सिर झुका दिया।

वजीरअली खाँ ने निगाह उठा कर उसकी तरफ देखा। पूछा—"क्या है ?"

"आलीजाह !" अलमासअली ने विनयपूर्वक कहा—"गुस्ताखी की माफी का ख्वास्तगार हूँ। इस वक्त यहाँ हाजिर होने की वजह यह है कि दीवानेखास में नवाब आफरीअली खाँ हाजिर हैं। किसी खास जरूरत से मुलाकात के ख्वास्तगार हो रहे हैं।"

"जाकर उनसे पूछो ऐसा कौन-सा जरूरी काम है ?" हजरत सलामत ने कहा, फिर धीरे से बोले—"दिन का यह वक्त हमारे ऐश-आराम का हुआ करता है। इस वक्त भी लोग जरूरी काम लेकर आ जाते हैं ?"

अलमासअली चला गया।

उसके जाने पर बेगम ने निगाह उठा कर हजरत की तरफ देखा बोलीं—"हुजूर से एक बात पूछना चाह रही हूँ।"

"शौक से पूछो।" हजरत ने मुस्करा कर कहा।

"हमने सुना है कि आज कल लखनऊ में अंग्रेजों का कोई बहुत बड़ा अफसर आकर ठहरा हुआ है।"

"ऊँह, ठहरा होगा ?" वजीरअली खाँ ने लापरवाही के साथ कहा।

"आखिर कौन है वह ?"

"कलकत्ता में रहने वाला अंग्रेज सरकार का सबसे बड़ा अफसर गवर्नर जनरल है।"

"तब वह लखनऊ किसलिए आया है ?"

"क्या मालूम ?" लहजा उपेक्षा से भरा था।—"इन बदजात अंग्रेजों के पास और काम ही क्या है। रियासतों में पहुँच कर वहाँ के राजा-नवाबों को दबाना, अपना रौब जमाना। बस, इतना ही तो इनका काम है। यहाँ भी किसी ऐसे ही मतलब से आया होगा।"

अलमासअली ने लौट कर अर्ज किया—"आलमपनाह। नवाब आफरीअली खाँ इस वक्त कोई बहुत जरूरी खबर लेकर हाजिर हुए हैं।"

वजीरअली खाँ उठ कर बेगम से बोले—"अच्छा, जरा हम जाकर उनकी खबर सुन आएँ !"

हजरत सलामत दीवानखाने में पहुँचे। आफरीअली खाँ ने अदब कायदे से सिर झुका दिया।

हजरत ने पूछा—"कहिए ? इस वक्त आप ऐसी कौन-सी जरूरी खबर लेकर आए हैं ?"

आफरीअली खाँ ने अर्ज किया—"आला हजरत। वह जरूरी खबर यह है कि गवर्नर जनरल बहादुर आज सुबह जाने किस बात पर नाराज होकर मय अपने सभी साथियों, फौज-फाटे के रजीडेन्सी का कयाम तर्क करके बीबीपुर चले गए हैं और वहाँ की कोठी में कयाम किया है। इसके साथ ही लखनऊ सरकार की मेहमानदारी से भी

इनकार कर दिया है। जो लोग उनकी खिदमत में खातिर तवाजा के लिए तैनात थे, उन सबको अपने पास से हटा दिया है। उनकी इस नाराजगी से सारे लखनऊ में एक तहलका-सा मच रहा है। लोग-बाग घबड़ा रहे हैं। तरह-तरह के अन्दाजे लगा रहे हैं।"

"तब हम क्या करें?" वजीरअली खाँ ने कहा—"एक तो इसका भी पता नहीं है कि वह लखनऊ किस काम के लिए तशरीफ लाए हैं? फिर बेवजह नाराजगी बरहमी का ये इजहार? आखिर कोई वजह भी तो मालूम होनी चाहिए था? क्यों उनका दिमाग बिगड़ गया है?"

"जाहिरा तरीके पर तो हमारी सरकार से कोई गलती हुई नहीं मालूम हो रही। उनकी खातिर तवाजा में किसी तरह की कमी भी नहीं हुई। जाने क्यों उनका मिजाज गरम हो गया है।" आफरीअली खाँ ने धीरे से कहा।

तभी बाहर से आकर एक खिदमतगार ने अर्ज किया—"अलीजाह, 'मच्छी भवन नवाब खासमहल साहिबा के यहाँ से नवाब जवाहरअली खाँ हाजिर आए हैं। खिदमत में कुछ अर्ज करना चाह रहे हैं।"

"बुलाओ?" वजीरअली खाँ ने कुछ झुँझलाहट भरे स्वर से कहा—"सुनें, वह क्या अर्ज करना चाहते हैं?"

दूसरे ही क्षण जवाहरअली खाँ ने आकर सिर झुका दिया।

वजीरअली खाँ ने उनकी तरफ नजर उठा कर कहा—"कहिए? आप क्या खबर लाए हैं?"

जवाहरअली खाँ ने अर्ज किया—"आला हजरत! खबर मिली है कि लाट साहब बहादुर किसी वजह से नाराज होकर बीबीपुर में जाकर कयाम फरमा हुए हैं। उनकी इस एकाएक नाराजगी को सुन कर नवाब खासमहल साहिबा कुछ घबड़ा सी गई हैं। तरह-तरह के शक-शुभा कर रही हैं। उनकी नाराजगी की वजह जानने के लिए परेशान हो रही हैं। फरमाया है। कि हजरत से जाकर कहो हम बीबीपुर चल रही हैं। बेहतर होगा कि हमारे साथ हजरत सलामत भी तशरीफ ले चलें।"

वजीरअली खाँ दो क्षण खामोश बैठे कुछ सोचते रहे। फिर उठ कर बोले—"बेहतर है? हमारा घोड़ा मँगाओ? हम कपड़े बदल कर आ रहे हैं।" और वह वहाँ से चले गए।

कुछ देर में हजरत सलामत तैय्यार होकर आ गए। घोड़ा तैय्यार था। सवार होकर मच्छी भवन की तरफ चल पड़े।

हजरत के जाते ही घोड़ों पर सवार चार यार तथा हजरत के सभी मुसाहिब भी दरेदौलत पर आ पहुँचे और उसी समय अब्दुल रहमान खाँ रिसालदार तथा दारोगा इब्राहीम बेग तथा पचास सवार भी वहाँ आ गए। सबको मालूम हुआ कि हजरत सलामत मच्छी भवन को तशरीफ ले गए हैं। अतः वे सभी लोग भी मच्छी भवन की

तरफ चल पड़े।

मच्छी भवन में पहुँच कर हजरत ने देखा। नवाब खासमहल साहिबा मयाना में सवार बैठी उनका इन्तजार कर रही हैं। हजरत के पहुँचते ही मयाना कंधों पर उठ गया और बीबीपुर की राह पर चल पड़ा। हजरत का घोड़ा मयाना के बराबर चल रहा था और उसके पीछे चार यार मुसाहिबों के घोड़े तथा अब्दुल रहमान, इब्राहीम बेग, पचास सवार और दूसरे नौकर-चाकर थे।

महासेनापति लार्ड सर जान शोर की कयामगाह बीबीपुर की कोठी का दृश्य भी इस समय कुछ विचित्र सा ही था। कोठी के अहाते के भीतर तथा बाहर काफी दूरी तक बड़े-छोटे खीमे खड़े हुए थे जिनमें महासेनापति के सभी साथी अंग्रेज अफसर तथा पल्टन ठहरी हुई थी। बहुत से खीमे खाली भी पड़े हुए थे। कोठी के अन्दर महासेनापति का कयाम था। बाहर गोरों के पहरे खड़े थे।

नवाब वजीरअली खाँ मय नवाब खासमहल के एक खाली सुन्दर खीमे में घोड़े-मयाने से उतर कर मुकीम हो गए। फिर जवाहरअली खाँ को भेज कर गवर्नर महोदय के पास अपने आने की इत्तला कराई और मुलाकात की ख्वाहिश जाहिर की।

खबर पाते ही गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर कोठी के अन्दर से बाहर वाले बरामदे में आ गए। क्योंकि लार्ड महोदय को नवाब वजीरअली खाँ के बनिसबत नवाब खासमहल की इज्जत-मर्तबे का अधिक ख्याल था। मुलाकात का शीघ्र ही प्रबंध किया गया। बेगम-साहिबा के लिए खास तौर पर कायदे के अनुसार पर्दे आदि का पूरा इन्तजाम हो गया। मयाना से पर्दों की आड़ में उतर कर और कोठी के अन्दर मुलाकाती कमरे में पहुँच कर नवाब खासमहल पर्दे से लग कर मसनदनशीन हो गईं। पर्दे के बाहर हजरत वजीरअली खाँ, जवाहरअली खाँ तथा मुसाहब आदि अपने-अपने स्थानों पर कुर्सियों पर बैठ गए। गवरनर जनरल की कुर्सी इस सबके सामने थी।

दो क्षण वातावरण मौन रहा। फिर नवाब खासमहल ने पर्दे के अन्दर से कहा —"आप कम्पनी सरकार के सबसे बड़े अफसर हैं। मुल्क में कम्पनी की सारी हुकूमत आप ही के हाथों में है। ये अवध रियासत भी आपकी सरपरस्ती में है। आप ही इसके निगरा और मोहफिज भी हैं। इसलिए आपकी नाराजगी इस रियासत की तबाही और बरबादी का बाइस कही जा सकती है। हम यहाँ सिर्फ इतना ही कहने के लिए आए हैं और मुलाकात चाही है कि इस अवध रियासत को तबाह करना या कायम रखना आपके हाथ में है। जैसा मुनासिब समझें करें। गलतियाँ हर खुदा के बन्दे से हुआ करती हैं लेकिन आला मर्तबे वाले लोग उनको इस तरह ध्यान में नहीं लाया करते।"

सर जान शोर ने बहुत मीठे लहजे से कहा—"नवाब खासमहल साहिबा! हम आपके फरमाने की कदर करते हैं। आपने जो कुछ फरमाया बिलकुल सही है।"

एक क्षण के लिए पुनः वातावरण मौन हो गया। इसके बाद लार्ड महोदय ने

नवाब वजीरअली खाँ को तरफ गौर से देखा। उनका कसरती शरीर, जवानी का उभार तथा चेहरे का तेज देख कर दंग रह गए। टकटकी बाँधे दो क्षण उनकी तरफ देखते रहे। फिर कहा—"आला हजरत! हमें शिकायत यह है कि आपकी रियासत का इन्तजाम ठीक नहीं चल रहा है। आप रियासत के इन्तजाम की तरफ शायद थोड़ा भी ध्यान नहीं दे रहे।"

हजरत वजीरअली खाँ तेजमिजाज तो थे ही। सर जान शोर का कहना उनके दिल में काँटे की तरह चुभ गया। चिढ़ से गए। फिर की अपने आपको बहुत कुछ सँभाला, बोले—"हमारी रियासत का इन्तजाम अगर आपको पसन्द नहीं आ रहा तो उस सूरत में आप को इसकी शिकायत नायबुल रियासत खान अल्लामा से करनी चाहिए थी। फिर हमें रियासत की बागडोर अपने हाथ में लिए हुए अभी पूरे चार महीने भी तो नहीं हुए। और इन चन्द महीनों से हमारी इस अवध रियासत में ऐसी कौन सी खराबी फट पड़ी है?" अन्दर की गर्मी लहजे में मौजूद थी। साँस लेकर जरा रूखे स्वर से कहा—"खान अल्लामा से हमें खुद शिकायत है। हमारी उनकी चूल नहीं बैठ रही।"

"रियासत के इन्तजाम के अलावा हमारी एक यह भी शिकायत है?" सर जान-शोर ने कहा—"हमारी अंग्रेजी फौज जो लखनऊ में रह रही है, उसके खर्चे का रुपया अवध खजाने से कभी वक्त पर हमारे पास नहीं पहुँचता। एजीडेन्ट को तकाजे पर तकाजे करने पड़ते हैं?"

नवाब वजीरअली खाँ कुछ जोश भरे स्वर से बोले—"इस बारे में भी हमें नायबुल रियासत से बहुत बड़ी शिकायत है। वह इस कदर खुदमुख्तार बन गए हैं, गोया अवध रियासत उन्हीं के बाप-दादों की है और हम कोई चीज ही नहीं हैं। अपने अख्तियार से अंग्रेजी फौजों के खर्चे की रकम हमारे खजाने से निकलवा कर रजीडेन्ट के हवाले कर देते हैं।"

"तब क्या, आला हजरत उस रकम को अदा करने का इरादा नहीं रखते? उस खर्चे को अवध के खजाने से नहीं देना चाहते?" सर जान शोर ने कुछ गम्भीर होकर पूछा।

"देना चाहना या न देना चाहना, यह दूसरी बात है?" वजीरअली खाँ ने भी गम्भीरतापूर्वक कहा—"सवाल तो यह है कि हमारे खजाने से एक बहुत बड़ी रकम निकाल कर अलग की जाने की हमें भी खबर होनी चाहिए? बल्कि हमारी इजाजत हासिल करने के बाद खजाने से रकम निकाली जानी चाहिए। न कि हमें कोई खबर ही न हो और निकाल कर भेज दी जाए? ऐसी खुदमुख्तारी और मनमानी की हालत में हम हरगिज नहीं चाहते कि खान अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ नयाबुल रियासत के ओहदे पर जमे बैठे रहें?" वजीरअली खाँ का चेहरा तमतमा रहा था।

लार्ड सर जान शोर ने उनके चेहरे का रंग और देखा सोचने लगे—क्या इसी

समय वजीरअली खाँ को अवध रियासत की गद्दी खाली कर देने का हुक्म सुना दिया जाए ? नहीं, बहुत बड़ी गलती होगी। जल्दी करना मुनासिब नहीं। इस वक्त नवाब खासमहल भी मौजूद हैं। उनके मर्त्तबे को भी धक्का लगेगा ? बहुत हंगामा मच जाएगा ? आखिर वह नवाब आसफुद्दौला की बेगम ही हैं। आसफुद्दौला हमेशा कम्पनी सरकार के वफादार रहे हैं ? जल्दबाजी में एक बहुत बड़ा फसाद खड़ा हो सकता है और उसके जरिए कम्पनी सरकार की हुकूमत बदनाम हो सकती है। फिर अभी लखनऊ शहर का भी कोई इन्तजाम नहीं किया गया है।

ऐसा सोच कर लार्ड महोदय ने सिर उठा कर नवाब वजीरअली खाँ की तरफ देखा और बड़े इतमीनान तथा शान्त स्वर से कहा—"आला हजरत, अगर आप मौजूदा नयाबुल रियासत खान अल्लामा से इस कदर नाखुश हैं, उन्हें ओहदे से बरतरफ करना चाहते हैं, तो बेहतर है। हमें कोई उजर नहीं है ? आप अपनी पसन्द का नयाबुल रियासत बना सकते हैं। लेकिन यह जरूर जानना चाहते हैं कि वह ओहदा किसे बख्शा जाएगा ?"

वजीरअली खाँ के चेहरे का रंग बदल गया। तमतमाहट के बदले एक सन्तोष का रंग छा गया। वह भी ठण्डे लहजे से बोले—"साहबे वालाशान ? इस बारे में हमारी पसन्द की कोई बात नहीं है। आप हमारी रियासत के सरपरस्त हैं। जिस तरह आपने नवाब आसफुद्दौला बहादुर की परेशानी को दूर करने लिए खान अल्लामा को इस ओहदे के लिए तजवीज फरमाया था, उसी तरह हमारी परेशानी भी दूर कर दीजिए। जिसे मुनासिब समझा जाए ओहदे पर बैठा दिया जाए। हमें थोड़ा भी उजुर न होगा ?"

लार्ड सर जान शोर पुराने नयाबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ को अच्छी तरह जानते थे। एक प्रकार से उनके एहसानमन्द भी थे। क्योंकि आसफुद्दौला के जमाने में कम्पनी सरकार की सत्ता को बहुत बड़ा और खतरनाक धक्का देने के लिए महाराजा झाऊलाल ने जो जबरदस्त षड़यन्त्र रचा था, उसका भंडाफोड़ हसनरजा ने ही किया था। इस तरह से मिरजा हसनरजा खाँ कम्पनी सरकार के दोस्त तथा शुभचिंतक भी कहे जाते थे। मिरजा हसनरजा खाँ इस वक्त बड़ी खामोशी के साथ अपने घर बैठे हुए थे। अतः लार्ड सर जान शोर को नयाबुल रियासत के जिम्मेदार ओहदे के लिए उनकी याद आई। साथ ही यह भी खयाल जमा कि अवध रियासत की नई नवाबी सरकार के लिए तथा कम्पनी सरकार के हित के लिए भी उनसे बढ़ कर यहाँ कोई दूसरा शख्स नहीं है।

सर जान शोर ने वजीरअली खाँ की तरफ देख कर कहा—"हम समझते हैं कि आप अपना नया नयाबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ के बनाँ लें ? वह पुराने तजुर्बेकार भी हैं। एक अर्से तक इस ओहदे को नेकनामी के साथ सँभाल भी चुके हैं।"

वजीरअली खाँ प्रसन्नतापूर्वक बोले—"हमें साहबे वालाशान की तजवीज

पसन्द है। हम उनको जानते हैं। वह हुजूर के नयाबुल रियासत रह चुके हैं।"

लार्ड महोदय के हुक्म से उसी समय एक चुस्त सवार हसनरजा खाँ को बुलाने को दौड़ाया गया। और वजीरअली खाँ ने भी अपने एक मुसाहिब को दौड़ा कर उन्हें पहनाने के लिए जवाहरात की खिलअत भी मँगा भेजी।

कुछ देर में अपनी बग्घी में बैठ कर सरफराजुद्दौला नवाब हसनरजा खाँ बीबीपुर आकर दरबार में शरीक हुए। लाट साहब ने उन्हें तलब फरमाने का मतलब समझा दिया। उसके बाद नवाब वजीदअली खाँ ने प्रसन्नतापूर्वक नयाबुल रिआसत की खिलअत अपने हाथों से पहना दी।

खिलअत पहिन कर हसनरजा खाँ ने अर्ज किया—"इस ओहदे की सरफराजी बख्शी जाने के साथ कमतरीन की एक अर्ज भी है?"

"क्या?" वजीरअली खाँ ने पूछा।

हसनरजा ने कहा—"नवाब आसफुद्दौला के जमाने में जब कमतरीन इस ओहदे का कार-वार सँभाल रहा था तब राजा टिकैतराय मेरे मुनीब थे। इसलिए इस वक्त भी उन्हीं को मेरा मुनीब बनाया जाए।"

"हमें कोई उजर नहीं है।" वजीरअली खाँ ने कहा—"कल उनको भी मुनीबी की खिलअत बख्श दी जाएगी।"

रात का पहला पहर समाप्त हो रहा था। इसलिए उस वक्त की वह मुलाकात-बैठक समाप्त हो गई। नवाब वजीरअली खाँ तथा नवाब खासमहल खुशी-खुशी लखनऊ को लौट पड़े। सब के दिलों में एक सन्तोष था कि लाट साहब की नाराजगी दूर हो गई।

उसी समय सारे लखनऊ में खबर फैल गई कि महासेनापति को नवाब वजीरअली खाँ ने मना लिया। उनकी नाराजगी दूर हो गई। लोगों में संतोष की साँस ली। शंका-संदेह से एक प्रकार का छुटकारा-सा मिल गया।

लेकिन लार्ड सर जान शोर अपने मकसद को लिए लाव-लश्कर सहित अभी बीबीपुर में ही जमे हुए थे।

२४

अवध के नवाब मिरजा वजीरअली खाँ को यकीन हो गया था कि लाट साहब के दिल में जो नाराजगी पैदा हुई थी वह दूर हो गई। उन्होंने हमारी इच्छा भी पूरी कर दी। खान अल्लामा को घर बैठा दिया। उनके स्थान पर मिरजा हसनरजा खाँ नायबुल रियासत का काम सँभालेंगे। फिर भी अभी तक नवाब वजीरअली खाँ के नजदीक

आफरींअली खाँ का ही बोलबाला था। उन्हीं के जरिए वह नायबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ से काम लिया करते थे।

इस रद्दोबदल से नवाब वजीरअली खाँ की बहुत कुछ परेशनियाँ दूर हो गई थीं। खान अल्लामा की तरफ से उनके दिल में जो हर वक्त एक जलन-सी पैदा हो रही थी वह मिट गई थी और एक प्रकार से लाट साहब का लखनऊ तशरीफ ले आना उन्हें नागवार नहीं गुजर रहा था। यद्यपि लार्ड सर जान शोर अभी तक बीबीपुर में ही डेरा डाले पड़े थे। आठ-दस दिन गुजर चुके थे। अब वह क्यों वहाँ जमे हुए हैं? कौन-सा काम उन्हें करने को बाकी रह गया है? इसकी नवाब वजीरअली खाँ को कोई चिन्ता न थी। समझते थे, जिस प्रकार सहसा एक दिन आकर मौजूद हो गए थे उसी प्रकार किसी दिन कूच कर जाएँगे। शायद उन्हें बीबीपुर की आब-हवा पसन्द आ गई होगी। उस दिन की मुलाकात के बाद वजीरअली खाँ एक दिन भी बीबीपुर उनसे मिलने नहीं गए और न लाट साहब ने ही किसी दिन उन्हें याद किया।

नवाब वजीरअली खाँ अलमस्त जीव थे ही। एक दिन मन में एक नयी उमंग पैदा हुई। सोचा, आज तक हमने अपना खजाना नहीं मुलाहजा फरमाया? सुना था कि अवध रियासत का खजाना बहुत मालामाल है। रुपये अशर्फियों के अलावा उसमें अमूल्य तथा दुर्लभ हीरे, जवाहरात भरे पड़े हैं। नवाब मंसूरअली खाँ ने दिल्ली से लाकर उन्हें अवध के खजाने में जमा किया था। अतः हजरत सलामत खजांची को लेकर खजाने में पहुँचे। जैसा उन्होंने सुन रखा था, वास्तव में अपने खजाने को वैसा ही खचाखंच भरा पाया। देख कर बहुत खुश हुए। वापसी के समय अशर्फियों के अनेक तोड़े तथा दुर्लभ जवाहरातों से मुँहामुँह भरा हुआ एक सन्दूकचा अपने साथ लाकर अपने खासमहल में रखा और अपनी वजीरुन्निसा बेगम को बुला कर वह सब दिखाया।

नवाब वजीरुन्निसा बेगम हैरत से भर गईं। मुस्कराते हुए पूछा—"यह हजरत-सलामत कहाँ से उठा लाए?"

"यह कीमती और नायाब जवाहरात हैं। इनके जोड़ के जवाहरात आज हिन्दुस्तान के किसी भी बादशाहत के खजाने में नहीं हैं।"

"तब हुजूर इन्हें खजाने से क्यों उठा लाए हैं? वहीं महफूज क्यों नहीं रखा रहने दिया।"

"तुम नहीं समझतीं?" फिर गम्भीर होकर कहा—"हमारे कारपरदाज ऐतबार के काबिल नहीं हैं। वह बहुत जल्द चोट्टे अंग्रेजों से मिल जाते हैं और उनको खुश करने के लिए सब कुछ करने को तैय्यार हो जाते हैं। हमें कुछ पता भी नहीं चलता। इस वक्त यहाँ बीबीपुर में कलकत्ता का बड़ा अंग्रेज अफसर लाट साहब मौजूद हैं। मुमकिन है उसे खुश करने के लिए नायबुल रियासत या खजांची वगैरह यह जवाहरात उसके हवाले कर देते? पिछले नायबुल रियासत ने बिना हमारी इजाजत के डेढ़ करोड़ रुपया निकाल कर

अंग्रेज रजीडेन्ट के हवाले कर दिया था। गरचे उस पिछले बेईमान नायबुल रियासत को हमने ओहदे से बरतरफ कर दिया है और अर्ब्बा हुजूर के वक्त के एक पुराने तजुर्बेकार मिरजा हसनरजा खाँ को नायबुल रियासत बनाया है। लेकिन किसी का ऐतबार नहीं।"

"ऐसी सूरत में तो हुजूर ने यह बहुत अच्छा किया। बहुत बेहतर सोचा-समझा है। इन सबको हुजूर अपने पास रखें।" वजीरुन्निसा ने कहा।

"हम इन्हें कहाँ रखेंगे ?" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा।

"अगर हुजूर अपने पास नहीं रखना चाहते, तो नवाब बन्नो बेगम साहिबा के हवाले कर दीजिए। वह हिफाजत से अपने पास रखेंगी।"

"नहीं।" वजीरअली खाँ ने कहा—"उन्हें तो हम भूल कर भी नहीं देंगे। जब हमारा उनका दिल नहीं मिल रहा तो देना-लेना कैसा ? जो कुछ दे चुके, वह दे चुके।"

वजीरुन्निसा कुछ नहीं बोली।

वजीरअली खाँ ने उनकी तरफ देख कर कहा—"बेहतर यही होगा कि इन जवाहरातों और अशर्फियों को अपने पास रखो।"

इधर नवाब वजीरअली खाँ के महलों में तो यह हो रहा था। उधर बीबीपुर में लार्ड सर जान शोर अपनी दूसरी ही खिचड़ा पका रहे थे। वह बेकार बैठने नहीं आए थे। जिस अभिप्राय को लेकर आए थे उसे पूरा करने में लगे हुए थे। उन्होंने नए नायबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ तथा उनके नायब राजा टिकैतराय को अपने पास बुलाया था। दोनों आकर बीबीपुर की कोठी के एक कमरे में बैठे लाट साहब के सामने पहुँचने का इन्तजार कर रहे थे। लाट साहब अपने कमरे में किसी काम में व्यस्त थे। इन्तजार के इस समय में हसनरजा खाँ तथा टिकैतराय में धीरे-धीरे बातें चल रही थीं—

"सरफराजुद्दौला साहब ?" टिकैतराय ने उनकी तरफ झुक कर कहा—"बहुत नाजुक वक्त है ?"

"कैसा ?" हसनरजा ने उनकी तरफ देखा।

"आज इस वक्त की यह तलबी कुछ गहरे मानी रखती है ?"

"मेरा भी कुछ ऐसा ही ख्याल है।" सरफराजुद्दौला ने कहा।

"यहाँ आने से कुछ पहले मुझे एक नयी खबर मालूम हुई थी।"

"क्या ?"

"सुना है कि अमीनुद्दौला नवाब सआदतअली खाँ जो एक अर्से से बनारस में कयाम फरमा रहे थे आकर कानपुर में अंग्रेजी छावनी में ठहरे हुए हैं। लेकिन वह क्यों आकर वहाँ ठहरे हुए हैं, इसका कोई राज नहीं मालूम हो सका।"

सरफराजुद्दौला मुस्कराए। बोले—"आपको यह खबर आज मालूम हुई है ? मुझे तो जिस दिन वह कानपुर आए थे उसके दूसरे दिन ही मालूम हो गया था।"

"तब उनके आने में क्या राज है ?" टिकैतराय ने विस्मय के साथ पूछा।

"बहुत बड़ा राज है।" सरफराजुद्दौला गम्भीर होकर बोले—"वह गवर्नर जनरल बहादुर के इशारे से जाकर कानपुर में ठहरे हुए हैं। आप अभी तक समझे नहीं ? लाट साहब का लखनऊ आना ही एक बहुत गहरा राज है। बहुत बड़ा उथल-पुथल होने का अन्देशा है।"

तभी कमरे के बाहर किसी की पदचाप सुनाई दी। दोनों एकदम चुप हो गए।

एक गोरे ने आकर कहा "आप दोनों साहब तशरीफ ले चलिए। गवर्नर जनरल बहादुर आप लोगों को अपने कमरे में बुला रहे हैं।"

दोनों हड़बड़ा कर उठ खड़े हुए और उस गोरे के साथ गवर्नर के विशेष कमरे में गये। लार्ड महोदय कुर्सीनशीन थे। उनके सामने लगी मेज के इधर-उधर चार-पाँच खाली कुर्सियाँ रखी थीं। लार्ड महोदय ने आँखों के इशारे से कुर्सियों पर बैठने की इजाजत दी। दोनों बैठ गए।

दो क्षण बाद लार्ड सर जान शोर ने उन दोनों की तरफ नजर उठाई, बोले—"आप दोनों इस रियासत के पुश्तैनी नमकख्वार खैरंदेश हैं। इस वक्त इस रियासत का मसला हमारे हाथों में है और जिसका फैसला करने के लिए हम कलकत्ता से लखनऊ आए हैं। शानद आप लोगों को मालूम हो गया होगा। हम कई दिनों से उस पेचीदा मसले पर गौर कर रहे हैं। हमें उम्मीद है कि आप लोग भी उसे समझेंगे और नेकनीयती के साथ हमारे कहने पर अमल करेंगे।" और लार्ड महोदय ने सरफराजुद्दौला के चेहरे पर नजर जमा दी।

सरफराजुद्दौला मिरजा हसनरजा खाँ अवध रियासत के पुराने कोषाध्यक्ष थे। आसफुद्दौला ने उन्हें अपना नायब बना लिया था। बाद में झाऊलाल के मामले से उनसे नाराज होकर घर बैठा दिया था। यद्यपि वह पढ़े-लिखे कम थे मगर अक्ल और समझ के पुतले थे। बात की तह तक बहुत जल्द पहुँच जाते थे। इसके अलावा अंग्रेज सरकार की सत्ता को भी खूब समझते थे और कम्पनी सरकार के दिल से खैरख्वाह थे। आसफुद्दौला के समय से कम्पनी सरकार अवध रियासत को जिस साँचे में ढालने का जोड़-वोड़ लगा रही थी, सरफराजुद्दौला उससे अच्छी तरह वाकिफ थे। इसलिए लार्ड सर जान शोर का कहना सुन कर और मतलब को समझ कर बोले—"फिदवी हमेशा से कम्पनी सरकार का वफादार है। साहबे वालाशान के इरादे और हुक्म से कभी इधर-उधर नहीं हो सकता।"

सर जान शोर बोले—"हमें मालूम है।" फिर जरा ठहर कर कहा—"इस वक्त जो मामला दरपेश है, वह अवध रियासत के हकदार और गैरहकदार का है। हम समझते हैं कि आप लोग भी यह नहीं चाहेंगे कि एक गैरहकदार जो गलती से मसनद-नशीन कर दिया गया हो, वह मसनदनशीन बना रहे और मसनद का सच्चा हकदार ठोकरें खाता फिरा करे। इन्साफ यही कहता है कि हकदार को हक पहुँचना चाहिए।"

"बजा है ?" सरफराजुद्दौला ने धीरे से कहा।

"लार्ड महोदय ने टिकैतराय की तरफ निगाह फेरी।

टिकैतराय समझ गए कि साहबे आलीशान अपने कथन की पुष्टि के बारे में कुछ मेरी जबान से भी सुनना चाहते हैं। सँभल कर बोले—"अवध रियासत की मददगार, सरपरस्त और मोहाफिज हमेशा से कम्पनी सरकार रही है। एक के बाद दूसरे को मसनदनशीन करना, जायज और नाजायज औलाद की छान-बीन करना तथा इन्साफ की तराजू हाथ में लेकर सही निगाह रखना साहबे बालाशान का ही काम है। हक हकदार को जरूर पहुँचना चाहिए।"

सर जान शोर बोले—"हम आप दोनों साहबों के ख्यालातों और नेकनीयती की कदर करते हैं। आप लोगों से हमें ऐसी ही उम्मीद थी।" फिर एक कागज सरफराजुद्दौला की तरफ बढ़ा कर कहा—"इसे पढ़िए ? इसमें वजीरअली खाँ का गैरहकदार और सआदतअली खाँ का सच्चा हकदार होने की सही और साफ बातें दर्ज हैं।"

सरफराजुद्दौला ने कागज पर आँखें गड़ा दीं, पढ़ने लगे। लिखा था—"नवाब आसफुद्दौला बहादुर की मृत्यु हो जाने पर, अवध रियासत की खाली मसनद पर हजरत वजीरअलीखाँ मसनदनशीन किए गए थे। चूँकि आसफुद्दौला बहादुर ने अपनी वसीयत में मिरजा वजीरअली खाँ को अपना लड़का और अपना जांनशीन कहा था, इसलिए उनकी वसीयत पर विश्वास करके मसनदनशीनी हो गई थी। वह मौका भी कुछ ऐसा था कि इस विषय में कोई छानबीन, हकदार, गैरहकदार की जाँच नहीं हो सकती थी। क्योंकि आसफुद्दौला की वसीयत गलत नहीं समझी जा सकती थी। लेकिन वजीरअली खाँ की मसनदनशीनी के चन्द रोज बाद इस विषय को लेकर हमारे पास, अवध के इज्जतदार, मर्तबेवाले, खानदानी और गद्दी के हकदार लोगों की शिकायतें पहुँचने लग गई थीं। इसके अलावा नवाग वजीरअली खाँ की हुकूमत का रंग-ढंग भी लड़कपन, नादानी, बदमिजाजी और जवानी के जोश से भरा सुना जा रहा था। और उसके कारण अवध की जनता में एक हलचल-सी पैदा हो रही है। चूंकि कम्पनी सरकार नवाब शुजाउद्दौला के समय से रियासत की सरपरस्त, मोहाफिज-मदगार और बाहरी-भीतरी उलझनों को सुलझाने वाली रही है, इसलिए कम्पनी सरकार के लिए जरूरी हो गया है कि इस विषय की तरफ अपना ध्यान आकर्षित करे। क्योंकि ऐसी हालत में अगर कम्पनी सरकार खामोश बैठी रहती, उसके लिए बहुत बड़ी बदनामी का बाइस था। मुल्क में कम्पनी सरकार का जो इन्साफ मशहूर है वह खतम हो जाता। हमने लखनऊ आकर चुपचाप इस मामले की पूरी तहकीकात और छान-बीन शुरू की। जिन तरीकों और जरियों से सचाई सामने आ सकती थी उन्हें अपनाया। हमें कामयाबी हासिल हो गई। पता चल गया कि वाकई नवाब आसफुद्दौला की जायज तथा सही औलाद एक भी न थी। अवध रियासत की गद्दी तक वजीरअली खाँ का हक हरगिज नहीं पहुँचता था। गलती से वह गद्दी पर बैठा दिए गए

थे। गद्दी के सही हकदार वारिस नवाब सआदतअली खाँ हैं। क्योंकि वह नवाब आसफुद्दौला के बाद नवाब शुजाउद्दौला की सबसे बड़ी सन्तान हैं और हर सूरत में उनका हक उन्हें मिलना लाजिमी है। इसलिए हम चाहते हैं कि हमारी इस तहकीकात, जाँच-पड़ताल की तसदीक रियासत के खानदानी, अजीज कारपरदाज और सभी इज्जतदार लोग अपनी मोहर लगा कर हस्ताक्षर करके करें। ताकि आगे के लिए इस मामले में किसी तरह का खरखशा बाकी न रहे।

सरफराजुद्दौला ने कागज पर से नजर उठ कर कहा—"जो कुछ लिखा गया है हर्फ-हर्फ सच, सही और वाजिब है। यह तहरीर कम्पनी सरकार के इन्साफ का एक सच्चा सबूत कही जा सकती है। पेचीदा मसलों को सुलझाने का एक जीता-जागता नमूना है।"

सर जान शोर गम्भीर होकर बोले—"कल एक आम दरबार किया जाएगा। उसमें सभी लोग बुला कर शरीक किए जाएँगे। उस दरबार में आपका फर्ज होगा कि सबको अच्छी तरह इस तहरीर को सुना कर, मतलब को गले उतार कर कागज पर उनकी मोहरें लगवाएँ, दस्तखत कराएँ।"

"फिदवी हर तरह से हुक्म का पाबन्द है।" सरफराजुद्दौला ने धीरे से कहा।

इसके बाद मुलाकात समाप्त हो गई।

२५

२१ जनवरी सन् १७९८ ई० को पहर दिन चढ़े कम्पनी सरकार के महा सेनापति लार्ड सर जान शोर की कयामगाह बीबीपुर की कोठी में एक आम दरबार की योजना आरम्भ हो गई। कोठी के बाहर चारों ओर फैले हुए लम्बे-चौड़े मैदान में सैकड़ों खीमें तथा तम्बू तो बहुत पहले से खड़े हुए थे। पिछली रात में सैकड़ों की संख्या में और भी खड़े हो गए थे। दरबार में शरीक होने के लिए जो नवाबी खानदान के लोग, ओहदेदार तथा लखनऊ नगर के प्रतिष्ठित सज्जन बुलाए गए थे, आकर अपनी-अपनी हैसियत मर्तबे की टोलियाँ बनाए हुये खीमों में जमा थे।

कोठी के विस्तृत अहाते के भीतर गोरी तथा हिन्दुस्तानी कम्पनी सरकार की पल्टनें हथियारबन्द चाक-चौबन्द खड़ी हुई थीं। फाटक पर लगभग पचास नौजवान गोरे-सैनिक तथा अफसर विशेष रूप से मुस्तैद खड़े हुए थे। उन्हें नवाब गवर्नर जनरल बहादुर से विशेष आदेश प्राप्त था कि दरबार में शरीक होने वाला एक-एक व्यक्ति पूरी पूछ-ताछ तथा तस्दीक जान-पहचान के बाद फाटक के अन्दर दाखिल किया जाए। तमाश-

बीन जनता का एक भी व्यक्ति फाटक के अन्दर न घुसने पाए। अतः फाटक पर तैनात गोरे अफसर एक-एक व्यक्ति का पूरा पता लेकर तथा अपने पास के कागजों में उसका नाम खोज-ढूंढ कर फाटक के अन्दर दाखिल करते थे, उसके बाद कहीं दूसरे का नम्बर आता था। इस प्रकार जब एक व्यक्ति आयोजित कोठी के विशेष दरबारी-स्थान पर पहुँच जाता था तब दूसरे व्यक्ति को जाने दिया जाता था।

कोठी के अन्दर बालाखाने पर महा सेनापति लार्ड सर जान शोर अपने अंगरक्षकों के घेरे में आसन पर आसीन थे। बालाखाने के नीचे समस्त दरबारियों के बैठने के लिए कुर्सियाँ बिछी हुई थीं। और जगह-जगह गोरे सैनिक अफसर सचेत खड़े हुए थे।

इस दरबार का अभिप्राय अभी तक किसी को मालूम नहीं था। अतः कुछ देर के बाद जब सभी आमंत्रित लोग दरबार में आकर अपनी-अपनी हैसियत की निर्धारित कुर्सियों पर बैठ गए तब लाट साहब के सेक्रेटरी ने आकर उच्च स्वर से घोषणा की—"आज के इस दरबार का अभिप्राय बहुत साधारण सा है। यानी एक तहरीर के लेख को ध्यानपूर्वक अपने कानों से सुन कर तथा उसके लेख पर गौर करके आप लोगों को उस तहरीर पर अपनी गवाही साक्षी तथा रजामन्दी की मोहरें—हस्ताक्षर करने होंगे। वह तहरीर आप सब को पढ़ कर सुनाई जायगी। वह तहरीर मुल्क में हुकूमत करने वाली कम्पनी सरकार की एक तराजू है जिसके दोनों पलड़े न्याय, सच्चाई तथा ईमानदारी की जीती-जागती तस्वीर कही जाती है। उसे अवध रियासत की गद्दी के हकदार तथा गैरहकदार की एक सच्ची सनद समझना चाहिए। अब मैं आप सबको उस तहरीर को पढ़ कर सुनाता हूँ।" और सेक्रेटरी महोदय ने अपनी जेब से एक लम्बा-चौड़ा कागज निकाल कर हाथ में ले लिया तथा उपस्थित लोगों की ओर अपनी निगाह दौड़ाई।

गवर्नर जनरल महोदय ने एक बड़ी होशियारी की थी। उनको पहले से पता था कि नवाब शुजाउद्दौला बहादुर की मनकूहा बीबी नवाब बहू बेगम साहिबा अवध के वर्तमान युवक नवाब मिरजा वजीरअली खाँ की कुछ बेजा हरकतों के कारण नाराज होकर लखनऊ से फैजाबाद चली गई हैं। इसलिए खासतौर पर चुपचाप अपने आदमी को फैजाबाद भेज कर तथा उन्हें फैजाबाद से लखनऊ बुला कर और अपनी उस तहरीर को उन्हें सुना-समझा कर उस पर पहले ही उनकी मोहर अंकित करा ली थी। बहू बेगम वजीर-अली खाँ की हरकतों तथा उनकी बदमिजाजी से नाराज तो थी हीं अतः उन्होंने थोड़ा भी विरोध नहीं किया था। बल्कि सहर्ष तहरीर पर अपनी मोहर लगा दी थी। उसके बाद लार्ड सर जान शोर ने यही चालाकी नवाब खासमहल आसफुद्दौला बहादुर की बीबी के साथ भी की थी। पिछली रात में चुपचाप स्वयं मच्छी भवन पहुँच कर उस तहरीर को नवाब खासमहल के सामने रखा था और बहुत कुछ ऊँचा-नीचा समझा कर उस पर मोहर करने का अर्ज किया था। नवाब खासमहल आसफुद्दौला के समय से ही एक प्रकार से विरक्त सी होकर मच्छी भवन में रह रहीं थीं। उन्हें राज-काज या अवध की नवाबी

से कोई मतलब ही न था। चाहे कोई भी अवध का नवाब बने उनके लिए सभी बराबर थे। हाँ, वजीरअली खाँ का नाम लड़के के रूप में नवाब आसफुद्दौला के नाम से जुड़ा हुआ था, इसलिए कुछ ख्याल उनकी तरफ लुढ़क जाता था। लेकिन इस समय लार्ड सर जान शोर ने अपने आतंक तथा न्याय-इन्साफ का कुछ ऐसा जादू-मंतर फूंक रखा था कि नवाब खासमहल की जबान गूंगी सी हो गई थी। किसी प्रकार का एक शब्द भी जबान से बाहर नहीं निकला था। फिर उन्होंने नवाब बहू बेगम की मोहर तहरीर पर लगी हुई देखी थी। इसलिए उन्होंने भी अपनी मोहर लगा दी थी। इन दोनों बेगमात की मोहरे तहरीर पर अंकित कराने में लार्ड सर जान शोर की बहुत बड़ी इमदाद नवाब नाजिर तहसीनअली खाँ तथा अल्लामा तफज्जुल हुसैन खाँ ने की थी और अपनी भी मोहरें तहरीर पर लगा दी थीं।

सेक्रेटरी ने उच्च स्वर से बड़े इतमीनान के साथ तहरीर को आदि से अन्त तक पढ़ कर सुना दिया। फिर उसे वहीं सबके सामने मेज पर रख कर मोहरें लगाने व हस्ताक्षर करने का अनुरोध किया।

उपस्थित व्यक्तियों में सबसे पहले तहरीर पर मोहर लगाने की नवाब कासिम-अली खाँ, नवाब बहू बेगम के सगे भतीजे तथा आसफुद्दौला के परम विश्वासी तथा मशविराकार की बारी आई। चूंकि नवाब कासिमअली खाँ ने नबाब आसफुद्दौला के कहने से एक तहरीर पर इसकी तस्दीक कर दी थी कि मिरजा वजीरअली खाँ हजरत की जायज-सही औलाद हैं तथा आगे यही गद्दी के सही हकदार भी हैं। इसलिए दरबार में सामने रखी हुई तहरीर पर मोहर करने से झिझके, सकुचाए। सर जान शोर ने उनकी इस झिझक को समझा। जानते भी थे ये नवाब आसफुद्दौला के बहुत करीबी अजीज और रिश्तेदार हैं, इस लिहाज से इस तहरीर पर इनके दस्तखत होना बहुत जरूरी है। अगर इनकी मोहर इस वक्त इस तहरीर पर नहीं लगेगी तो दूसरे अजीज रिश्तेदार लोग भी भड़क जाएँगे। अपनी मोहरें लगाने से मुकर जाएँगे और इस प्रकार से अजीज रिश्ते-दारों की जानिब से ये मामला अधूरा ही रह जाएगा। अतः चतुर गवर्नर ने पहले एक आतंक भरी घुड़की दी। उसके बाद बहुत मीठे होकर वह पुचाड़ा दिया कि नवाब कासिम-अली खाँ सब भूल गए। और तहरीर पर चुपचाप अपनी मोहर अंकित कर दी।

उनके बाद नवाब अशरफअली खाँ नवाब मिरजा वजीरअली खाँ के ससुर तथा आफरींअली खाँ का नम्बर आया। यद्यपि इन दोनों व्यक्तियों के दिलों में भी वही कासिमअली खाँ वाली झिझक तथा संकोच मौजूद था। लेकिन अभी-अभी अपनी आँखों से कासिमअली खाँ का हाल देख चुके थे। लाट साहब के आतंक तथा पुचाड़े को भी समझ चुके थे अतः यही बेहतर समझ में आया कि मोहर लगा कर कम्पनी सरकार की मुखालफत से बचना ही अच्छा है, वरना क्या जाने आगे कैसी-क्या सिर पर आ पड़े। उन दोनों ने भी चुपचाप कासिमअली खाँ की मोहर के नीचे अपनी मोहरें लगा दीं।

फिर क्या था। झाड़ झनखाड़ों वाला मैदान साफ हो गया। कहीं कोई एक काँटा भी न रह गया। तहरीर में वह चुम्बक उत्पन्न हो गया कि एक के बाद एक व्यक्ति उठ कर अपनी मोहर लगाने, दस्तखत करने लग गया। इस प्रकार नौ बजे दिन से शुरू होकर तीन बजे दिन तक मोहरों-दस्तखतों का सिलसिला चलता रहा। उसके बाद सभी दरबारी कोठी के अन्दर से निकल कर बाहर खीमों-तम्बुओं में जा बैठे। लेकिन सभी खामोश थे। जबानों में लकवा सा लग गया था। कोई किसी की तरफ देखता भी नहीं था। सब का मन एक विचित्र से कौतूहल से भरा बैठा था।

इस नाटक के समाप्त हो जाने तथा तहरीर की मजबूती हो जाने के बाद लार्ड सर ज़ान शोर ने बड़े सन्तोष की साँस ली और अपने नाटक का दूसरा बल्कि अन्तिम दृश्य दिखलाने के लिए तैय्यार हो गए। नवाब अवध हजरत वजीरअली खाँ को लखनऊ से बीबीपुर तशरीफ लाने के लिए अपना एक खास आदमी दरेदौलत दौड़ाया।

नवाब अवध हजरत वजीरअली खाँ को बीबीपुर की कोठी में लाट साहब द्वारा एक दरबार आयोजित किए जाने की खबर तो सबेरे ही मिल चुकी थी। लेकिन उसके भेद का उन्हें कुछ भी पता नहीं चला था और न उन्होंने उसके जानने-समझने की कोई कोशिश की थी। उनके दिल में अंग्रेज-जाति के प्रति जो घृणा मौजूद थी, उसी के आधार पर लाट साहब के इस भेद भरे दरबार तथा उसकी कार्यवाही के प्रति भी अपनी लापरवाही से काम लिया था। अपने राग-रंग में मस्त थे।

उसी दिन बसन्त पंचमी थी। सन्ध्या होने में अभी काफी देर थी। वजीरअली-खाँ ने बसन्ती पोशाक पहिन रखी थी। गले में सात लड़ियों वाले बड़े-बड़े अमूल्य मोतियों तथा पन्नों की माला पड़ी थी। सिर पर गुलाबी रंग की रेशमी पगड़ी और उस पर अमूल्य जड़ाऊ सिरपेंच तथा नवाबी तुर्रे की बहार थी। कमर में भी गुलाबी रंग का फेंटा बँधा था जो बसन्ती जाम की शोभा को ऊँचा उठा रहा था। चमचमाते पीले मखमल के म्यान में विलायती तलवार थी। हाथों के दोनों बाजुओं में बड़े-बड़े हीरों जड़े बजुल्ले बँधे थे। जनानखाने की चमचमाती मसनद पर नवाबी जोड़ा आसीन था। नवाब वजीरुन्निसा बेगम का ठाठ भी कुछ कम न था। उन्होंने भी कीमती बसन्ती रंग का जोड़ा पहिन रखा था और जवाहरातों से जड़े हुए जेवरात से लदी हुई बैठी थीं। नौकर-नौकरानियों तथा चार यारों मुसाहिबों आदि को भी बसन्ती पोशाकें अता फरमाई गई थीं। और लोग भी अपनी छवि बनाए मुस्कराते हुए इधर से उधर घूम फिर रहे थे।

आज दस्तरख्वान पर से उठने के बाद ही जनानखाने में शाही जोड़ा मसनद नशीन हो गया था और नाच-गाने की महफिल जम गई थी। जनानखाने की दो अधेड़ नौकरानियाँ सारंगियाँ सँभाले हुए तथा एक नौजवान युवती तबले की जोड़ी सँभाले मसनद के सामने बैठी थीं। एक नवयौवना खूबसूरत दासी जो गाने-नाचने की कला में निपुण थी जर्क-बर्क बसन्ती पेशवाज पहिने हुए अपनी कला निपुणता का परिचय देने के लिए

मसनद के आगे तत्पर खड़ी थी। उसके हाथों में पीले तथा लाल गुलाबी ताजे फूलों के दो गुलदस्ते थे। तबले पर थापें पड़ने लगीं। सारंगियों ने स्वर भरना आरम्भ कर दिया और नर्तकी ने बड़े मधुर मीठे स्वर में बसन्त की रागिनी गाना शुरू कर दी—'आज बसन्त बना बना बन आयौ।'

नर्तकी ने पूरे हाव-भावों के साथ अपनी संगीत तथा नृत्य कला का प्रदर्शन करते हुए देर तक रागिनी को गाया, दोहराया। शाही जोड़ी मस्ती में झूम-झूम गया। नर्तकी ने रागिनी तान तोड़ने के पश्चात् अदब के साथ अपने हाथों के गुलदस्ते नवाब तथा बेगम को भेंट कर दिए।

युवक नवाब वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए नवाब वजीरुन्निसा की तरफ मुड़ कर कहा—"जानेमन ? अब तुम इस महफिल का मजा लूटो। हम अब दीवानेखास की तरफ जा रहे हैं। वहाँ हमारे चार यार और मुसाहिब लोग बैठे हमारा इन्तजार कर रहे होंगे।"

बेगम ने मुस्कानों को होठों पर बिखेर कर धीरे से कहा—"जैसी हुजूर की मरजी।"

वजीरअली खाँ वहाँ से दीवानखाने की तरफ चल पड़े। वहाँ बेगम की महफिल उसी प्रकार जमी रही। तबले पर थापें पड़ती रहीं और निपुण नर्तकी अपनी कला प्रवीणता का परिचय देती रही।

दीवानेखास में पहुँच कर नवाब वजीरअली खाँ मसनदनशीन हो गए। सभी मुसाहिब तथा चार यारों ने उठ कर कायदे से उनका स्वागत किया, सिर झुकाया और इजाजत पाकर अपने-अपने स्थानों में बैठ गए। सभी लोग हजरत सलामत की बख्शी हुई चमचमाती पोशाकें पहने हुए थे। दीवानेखास के बाहर अब्दुल रहमान कंधारी तथा दारोगा तोपखाना मिरजा इब्राहीम बेग मय पाँच सौ सवारों तथा कुछ पैदल सिपाहियों के साथ हजरत सलामत को बसन्त का सलाम बजाने के लिए आकर मौजूद हुए थे। जैसे ही उन लोगों को दीवानखाने में नवाब साहब के तशरीफ लाने की आहट मिली। उन दोनों ने एक चोबदार के जरिए अर्ज करा कर सलाम अदा करने की इजाजत चाही। इजाजत मिल गई। दोनों ने सामने हाजिर होकर फौजी कायदे से बसन्त का सलाम अदा किया। और अर्ज किया कि कुछ सवार-पैदल भी दरेदौलत पर हाजिर हैं, वह लोग भी अपने आका के आगे सिर झुकाना चाहते हैं।"

वजीरअली खाँ ने प्रसन्न मुखमुद्रा से कहा—"बेहतर है। जरा देर ठहरो, हम बाहर आकर सब का सलाम लेंगे।"

रिसालदार तथा दारोगा दीवानखाने से बाहर चले गए।

चार यार मर्दानअली, दिलावर अली, रुस्तम खाँ तथा शेरखाँ तो हजरत के पुराने अखाड़े के साथी थे। इधर मसनदनशीनी के बाद हजरत सलामत ने अपनी पसन्द के

सात नौजवान हट्टे-कट्टे व्यक्तियों को अपना मुसाहिब बना लिया था। उनमें मिरजाई बेग, मीर इज्जतअली, रहीम खाँ, मोहम्मद इसहाक, वफाबेग, बहादुरअली तथा वारिसअली-खाँ थे। यही सब हर समय हजरत से चिपटे हुए उनकी सोहबत को चमकाते रहते थे।

हजरत तथा चार यारों, मुसाहिबों में हँसी ठठोलियों भरी बातें चलने लगीं। कहकहे पर कहकहे लगने लगे। उसके बाद कुछ दूसरी बातों के सिलसिले में मर्दानअली ने अर्ज किया—"सुना है आज बड़े सबेरे से गवर्नर जनरल ने बीबीपुर की कोठी में एक दरबार का ठाठ जमा रखा है।"

दिलावर अली ने टीप जमाई—"गवर्नर ने बीबीपुर की कोठी को अपनी जागीर समझ लिया है। वहाँ के नवाब बन बैठे हैं और आज बसन्त का दरबार कर रहे हैं।"

मर्दानअली बोला—"लेकिन, एक बड़े हैरत की बात है कि गवर्नर ने अपने दरबार में शिरकत की दावत हजरत सलामत को नहीं दी।"

वजीरअली खाँ उपेक्षा के भाव से बोले—"कोई हर्ज नहीं है। हम भी कल अपना दरबार सजाएँगे और गवर्नर को नहीं पूछेंगे।" फिर घृणा भरे लहजे से कहा—"ये अंग्रेज बच्चे क्या जानें बसन्त का दरबार सजाना। बसन्त हमारे हिन्दुस्तान का त्यौहार है। उसका दरबार सजाना, जश्न मनाना हमारे मुल्क के राजे-महाराजे और बादशाह-नवाब ही जानते हैं। दरबारदारी की इन बदजात लाल मुँह के बन्दरों में तमीज कहाँ से पैदा हो सकती है?"

मिरजाई बेग ने मुस्कराते हुए अर्ज किया—"नहीं हुजूर; ऐसा न किया जाए। गवर्नर रेजीडेन्ट और दूसरे सभी अंग्रेजों को दरबार में बुलाया जरूर जाए। मगर उन सब को मसनद के पीछे एक कतार में खड़ा किया जाए।"

मीर इज्जत अली बोल उठे—"और सबके हाथों में मोरछल, चँवर और पंखे, छड़ियाँ थमा दी जाएँ। लुत्फ आ जाएगा?"

एक ठहाका गूंज गया। और देर तक गूंजता रहा।

तभी बाहर से एक चोबदार ने आकर अर्ज किया—"आलीजाह! बीबीपुर में गवर्नर जनरल का भेजा हुआ एक अंग्रेज अफसर तथा उसके साथ नवाब कासिमअली खाँ, आफरींअली खाँ आए हुए हैं खिदमत में हाजिर होना चाहते हैं।"

वजीरअली खाँ ने उसकी तरफ नजर उठा कर कहा—"उस अंग्रेज अफसर को बाहर ही बैठा दो। कासिमअली खाँ और आफरींअली खाँ की हमारे पास भेज दो।"

दूसरे क्षण कासिमअली खाँ तथा आफरींअली खाँ ने आकर मसनद के आगे सिर झुका दिए और इजाजत पाकर कायदे से बैठ गए।

हजरत वजीरअली खाँ ने इतमीनान के साथ नजर उठा कर उनकी तरफ देखा, पूछा—"क्या बात है?"

कासिमअली खाँ ने अर्ज किया—"हजरत सलामत! गवर्नर जनरल बहादुर ने

आला हजरत को बीबीपुर की कोठी में याद फरमाया है ?"

छूटते ही वजीरअली खाँ ने कुछ रुखे लहजे से कहा—"बीबीपुर की कोठी में आज बसंत का दरबार तो गवर्नर जनरल सुबह से सजाए हुए हैं। हमें इस वक्त दावत दी है, याद किया है ?"

कासिमअली खाँ धीरे से बोले—"बसंत का दरबार क्या सजाया है...."

उनकी बात पूरी न होने देकर वजीरअली खाँ ने कहा—"अभी उनका दरबार जमा हुआ है ?"

"जी हाँ," कासिमअली खाँ ने कहा—"इधर हमलोगों को हुजूर की खिदमत में रवाना किया और उधर नवाब नाजिर तथा जवाहरअली खाँ को एक-एक अंग्रेज अफसर के साथ दरबार में तशरीफफरमा होने के लिए नवाब बहू-बेगम साहिबा और नवाब खासमहल साहिबा के पास भी रवाना किया है।"

वजीरअली खाँ बोले—"लेकिन नवाब बहू बेगम साहिबा लखनऊ में कहाँ है ? वह तो एक अर्से से फैजाबाद में तशरीफ रख रही हैं।"

"आज सुबह वह फैजाबाद से लखनऊ आ गई हैं और सुनहरी बुर्ज में कयाम-फरमा हुई है।" फिर जरा रुक कर कहा—"अभी रास्ते में मालूम हुआ था कि नवाब बहू बेगम साहिबा ने अपनी जईफी और रास्ते की थकान की वजह से आने से इनकार कर दिया है। लेकिन खासमहल साहिबा मच्छी भवन से बीबीपुर पहुँचने की तैय्यारी कर रही हैं।"

वारिसअली खाँ मुसाहब ने हजरत की तरफ रुख कर के कहा—"हुजूर आली ! क्या मुजायफा है ? तशरीफ ले चल कर जरा अंग्रेज बच्चों के दरबार का तमाशा मुलाहजा फरमाया जाए।"

शेर खाँ ने कहा—"जी हाँ, आला हजरत ! और कुछ न सही, एक लुत्फ रहेगा।"

वजीरअली खाँ मसनद में उठ कर खड़े हो गए, बोले—"बेहतर है।"

हजरत सलामत नवाब अवध हजरत मिरजा वजीरअली खाँ दीवान खाने से बाहर आ गए। आए हुए अंग्रेज अफसर ने कुर्सी से उठ कर कायदे से सलाम किया। वहाँ मौजूद रिसाले के सवारों—पैदल सिपाहियों ने भी सलामी दी। हजरत ने मुस्कराते हुए सबकी सलामी ली।

इसके बाद आन की आन में सवारियाँ आकर हाजिर हो गईं।

हजरत वजीरअली खाँ अपनी विशेष बग्घी पर सवार हुए। उनकी गाड़ी के आगे पीछे रिसाले के सवार तथा रिसालदार दारोगा के घोड़े चले। बाकी सवारियों पर चार-यार मुसाहब, कासिमअली खाँ तथा आफरींअली खाँ सवार हो गए। पीछे पैदल सिपाही, अंग्रेज अफसर जो हजरत सलामत को लेने आया था, अपने घोड़े पर सवार सब के पीछे

कुछ फासले पर चल रहा था। और इस प्रकार बड़ी आन-बान, शान-शौकत के साथ नवाब अवध हजरत वजीरअली खाँ की सवारी दरे-दौलत से खाना होकर बीबीपुर की कोठी की ओर चल पड़ी।

संध्या बहुत धीरे-धीरे ठुमकती हुई चली आ रही थी।

२६

बीबीपुर की कोठी में नवाब वजीरअली खाँ का बड़ी बेचैनी के साथ इन्तजार किया जा रहा था। लाट साहब के सेक्रेटरी, लखनऊ रेजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन तथा कुछ अन्य अंग्रेज अफसर कोठी के अहाते के बाहर फाटक के करीब खड़े रास्ते पर आँखें गड़ाए नवाब साहब का इन्तजार कर रहे थे। सेक्रेटरी महोदय कभी जरा हट कर वहाँ से कोठी के अन्दर चले जाते थे। गवर्नर जनरल बहादुर के कानों से लग कर कुछ बात करते थे और लौट कर फिर बाहर फाटक पर आकर राह पर निगाह दौड़ाने लग जाते थे।

कोठी के अन्दर-बाहर का प्रबन्ध अभी तक बदस्तूर था। उसमें थोड़ा भी हेर-फेर नहीं हुआ था। अंग्रेजी हिन्दुस्तानी पल्टनें जो सवेरे से वहाँ जमी हुई थीं बराबर अपनी जगह पर मुस्तैद खड़ी थी। खीमों तथा तम्बुओं में सुबह से आए हुए लोग अब भी जमे बैठे थे। लेकिन एक सन्नाटा सा छाया था। किसी प्रकार का शोर-गुल न था। सबके चेहरे शंका-सन्देह तथा कौतूहल से भरे थे। पेटों के अन्दर चूहे कूद मचाए हुए था। एक-एक को यही चिन्ता सता रही थी कि अब आगे क्या होने वाला है? मगर किसी में किसी से बात करने या कुछ पूछने कहने की हिम्मत न थी।

तभी नौकर-नौकरानियों के घेरे में घिरा हुआ लखनऊ की तरफ से नवाब खास महल का मयाना आता दिखाई पड़ा। खासमहल के मयाने के दाएँ-बाएँ जवाहरअली खाँ तथा मोहरमअली खाँ घोड़ों पर सवार चले आ रहे थे।

सेक्रेटरी तथा रजीडेन्ट ने आगे बढ़ कर नवाब खासमहल का स्वागत किया और ले जाकर एक विशेष सुन्दर बन्द खीमे में उन्हें उतारा।

अब पुनः बड़ी उत्सुकता के साथ नवाब वजीरअली खाँ के आने की प्रतीक्षा होने लग गई। कुछ देर बाद नवाब साहब की सवारी आती नजर आई। हड़कम्प सी मच गई। कुछ अंग्रेज अफसर लाट साहब को खबर देने के लिए कोठी के अन्दर दौड़ गए। इधर सेक्रेटरी, रजीडेन्ट तथा अन्य अंग्रेज अफसर सचेत होकर आगे बढ़ गए। कोठी का फाटक खुल गया। नवाब साहब की बग्घी आकर फाटक के सामने रुक गई। सेक्रेटरी ने

नवाब वजीरअली खाँ को बग्घी पर से उतारा और उनको साथ लेकर कोठी के अन्दर चले गए। रजीडेन्ट तथा अन्य अंग्रेज अफ़सरों ने फाटक के अन्दर आकर फाटक बन्द करा दिया। फाटक पर पहरेवाले गोरे सतर्क हो गए।

नवाब वजीरअली खाँ के सभी साथी चार यार तथा मुसाहिब वगैरह भी सवारियों से उतर-उतर कर फाटक पर आए और कोठी के अन्दर पहुँचने के लिए उत्सुकता दिखलाने लगे। मगर फाटक के अन्दर से ही एक अंग्रेज अफ़सर ने उन्हें रुखा-सूखा हुक्म सुना दिया—"आप लोग अन्दर नहीं जा सकते। बेहतर होगा कि जाकर खाली खीमों में तशरीफ रखें।"

इस हुक्म को सुन कर सभी लोग कुछ हैरत कुछ कौतूहल और कुछ सन्देह से भर गए। पहले तो एक दूसरे का मुँह ताका, फिर मजबूर होकर खीमों की तरफ बढ़े और एक खाली खेमे के अन्दर जम कर बैठ गए। सबके दिलों में खुदबुद सी हो रही थी कि यह क्या मामला है? कैसा दरबार है? जिसमें अकेले नवाब साहब ही शरीक किए गए हैं। किसी की समझ में कुछ न आया। रिसालदार अब्दुल रहमान कंधारी तथा दारोगा तोपखाना मोहम्मद इब्राहीम बेग का भी माथा ठनका। उनके दिलों में भी हल-चल सी उत्पन्न हो गई। लेकिन बड़ी खामोशी के साथ उन लोगों ने जब्त से काम लिया। खुद अपने सवारों तथा पैदल सिपाहियों की उचित व्यवस्था की और जाकर मुसाहबों वाले खीमे के पास वाले एक खाली खीमे में बैठ गए। आपस में धीरे-धीरे अपनी खिचड़ी पकाने लगे।

आला हजरत नवाब वजीरअली खाँ को सेक्रेटरी महोदय ने कोठी के अन्दर ले जाकर एक विशेष कमरे में आराम के साथ एक कुर्सी पर बैठाया। कमरा बिलकुल खाली था। वहाँ लखनऊ का एक भी व्यक्ति नहीं था। केवल अंग्रेज अफसर ही बार-बार उस कमरे में आ-जा रहे थे। वजीरअली खाँ के दिल में एक आश्चर्य सा उत्पन्न हुआ। कुछ समझ में न आया। सेक्रेटरी भी वहाँ से चले गए थे, अतः कुछ पूछ भी न सके।

कुछ देर बाद सेक्रेटरी महोदय कमरे में दाखिल हुए और वजीरअली खाँ के सामने बिछी मेज पर वही गवाही, साक्षी तथा तस्दीक दस्तखतों-मोहरों से लिपी-पुती तहरीर रख कर कहा—"आला हजरत, पहले इस तहरीर को शुरू से आखिर तक पढ़ कर तस्दीक और गवाहियों की मोहरों-दस्तखतों को बगौर मुलाहजा फरमा लें।"

वजीरअली खाँ ने एक सांस में तहरीर को पढ़ डाला। फिर उलट-पलट कर उस पर अंकित मोहरों तथा दस्तखतों को देखा-पहचाना। चेहरे पर गम्भीरता छा गई। धीरे से मुँह से निकल पड़ा—"इसके क्या मानी?"

सेक्रेटरी ने कहा—"नवाब गवर्नर जनरल बहादुर का कहना है कि इस मामले में हमारा जाती तौर पर कोई कसूर या गलती नहीं है। चूंकि इस मुल्क में हम कम्पनी सरकार की हुकूमत के प्रधान हैं। कम्पनी सरकार की सारी जिम्मेदारी हमारे ही सिर

पर है। उस हैसियत से हमारी यही अर्ज है कि ये अवध रियासत हमारी हिफाजत में है, हम हर तरह से इस रियासत के हामी-मददगार और सरपरस्त हैं। इसलिए हम चाहते हैं, और हमारा इन्साफ भी यही कह रहा है कि हमारी छान-बीन, तहकीकात से जो रियासत का सही हकदार साबित हुआ है, रियासत उसी को मिले। वही अवध के मसनद की रोनक बढ़ाए। गैर हकदार को अवध का नवाब बनाए रखना हमारे इन्साफ से दूर है। इसके अलावा हमारा दूसरा कोई मतलब नहीं है। फिर आप को हम पूरा इतमीनान दिलाते हैं कि मसनद पर से हट जाने के बाद भी आपकी इज्जत-आबरू का पूरा लिहाज रखा जाएगा। और हर तरह से आपके जान-माल की हिफाजत की जाएगी। जितना भी माल-असबाब, साज-समान आपके पास है या आप के महलों में मौजूद है, उसके बारे में हमारी तरफ से कोई छेड़-छाड़ नहीं है। वह सब आपका है और आपके कब्जे में रहेगा। मसनद पर से उतर जाने के बाद आपका इस लखनऊ में रहना, कयाम करना मुनासिब न होगा। इसलिए हम बेहतर समझते हैं कि आप बनारस जाकर इतमीनान के साथ कयाम फरमाएँगे। और वहाँ हँसी-खुशी के साथ जिन्दगी बसर करेंगे। आपको खर्च गुजारे के लिए तीन लाख रुपया सालाना अवध रियासत के खजाने से बनारस के रेजीडेन्ट के जरिये आपकी खिदमत में बिला उजुर पहुँच जाया करेंगे।"

सुन कर वजीरअली खाँ के चेहरे पर सुर्खी दौड़ पड़ी। धीरे से कहा—"ओफ, इसी ज्यादती को सुनाने के लिए हमें दरबार की दावत दी गई थी? फिर सेक्रेटरी की तरफ नजर उठा कर कहा—"गवर्नर जनरल कहाँ हैं? हम उनसे दू-ब-दू बात करना चाहते हैं।"

गवर्नर जनरल बहादुर बालाखाने में मौजूद हैं, लेकिन खास काम में मशगूल हैं। मैंने जो कुछ अर्ज किया है उन्हीं की जबान से निकला हुआ है। उसमें मेरा एक हर्फ भी शामिल नहीं हैं।"

वजीरअली खाँ के चेहरे पर तमतमाहट छा रही थी। क्रोध से भौहें खिच रही थीं। कुछ कहना चाहते थे, लेकिन कहा नहीं। जल्दी उठ कर झपटते हुए कोठी के अन्दर से बाहर निकल आए। उनके चेहरे की रंगत, तेज, क्रोध तथा कसरती बदन और कमर में लटकती हुई विलायती तलवार देख कर किसी अंग्रेज बच्चे की किसी तरह की छेड़छाड़ करने की हिम्मत न पड़ी।

हजरत सलामत कोठी के फाटक से निकल कर सीधे नवाब खासमहल के खीमे में पहुँच गए। उनके कदमों पर सिर रख कर कहा—"अम्मी हुजूर! मुझे आपसे सिर्फ इतनी ही शिकायत है कि मान लीजिए कि मैं आसफुद्दौला का बेटा न था, मगर उनका गुलाम तो था? आपकी खिदमत अताअत मुझसे ज्यादा दूसरा नहीं करेगा। मेरा ताल्लुक जिस तरह नवाब आसफुद्दौला का है उसी तरह आपका भी है। कम-से-कम आपके दिल में जरूर मेरा ख्याल होना चाहिए था। मगर बजाय उसके...." वह चुप रह गए।

उनका ये कहना सुन कर खासमहल का दिल भर आया। आखिर को एक औरत का ही दिल तो था। उसमें कठोरता कहाँ से आती। फिर नवाब आसुफुद्दौला का नाम वजीरअली खाँ से पूर्णरूप से जुड़ा था। मीठे प्रेमभरे स्वर से बोलीं—"इसे एक गैबी तूफान समझो ? इस मामले में मेरा कोई हाथ नहीं है। तुम जानते हो कि मुझे राज-काज से कोई मतलब सरोकार न पहले था, न तुम्हारी ही हुकूमत में रहा है। एक मेरे न चाहने से तुम्हारी नवाबी हरगिज कायम रहने वाली न थी। इसलिए मजबूर होकर मुझे अपनी मोहर लगानी पड़ी थी। अगर तुम समझते हो मेरी मोहर से तुम्हें अपनी हुकूमत वापस मिल सकती है, तो मेरी ये मोहर तुम्हारे लिए फिर भी मौजूद है।"

वजीरअली खाँ कुछ नहीं बोले।

संध्या का अन्धकार धरती पर छाने लगा था। कोठी तथा खीमे, तम्बू, झाड़, फानूसों, कम्बलों, लैम्पों से एकदम जगमगा उठे थे। बीबीपुर में दरबार की खबर तथा वहाँ लोगों के जमाव का समाचार सुन कर लखनऊ के खोंचेवाले खोंचों में तरह-तरह के पकवान, पूड़ी कचौड़ियाँ पापड़, साग कबाब-कोफता, हलुवा, मिठाइयाँ सजा-सजा कर बीबीपुर आ गये थे। खीमों के सामने एक बाजार सी लगी हुई थी। खीमों में जमा लोग दिन भर के भूखे-प्यासे तो थे ही, अतः खोंचों से अपनी पसन्द की चीजें खरीद कर खा रहे थे। पेट की आग को शान्त कर रहे थे और आगे के तमाशे देखने के लिये उत्सुक थे। किन्तु आगे क्या होने वाला है किसी को खबर न थी।

नवाब वजीरअली खाँ खासमहल के खीमे से निकल कर उस खीमे आ गये जहाँ पर उनके चार यार मुसाहिब तथा दूसरे लोग कासिमअली खाँ, अशरफअली खाँ और आफरीं अली खाँ बैठे हुए थे। आते ही सबने उनको घेर लिया और उनके चेहरे की रंगत को देखकर ताड़ गये कि कोठी के अन्दर अवश्य उनके दिल पर कोई मनहूस बिजली गिरी है। वजीरअली खाँ ने बिना किसी के पूछे हुए कोठी के अन्दर की सारी कैफियत बयान कर डाली और जोश में भर कर आसतीनें चढ़ाने लगे। उनकी यह दशा देख कर चार यार तथा मुसाहिब भी कुर्बान हो जाने के लिए तैयार हो गये। कमरों में लटकती तलवारों की मूँठों पर हाथ ले जाने लगे। जोर-जोर से चिल्ला कर कहने लगे—"हम लोग इसी वक्त कुर्बान हो जाने को तैयार हैं। हमारे कुर्बान हो जाने के बाद हजरत को मसनद पर से उतारा जा सकता है।"

कासिमअली खाँ को आसफुद्दौला का ख्याल था। अशरफअली खाँ नवाब वजीर अली खाँ के सगे ससुर ही थे और आफरीअली खाँ का इस दौर में बोलबाला था। एक प्रकार से वही नायबुल रियासत थे। इसलिए ये तीनों नहीं चाहते थे कि हजरत वजीर-अली खाँ गद्दी से हटाये जाएँ। मगर गवर्नर जनरल की एक घुड़की ने उनके दिल हिला दिये थे व तहरीर पर मोहरें करा ली थीं। और गवर्नर के पुचाड़े ने आशा बँधा दी थी कि शायद हमलोगों की इज्जत-आबरू कायम बनी रहेगी। फिर भी अभी इन तीनों के

दिलों में वजीरअली खाँ की वफादारी मौजूद थी। लेकिन खामोश थे। कुछ कहने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। गवर्नर की घुड़की याद आ जाती थी।

रिसालदार अब्दुल रहमान तथा दारोगा इब्राहीम बेग भी वहीं मौजूद थे। और वजीरअली खाँ के मुख से कोठी के अन्दर गुजरने वाली पूरी कैफियत सुन चुके थे। चार यारों तथा मुसाहिबों का जोश-खरोश तथा शोरगुल देख सुन कर खामोश न रह सके। शीघ्र ही एक चुस्त सवार को बुला कर कहा—"जाकर रिसाले के सवारों तथा पैदल सिपाहियों को सचेत कर दो। अपने मालिक, अपने आका के लिए मर-मिटने का मौका आ गया है। इसलिए सब लोग जल्दी चाक-चौबन्द हो जाएँ। जिसका नमक खाया है उसके लिए मिट जाना लाजिमी है।"

सवार ने अपने घोड़े को सरपट दौड़ा दिया। अब्दुल रहमान कंधारी अपने जोश को न रोक सका। मुसाहिबों के शोर-गुल में वह भी शामिल होकर चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगा—"लखनऊ में सिपाही की कमी नहीं है। इसी दिन के लिए नमक खाया है। पहले तलवार से तलवार लड़ जायेगी। खून से धरती रंग जायेगी, लाशों पर लाशें गिर कर पहाड़ की शकल बन जायेंगी। उसके बाद हजरत सलामत को गद्दी छोड़ने की नौबत आयेगी।"

खीमे के अन्दर एक कोलाहल-सा मच गया। पड़ोसी खीमों के लोग भी कुछ वहाँ आ गए और कुछ खीमों में बैठे हुए विषय को लेकर बातें करने लगे।

ये शोरगुल, गरमा-गर्मी कोठी की दीवारों से टकरा गई। फाटक पर खड़े अंग्रेज अफसरों ने भी देखा-सुना और कोठी के अन्दर जाकर खबर कर दी।

लार्ड सर जान शोर चौंके। सिर खुलजाया। विचार दौड़ लगाने लग गए—"बहुत बड़ी गलती हो गई, नवाब वजीरअली खाँ को गद्दी छोड़ने का हुक्म सुनाने से पहले लखनऊ का प्रबन्ध कर लेना चाहिए था। बाहर के शोरगुल से ऐसा मालूम होता है वजीरअली खाँ यहाँ से भाग कर लखनऊ में जा बैठेगा और बैठा-बैठा एक फसाद खड़ा करेगा। लखनऊ की जनता उसके खिलाफ नहीं है। जान-दिल से उसका साथ देने को तैयार हो जाएगी। बहुत बड़ी खून खराबी होगी। रोक-थाम तथा अपना मतलब पूरा करना कठिन हो जाएगा।"

ऐसा सोच कर लार्ड महोदय ने शीघ्र ही लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन को अपने पास बुला कर कहा—"तुम इसी वक्त रजीडेन्सी वापस जाओ और वहाँ जिस कदर अंग्रेजी-हिन्दुस्तानी पल्टन और रिसाले हैं उन सबको लखनऊ से बीबीपुर तक की राह में बिखेर दो और लखनऊ शहर के चौराहों, गली-कूचों तथा नाकों का पूरा पक्का इन्तजाम कर दो। कहीं कोई चिड़िया पर न मारने पाए। नवाबी सेना की तरफ भी ध्यान रखा जाए। नवाबी फौज किसी हालत में अपनी जगह से आगे न बढ़ने पाए। बाकी इधर का हम इन्तजाम कर लेंगे?"

रजीडेन्ट लिम्सडन आदेश पाकर उसी क्षण घोड़े पर सवार होकर बीबीपुर से लखनऊ रजीडेन्सी की तरफ दौड़ पड़े।

इसके बाद लार्ड सर जान शोर ने नायबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ को भेज कर नवाब वजीरअली खाँ को पुनः कोठी में बुलाया।

सरफराजुद्दौला मिरजा हसनरजा खाँ ने खीमे में आकर हजरत सलामत को गवर्नर जनरल का पैगाम दिया और अर्ज किया—"हजूर दू-बदू गवर्नर जनरल से कुछ कहने-सुनने, बात करने के ख्वाहिशमंद थे। इसलिए वह हजरत सलामत से बात करने के लिए तैयार हैं। इन्तजार कर रहे हैं।"

वजीरअली खाँ सरफराजुद्दौला पर विश्वास रखते थे। जानते थे कि ये रियासत के पुराने नकख्वार हैं। अर्से तक आसफुद्दौला के नायबुल रियासत रहे हैं। हमें किसी तरह का धोखा न देंगे। उठ कर उनके साथ चलने को तैयार हो गए।

रिसालदार अब्दुल रहमान तथा दारोगा इब्राहीम बेग लपक कर सामने आ गए।

रिसालदार ने जोश के साथ कहा—"हम जांननिसार-रियासत हाजिर हैं। इसी दिन के लिए हमने हजूर का नमक खाया है। पहले हमें नमक से अदा हो जाने की इजाजत दीजिए। और अब हुजूर हरगिज कोठी के अन्दर न जाएँ। यहाँ से सीधे दरे-दौलत को वापस चलें। अब कोठी के अन्दर कदम रखने में धोखा है, दगाबाजी है। पछताना पड़ जाएगा।"

रिसालदार के चुप होते ही दारोगा मोहम्मद इब्राहीम बेग ने कहा—"अब हमने सिर पर कफन बाँध लिया है। हमारे बुजुर्गों ने अवध-रियासत के लिए हमेशा सर कटाए हैं। इसलिए अर्ज है कि हमें और हमारे जवानों को कुर्बान हो जाने दीजिए। हमारे हौसले निकल जाने दीजिए। अब कोठी के अन्दर कदम रखने में वाकई तौर पर धोखा है, फरेब है और जालसाजी है। आपका एक भी मतलब पूरा न पड़ेगा। अंग्रेज जाति बहुत दगाबाज है।"

वजीरअली खाँ ने कासिमअली खाँ वगैरह की तरफ प्रश्न भरी नजर से देखा।

कासिमअली खाँ ने अर्ज किया—"आलीजाह! कमतरीन की समझ में तो यह आ रहा है कि न जाने से काम और ज्यादा बिगड़ जाएगा। मुमकिन है गवर्नर जनरल ने अपनी ज्यादती और बेइन्साफी को महसूस किया हो। और किसी दूसरे तरीके से इस मामले, बखेड़े को रफा करना चाहते हों। दू-ब-दू बातें होने से उलझन के सुलझने में आसानी नजर आती है।"

कासिमअली खाँ की बात वजीरअली खाँ के कुछ गले उतर गई। बोले—"बेहतर है, आपलोग भी हमारे साथ चलें।"

इसके बाद वजीरअली खाँ सरफराजुद्दौला के साथ कोठी की तरफ चल पड़े। उनके पीछे कासिमअली खाँ, अशरफअली खाँ और आफरींअली खाँ भी चले।

सेक्रेटरी कोठी के फाटक पर खड़ा हजरत् का इन्तजार कर रहा था। आगे बढ़ कर वजीरअली खाँ का हाथ अपने हाथ में ले लिया। और कोठी के अन्दर लाया। कासिमअली खाँ वगैरह पीछे थे। एक दो कमरों को लाँघ कर हजरत वजीरअली खाँ और उनके तीनों साथी एक विशेष कमरे में लाकर बैठाए गए। उसके बाद सेक्रेटरी ने कहा —"हजरत सलामत तशरीफ रखें। लाट साहब आपसे मिलने आ रहे हैं।" और वह कमरे से बाहर आ गया। पहले से सब इन्तजाम था। शीघ्र ही गोरी पल्टन के हथियार बन्द गोरे सैनिकों ने आकर कमरे को चारों ओर से घेर लिया।

कुछ देर बाद सेक्रेटरी पुनः कमरे में आया और बोला—"लाट साहब ने फरमाया है कि अब हुजूर यहीं कयाम फरमाएँ। इस वक्त हम बहुत जरूरी काम में मशगूल हैं। कल-परसों फुरसों फुरसत मिलने पर आपसे बातें करेंगे।" और वह फौरन कमरे से बाहर हो गया। कमरे के द्वार पर गोरे सिपाही मुस्तैद हो गए।

कोठी के बाहर फाटक पर लोगों की एक बहुत बड़ी भीड़ जमा हो गई थी। कोठी के अन्दर का हाल जानने के लिए सभी उत्सुक हो रहे थे। धक्कम-धक्का भी हो रहा था। और गोरे उस भीड़ को तितर-बितर करने की चेष्टा कर रहे थे।

तभी सेक्रेटरी ने फाटक पर आकर बुलंद आवाज से कहा—"नवाब साहब का पलंग लाओ? हजरत यहीं कोठी के अन्दर आराम फरमाएँगे।"

इस आवाज को सुनते ही भीड़ खुद ब खुद तितर-बितर हो गई। चारों तरफ शोर मच गया। आवाज गूँज उठी—"नवाब अवध मिरजा वजीरअली खाँ बहादुर कैद हो गए।"

रात का पहला पहर समाप्त होने पर आ गया था। लखनऊ के जो शोहदे गुंडे, खोंचे वाले तथा दूसरे बेफिकरे लोग हजारों की तादाद में बीबीपुर का तमाशा देखने आए थे। शोरगुल मचाते, अंग्रेजों को खुलेआम गालियाँ देते हुए बीबीपुर से लखनऊ की तरफ चल पड़े।

इसके बाद खीमों में बैठे हुए लोगों में से काफी संख्या में लोग हताश से होकर कानाफूसी करते लखनऊ की ओर बढ़े, उनमें हजरत वजीरअली खाँ के चार यार तथा मुसाहिब भी शामिल थे।

इन सबके पीछे नवाब खासमहल का मयाना, नौकर-चाकर तथा जवाहरअली खाँ खामोशी के साथ मच्छी भवन की ओर जाते नजर आये।

२७

लार्ड सर जान शोर ने आज जो यह नाटक खेला था और बड़ी तरकीब व कामयाबी के साथ नवाब वजीरअली खाँ को कैदी बना लिया था, उसी सिलसिले में बड़े तड़के रेजीडेन्सी के एक चुस्त सिक्ख घुड़सवार को कानपुर रवाना कर दिया गया था और उसे समझा दिया गया था कि कानपुर में अंग्रेजी छावनी में ठहरे हुए नवाब सआदतअली खाँ को अपने साथ ले आए। इसके अलावा छावनी के प्रमुख के नाम एक पत्र भी लिख कर दे दिया था कि वह सआदतअली खाँ को पूरी शान-शौकत के साथ लखनऊ की तरफ रवाना करे। और सआदतअली खाँ संध्या के अंधकार में आकर नाका तकिया पर रुके हुए थे। इसकी इत्तला गवर्नर-जनरल को मिल चुकी थी।

आकाश पर बसन्त पंचमी का चन्द्रमा चमक रहा था। बीवीपुर की कोठी के बाहर खीमों-तम्बुओं में नवाबी खानदान के लोग, राज्य के ओहदेदार-कर्मचारी तथा लखनऊ नगर के प्रमुख प्रतिष्ठित लोग अभी तक जमे बैठे थे। क्योंकि उनसे कह दिया गया था कि जब तक उन्हें अपने घर जाने की इजाजत न दी जाए वहाँ से न हटें। हाँ, नवाब वजीरअली खाँ के कैद हो जाने के बाद लखनऊ से आए हुए तमाशबीनों तथा नवाब वजीरअली खाँ के पक्षपातियों में से कोई भी वहाँ न था। अब्दुल रहमान कंधारी तथा मोहम्मद इब्राहीम दारोगा भी अपने सवारों तथा पैदल सिपाहियों को लेकर लौट गए थे।

खीमों-तम्बुओं में बैठे हुए लोगों के चेहरे कौतूहल से भरे थे। पेटों में खलबली सी मची हुई थी। अपाहिजों की भाँति चुपचाप बैठे सोच रहे थे—'नवाब वजीरअली खाँ को तो गवर्नर-जनरल ने बड़ी आसानी के साथ बन्दी बना लिया। अब आगे क्या करने वाले हैं? कौन-सा विचित्र दृश्य दिखाने वाले हैं? रात के नौ बज चुके हैं, हमलोगों को घर लौट जाने की इजाजत क्यों नहीं दी जा रही है? कुछ लोगों का अनुमान था कि लखनऊ में नवाब शुजाउद्दौला के अनेक लड़के मौजूद हैं। शायद लखनऊ की नवाबी के लिए उन्हीं के विषय में कोई निश्चय कर रखा होगा और अब आमतौर पर घोषणा करने वाले होंगे।

कुछ लोगों के अन्दाजे कुछ और आगे बढ़ रहे थे। मिरजा जंगली तथा मिरजा मेंडू की दौड़-धूप तो वजीरअली खाँ की गद्दीनशीनी के दिन से ही जारी थी। गवर्नर जनरल बहादुर के पास अपने हक की फरियाद भरी अर्जियाँ जा रही थीं। फिर इधर जिस दिन से लाट साहब लखनऊ पधारे थे उनकी दौड़धूप और तेज हो गई थी। नवाब बहू बेगम के पास फैजाबाद भी दौड़े गए थे और आज तो सुबह से ही उनके पाँव नहीं रुक रहे थे। कभी सुनहरी बुर्ज में ठहरी हुई नवाब बहू-बेगम की खिदमत में हाजिर हो रहे थे। कभी नवाब खासमहल के पास जाकर अर्ज करते सुने जाते थे। इसलिए ऐसा

मालूम होता है कि उन्हीं दो में से किसी एक की किस्मत का सितारा चमकने वाला है।

लेकिन नायबुल रियासत मिरजा हसनरजा खाँ तथा राजा टिकैतराय वगैरह जिन्हें मसनदनशीनी तथा रियासत की हकदारी के विषय में कुछ मालूम था वे लोग खामोश बैठे उसी की घोषणा सुनने के लिए उत्सुक थे।

कुछ देर में लाट साहब के सेक्रेटरी कोठी से निकल कर खीमों की तरफ आते नजर आए। सभी लोग सावधान हो गए। सेक्रेटरी ने खीमों के करीब आकर नायबुल रियासत नवाब हसनरजा खाँ की तरफ मुखातिब हो कर कहा—"लखनऊ की मसनद के सच्चे हकदार, रियासत के सही वारिस तथा नवाब शुजाउद्दौला के मौजूद लड़कों में सबसे बड़े और योग्य लड़के नवाब सआदतअली खाँ नवाबी मसनद पर आसीन होने के लिए कानपुर से आकर नाका तकिया पर ठहरे हुए हैं। इसलिए गवर्नर जनरल बहादुर का इर्शाद है कि आप सब लोग नाके पर जाकर उनका स्वागत कीजिए और इज्जत-मर्तबे के साथ उन्हें दौलतखाना आसफी में दाखिल कीजिए। ताकि इसी वक्त वह मसनद पर बैठा दिए जाएँ, आगे के लिए कोई खरखशा बाकी न रह जाए। हक हकदार को पहुँच जाए।"

सुनते ही उपस्थित लोगों में हड़कम्प मच गई। लेकिन जबानें सभी की मुँह के अन्दर बन्द थीं। खीमों से निकल कर सारा मजमा-जमाव चुपचाप वहाँ से नाके की तरफ चल पड़ा।

रास्ता चलते हुए मजमें में धीरे-धीरे कहासुनी भी चलती जाती थी "महासेनापति गवर्नर जनरल के भेद को समझना बहुत कठिन है।"

"तभी न मुल्क में अपनी सत्ता कायम कर रखी है। आन की आन में जो चाहें कर सकते हैं। क्या मजाल है कि कोई जरा भी चूँ-चरा कर सके।"

"यही तो सफेद देवताओं की करामात है। देखो न? नवाब वजीरअली खाँ के कैद होते ही सआदतअली खाँ बनारस से कानपुर और कानपुर से लखनऊ भी आ पहुँचे। जादू का खेल है।"

"अंग्रेजों के इस जादू के पीछे कोई जबरदस्त भेद होगा। और आज न सही तो कभी और खुल कर रहेगा।"

"खैर, हमें इस झंझट से क्या मतलब है! चाहे वजीरअली खाँ मसनद पर बैठे रहते और अब चाहे सआदत अली खाँ आकर बैठ जाएँ। हमें तो मसनद के आगे सर झुकाने से मतलब है।"

इस प्रकार अपनी-अपनी डफली बजाते हुए मजमे के सभी लोग नाके पर पहुँच गए। और सआदतअली खाँ के ठाठ को देख कर दंग रह गए, आश्चर्य में पड़ गए। उनके साथ में गोरी पल्टन, सिक्खों का रिसाला, अंग्रेजी-फौजी बैंड बाजा, ऊँटों पर नौबत खाना, घोड़ों पर डेका और हाथियों पर निशान थे। जर्क-बर्क पोशाकें पहने अंग्रेजी फौज

के हिन्दुस्तानी दो सौ जवान भी थे। नवाब सआदतअली खाँ भी चमचमाती नवाबी पोशाक में थे। सिर की पगड़ी में नवाबी तुर्रा फहरा रहा था। मजमे के लोगों ने उनकी इस शान-शौकत को भी सफेद देवताओं का करिश्मा समझ लिया।

नायबुल रियासत वगैरह सबने आगे बढ़ कर उनका स्वागत् किया। आदाब बजाया। सआदतअली खाँ ने मुस्कराते हुए सब का सलाम स्वीकार किया। इसके बाद सआदतअली खाँ हाथी पर सवार हो गए। अंग्रेजी पैल्टन के कप्तान ने जलूस की व्यवस्था की। अंग्रेजी बाजे ने सलामी की धुन बजाना आरंभ की। और जलूस नाका तकिया से दौलतखाना आसफी की ओर चल पड़ा।

इधर बीबीपुर की कोठी का खेल भी खतम हो गया। वहाँ गोरी पल्टनों के घेरे पहरे में केवल नवाब वजीरअली खाँ तथा नवाब आसफुद्दौला के बचनो से बँधे हुए क़ासिम-अली खाँ, अंशरफअली खाँ तथा आफरीअली खाँ ही थे। नवाब गवर्नर जनरल सर जान शोर, उनके सभी साथी मय एक अंग्रेजी पल्टन रिसाले के दौलतखाना आसफी पर पहुँच चुके थे। और वहाँ मसनदनशीनी की धूमधाम मची हुई थी।

नवाब सआदतअली खाँ के आदेश से जलूस पहले सीधा सुनहरी बुर्ज पर पहुँचा। हाथी पर से उतर कर सआदतअली खाँ जनाब आलिया नवाब बहू-बेगम साहिबा की खिदमत में हाजिर हुए। और एक सौ एक अशर्फी बतौर नजर के पेश की। बहू-बेगम ने प्रसन्न मुद्रा से सआदतअली खाँ की नजर स्वीकार की और सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखा। और उन्हें अपने हाथों से पहनाने के लिए खिलअत तलब फरमाई। चूंकि वह बसंत का दिन था। लखनऊ की नवाबी में परम्परा चली आ रही थी कि बसंत के दिन नवाबी खानदान के सभी व्यक्ति बसंती पोशाक धारण करते थे। अतएव बहू-बेगम ने बड़े उत्साह के साथ सोने के तारों तथा मोतियों से गुँथी हुई बासंती पीले रंग की खिलअत मँगाई थी। आ जाने पर उन्होंने अपने हाथों से सआदतअली खाँ को पहना दी। वही खिलअत पहने हुए सआदत अली खाँ सुनहरी बुर्ज से चल कर दौलतखाना आसफी में तशरीफ लाए।

यहाँ उनकी मसनदनशीनी का इन्तजाम पूरा हो चुका था। बल्कि बेचैनी के साथ उनकी प्रतीक्षा की जा रही थी। जैसे ही वह तशरीफ लाए, लार्ड सर जान शोर ने उनका हाथ पकड़ कर मसनद पर बैठा दिया और बड़े प्रसन्न मुद्रा से उन्हें बधाई दी। उनके बाद सभी अंग्रेज अफसरों ने बधाइयाँ दीं। फिर नायबुल रियासत मिरजा हसन-रजा खाँ ने आगे आकर सिर झुकाया और नजर पेश की। उनके बाद राज्य के ओहदेदार, कर्मचारियों तथा खानदानी लोगों ने नजरें पेश कीं। किन्तु मिरजा जंगली तथा मिरजा मेंडू वहाँ न थे। दौलतखाने के बाहर रजीडेन्सी के तोपखाने द्वारा गद्दीनशीनी की तोपें गड़गड़ा रही थीं।

उस टूटती रात में सलामी की तोपों की गड़गड़ाहट ने सारे लखनऊ को सोते से जगा दिया। एक तहलका सा मच गया। वजीरअली खाँ के जनानखाने में तो हजरत

सलामत के कैद हो जाने की खबर उसी समय पहुँच चुकी थी। उनके नौकर नौकरानियों तथा बेगमों के दिल बैठ चुके थे। उन्हें किसी की मसनदनशीनी से कोई मतलब नहीं रह गया था। अपने महलों के अन्दर अपना दुख लिए सब बैठे थे। लेकिन लखनऊ के निवासियों को अभी किसी दूसरे की कोई खबर न थी। इसलिए आम जनता सलामी की तोपों की आवाज सुन कर बड़े शशिपंज में पड़ गई। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि यह किसकी सलामी की तोपें हैं। वजीरअली खाँ को कैद कर के कौन मसनद पर बैठाया गया है? कौन लखनऊ का नवाब बना दिया गया है? उस ढलती टूटती रात में किसी से कोई पूछ-ताछ भी नहीं हो सकती, अतः जनता अपने घरों में बैठी बेचैनी के साथ सबेरे का इन्तजार कर रही थी।

नवाब सआदतअली खाँ को मसनदनशीन करके तथा उन्हें अवध का नवाब घोषित करके जब गवर्नर जनरल बहादुर अपनी कयामगाह को चले गए तब दौलतखाना आसफी में सआदतअली खाँ के पास केवल उनके खैरंदेश शुभचिंतक तथा यार-दोस्त ही रह गए तो बातों-बातों के सिलसिले में खैरंदोशो ने उस दिन सुबह से पहर-रात गए तक बीबीपुर की कोठी में गवर्नर जनरल बहादुर द्वारा जो नाटक खेला गया था उसका सारा ब्यौरा आदि से अन्त तक कह सुनाया। विशेष रूप से नवाब वजीरअली खाँ की गिरफ्तारी तथा उनके पक्षपाती रिसालदार अब्दुल रहमान कंधारी तथा दारोगा तोपखाना मिरजा इब्राहीम बेग आदि के नाम काफी नमक मिर्च लगा कर गिना दिए।

इसके कुछ देर बाद नवाब सआदतअली खाँ आराम फरमाने के लिए मसनद से उठ कर आरामगाह की तरफ चले गए। उनके जाते ही अन्य लोगों ने भी अपने-अपने घरों की राह पकड़ी।

दूसरे दिन सबेरे जरूरियात से फारग हो कर नवाब सआदतअली खाँ आकर इतमीनान के साथ मसनद पर बैठे। उन्होंने सोचा—रियासत में जिस कदर फौज सिपाही और रिसाले तथा तोपखाना वगैरह है उस सबको अपनी मुट्ठी में बन्द कर लेना हमारा सबसे पहला कर्तव्य है। क्योंकि फौज-फाटे को अपने पूर्ण अधिकार में न रखने से हमारी हुकूमत को जब चाहे धक्का लग सकता है। सेनानायकों के दिलों में वजीरअली खाँ के प्रति यदि ऐसी ही वफादारी कायम रही तो हमारी नवाबी कामयाब नहीं हो सकती। इसलिए लाजिमी तौर पर इस बात की जरूरत है कि वजीरअली खाँ के उन पक्षपातियों सेना अधिकारियों को हटा कर उनके स्थान पर अपने वफादार खैरंदेश नियुक्त करना लाजमी है।

ऐसा सोच कर नवाब सआदतअली खाँ ने मोहम्मद इब्राहीम खाँ दारोगा-तोपखाना से तोपखाना छीन कर अपने विश्वासी इन्तजामुद्दौला मुजफ्फरअली खाँ को सौंप दिया। इसी तरह रिसालदार अब्दुल रहमान खाँ कंधारी को हटा कर शेख मसऊद को रिसालदार बना दिया।

इसके बाद सआदतअली खाँ का एक दूसरी तरफ ख्याल दौड़ा। मालूम हो चुका था कि हमारे सोतेले भाइयों में से मिरजा जंगली तथा मिरजा मेंडू ने मसनद पर बैठने के लिए चोटी का पसीना एड़ी से बहाया था। अपनी तरफ से कोई कसर बाकी नहीं रखी थी और खुलेआम गद्दी पर अपना हक जाहिर कर रहे थे। अतः उन्होंने ख्याल दौड़ायो अगर यह लोग लखनऊ में मौजूद रहेंगे तो अवश्य ही हमारी हुकूमत को धक्का देते रहेंगे। दोस्त दुश्मनों की कमी नहीं हुआ करती। हमारे दुश्मन उनके दोस्त बन जाएँगे और एक हो-हल्ला पैदा करते रहेंगे। अतः इस विषय को काफी गौर करके उन दोनों भाइयों को लखनऊ छोड़ कर कहीं अन्यत्र चले जाने का कड़ा हुकुम जारी कर दिया। उस कड़े हुक्म से वे दोनों इतने विवश हो गए कि उसी संध्या समय अपने बाल-बच्चों तथा जायदाद को लेकर अजीमाबाद को कूच कर गए।

गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर अभी लखनऊ ही में जमे बैठे थे। उनके इस जमे बैठे रहने का कारण यह था कि अभी उनको दो विशेष काम करने बाकी थे। एक काम था—नवाब सआदतअली खाँ से जो सौदा पट चुका था, उस सौदे का मूल्य वसूल करना बाकी था और लार्ड महोदय इसी समय उसे सआदतअली खाँ से वसूल कर लेना चाहते थे। क्योंकि इस वक्त नवाब सआदतअली खाँ हर तरह से उनके कब्जे में थे।

दूसरा काम जो करने को बाकी था। वह था वजीरअली खाँ को अपने मौजूद रहते हुए लखनऊ से हटा कर बनारस भेज देना। इस दूसरे काम को पूरा कर देने के लिए सआदतअली खाँ भी उत्सुकता के साथ अनुरोध कर रहे थे। क्योंकि उन्हें भय था—यदि वजीरअली खाँ लखनऊ में मौजूद रहेंगे तो उनके पक्ष वाले लोग जनता को उभार सकते हैं! क्योंकि जनता के दिल में नवाब आसफुद्दौला की उदारता सज्जनता घर किए बैठी है और वह वजीरअली खाँ को उनकी एकमात्र यादगार समझती है। अतः गवर्नर जनरल सर जान शोर ने सहर्ष सआदतअली खाँ के कथन को उचित तथा सही स्वीकार करके सबसे पहले वजीरअली खाँ का ही फैसला कर देना अपने हाथों में ले लिया। लेकिन लार्ड सर जान शोर ने वजीरअली खाँ के इस निर्वासन में बहुत ही ठण्डे दिल तथा उदारता का परिचय दिया।

महलों में वजीरअली खाँ का छोटा बड़ा, कीमती मामूली जितना जो कुछ भी सामान था अर्थात् धन सम्पति, आरायशी वस्तुएँ, पलँग, मसहरी, तोशक-तकिए आदि ढो ले जाने की इजाजत देकर ले जाने का भी पूर्ण प्रबन्ध कर दिया। इसके अलावा उनकी इज्जत-आबरू का ख्याल करते हुए, वजीरअली खाँ से दरयाफ्त करा कर उनकी इच्छा के अनुसार हाथी, घोड़े, ऊँट, सवारी की मरदानी जनानी बग्घियाँ, घोड़ागाड़ियाँ आदि भी मँगा कर मौजूद करा दीं। इसके साथ उनकी हरमसरा के साथ भी वही नरमी और उदारता प्रदर्शित की और उनकी इज्जत-आबरू में जरा भी बट्टा न लगने दिया। जनानखाने में जितनी भी महरियाँ-बाँदियाँ, खवाजासरा और नौकर-चाकर थे और वे लोग

हँसी-खुशी के साथ लखनऊ छोड़ कर बनारस जाने को तैय्यार थे, खुशी से उनके जाने की सुविधाएँ उपस्थित कर दीं। नवाब वजीरअली खाँ के स्वयं के जितने भी खिदमत-गुजार थे अथवा अन्य जो भी उनका हाली-मोहाली उनके साथ लखनऊ से बनारस जाना चाहता था, किसी के साथ जरा भी छेड़-छाड़ नहीं की गई।

इस प्रकार नवाब वजीरअली खाँ को पदच्युत करने के ठीक दसवें दिन नवाब-अली खाँ अपने जनानखाने, नौकर-चाकरों, चार यारों, मुसाहिबों सहित अंग्रेजी पल्टन की निगरानी में लखनऊ से बनारस की ओर रवाना कर दिए गए। कासिमअली खाँ, अशरफ-अली खाँ तथा आफरीअली खाँ ने भी उनका साथ न छोड़ा। बीबीपुर की कोठी से छाया की भाँति उनके पीछे लगे हुए बनारस चले गए। गवर्नर जनरल महोदय ने भी तीनों के जाने में कोई बाधा उपस्थित नहीं की।

बनारस पहुँच कर इस काफले ने दुर्गाकुण्ड की उसी कोठी में अड्डा जमाया जिसमें नवाब सआदतअली खाँ रहा करते थे। बनारस के रजीडेन्ट जनरल जान चेरी के पास लार्ड सर जान शोर ने पहले से वजीरअली खाँ के आने की सूचना भेज कर मुनासिब बातों की हिदायत कर दी थी। अतः उन्होंने आते ही उनका स्वागत किया। इच्छा अनुसार रहने की समस्त व्यवस्था उपस्थित की तथा अपनी ओर से हर प्रकार से इतमीनान और तसल्ली दी। अंग्रेजी पल्टन हजरत वजीरअली खाँ को जान चेरी के सिपुर्द कर लखनऊ लौट आई। लार्ड सर जान शोर तथा नवाब सआदतअली खाँ ने संतोष की साँस ली। किन्तु लखनऊ की जनता में एक सनसनी-सी फैली हुई थी।

लार्ड सर जान शोर के नाटक का अन्त हो चुका था। अतः वह बीबीपुर की कोठी से उठ कर पुनः लखनऊ आ गए। रजीडेन्सी में कयाम फरमाया। अब उनके जिम्मे केवल कम्पनी सरकार का हित ही पूरा करना बाकी रह गया था। और वह उसी गुनताड़े को लेकर मसौदा तैय्यार कर रहे थे।

एक सवेरे नवाब सआदतअली खाँ चार घोड़ों की बग्घी पर सवार होकर तथा बारह लाख रुपया के तोड़े कराचियों पर लदवा कर रेजीडेन्सी में पहुँच गए। वहाँ पहुँचते ही रेजीडेन्सी के छोटे-मोटे नौकर, चाकर, चपरासी, जमादारों ने नये नवाब की बग्घी को घेर लिया। सलामें बजा कर मुबारकबादियाँ दीं। सआदतअली खाँ ने दिल खोल कर इनाम इकरामों से उन सबके दामन भारी कर दिए। इसके बाद उन्होंने गवर्नर जनरल से मुलाकात हासिल की और साथ लाए हुए वह बारह लाख रुपयों के तोड़े लार्ड महोदय के सामने रख दिए।

लार्ड सर जान शोर ने रुपयों के तोड़ों पर एक सरसरी नजर डाली और पूछा—"यह कैसे रुपयों के तोड़े हैं?"

सआदतअली खाँ ने कृतज्ञता से कहा—"हमारी मसनदनशीनी के बारे में अंग्रेज सरकार की जिन पल्टनों आदि के सिपाहियों तथा अन्य व्यक्तियों ने मेहनत-मशक्कत की

है, यह रुपया उनके मिठाई खाने के लिए है।"

सर जान शोर मुस्कराए फिर गम्भीर होकर बोले—"ठीक है। आपकी मसनद-नशीनी के बारे में हमारे सिपाही ने जो तकलीफें उठाई हैं, आप उन सब को उसका यह मुआवजा दे रहे हैं। लेकिन कम्पनी सरकार ने जैसा जो कुछ आप के साथ किया है उसका मुआवजा कहाँ है?"

"उस मुआवजा को अदा करने के लिए हम हर तरह से हाजिर हैं।" सआदतअली खाँ ने नम्रतापूर्वक कहा—"कम्पनी सरकार की मेहरबानियों का मुआवजा चुकाने में हमें जरा भी पसोपेश नहीं है। जिस तरीके से लार्ड महोदय तजवीज फरमाएँ, हमें मंजूर है। आप के इर्शाद से हम जरा भी इधर-उधर नहीं हो सकते। इस बारे में हम आप से पहले ही तहरीरी वादा कर चुके हैं।"

"अब कम्पनी सरकार और नवाब अवध के दरमियान एक नया अहदनामा लिखा जाना जरूरी है। और उस अहदनामे में कम्पनी सरकार की तरफ से जो शर्तें रखी जाएँगी, उनकी पाबन्दी नवाब अवध के लिए जरूरी होगी।"

"हमें मंजूर है।" सआदतअली खाँ ने कहा—"हम उस अहदनामे की हर शर्त को पत्थर की लकीर समझ कर हमेशा उसे पकड़े रहेंगे।"

सर जान शोर बोले—"वह सुलहनामा लिख कर तैय्यार कर लिया गया है। आप उसे मुलाहजा फरमा कर उस पर अपनी मोहर कर सकेंगे।" और सर जान शोर ने सैक्रेटरी की तरफ देखा।

सक्रेटरी महोदय वहाँ से उठ कर बगल के कमरे में गए और एक लम्बा चौड़ा कागज लाकर नवाब सआदतअली खाँ के सामने रख दिया। सआदतअली खाँ उसे पढ़ने लगे।

वह संधि-पत्र अवध राज्य के लिए बहुत मँहगा था। लेकिन इस समय नवाब सआदतअली खाँ के निकट महँगे-सस्ते होने का कोई सवाल न था। उन्होंने तो पहले ही सौदे को पटा कर अपनी मसनदनशीनी खरीद ली थी। अवध राज्य भले ही बिक जाए, कम्पनी सरकार भले ही उसे एक दिन कम्पनी राज्य में विलीन कर ले। इन बातों पर अभी गौर करने, सोचने-विचारने का अवकाश नहीं था।

संधि-पत्र की पहली धारा के अनुसार कम्पनी तथा अवध के नवाब के साथ मित्रता को दोहरा कर, मौजूदा संधि-पत्र पिछले संधि-पत्र के बिलकुल विपरीत होने पर भी, पिछली सभी शर्तों को ज्यों का त्यों मान लिया गया था। धारा दो के अनुसार नवाब आसफुद्दौला की मृत्यु के कुछ पहले तक नवाब अवध को ५६ लाख रुपया सालाना रजीडेन्सी तथा अंग्रेजी पल्टनों का सर्फा चुकाना पड़ता था। अब इस संधि-पत्र के अनुसार वह रकम बढ़ कर डेढ़ करोड़ से भी आगे पहुँच गई थी। इसके अलावा इलाहाबाद का किला भी स्थाई रूप से कम्पनी सरकार को देना पड़ गया था। केवल किला की दीवारें ही नहीं उनकी

मरम्मत में खर्च होने वाला आठ लाख रुपया भी नवाब अवध के ही सिर का बोझ था। एक अन्य धारा के अनुसार नवाब अवध पूर्ण रूप से शक्तिहीन कर दिए गए थे। उसके अनुसार केवल इतनी ही फौज अपने यहाँ रख सकते थे जितनी से राज्य का जरूरी काम चलता रहे। मालगुजारी वगैरह वसूल होती रहे।

अपनी समझ के अनुसार सर जान शोर ने इस संधि-पत्र की धाराओं के अनुसार नवाब सआदतअली खाँ को काफी जकड़-बाँध रखा था। बल्कि यों कहना चाहिए कि उनकी कमर तोड़ दी थी।

सआदतअली खाँ ने संधि-पत्र को आदि से अन्त तक पढ़ लेने के बाद जैसे ही उस पर से नजर उठा कर साँस ली, लार्ड सर जान शोर ने कहा—"कम्पनी सरकार का वाजिब रुपया अवध दरबार से कभी वक्त पर अदा नहीं होता। इसलिए उस रकम के वक्त पर अदा होने के लिए कोई आसान तरीका भी हमें निकालना होगा। उस तरीके को हम कलकत्ता पहुँच कर और सोच-समझ कर आपको आगाह करेंगे।

सआदतअली खाँ ने संधि-पत्र पर मोहर लगा कर कहा—"हमें कम्पनी सरकार अब भी जो हुक्म देगी मंजूर होगा।"

और दूसरे दिन लाट साहब लखनऊ से कलकत्ता को कूच कर गए।

२८

अवध के पदच्युत नवाब मिरजा वजीरअली खाँ को लखनऊ से बनारस आकर दुर्गाकुण्ड की कोठी में रहते हुए काफी दिन गुजर चुके थे। बड़ी शान-शौकत, ऐश-आराम तथा नवाबी ठाठ के साथ रहते थे। उनके नवाबी रंग-ढंग में किसी प्रकार की कोई कमी न थी। दिल बहलाव के सभी सामान मौजूद थे। जनानखाने में उनकी निकाही बेगम नवाब बन्नो बेगम तथा नवाब वजीरुन्निसा बेगम मौजूद थीं। कनीजों, बाँदियों तथा खवाजासराओं से जनानखाना भरा हुआ था। लेकिन नवाब बन्नो बेगम से तो हजरत का दिल लखनऊ में ही फट चुका था। पटरी नहीं मिली थी, चूल से चूल नहीं बैठा था। इसलिए बनारस आकर भी एक दूसरे से अलग ही थीं। नवाब बन्नो बेगम की रहाइश, कारबार, नौकर-चाकर आदि सभी कुछ अलग ही थी। हजरत से कभी भूले-भटके सिर्फ आदाब सलाम हो जाता था। लेकिन नवाब वजीरुन्निसा बेगम जिस प्रकार लखनऊ में हजरत के गले का हार बनी हुई थी उसी प्रकार यहाँ भी उनके गले से लगी लिपटी रहती थी और मिरजा वजीरअली खाँ भी उनका दिल गुदगुदाने के लिए उनके पास मौजूद रहते थे।

हजरत सलामत की बाहरी सोहबत, दरबारदारी के लिए चार यार या मुसाहिब लोग मौजूद थे। ये चार यार तथा मुसाहिब वजीरअली खाँ के सच्चे साथी, निष्कपट दोस्त तथा दिल से उनका साथ देने वाले थे। अपना घर-बार छोड़ कर लखनऊ से उनका साथ देने के लिए बनारस चले आए थे। वजीरअली खाँ भी उन पर विश्वास करते थे। उन्हीं को अपना सच्चा मित्र तथा ऐश-आराम और दुख-दर्द में साथ देने वाला समझते थे। इसलिए इन्हीं लोगों की सोहबत में उनका दिल-बहलाव हुआ करता था। हँसी-मजाक, राज-नियाज की बातों से लेकर दिल के फफोले तक उन्हीं लोगों के जमघट में फोड़े जाते थे।

कासिमअली खाँ, अशरफअली खाँ तथा आफरीअली खाँ भी अपने बाल-बच्चों तथा घर-द्वार छोड़ कर हजरत का साथ देने के लिए लखनऊ से बनारस उसके साथ लगे आए थे। अशरफअली खाँ तो हजरत के सगे ससुर नवाब बन्नो बेगम के पिता ही थे, इसलिए उनका साथ देना अधिक मतलब नहीं रखता था। इस मुसीबत में उनका साथ देना स्वाभाविक सा ही था। कासिमअली खाँ नवाब आसफुद्दौला के बचनों से बँधे हुए थे। उनकी वसीयत का ख्याल ही उन्हें वजीरअली खाँ के साथ सहानुभूति दिखलाने के लिए मजबूर किए था। आफरीअली खाँ पर हजरत वजीरअली खाँ ने मसनद पर कदम रख कर अपनी नवाबी की पूरी मेहरबानियाँ तथा नजरे इनायत उछाल दी थी। उन्हीं को एक प्रकार से अपना नायब बना लिया था। इसलिए आफरीअली खाँ भी उन मेहरबानियों का बदला चुकाने के लिए विवश हो गए थे।

हजरत वजीरअली खाँ इन तीनों बुजुर्गों की इज्जत करते थे। उन्हें अपना खैरन्देश समझते थे। लेकिन विशेष लगाव नहीं रखते थे। जब-तब और चन्द सायत ही उनके साथ हजरत की बैठक जमा करती थी। बनारस आकर वजीरअली खाँ के पास कोई काम-काज या गूढ़ मामले-मसले पर विचार करने की तो कोई बात रह नहीं गई थी। अतः इन तीनों बुजुर्गों, खैरन्देशों से कोई सलाह-मशविरा लेने की भी आवश्यकता नहीं महसूस होती थी।

इन तीनों अमाना-दीना व्यक्तियों में कासिमअली खाँ अधिक चुस्त तथा दूर-भविष्य की सोचने वाले थे। वह वजीरअली खाँ को जवानी के जोश, मिजाज की तेजी, उतावली तबीयत तथा उनके दिल में जमी अंग्रेजों के मुखालफत से अच्छी तरह वाकिफ थे। साथ ही वह अंग्रेजों की सत्ता और हुकूमत को भी खूब समझते थे। आँखों से देख रहे थे कि जो हालत हजरत की लखनऊ में थी, वही यहाँ भी मौजूद है। इतना बड़ा अवध राज्य हाथों से निकल गया लेकिन इन पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। कोई तबदीली नहीं पैद हुई। वही तेजमिजाजी, उतावली तबीयत और वही चार यार मोसाहिबों की सोहबत आज भी मौजूद है और ये कुछ ऐसे सरो-सामान मालूम होते हैं जो एक दिन किसी और गहरे गड्ढे की तरफ खींच ले जाएँगे। लखनऊ का नतीजा तो सब की आँखों

के सामने आ गया। अब बनारस का भविष्य जाने कैसा रहे! अतः ऐसा सोच-समझ कर कासिमअली खाँ ने अपने को दो घोड़ों पर सवार कर रखा था। इधर वजीरअली खाँ के भी हितैषी वफादार और खैरंदेश बने हुए थे। उधर अपने भविष्य का ख्याल रखते हुए बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी साहब की भी खिदमत में पहुँच कर उनकी खुशामद किया करते थे। जान चेरी चूंकि पहले काफी समय तक लखनऊ में रह चुके थे, उन्हें अच्छी तरह जानते-पहचानते थे; इसलिए उनसे मिलते थे और इज्जत के साथ बिठाते-उठाते थे। इसके साथ उनका भी कुछ मतलब पूरा पड़ जाया करता था। वजीरअली खाँ का बहुत कुछ समाचार प्राप्त हो जाया करता था।

बनारस में नवाब मिरजा वजीरअली खाँ के दिल-बहलाव का एक जरिया और था। दिल्ली के एक शाहजादे मिरजा मोजफ्फर बख्त बहादुर वहाँ मौजूद थे। वह भी जवानी से अखेठलियाँ करने वाले, नाच-गाने के शौकीन, ऐश इशरत में डूबे रहने वाले तथा हुस्न-जमाल के पुजारी थे। वजीरअली खाँ तथा उनकी तबीयत मेल खा गई थी। दोनों की सोहबत गरम होने लग गई थी। कभी नवाब मिरजा वजीरअली उनकी महफिल की रौनक बढ़ाते नजर आते थे और कभी शाहजादे मिरजा मोजफ्फर बख्त दुर्गा-कुण्ड की कोठी में जमे हुए दिखाई देते थे।

लखनऊ में जिस समय नवाब आसफुद्दौला बहादुर मसनद पर तशरीफ रख रहे थे, दिल्ली के मुगल बादशाह शाहआलम के एक बेटे मिरजा जहाँदार शाह उर्फ मिरजा जवाँबख्त दिल्ली से सैर-सपाटे के लिए लखनऊ आए थे। नवाब आसफुद्दौला ने उन्हें बड़ी इज्जत के साथ लिया था। उन्हें अपना बादशाह तथा अपने को उनका वजीर समझा था। क्योंकि पुरानी परिपाटी के अनुसार अवध के नवाब दिल्ली के बादशाह के वजीर ही होते, कहलाते आए थे। आसफुद्दौला ने शाहजादे को कोठी जनरल मार्टन में ठहरा कर अपना मेहमान बनाया था। और हर प्रकार से उनकी मेहमानदारी का प्रबन्ध करके खुद भी जब-तब खिदमत में पहुँच जाया करते थे। शाहजादे मिरजा जवाँबख्त को लखनऊ की फिजा पसन्द आ गई थी और उन्होंने आगे लखनऊ में ही रहना पसन्द किया था। इसलिए बिना संकोच के उनके खर्च का बोझ अपने सिर पर उठा लिया था। तीन लाख रुपया नकद तो पहले ही दिन उनकी नजर कर चुके थे। आगे के खर्च के लिए पच्चीस हजार रुपया माहवार देने लग गए थे।

शाहजादे मिरजा जवाँबख्त रंगीन तबीयत, ऐश-आराम में मस्त रहने वाले तथा नृत्य-संगीत के परम शौकीन थे। उनकी कोठी में हर समय लखनऊ की परी-सूरत वेश्याओं तथा कसबियों का जमाव रहता था। तबले पर थापें पड़तीं और घुंघरुओं की छनछनाहट कानों में गूंजती रहती थी। उन सौन्दर्य की देवियों में एक कसबी भगिया नाम की भी थी। रूपराशि की धनी तथा यौवन की मदमाती होने के अतिरिक्त नृत्य-संगीत कला में सब को पीछे धकेलने वाली थी। एक भी वेश्या कसबी उसकी कला को

नहीं छू पाती थी। लखनऊ में उसकी जोड़ उस समय दीपक लेकर भी ढूंढे नहीं मिलती थी। नवाब आसफुद्दौला बहादुर को भी भगिया की शकल-सूरत तथा नाचना-गाना बहुत पसन्द था। अकसर उसे अपने महलों में बुला कर कला तथा सौन्दर्य का आनन्द लूटा करते थे।

शाहजादे मिरजा जवाँबख्त ने पहली ही नजर में अपना दिल भगिया के हाथों बेच दिया था। जमाव में भाग लेने वाली अन्य सभी रंडियों, कसबियों की तरफ से मुँह मोड़ कर भगिया की पूजा करने लग गए थे। उसके प्रेम के भूत ने उनके सिर पर सवार होकर वह प्रभाव उत्पन्न किया कि शाहजादे साहब हर समय भगिया की माला जपने लगे और भगिया उनकी बगल में बैठी नजर आने लग गई थी।

नवाब आसफुद्दौला शाहजादे मिरजा जवाँबख्त का बहुत ख्याल रखते थे। बराबर तीसरे-चौथे दिन मिजाजपुर्सी के लिए उनकी कोठी पर पहुँचते थे। जब उन्होंने शाहजादे का यह हाल, यह रंग-ढंग देखा तो हैरत में पड़ गए। शाहजादे की इस हरकत को उनकी नहीं, अपनी बदनामी का बाइस ख्याल फरमाया। दिल ने कहा—इसकी रोकथाम लाजिमी है। इसलिए नवाब आसफुद्दौला ने इस विषय में तो शाहजादे महोदय से कोई कहा-सुनी नहीं की। लेकिन चुपचाप उनकी कोठी में भगिया का आना-जाना रोक दिया। लेकिन प्रेम का भूत भी बुरी बला है। वह जिसके सिर पर सवार हो जाता है। होश-हवास खो बैठता है। अपनी इज्जत-आबरू की उसे तनिक भी परवाह नहीं रह जाती। भूत ऐसे-ऐसे नाच नचाता कि देख कर दुनिया दंग रह जाती है। अतः भगिया के प्रेम रूपी भूत ने शाहजादे को भी नचाना आरम्भ कर दिया। रात के अँधेरे में जनानी पालकी पर बैठ कर भगिया के घर पहुँचने लग गए।

जब नवाब आसफुद्दौला को उनकी इस हरकत का पता चला। वह भी कुछ सख्त बन गए। भगिया का मकान दौलतगंज में था। उस समय लखनऊ की रंडी, पतुरियाँ तथा कसबियाँ अधिकतर उसी मोहल्ले में आबाद थीं। नवाब आसफुद्दौला के आदेश से भगिया एक प्रकार से अपने ही घर में बन्दिनी बना दी गई। न वह अपने घर से निकल कर कहीं जाने पाती न उसके मकान के अन्दर कोई व्यक्ति कदम रखने पाता। घर के द्वार पर नवाबी पहरे बैठ गए।

शाहजादा मिरजा जवाँबख्त को भगिया का वियोग असह्य हो गया। छटपटाना, तड़पना, आहें भरना तो साधारण-सी बात थी, उसके लिए मर-मिटने को तैय्यार हो गए। उस बेकरारी की हालत में अपनी इज्जत-आबरू को एक ओर फेंक कर द्वार-द्वार भटकने और भगिया की भिक्षा माँगने के लिए तैय्यार हो गए।

उन दिनों कम्पनी सरकार के महा प्रतिनिधि लार्ड हेस्टिंग्स महोदय कलकत्ता से लखनऊ आकर रजीडेन्सी में कयाम फरमा रहे थे। शाहजादे साहब को भगिया के वियोग ने इतना नीचे गिरा दिया था कि उनसे भगिया की भीख माँगने के लिए सवारी पर बैठ

कर रजीडेन्सी जा पहुँचे।

शाहजादे के आने की खबर पाकर लार्ड महोदय ने कोठी के अन्दर से बाहर आकर उनका स्वागत किया और उनका हाथ में हाथ लेकर कोठी के अन्दर ले गये। अपने विशेष कमरे में इज्जत के साथ कुर्सी पर बैठाया। इसके बाद उनका उचित आदर-सत्कार भी किया।

शाहजादे जवाँबख्त को इस समय अपने आदर-सत्कार से कोई मतलब न था। वह तो भगिया की धुन में पागल हो रहे थे उन्होंने बड़ी नम्रता के साथ लार्ड महोदय से कहा—"इस वक्त मैं एक खास मतलब से आपको तकलीफ देने आया हूँ।"

"फरमाइए ?" लार्ड महोदय ने साधारण भाव से कहा।

शाहजादे ने नम्रता का विशेष परिचय देकर कहा—"बिला आपकी इमदाद के मैं अपने मतलब को नहीं पहुँच सकता।"

लार्ड महोदय ने ख्याल दौड़ाया—शाहजादा बहादुर हौसलामन्द हैं। अपनी जवानी के जोश में किसी मुल्क पर चढ़ाई करके उसे अपने कब्जे में करना चाहते हैं। इसलिए हमसे फौजी ताकत की इमदाद माँगने आए हैं।

लार्ड महोदय मुस्कराए। फिर उत्साह भरे लहजे से कहा—"हम आपके हौसले, इरादे की कदर करते हैं। आप जिस मुल्क पर चढ़ाई करके उसे अपने कब्जे में लाना चाहते हों, शौक से कदम बढ़ाएँ। हमारी पल्टनें आपकी इमदाद के लिए तैय्यार हैं।"

"नहीं, हमें अँग्रेजी पलटनें नहीं चाहिए।" शाहजादे ने धीरे से कहा।

"तब ?" लार्ड महोदय कुछ विस्मय से उनकी तरफ देख कर कहा—"आपको किसी कदर खर्च के लिए रुपया की जरूरत है ? फरमाइए कितना रुपया चाहिए ?"

"जी नहीं, हमें रुपयों की भी जरूरत नहीं है।"

"फिर !" लार्ड महोदय ने कुछ अधिक विस्मय भरी दृष्टि से उनकी तरफ देख कर कहा।

शाहजादे ने नजर उठा कर कहा—"साहबेवालाशान के जरिए हमें सिर्फ एक भगिया चाहिए।"

"भगिया क्या है ?" लार्ड साहब ने गम्भीर होकर कहा—"हम अभी तक आप के मतलब को नहीं समझ सके !"

"भगिया एक कसबी रंडी है जिसे मैं प्यार करता हूँ।"

"वह कहाँ, किसके पास है ?"

"उसे नवाब भाई आसफुद्दौला ने उसी के घर में नजरबन्द कर रखा है। पहरे बैठा रखे हैं। न वह अपने घर से बाहर निकल कर हमारे पास आ सकती है न मैं उसके घर में कदम रख पा सकता हूँ।"

"तब आप इस बारे में हमसे क्या इमदाद चाहते हैं ?" लार्ड महोदय ने किंचित

मुस्करा कर कहा।

"आप भगिया को नवाब भाई से मुझे दिलवा दें। हम आपके बहुत-बहुत ऐहसान-मन्द होंगे। क्योंकि उसके बगैर मैं जिन्दा नहीं रह सकता।" शाहजादे ने नम्रतापूर्वक कहा।

लार्ड महोदय एक क्षण मुस्कराते हुए खामोश रहे। फिर नजर उठा कर कहा—"खैर, इस बारे में हम आला हजरत नवाब आसफुद्दौला से बात करेंगे। उम्मीद करते हैं कि शायद वह आपको मिल जाए।"

इसके बाद शाहजादे साहब अपनी कोठी को लौट पड़े।

उसी दिन शाम के वक्त जब नवाब आसफुद्दौला लार्ड महोदय से मिलने उनके पास पहुँचे तो कुछ इधर-उधर की बातों के बाद लार्ड हेस्टिंग्स ने साधारण भाव में नवाब आसफुद्दौल्ला से कहा—"आज सुबह दिल्ली के शाहजादे साहब, हमारे पास आए थे। किसी भगिया का जिक्र कर रहे थे। उसके लिए वह बहुत बेचैन व परेशान मालूम होते थे। हम नहीं जानते कि वह भगिया कौन है?"

आसफुद्दौला बोले—"साहबेआलाशान, भगिया एक बाजारी तवायफ है। उस पर हजरत शाहजादे साहब आशिक हैं। उन्हें तो मोहब्बत की वजह से अपनी हैसियत और इज्जत-आबरू का कोई ख्याल है नहीं। इश्क ने बहरा-अंधा बना रखा है। लेकिन चूंकि वह हमारे यहाँ कयाम फरमा रहे हैं। और यह उनकी शान के खिलाफ हरकत है। इसलिए हमने उनकी और अपनी नामनिहादी, बदनामी के ख्याल से रोक-थाम लगा रखी है।"

लार्ड महोदय बोले—"आला हजरत! चूंकि उन्होंने हमारे पास आकर हमसे उसकी माँग पेश की है। हमें बीच में डाला है। इसलिए हमारा आपसे यही कहना है कि आला हजरत उन्हें अपना ही शाहजादा समझ कर मामले को दरगुजर करें। उस बाजारी तवायफ को उन्हें बख्श दें।"

"बेहतर है?" नवाब आसफुद्दौला ने धीरे से कहा—"मैं आपके इर्शाद को कैसे टाल सकता हूँ।"

दूसरे दिन नवाब आसफुद्दौला ने भगिया को मयाना में बैठलवा कर शाहजादा जवांबख्त की कोठी में भेज दिया। शाहजादे मिरजा जवांबख्त ने उसी दिन भगिया के साथ बाकायदा अपना निकाह पढ़ा लिया। उसे नवाब जहानाबाद बेगम का खिताब अता फरमाया। और उस दिन जबरदस्त जश्न मनाया। नवाब आसफुद्दौला को भी उस जश्न में शरीक होने की दावत दी। लेकिन नवाब आसफुद्दौला खुद जाकर उनके जश्न में शरीक तो नहीं हुए, मगर पुराने कायदे-दस्तूर के ख्याल से नजर भिजवा दी। उनके जश्न में नवाब का शरीक न होना शाहजादे जवांबख्त को अखर गया और लखनऊ से हट कर बनारस में कयाम करने का निश्चय कर लिया। और एक दिन लखनऊ से बनारस की

ओर कूच करने को तैयार भी हो गए। नवाब आसफुद्दौला ने फिर भी अपनी शराफ़त का पूर्ण परिचय दिया। बड़ी इज्जत के साथ उन्हें लखनऊ से विदा किया तथा अपनी उदारता को भी ज्यों का त्यों कायम रखा। उनसे वादा कर दिया कि हम जो २५ हजार रुपया माहवार आपके खर्च के लिए यहाँ नजर किया करते थे, वह बदस्तूर बनारस के रजीडेन्ट की मारफत आपकी खिदमत में पहुँचते रहेंगे।

बनारस आकर शाहजादा जवांबख्त एक खूबसूरत कोठी में पूरी आजादी के साथ कयामफरमा हुए और दिन-रात ऐश इशरत में डूबे रहने लगे। यहीं नवाब, नवाब जहानाबाद बेगम की कोख से मिरजा मुजफ्फर बख्त ने जन्म लिया था। इस समय वह अपनी पूर्ण युवावस्था में थे और पिता के सभी आचरणों से परिपूर्ण थे। संयोगवश नवाब मिरजा वजीरअली खाँ लखनऊ से आकर बनारस में रहने लगे थे। अतः दो एक मुलाकातों में ही दोनों की तबीयत मेल खा गई थीं और बैठकें जमने लग गई थीं।

एक पहर दिन चढ़ा था। दुर्गाकुण्ड की कोठी के सुसज्जित दीवानखाने में मिरजा वजीरअली खाँ तथा शाहजादा मुजफ्फर बख्त तकियों का सहारा लिए हुए मसनदों पर जमे हुए थे। मसनद के सामने भारी भरकम गंगा-यमुनी सोने चाँदी के काम का नवाबी पेचवान रखा हुआ था। कश पर कश लिए जा रहे थे। मजे की बातों के साथ कहकहे-ठहाके भी बुलंद हो रहे थे।

तभी बाहर से एक खिदमतगार ने आकर वजीरअली खाँ के आगे सिर झुकाया और फिर अदब से अर्ज किया—"हुजूर वाला! बनारस की रजीडेन्सी का जमादार खबर लाया है कि लखनऊ से हजरत सलामत के सालाना गुजारे का तीन लाख रूपया आ गया है। मँगवा लिया जाए।"

वजीरअली खाँ ने बहुत धीरे से कहा—"कह दो कि मँगा लिया जायगा।"

खिदमतगार चला गया। उसके जाने के बाद मिरजा मुजफ्फरबख्त ने वजीरअली खाँ की तरफ रुख करके आश्चर्य भरे लहजे से कहा—"ओफ! तीन करोड़ की रियासत के एवज में तीन लाख रुपया? कितनी बड़ी ज्यादती है। नवाब सआदतअली खाँ ने आप से अच्छी दुश्मनी निबाही।"

"लेकिन इस बारे में हम सआदतअली खाँ को गुनहगार नहीं कह सकते।" वजीरअली खाँ ने उनकी तरफ देख कर कहा।

"क्यों? सआदतअली खाँ को गुनहगार क्यों नहीं कह सकते। सब किया-धरा तो उन्हीं का है। उन्हीं ने तो तूफान उठा कर आपसे अवध की गद्दी छीनी है। सरासर वह गुनहगार हैं।" मिरजा ने कहा।

"नहीं", वजीरअली खाँ ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"सआदतअली खाँ की क्या हकीकत थी कि हमसे अवध की गद्दी छीन लेते! यह सारी कारगुजारी अंग्रेजों की है। अंग्रेजों ने ही सआदतअली खाँ को उभार कर खड़ा किया और अपना उल्लू सीधा करने

के लिए हमसे रियासत छीन कर उन्हें नवाब बनाया है।"

"अंग्रेजों ने क्यों उनको उभारा ? आपसे रियासत छीन कर सआदतअली खाँ को देने में अंग्रेजों को क्या फायदा हुआ ?"

"भाई साहब, आप जाने कहाँ रहते हैं ?" वजीरअली खाँ ने नजर से नजर मिला कर कहा—"अंग्रेज बड़े बदजात हैं। अंग्रेज इस कदर फितरती, इतने चुस्त चालाक हैं कि यहाँ कोई उनका सानी नहीं है। अपनी फितरत और चालाकी से ही आज वो हिन्दुस्तान पर हावी हो रहे हैं। रियासतों-रजवाड़ों को अपनी मुट्ठी में बन्द किए हैं। क्या मजाल है कि कोई नवाब-महाराजा जरा भी चूं-चरा कर सके। एक को मसनद से हटा कर और दूसरे को उस मसनद पर बिठा कर अंग्रेज अपना उल्लू सीधा करते हैं। और अपने अंग्रेजी इलाके को दिन दूना रात चौगना बढ़ाते चले जा रहे हैं।" हमारा कहना याद रखिए। अगर हमारे हिन्दुस्तानी भाई नवाब, राजे महराजे, इसी तरह गफलत की नींद में सोते रहे। जरा भी न चौंके, न करवट बदली, तो एक दिन वह आ जाएगा कि इस मुल्क में रियासतों का नाम निशान बाकी न रहेगा। सारे हिन्दुस्तान में कम्पनी की हुकूकत नजर आएगी।"

"आपका यह कहना वाकई हकीकत रखता है।" मिरजा मुजफ्फर बख्त ने कहा—"हम देखते हैं कि मुल्क की पुरानी बादशाहत और नवाबी एक-एक करके खतम होती चली जा रही है और कम्पनी राज नदी की बाढ़ की तरह बढ़ती चली आ रही है।"

"जरा आप अपनी दिल्ली की ही बादशाहत पर गौर फरमाइए ?" वजीरअली ने अधिक गम्भीर होकर कहा—"चोट्टे अंग्रेजों ने किस तरह उसे अपने कब्जे में कर लिया ? और आज आप लोग इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे हैं।"

मिरजा मुजफ्फर बख्त खामोश रह गए। कुछ सोचने से लगे। वजीरअली खाँ भी एक क्षण खामोश रहे, फिर मिरजा की तरफ देख कर कहा—"भाई साहब ? सच कह रहा हूँ। इन अंग्रेजों की चालाकियों और हरकतों को देख समझ कर मसनद पर बैठते ही हमारे दिल में खटक पैदा हो गई थी। हम अच्छी तरह समझते थे कि एक दिन ये फिरंगी कोई न कोई तूफान उठा सकते हैं। लेकिन क्या बताएँ हमें इतना मौका ही नहीं मिला कि इनके बारे में कुछ सोच समझ सकें और इन हरामियों ने अपना करिश्मा दिखला दिया। क्या कहें ? हमारे नमकख्वार भी हमसे बदल गए। उन्होंने भी हमें धोखा दिया।"

"लेकिन एक बात हमारी समझ में नहीं आई ?" मुजफ्फर वख्त ने कहा—"लखनऊ की मसनद से आपको हटा कर और उस पर सआदतअली खाँ को बैठा कर अंग्रेजों को क्या मिल गया ? जाहिरा...."

वजीरअली खाँ बीच में बोल उठे—"क्या मिल गया ? जो चाहते थे वही मिल गया। लखनऊ के नवाब की आजादी, खुद-मुख्तारी हमेशा-हमेशा के लिए खतम हो गई।

अंग्रेजों की गुलामी का जामा पहिन लिया। सआदतअली खाँ वादों, इकरारों और शर्तों से इस कदर कस कर बाँध दिए गए हैं कि जरा भी हिल-डुल नहीं सकते।"

मुजफ्फर वख्त खामोश रह कर हैरत भरी नजर से उनके चेहरे पर नजर जमा कर रह गए।

वजीरअली खाँ बोले—"भाई साहब ? शायद आपको पता नहीं है। अंग्रेजों ने लखनऊ में बड़ा अजीब तमाशा दिखलाया है। सआदतअली खाँ काठ के पुतले बना दिए गए हैं। आप जानते हैं, ऐसा क्यों किया गया है ? इसलिए कि अंग्रेजों ने उन्हें नवाबी बख्शी है। अवध की हुकूमत उनको अता फरमाई गई है। ऐसी सूरत में सआदतअली खाँ किस हिम्मत और किस जबान से कुछ कह सकते हैं। अंग्रेजों ने जो-जो शर्तें उनके सामने रखी होंगी या आगे रखेंगे। सिर झुका कर सआदतअली खाँ को माननी पड़ेंगी। ७६ लाख के बजाय अब डेढ़ करोड़ सलाना रकम अवध के खजाने से कम्पनी को दी जाया करेगी। बिला रजीडेन्ट की इसलाह के वह कोई काम नहीं कर सकते। अब्बा हुजूर नवाब आसफुद्दौला के जमाने में लखनऊ में अस्सी हजार सिपाही थे। हमारा इरादा पूरा एक लाख कर देने का था। लेकिन अवध की उस फौजी ताकत से कम्पनी सरकार को खटका था। हमेशा दिल धड़कता रहता था। इसलिए उसे काम करने की राहें ढूंढी जा रही थीं। तरकीबें सोची जा रही थीं। अब मौका मिल गया। एकदम पचास हजार सिपाही घर बैठा दिए गए। सिर्फ तीस हजार सिपाही रियासत के जरूरी कामों के लिए, पहरे चौकी और जमाबन्दी वसूल करने के लिए रह गए हैं।"

"ओफ", शाहजादे मुजफ्फर बख्त ने चौंककर कहा—"अवध रियासत में अस्सी हजार फौजी जवान थे ? बहुत काफी थे। नवाब आसफुद्दौला बहादुर ने शायद सोचा-समझा न था या अंग्रेजों की हरकतों पर गौर नहीं किया था। वरना खड़े-खड़े अंग्रेजों को मुल्क-अवध से निकाल सकते थे। अस्सी हजार सिपाही के आगे मुट्ठी भर फिरंगी क्या कर सकते थे। ऐसे भागते कि कभी इधर का रुख भी न करते।" और वह मुस्करा दिये।

वजीरअली खाँ बड़ी गम्भीरता से बोले—"भाई साहब, आप जानते नहीं हैं। अब्बा मरहूम-मगफूर को झगड़ा-फसाद, खून-खराबी पसन्द न थी, इसलिए उन्होंने अंग्रेजों को निकालने की नहीं सोची। उनके नजदीक आसान तरीका यही रहा कि अंग्रेजों से सुलह करके उनकी शर्तों को मान लिया जाए।" फिर एक लम्बी साँस लेकर कहा—"अब्बा हुजूर ने वाकई बहुत बड़ी गलती की।"

"लेकिन आपने मसनद नशीन होकर उस अस्सी हजार सिपाही का फायदा क्यों नहीं उठाया ?" शाहजादे ने कहा।

वजीरअली खाँ कुछ क्षण खामोश बैठे रहे, फिर उनकी तरफ रुख करके बोले—"भाई साहब ! फायदा उठाने के लिए एक तो हमें मौका नहीं मिला। दूसरे हमें यह

ख्वाब में भी वहम गुमान न था कि अंग्रेज इतनी जल्दी अपना चोट्टापन दिखलाएँगे। अगर हमें अंग्रेजों की बदनीयती की जरा भी खबर होती तो हम एक बार जरूर ही अपने हौसले निकाल लेते। मगर क्या कहें, हमें इनकी हरकत का जरा भी पता नहीं चला। धोखे-धोखे में सब कुछ हो गया। हमारे दिल की दिल ही में रह गई।" और उन्होंने एक लम्बी साँस खींच ली।

वजीरअली खाँ खामोश रह गए। शाहजादे मिर्जा भी चुप रहे। कुछ देर बाद वजीरअली खाँ ने उनकी तरफ रुख करके कहा—"अब एक नई बात सुनने में आई है।"

"क्या ?" शाहजादे ने विस्मय भरे स्वर से पूछा।

"सुनते हैं वह कमीना मक्कार लार्ड सर जान शोर जिसने हमारे साथ दगा की, विलायत चला गया है और उनकी जगह पर कोई नया गवर्नर जनरल आया है। मगर यह कौम कितनी बदजात है! नये पुराने कोई भी हों, सब एक ही साँचे में ढले हुए हैं। एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। विलायत से अपना मतलब लेकर इस मुल्क में आते हैं। सुनते हैं कि उस नये गवर्नर जनरल ने आते ही नवाब सआदतअली खाँ पर एक नया नमदा कस दिया है। लिख भेजा है कि अवध के खजाने से कम्पनी सरकार का रुपया वक्त पर नहीं भेजा जाता। हमें तकाजे-पर-तकाजे करने पड़ते हैं। ऐसा हमें मुनासिब नहीं मालूम होता। इसलिए इसका आसान तरीका यह है कि आधा मुल्क अवध उस रकम के एवज में कम्पनी सरकार के हवाले कर दिया जाए और वह कम्पनी का इलाका बन जाए।"

"भई वाह!" मिरजा मुजफ्फर बख्त ने मुसकरा कर कहा—"यह खूब रही! रियासत के बँटवारे पर भी उतर आए। गोया मुल्क-अवध अंग्रेजों की ही बपौती है। इसीलिए आधा हिस्सा माँग रहे हैं। मगर क्या सआदतअली खाँ ने इस बँटवारे को मंजूर कर लिया ?"

"मंजूर न करेंगे तो कहाँ जाएँगे ?" वजीरअली खाँ ने सआदतअली खाँ के प्रति घृणा दिखलाते हुए कहा—"सआदतअली खाँ में इतनी हिम्मत कहाँ है कि इनकार कर सकें। फिर उन्हें भी तो मुल्क अवध की हुकूमत मुफ्त में मिल गई है। पूरी न सही, आधी ही सही। रियासत तो हाथ आ गई। कुछ दिनों में सुन लेना कि अवध इलाके का आधा हिस्सा कम्पनी राज्य में शामिल हो गया है।"

मुजफ्फर बख्त मुस्कराते हुए बोले—"भाई जान ? आप रहते तो बनारस में हैं, लेकिन लखनऊ की पूरी खबर आपकी मुट्ठी में बन्द रहती है।"

वजीरअली खाँ भी मुस्करा कर बोले—"क्या करें। लखनऊ तो हमारे बाप-दादों का मस्कन है। हमारे बाप-दादों की कमाई रियासत है। इसलिए लखनऊ और वहाँ की खबरों को हम कब्र में भी संजोते रहेंगे।

इसके बाद दोनों तरफ से जरा देर खामोशी रही। फिर मिरजा मुजफ्फर बख्त ने उनकी तरफ मुड़ कर कहा—"अच्छा भाई जान! अब इजाजत दीजिए। मगर भूलिएगा

नहीं। आज रात में हमारे यहाँ महफिल जमनी है। लखनऊ से आई हुई उस छबीलीजान छोकड़ी का मुजरा है और बिला आपकी मौजूदगी के मुजरे का रंग फीका रहेगा।"

"इन्शाअल्लाह जरूर हाजिर हूँगा।" वजीरअली खाँ ने कहा।

शाहजाद मिरजा मुजफ्फर बख्त उठ कर खड़े हो गए। वजीरअली खाँ ने उन्हें बाहर तक पहुँचाया और वह घोड़े पर सवार होकर चले गए।

२९

बनारस के रजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी एक अधेड़ उम्र के अंग्रेज थे। जान चेरी पहले लखनऊ में रजीडेन्ट रह चुके थे। लखनऊ से तबदील होकर बनारस आए थे। इसलिए लखनऊ की नवाबी का उन्हें काफी तजुर्बा था।

गवर्नर जनरल लार्ड सर जान शोर ने नवाब वजीरअली खाँ को गद्दी से हटा कर बनारस में रहने की आज्ञा दी थी। बनारस में रहते हुए वजीरअली खाँ की देख-रेख की पूरी जिम्मेदारी रेजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी के सिपुर्द कर दी थी। नवाब वजीरअली खाँ कोई कैदी नहीं थे। उनके साथ विशेष कोई बन्धन भी न था। बल्कि उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। अपने यार दोस्तों से मिलना-मिलाना। उनकी कोठी में आना-जाना। घोड़े पर सवार होकर नगर के बाहर दो-चार मील घूमने फिरने जाने की भी इजाजत थी। बंधन का रूप केवल इतना ही था कि बनारस से निकल कर वह लखनऊ के रास्ते का रुख न करें। फिर भी रजीडेन्ट जान चेरी के लिए उन पर निग्राह रखना बहुत जरूरी था। क्योंकि जानचेरी एक अनुभवी रजीडेन्ट थे। वह समझते थे कि कम्पनी सरकार ने अपने हित के लिए नवाब वजीरअली खाँ को गद्दी से उतारा है। अतः स्वाभाविक है कि वह हाथ पैर हिला-डुला सकते हैं। यद्यपि हाथ पैर हिलाना बेकार ही होगा। कम्पनी सरकार की शक्ति के आगे अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। लखनऊ से हटा कर वह बनारस में इसीलिए रखे गए हैं कि किसी भी प्रकार से अपने पंख न फड़फड़ा सकें। पिंजड़े में बन्द रह कर ही अपना जीवन व्यतीत कर दें।

ऐसा जानते-समझते हुए रजीडेन्ट जान चेरी वजीरअली खाँ की ओर से गाफिल न थे। अपने अनुभव के अनुसार पूर्णरूप से सचेत थे। जब-तब उनकी कोठी पर पहुँचते रहते थे और जाहिरा तौर पर उनकी कुशल खैरियत पूछ कर उनका दिल ठण्डा करते रहते थे। किन्तु छिपे तरीकें से अपने फर्ज के अनुसार अनुभवी रजीडेन्ट ने बहुत कुछ कर रखा था। विशेष रूप से उन्होंने नवाब वजीरअली खाँ के विश्वासी, दरबारी तथा सलाहकार कासिमअली खाँ को मिला रखा था। उन्हें अनेक प्रकार की लालचें दे रखी थीं।

उनके द्वारा जान चेरी को वजीरअली खाँ की हरकतों का पता चलता रहता था। इसके अलावा उन्होंने अपने जमादार खैरातअली की जवान लड़की कनीज फातमा को सोने-चाँदी के टुकड़ों से खरीद कर अपना विशेष गुप्तचर बना लिया था। कनीज फातमा पढ़ी-लिखी एक चुस्त चालाक युवती थी। बनारस में आकर नवाब वजीरअली खाँ की मुतायी बेगम नवाब वजीरुन्निसा को अपनी खिदमत के लिए एक लौंडी का जरूरत महसूस हुई थी। बड़ी खोज-तलाश के बाद उन्हें अपने इतमीनान की लौंडी कनीज फातमा मिल गई थी और उन्होंने उसे नौकर रख लिया था। कनीज फातमा ने अपनी सेवाओं से बेगम को मुट्ठी में बन्द कर लिया था और एक प्रकार से वह बेगम की सहेली बन गई थी। बेगम उससे इस कदर खुश थीं कि उसके आगे अपना दिल तक खोल कर रख देती थीं। कनीज फातमा चुस्त चालाक तो थी ही। जान चेरी के हाथों बिक कर वह वजीरअली खाँ के जनानखाने की हर एक बात अपने आँचल की गाँठ में बाँधती रहती थी और पाँचवें-दसवें दिन अपने बाप जमादार खैरातअली के द्वारा जानचेरी के कानों तक पहुँचा दिया करती थी। उसे इससे कोई मतलब न था कि बात कुछ भेद भरी है, इससे रजीडेन्ट को कुछ फायदा पहुँच सकता है या नहीं। वह तो अपना फर्ज अदा करती रहती थी। लेकिन रजीडेन्ट को पूरा इतमीनान हो जाता था। समझ लेते थे कि हमारा जासूस चुस्त है। अगर कभी कोई शक-शुभा की बात होगी तो हमें आगाही मिलती रहेगी। अपने इन उपायों के कारण मिस्टर जान चेरी नवाब वजीरअली खाँ की ओर से एक प्रकार से पूर्ण निश्चिन्त थे। और अभी तक उन्हें कोई खटकने वाली बात भी नहीं मालूम हुई थी।

कनीज फातमा कभी ऐसा मौका नहीं आने देती थी कि उसकी ओर से बेगम को किसी प्रकार का सन्देह पैदा हो सके। बेगम के जरा से इशारे पर कठपुतली की तरह नाचती रहती थी। बेगम उसे इनामों इकरामों के रूप में कीमती लँहगे-दुपट्टे उतार कर बख्श दिया करती थीं। कनीज फातमा बड़ी मिठबोलनी थी। बेगम के द्वारा कपड़े पाकर कहा करती—"ऐ, हुजूर, मुझ निगोड़ी को ऐसी इनामें-इकरामें कहाँ नसीब थीं! खुदा का शुक्र है कि उसने मेरी किसमत का सितारा चमका दिया। हुजूर को लखनऊ से बनारस खींच लाया और मुझे हुजूर की खिदमत करने का मौका मिल गया।"

नवाब वजीरअली खाँ को भी कनीज फातमा का अदब कायदा बहुत पसंद था। कनीज फातमा जब भी वजीरअली खाँ के सामने आती थी तो उसके चेहरे पर झीनी जालीदार नकाब पड़ी होती। उनके हुक्म की तामील के लिए तो वह उधार खाए खड़ी रहती थी। लेकिन जब कभी मुँह से कुछ बोलने-कहने की जरूरत आ पड़ा करती तो वह लज्जा की पुतली बन जाती। बहुत धीमे मीठे स्वर से अर्ज करती। एक-एक शब्द तौल-तौल कर निकाला करती थी। इसके साथ चौकन्नी भी रहती थी कि कहीं मुझसे कोई हरकत ऐसी न हो जाए जो नवाब को नापसंद हो और उसके कारण मैं कोठी से हटा दी जाऊँ। क्योंकि वजीरअली खाँ की तेज मिजाजी और गैजोगजब का उसे पता चल गया

था। एक बार बातों-बातों में बेगम के मुख से लखनऊ में नीलम का नकटी बूची बना दिए जाने वाला किस्सा भी सुन चुकी थी। अतः बहुत सधी रहा करती थी।

बेगम वजीरुन्निसा नवाब वजीरअली खाँ का दिल बहलाने के लिए अकसर नये-नये उपाय करती रहती थी जिससे उन्हें लखनऊ की याद न आए। उन्हें रियासत छिन जाने का दुख न सताए। ऐसे ही विचारों से आज बेगम वजीरुन्निसा ने कोठी में अपने खास कमरे को आरायशी साज-सामान से अच्छी तरह सजाया था। और खुद भी सोलहो सिंगार से लैस हो रही थीं। अपने गले में आज उन्होंने पहली बार हीरों-जव्हरातों से जगमगाता हुआ वह नौलखा हार पहिना था जो नवाब वजीरअली खाँ ने लखनऊ में उन्हें मुताह के दिन अता फरमाया था। कनीज फातमा ने अपने इस छोटे से जीवन में ऐसे हीरे जव्हरातों की चमक-दमक कभी नहीं देखी थी। हार को देख कर वह भौंचक्की-सी हो रही थी। आँखों में चकाचौंध उत्पन्न हो रही थी और वह बेगम की नजर को बचा कर अपनी नजर उस हार ही पर गड़ा रही थी।

आखिर बेगम वजीरुन्निसा ने उसकी नजर को ताड़ लिया। और मुस्कराते हुए कहा—"फातमा! ऐसी हैरत भरी नजर से क्यों देख रही है?"

कनीज फातमा सिटपिटा सी गई। नजर को नीची करके बोली—"कुछ नहीं हुजूर।"

"कुछ तो?" बेगम ने कुछ अधिक मुस्करा कर कहा—"क्या तू ने ऐसा नौलखा हार और हीरे जवाहरात पहिली बार देखे हैं?"

"हुजूर नौलखा हार और हीरे-जवाहरातों की बात कह रही हैं। मुझ निगोड़ी ने तो झूठे काँच-पत्थर के टुकड़े भी कभी नहीं देखे थे। हाँ, एक बार अब्बा के मुँह से सुना जरूर था कि दिल्ली बादशाहत और लखनऊ की नवाबी में बेशुमार और ढेरों ऐसे हीरे-जवाहरात मौजूद हैं जिनकी कोई कीमत नहीं आँक सकता।"

"तूने अपने अब्बा के मुँह से सच ही सुना था।" बेगम ने अपने हार को जरा हिला-डुला कर कहा—"हमारे लखनऊ के खजाने में जैसे हीरे-जवाहरात मौजूद थे वैसे दुनिया की किसी भी बादशाहत में न होंगे। ये नौलखा हार उन्हीं में का एक मामूली सा नमूना है।"

कनीज फातमा ने प्यासी आँखों से हार की तरफ देखा और बोली—"ऐ, हुजूर जितने बड़े-बड़े और चमकदार हीरे इस हार में जड़े हुए हैं क्या इससे भी बड़े हीरे हुआ करते हैं?"

बेगम जोर से हँस पड़ीं, फिर बोलीं—"वाकई तू हीरे-जवाहरातों के बारे में कुछ भी नहीं जानती। हमारे इस हार में जड़े हुए हीरे क्या चीज हैं? जितने हीरे इसमें मौजूद हैं उन सब की कीमत नौ लाख रुपया है। इसी वजह से इसे नौलखा हार कहा जाता है। लेकिन ऐसे भी हीरे-जवाहरात हमारे खजाने में हैं, जिनमें सिर्फ एक हीरे का

दाम करोड़ों रुपया जा आँका जा सकता है।"

"मैं निगोड़ी क्या जानूं हुजूर ?" कनीज फातमा ने बहुत भोलेपन से कहा—"मैं तो यह भी नहीं जानती कि लाख और करोड़ किसे कहते हैं ? उनका कितना बड़ा ढेर होता है।"

बेगम हंसने लगीं और अपने कमरे की तरफ चली गईं। कनीज फातमा भी अपने काम में जुट गई।

दोपहर के दस्तरख्वान से उठ कर नवाब वजीरअली खाँ तथा बेगम वजीरुन्निसा सुसज्जित कमरे में मसनदों पर जा बैठे। बेगम ने नवाब का दिल बहलाने और खुश करने के लिए खेल शुरू किए। पहिले शतरंज बिछी, मोहरे जमाए गए, बाजी बदी गई। लेकिन दस-पाँच चालें चलने के बाद नवाब वजीरअली खाँ का दिल उचाट हो गया। बाजी खतम किए बिना ही बिसात उलटा दी और बेगम की तरफ देख कर कहा—"कमबख्त ये शतरंज का खेल हू-ब-हू वैसा ही है जिस तरह लखनऊ में अंग्रेजों ने हमारे साथ खेला था। शतरंज के इन मोहरों की चालों और बदजात अंग्रेजों की चालों में जरा भी फर्क नहीं है।"

बेगम बोलीं—"खैर शतरंज को जाने दीजिए। आइए चौपड़ के पाँसे फेंकें। लेकिन हार-जीत के दाँव लगा लीजिए।" और वह नवाब की नजर से नजर मिला कर मुस्करा दीं।

वजीरअली खाँ गम्भीर मुद्रा से बोले—"हमने तो अवध की रियासत अंग्रेजों को हार दी। अब हमारे पास क्या है और किस बूते-बल पर चौपड़ के खेल में दाँव लगाएँ।"

"छोड़िए अवध रियासत की हार-जीत का जिक्र ?" बेगम ने कहा—"जो किस-मत से उतर गया उसकी याद करना बेकार है।" फिर बात टालने के अभिप्राय से कहा—"अजीजन से कोई फारसी की गजल सुनिएगा ? बहुत अच्छा गाती है और हाफिज शीराजी की बहुत सी गजलें उसे याद हैं।"

"बेहतर है।" वजीरअली खाँ ने तकिए का सहारा लेकर कहा—"उसे बुलाया जाए।"

अजीजन जनानखाने की ही एक लौंडी थी। सितार पर राग रागिनियों के स्वर साधने में बड़ी चतुर थी। गला भी अच्छा पाया था। बेगम ने उसे बुला कर कोई गजल सुनाने की फरमाइश की। अजीजन अपना सितार उठा लाई और मसनदों के सामने बैठ कर हाफिज शीराजी की गजल गाना शुरू किया—

इं चे शोरेस्त कि दर दौरे कमर मी बीनम,
हुमा आफाक बर अज फितन-व-शर मीबनम।

सुन कर नवाबी जोड़ा झूम गया।

अजीजन ने गजल का अन्तिम शेर गाया—

अस्प ताजी शुदा मजरूह बजेरे पालाँ,
तौक जर्री हुमादर गरदने खर मी बीनम।

यह शेर नवाब वजीरअली खाँ को बहुत पसंद आया। बेगम की तरफ रुख करके कहा—"कितना हस्बहाल शेर है।" और अपनी उँगली से हीरे जड़ी अँगूठी उतार कर अजीजन को बख्श दी। अजीजन ने अँगूठी को चूम कर आँखों से लगाया और उठ कर अदब के साथ सलाम किया। फिर वहाँ से जाकर जनानखाने की दूसरी लौंडियों को वह अँगूठी दिखाई। कनीज फातमा ने देख कर कहा—"लाखों, करोड़ों की होगी? बेगम साहिबा फरमा रही थीं कि हीरे बड़े बेशकीमती हुआ करते हैं।"

उसी संध्या को कनीज फातमा जरा देर के लिए बेगम से इजाजत लेकर अपने घर गई और अँगूठी तथा नौलखाहार के हीरे-जवाहरातों की बात अपने बाप को सुना कर इतना नमक और लगा दिया—"मालूम होता है कि नवाब वजीरअली खाँ के पास ढेरों हीरे-जवाहरात यहाँ भी मौजूद हैं।" खैरातअली ने उसी वक्त जाकर उस खबर को रजीडेन्ट जान चेरी के कानों में ठूंस दिया। जवाहरातों की खबर सुन कर जान चेरी के मुंह में पानी भर आया। उन्हें पता था कि लखनऊ के नवाबी खजाने में बेशुमार हीरे-जवाहरात मौजूद हैं लेकिन अभी तक उन्हें यह पता नहीं था कि नवाब वजीरअली खाँ उन्हें अपने साथ बनारस ले आए हैं। लालचवश जान चेरी सोचने लगे—अगर किसी तरह नवाब वजीरअली खाँ से दो-चार बेशकीमती हीरे-जवाहरात मेरे हाथ आ जाएँ तो मैं आज ही कम्पनी की नौकरी छोड़ कर विलायत चला जाऊँ। विलायत में ऐसे रत्न किसके पास होंगे? शायद मलिका विक्टोरिया के भी पास न होंगे। उनमें से एक-दो बेंच कर मौज की जिन्दगी बसर की जा सकेगी।

दूसरे दिन संध्या से कुछ पहिले अपने नियमानुसार कासिमअली खाँ रजीडेन्ट को सलाम बजाने के लिए रजीडेन्सी की कोठी में पहुँचे। शायद मिस्टर जान चेरी हवाखोरी के लिए किसी तरफ जाने वाले थे। क्योंकि साईस कसा हुआ घोड़ा लिए कोठी के बरामदे के सामने खड़ा था।

कासिमअली खाँ ने साईस से पूछा—"जनाब रेजीडेन्ट साहब बहादुर कहीं तशरीफ ले जाने वाले हैं क्या?"

"हाँ," साईस ने कहा—"यह वक्त हुजूर की हवाखोरी के लिए जाने का है। क्या आप मिलना चाहते हैं? इस वक्त तो हुजूर न मिल सकेंगे।"

जान चेरी ने बँगले के अन्दर से उन दोनों की बातें सुन लीं और शीघ्र ही अन्दर से बरामदे में आ गए। कासिमअली खाँ ने आगे बढ़ कर साहब को सलाम बजाया।

जान चेरी ने मुस्कराते हुए उनका सलाम लिया। बोले—"आइए! हम आज

अब हवाखोरी को न जाएँगे। बैठ कर आपसे बातें करेंगे!" फिर साईस की तरफ मुड़ कर कहा—"घोड़ा वापस ले जा। हम आज न जाएँगे।"

साईस घोड़ा लेकर चला गया। जान चेरी कासिमअली खाँ को कोठी के अन्दर अपने कमरे में ले गए। इज्जत के साथ कुर्सी पर बैठाया और एक कुर्सी खींच कर खुद भी बैठ गए।

कासिमअली खाँ ने खुशामद भरे लहजे से कहा—"मैंने बेवक्त आकर आज हुजूर की हवाखोरी में खलल डाल दिया। माफी का ख्वास्तगार हूँ।"

"नहीं-नहीं!" जान चेरी ने इतमीनान से कहा—"हम दो-तीन दिन से आपके इन्तजार में थे। आपसे कुछ बातें करना चाहते थे।"

"हुजूर की इनायत है।" कासिमअली खाँ ने उसी लहजे से कहा।

फिदवी सलाम के लिए हाजिर तो रोज ही हुआ करता था लेकिन इधर दो-तीन दिनों से मेरी तबीयत खराब हो गई थी इसलिए हाजिर नहीं हो सका था।"

जान चेरी दो क्षण खामोश बैठे कुछ सोचते से रहे। फिर नजर उठा कर बोले—"कहिए? आपके नवाब साहब का क्या हाल है?"

"ठीक ही है?" कासिमअली खाँ ने धीरे से कहा—"कोई नयी बात नहीं है।"

"आप कुछ दबी जबान से बोल रहे हैं? इससे तो ऐसा महसूस होता है कि नवाब साहब के मिजाज में कुछ तबदीली पैदा हो रही है।"

"तबदीली तो कोई नहीं पैदा हो रही लेकिन उनका मिजाज पहले से ही गरम रहने वाला है और उनकी उस तेजमिजाजी को देख कर कभी-कभी जी घबड़ाने लग जाता है।"

"कैसा?" जान चेरी ने गौर से उनके चेहरे की तरफ देख कर कहा।

"जवानी का जोश और मिजाज की तेजी खौफनाक हुआ करती है। बात-बात में गुस्से का इजहार उनकी आदत में दाखिल है। गलत-सही अपनी ही बात को पकड़े रहते हैं। और अगर कुछ कहा जाए तो मुसीबत सामने आ खड़ी हो।"

जान चेरी मुस्कराते हुए बोले—"लेकिन आप तो उनके पुराने नमकख्वार और खैरख्वाह हैं। फिर अपना घर-बार, बाल-बच्चों को छोड़ कर, यहाँ बनारस में उनका साथ दे रहे हैं। आपकी हर एक बात उन्हें माननी चाहिए। आप जो कुछ भी उन्हें समझाएँगे या इसलाह देंगे वह उनके फायदे का ही होगा।" फिर जरा रुक कर कहा—"नवाब साहब को अब अपने मिजाज को बदल देना चाहिए। लखनऊ में उनका जो रंग-ढंग था, मिजाज में जो गरमी थी वह यहाँ बनारस में उनके लिए नुकसान पहुँचाने वाली साबित हो सकती है। बहुत जरूरी है कि वह आपकी इसलाह को मानें।"

"हुजूर का फरमाना बजा है। लेकिन नौजवानों के नजदीक बुजुर्गों की हर बात, हर इसलाह गलत और बेकार हुआ करती है। उन्हें अपने हमजोली मुसाहबों की इसलाह

ही पसन्द आया करती है। हुजूर यह ख्याल फरमाएँ कि मैं एक तरह से जबरदस्ती उनकी खिदमत से लिपटा हुआ हूँ। क्या करूँ, नवाब आसफुद्दौला का ख्याल पीछे लगा हुआ है।"

"यह आपकी शराफत है।"

"लेकिन हुजूर!" कासिमअली खाँ ने गम्भीर होकर कहा—"उनको इसका ख्याल कहाँ है। बल्कि यों समझा जाए कि नवाब वजीरअली खाँ की इस तावेदारी ने मुझे कहीं का न रखा। यहाँ न कोई पूछ-कदर है और न लखनऊ वापस जाने के लायक रह गया। नवाब सआदतअली खाँ भी जाने क्या ख्याल फरमाते होंगे।"

जान चेरी एक क्षण खामोश रहे फिर नजर उठा कर कहा—"हम तो यही कहेंगे कि नवाब वजीरअली खाँ गलती कर रहे हैं। उन्हें लड़कपन छोड़ देना चाहिए। लखनऊ में वह जिन मुसाहिबों यार-दोस्तों की वजह से बदनाम थे, उनका साथ छोड़ कर आप लोगों का साथ पकड़ना चाहिये। अब तो उनकी इसी में भलाई है।"

"हजूर! आपसे मेरी एक दस्तबस्ता इल्तजा है।" कासिमअली खाँ ने बड़े दीन भाव से कहा।

"क्या?" जान चेरी ने सहानुभूति भरी नजर से उनकी ओर देखा।

कासिमअली खाँ ने गिड़गिड़ाते हुए स्वर से कहा—"हुजूर एक चिट्ठी लखनऊ के रजीडेन्ट लिम्सडन साहब को मेरी शिफारिश के तौर पर लिखने की मेहरबानी करें जिससे लखनऊ पहुँचने पर वह मेरी इज्जत-आबरू को हिफाजत करते रहें। मैं अपने बाल-बच्चों के साथ रह कर जिन्दगी बसर कर सकूँ। क्योंकि मुमकिन है नवाब सआदतअली खाँ का मेरी तरफ से कुछ बदख्याल हों।"

जान चेरी ने हिम्मत बँधाते हुए कहा—"आप इस कदर मायूस क्यों हो रहे हैं? इतना क्यों घबड़ा रहे हैं? आप हमारे मिलने वाले हैं। इसलिए हम आपकी पूरी इमदाद करेंगे। आप इतमीनान रखें, जिस वक्त आप लखनऊ वापस जाना चाहेंगे, हम मिस्टर लिम्सडन को लिख देंगे। आपकी इज्जत-आबरू में नवाब सआदतअली खाँ के जरिए कोई फर्क न आने पाएगा। इसके अलावा हम कम्पनी सरकार से भी आपके गुजारे के लिए शिफारिश कर देंगे।"

"हुजूर के ऐसे एहसान को मैं जिन्दगी भर न भूलूंगा।" उन्होंने बड़े दीन भाव से कहा।

कुछ देर चुप रहने के बाद जानचेरी ने उनकी तरफ देख कर कहा—"नवाब कासिमअली खाँ?"

"इर्शाद?" कासिमअली खाँ ने उनकी तरफ देख कर कहा।

जब से जान चेरी को मालूम हुआ था कि नवाब वजीरअली खाँ के पास बेशकीमती हीरे और अमूल्य जवाहरात हैं, उसके दिल में लालच ने खलबली मचा रखी थी। किस

प्रकार कुछ हीरे उन्हें प्राप्त हों, हर वक्त यही ख्याल बना रहता था। पाने के उपाय सोचते रहते थे। अन्त में कासिमअली खाँ पर ही उनकी निगाह जमी। नवाब वजीरअली खाँ से हीरे दिलवाने के वही बेहतर जरिया मालूम हुए थे। अतः मिस्टर जान चेरी अपने मतलब पर आए।

जान चेरी ने कासिमअली खाँ के चेहरे पर नजर जमाई और बहुत मीठे लहजे से बोले—"इस वक्त हम आपसे एक अपने मतलब की बात कहना-सुनना चाहते हैं।"

"फरमाइए, मैं हर तरह से हुजूर की खिदमतगुजारी को हाजिर हूँ।" उन्होंने खुशामदाना लहजे से कहा।

"हमने सुना है, बल्कि हमें एक यकीनी तरीके से मालूम हुआ है कि नवाब वजीरअली खाँ के पास काफी बेशकीमती हीरे-जवाहरात मौजूद हैं। शायद वह अवध के खजाने से निकाल कर अपने साथ ले आए हैं।"

कासिमअली खाँ इतमीनान से बोले—"हुजूर! यह तो मुझे अच्छी तरह मालूम है कि लखनऊ के खजाने में ऐसे-ऐसे हीरे-जवाहरात मौजूद थे जो शायद हिन्दुस्तान की किसी भी रियासत में न होंगे। अवध रियासत के नवाब मंसूरअली खाँ उनको दिल्ली के खजाने से ले आए थे। लेकिन फिदवी यह सही तौर पर अर्ज नहीं कर सकता कि नवाब वजीरअली खाँ उन जवाहरातों को अपने कब्जे में करके अपने साथ बनारस ले आए हैं या वहीं लखनऊ के खजाने में ही मौजूद हैं।"

"हमें अपनी आँखों से देखने वाले से मालूम हुआ है कि वजीरअली खाँ के पास कीमती हीरे मौजूद हैं। वे जरूर लखनऊ के खजाने से निकाल कर बनारस लेते आए हैं।" चेरी ने दृढ़ स्वर से कहा।

"हो सकता है, हुजूर का फरमाना सही हो।

जान चेरी एक क्षण खामोश बैठे रहे। फिर नजर उठा कर कहा—"नवाब कासिमअली खाँ? हम चाहते हैं कि आप उन हीरे-जवाहरातों में से कुछ चुने हुए दस-पाँच हीरे नवाब वजीरअली खाँ से हमें दिलवा दें।" फिर जरा रुक कर कहा—"हम नवाब वजीरअली खाँ का एहसान तो मानेंगे ही उसके एवज में अच्छा बदला चुका देंगे, यानी कम्पनी सरकार से लिखा-पढ़ी करके उन्हें मनचाही पेंशन दिलवा देंगे। अभी उन्हें सिर्फ तीन लाख सालाना गुजारे की रकम मिलती है। हमारी शिफारिश से वह बढ़ कर बारह-पन्द्रह लाख सालाना हो जाएगी। और वह बहुत आराम की जिन्दगी बसर कर सकेंगे।"

कासिमअली खाँ छूटते ही बोले—"हुजूर ने नवाब वजीरअली खाँ के लिए यह बहुत ही बेहतर सोचा है। पेंशन-गुजारा बढ़ जाने से बिला शक उनकी जिन्दगी बन जाएगी। मन चाहा ऐश-आराम कर सकेंगे।" फिर धीरे से कहा—"हीरे-जवाहरात अपने पास रख कर क्या करेंगे? वक्त जरूरत पर अगर बेचना चाहेंगे तो सौ के दस ही

उनके हाथ लगेंगे। न कोई उनकी कीमत जाँच सकेगा न दे सकेगा।"

"तब इस बारे मे आप कोशिश करें? गुजारा दूना-चौगना बढ़ जाने की बात उनके गले उतारें। हमें यकीन है कि अगर आप उन्हें अच्छी तरह समझाएँगे तो जरूर हमारी ख्वाहिश पूरी हो जाएगी।"

"हजूर के लिए मेरी जान हाजिर है? मैं आज कल में मौका ताक कर नवाब साहब से इसका जिक्र करूँगा। यह तो उनके बहुत फायदे का मशविरा है। उम्मीद करता हूँ कि वह जरूर कुछ जवाहरात आपकी नजर करने को राजी हो जाएँगे।" फिर एक क्षण खामोश रहने के बाद धीरे से कहा—"नवाब वजीरअली खाँ के ऊल-जलूल मिजाज का ही डर है।"

"हम आपके भी एहसानमन्द होंगे।" जान चेरी ने कहा।

"हुजूर इतमीनान रखें।" मैं इस बारे में पूरी कोशिश करूँगा। कासिमअली खाँ ने कहा।

इसके बाद बैठक खतम हो गई। कासिमअली खाँ सलाम करके चले गए और जान चेरी के दिमाग में तरह-तरह के मंसूबे बँधने लग गए। जवाहरात पाकर वह क्या-क्या करेंगे यही गुनताड़े लगने लग गए।

× × ×

कासिमअली खाँ ने उसी रात को चेरी साहब की फरमायश का अपने साथियों अशरफअली खाँ तथा आफरीअली खाँ से जिक्र किया। उन दोनों ने कहा—"कोई हर्ज नहीं है। दस-पाँच हीरे दे देने का ऐवज बहुत बेहतर है। जवाहरात तो आखिर पत्थर ही हैं। फिर दस-पाँच के निकल जाने से कोई कमी नहीं पैदा हो सकती। इसके अलावा रजीडेन्ट जान चेरी के खुश रहने से नवाब साहब को हर तरह का आराम पहुँचता रहेगा।"

इस बारे में नवाब वजीरअली खाँ से बात करने का दो दिन तक कासिमअली खाँ को मौका नहीं मिला। तीसरे दिन जब वजीरअली खाँ अकेले ही दीवानखाने में मसनद-नशीन थे, कासिमअली खाँ को मौका मिल गया। उन्होंने जाकर वजीरअली खाँ से जान-चेरी की माँग तथा गुजारा बढ़वा देने का सविस्तार जिक्र किया। और दे देने का अपना भी मशविरा दिया। वजीरअली खाँ राजी हो गए और जवाहरात लेने के लिए जनानखाने की तरफ़ चले गए। क्योंकि जवाहरातों का संदूकचा वजीरुन्निसा बेगम के पास था।

जनानखाने में पहुँच कर वजीरअली खाँ ने बेगम से जवाहरातों का संदूकचा माँगा। बेगम ने लाकर सामने रख दिया। वजीरअली खाँ ने संदूकचा खोल कर पाँच अच्छे बड़े हीरे चुन कर निकाले और उन्हें एक सोने की तशतरी में रखा। हीरों की आभा से तशतरी जगमगा उठी।

बेगम ने कहा—"हीरों की चमक से तशतरी कैसी जगमगा रही है!"

"अच्छे कीमती हीरे हैं।" वजीरअली ने कहा—"पानीदार हीरों में ऐसी ही चमक-दमक हुआ करती है।।"

"लेकिन यह पाँच हीरे क्यों निकाले गए हैं ? किसी को नजर करना या बख्शना है क्या ?" बेगम ने पूछा।

"हाँ।"

"किस को ?"

"बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी को बख्शना है।"

"क्यों ?"

वजीरअली खाँ ने बेगम से कासिमअली खाँ का मशविरा दोहरा कर कहा—"इन हीरों को पाकर रजीडेन्ट जान चेरी ने बारह-पन्द्रह लाख गुजारा बढ़वा देने का वादा किया है।" फिर मुस्करा कर कहा—"ढेर के ढेर हीरे जवाहरात तो हैं। पाँच निकल जाने से क्या कमी हो सकती है ?"

"यह तो आप का कहना ठीक है। पाँच हीरों से हमारे सन्दूकचे में कमी नहीं हो सकती। लेकिन...." बेगम चुप रह गईं।

वजीरअली खाँ ने उनके चेहरे पर नजर जमा कर कहा—"लेकिन क्या ? तुम जो कुछ कहना चाहती हो, कहो न ?"

"हम हुजूर से यह कहना चाहती हैं," बेगम ने गम्भीर स्वर से कहा—"इन हीरों के एवज में गुजारे की रकम बढ़वा देना कोई बड़ी बात नहीं है। अगर रेजीडेन्ट आपकी रियासत वापस दिला देने का वादा करे तो बेहतर है। मान लीजिए कि अंगरेजों ने सआदतअली खाँ को सच्चा हकदार समझ कर नवाब बनाया है, उन्हें अवध रियासत बख्शी हैं। मगर आप भी तो हकदार ही समझ कर मसनदनशीन किए गए थे। आप-का हक भी तो रियासत पर है। अगर रजीडेन्ट पूरी रियासत वापस नहीं दिला सकते तो आधी ही वापस दिला दें। आधे हिस्से में आपकी हुकूमत हो और आधे के हुक्मरां सआदतअली खाँ रहें। ऐसा करने से अंग्रेजों का इन्साफ भी कायम रहेगा और हमारा भी दुख-दर्द दूर हो जाएगा।"

"किसी हद तक तुम्हारा कहना सही मालूम होता है।" वजीरअली खाँ ने कहा।

"आप इन पाँच हीरों के ऐवज में यही शर्त रजीडेन्ट के सामने रखें। अगर वह इस शर्त को मंजूर करते हैं तो पाँच के बदले सात हीरे उन्हें दिए जा सकते हैं।"

वजीरअली खाँ एक क्षण चुप रहने के बाद नजर उठा कर बोले—"बेहतर है, हम यही शर्त उनके सामने रखेंगे। इन अंग्रेज बच्चों का कोई ऐतबार नहीं। हीरे भी कब्जे में कर लें और ठेंगा भी दिखा दें। इसलिए पूरी तरह ठोंक-बजा लिया जाए।"

"नवाब कासिमअली खाँ बीच में हैं। हमारा ख्याल है कि इस बारे में रजीडेन्ट

दगा नहीं कर सकता।"

वजीरअली खाँ ने कहा—"फिर भी हम उन्हें अच्छी तरह आगाह कर देंगे।"

इसके बाद नवाब वजीरअली खाँ तश्तरी में हीरे लिए दीवानखाने में आ गए और मसनद पर बैठ गए। कासिमअली खाँ ने देखा की हीरों की किरणों से तश्तरी जगमगा रही है। वह उनकी चमक-दमक देख कर हैरत में रह गए।

नवाब वजीरअली खाँ ने कहा—"कासिमअली खाँ? यह पाँच हीरे करोड़ों के हैं। इनको बेच कर एक रियासत खरीदी जा सकती है।" फिर जरा देर खामोश रह कर कहा—"यह हीरे हम एक शर्त पर मिस्टर जान चेरी को दे सकते है कि वह हमें हमारी रियासत वापस दिला दें। मान लो कि वह अवध की कुल रियासत वापस नहीं दिला सकते तो कम से कम आधी ही रियासत वापस दिला दें। आप हीरों की यह किश्ती ले जाकर उन्हें दिखाएँ और हमारी शर्त उन्हें गोशगुजार कराएँ। अगर उनको शर्त मंजूर हो तो बेहतर है। आधी रियासत हमें मिल जाने पर हम यह भी वादा करते हैं कि हम जान चेरी को दो चार और भी हीरे नजर करेंगे।"

वजीरअली खाँ की शर्त को सुन कर कासिमअली खाँ असमंजस में पड़ गए। उनके नजदीक यह शर्त ऐसी थी जिसे शायद ही जान चेरी मंजूर करें। लेकिन हीरों की चमक-दमक कह रही थी कि उन्हें देख कर जान चेरी की राल जरूर टपक पड़ेगी और वह मेरी कोशिश को मान लेंगे। इसलिए एक बार हीरे ले जाकर उन्हें दिखाना आवश्यक है। रही शर्त मंजूर करने की बात सो उसे जान चेरी जाने और नवाब वजीरअली खाँ जानें। मैं इधर-उधर दोनों तरफ से अपना फर्ज अदा करने में सुर्खरू बना रहूँगा।

इस गुनताड़े के अनुसार कासिमअली खाँ ने किश्ती को अपने कब्जे में करके वजीरअली खाँ से अर्ज किया—"हुजूर का फरमाना बजा है। मैं इन हीरों को ले जाकर रजीडेन्ट को दिखलाता हूँ। अगर वह हुजूर की शर्त मंजूर फरमाएँगे तो हीरे उनके हवाले कर दूँगा और अगर उन्होंने शर्त को मंजूर न किया तो ज्यों की त्यों किश्ती लाकर हुजूर को सौंप दूँगा।"

"हाँ, इसकी पूरी जिम्मेदारी आपकी होगी।" वजीरअली खाँ ने कहा—"बिला शर्त मंजूर किए हम किसी सूरत में हीरे उन्हें नहीं दे सकते।"

कासिमअली खाँ हीरों की किश्ती ले कर सीधे रजीडेन्सी जा पहुँचे। जान चेरी से मुलाकात हासिल की और हीरों की तश्तरी उनके सामने मेज पर रख दी। जान चेरी हीरे देख कर चकित रह गए। उनकी नजर जैसे उन हीरों से चिपक सी रही थी। हटाए नहीं हट रही थी। हीरों का मूल्य आँकना तो उनके काबू की बात न थी किन्तु उनमें से फूटती हुई किरणों को देख कर वह इतना अवश्य समझ रहे थे कि ये हीरे अमूल्य हैं और इनसे हमारी जिन्दगी, रहन-सहन तथा नाम-शोहरत में चार चाँद लग जाएँगे। विलायत में मैं एक धनी-मानी मशहूर हो जाऊँगा।

जवाहरातों पर से नजर हटा कर मुस्कराते हुए जान चेरी ने कासिमअली खाँ की तरफ देखा। बोले—"नवाब कासिमअली खाँ ? हम आपके बहुत-बहुत शुक्रगुजार हैं। आपने हमारे लिए बहुत बड़ा काम किया।" फिर हीरों पर एक क्षण नजर गड़ा कर कहा—"हम आज ही एक जोरदार शिफारिश कम्पनी सरकार को लिख रहे हैं। हमें उम्मीद है कि नवाब वजीरअली खाँ को बारह लाख पैंशन देना कम्पनी-सरकार जरूर मंजूर कर लेगी। कम्पनी सरकार को कुछ अपने खजाने से थोड़े ही पैंशन देना है। वह तो अवध के खजाने से ही दी जाया करेगी।"

कासिमअली खाँ के पेट में नवाब वजीरअली खाँ की शर्त उथल-पुथल मचाए हुए थी। किस प्रकार वह शर्त रजीडेन्ट को सुनाई जाए। समझ में नहीं आ रहा था। मगर वह वजीरअली खाँ के मिजाज को अच्छी तरह जानते थे। समझते थे कि अगर जरा भी उनके हुक्म से इधर-उधर हुआ तो जान जीक में पड़ जाएगी। इधर रजीडेन्ट का भी ख्याल था। उनकी खुशी-नाखुशी का भी सवाल सामने था। अतः इस वक्त उनकी गति साँप-छछूंदर की हो रही थी फिर भी उन्होंने साहस बाँध कर जबान हिलाई। बोले—"हुजूर...." आगे जबान लड़खड़ा गई। कुछ न कह सके।

"कहिए, कहिए ?" जान चेरी ने प्रसन्न मुखमुद्रा से कहा—"हम आपके बहुत एहसानमन्द हैं।"

कासिमअली खाँ खुशामद भरे स्वर से बोले—"हुजूर मैं किस लायक हूँ। एक नाचीज खिदमतगुजार हूँ।"

"नहीं, नहीं।" जान चेरी ने एहसान भरे स्वर से कहा—"आप ने हमारे लिए बहुत कोशिश की है। नवाब वजीरअली खाँ से आपने हमें यह बेशकीमती हीरे दिलवाए हैं। बहुत बड़ा काम किया है।"

कासिमअली खाँ ने दबी जबान से कहा—"हुजूर इन हीरों को देकर नवाब वजीरअली खाँ ने अपनी एक शर्त पेश की है। और उस शर्त के साथ मेरी जमानत-जिम्मेदारी को रिहन रख लिया है।"

"क्या शर्त रखी है उन्होंने ?" जान चेरी ने कासिमअली खाँ की तरफ गौर से देख कर कहा।

"इन हीरों को देते हुए नवाब वजीरअली खाँ ने फरमाया था कि इन बेशकीमती नायाब जवाहरातों के ऐवज में हमें अपनी पैंशन में इजाफा नहीं चाहिए। हमें हमारी अवध की रियासत वापस दिला दी जाए। अगर किसी वजह से पूरी रियासत वापस नहीं दिलाई जा सकती तो आधी ही दिला दी जाए।"

जान चेरी सन्नाटे में आ गए। उनके सारे मंसूबों पर ओस पड़ गई। चेहरे का रंग बदल गया। उदासी सी छा गई। जरा देर की खामोशी के बाद धीरे से कहा—"गलत है। बिलकुल गलत है। अवध इलाके का एक कोना भी नवाब वजीरअली खाँ को

वापस मिलना नामुमकिन है। अगर उन्हें रियासत वापस मिलनी होती तो छीनी ही क्यों जाती ? उनकी यह शर्त हमारे काबू से बाहर है। हम उनकी पैंशन जरूर बढ़वा सकते हैं। पन्द्रह लाख सालाना तक की शिफारिश कर सकते हैं।"

"मगर नवाब वजीरअली खाँ अपने गुजारे में इजाफा नहीं चाहते। वह तो अपनी शर्त यानी रियासत-हुकूमत की वापसी के ही ऐवज में हीरे देना चाहते हैं।" फिर धीरे से कहा—"वह जिद्दी भी ऐसे हैं कि हरगिज अपनी बात से नहीं टल सकते। इस जिद् और नासमझी ने ही तो उन्हें यह दिन दिखाए हैं।"

"अगर ऐसा है तो आप उनके यह जवाहरात वापस ले जा सकते हैं। इनका एवज चुकाना हमारे बल-बूते से बाहर है।" जान चेरी ने हीरों पर लालच भरी नजर डाली।

कासिमअली खाँ ने बहुत विनीत स्वर से कहा—"हुजूर उनकी इस शर्त में मेरा कोई कसूर नहीं है। क्या करूँ, उनके मिजाज से मजबूर हूँ। हुजूर मुझे माफ फरमाएँगे।"

"हम समझते हैं।" जान चेरी ने धीरे से कहा—"आप उनके यह हीरे वापस ले जाएँ।" और उन्होंने हीरो की तश्तरी मेज पर से उठा कर उनकी तरफ बढ़ा दी और उठ कर दूसरे कमरे की तरफ चले गए।

कासिमअली खाँ हीरे लेकर नवाब वजीरअली खाँ के पास वापस आए। वजीर अली खाँ बैठे उनका इन्तजार कर रहे थे। हीरों की तश्तरी सामने रख कर जान चेरी का कहना शब्द-शब्द दोहरा दिया।

वजीरअली खाँ के चेहरे पर सुर्खी दौड़ पड़ी। गुस्सा भरे लहजे में धीरे से कहा—"हम इन चोट्टे अंग्रेजों को खूब जानते हैं। सिवा धोखेबाजी-दगाबाजी के इनके पास कुछ नहीं है।" क्रोध ने और जोर पकड़ा। आवाज देकर कनीज फातमा को बुलाया।

कनीज फातमा चेहरे पर नकाब डाले अन्दर से आ गई।

वजीरअली खाँ ने कहा—"जरा अन्दर से हावन दस्ता उठा ला।"

कनीज फातमा हावन दस्ता ले आई। नवाब ने वह पाँचो हीरे उसमें डाल कर चूरा बना डाला और कहा—"इस चूरे को कूड़े के ढेर में फेंक देना।"

कनीज फातमा ने आज्ञा का पालन किया। यह खेल देख कर कासिमअली खाँ बहुत दुखी हुए। नवाब के मिजाज का यह लड़कपन उन्हें अच्छा न लगा। बहुत जब्त करने पर भी जबान खुल गई—"हुजूर के मिजाज की तेजी और गुस्से ने ही लाख का घर खाक कर दिया। आखिर जवाहरातों का चूरा बना देने से क्या फायदा नजर आया ? हर इनसान अपना फायदा-नुकसान समझता है। मगर हुजूर...."

वजीरअली खाँ उसी क्रोध भरी तेजी से बोले—"चुप रहिए। शायद आप चाह रहे थे कि यह जवाहरात जान चेरी को मुफ्त में दे दिए जाएँ।"

"मैं क्या चाह रहा था यह खुदा ही जानता है।" कासिमअली खाँ ने कहा—आज तक मैंने नवाब आसफुद्दौला का ख्याल कर के आपकी अताअत फरमावरदारी की। आपके साथ लखनऊ से बनारस आया लेकिन अब तबीयत मजबूर कर रही है कि मैं लखनऊ वापस चला जाऊँ।"

वजीरअली खाँ ने तैश भरे लहजे से कहा—"बेहतर है। आप आज ही लखनऊ को कूच कर जाइए। हम भी नहीं चाहते कि आप लोग हमारे पास रहें।।" और वह उठ कर अन्दर जनानखाने में चले गए।

कासिमअली खाँ अपने डेरे में आए। अशरफअली खाँ तथा आफरीअली खाँ को सारा माजरा सुनाया और लखनऊ चलने की तैय्यारी करने लग गए। वह दोनों भी साथी बन गए। उसी शाम को कासिमअली खाँ ने रजोडेन्ट की खिदमत में हाजिर होकर हीरों का किस्सा बयान किया। और लखनऊ के रजीडेन्ट के नाम चिट्ठी हासिल की।

उन तीनों के कूच करने का वक्त आ गया। नवाब वजीरअली खाँ की निकाही बेगम यानी नवाब बन्नो बेगम अशरफअली खाँ की लड़की थीं। उनमें तथा वजीरअली खाँ में लखनऊ से मनमुटाव चला आ रहा था। एक दूसरे की सूरत से बेजार थे। अतः बाप के साथ नवाब बन्नो बेगम भी लग गईं। वजीरअली खाँ ने सुना मगर कोई रुकावट पैदा न की। कानो में तेल डाले बैठे रहे और वे चारों लखनऊ को कूच कर गए।

३०

नवाब वजीरअली खाँ के दिल में अंग्रेजों के प्रति विरोध भावना बहुत पुरानी थी। उनके अंतस में किशोरावस्था से ही उसका अंकुर उत्पन्न हो गया था। नवाब आसफुद्दौला के शासन काल में अंग्रेजों की ज्यादतियों को देख-सुन कर उनके दिल में एक प्रकार की कुढ़न पैदा हो चुकी थी। और जब उन्होंने मसनद पर कदम रखा तो उस कुढ़न में और भी चार चाँद लग गए। चार महीने बाद ही उनसे अवध की गद्दी छीन ली गई। वह दाने-दाने को मोहताज कर दिए गए। अपना घर-द्वार छोड़ कर बनारस आकर रहना पड़ा। अतः इस मोहताजी ने उस विरोध भावना को धक्के मार-मार कर, कंधे झखझोर कर सोने से जगा दिया था।

इधर जान चेरी के द्वारा हीरे जवाहरातों की घटना, करोड़ों की सम्पत्ति का खरल में कुट पिस कर कूड़े में मिल जाने से उनके अंतस में एक खलबली सी मचा दी थी। अंग्रेज जाति के प्रति घृणा ने पूर्णरूप से सचेत होकर उन्हें झखझोरना आरम्भ कर दिया था। देश में जमी मुट्ठी भर विदेशियों की सत्ता को देख कर वे अगाध चिन्ता-सागर

में डूबने-उतराने लग जाया करते थे। किन्तु कोई सहारा, कोई उपाय ऐसा ढूंढ़े नहीं मिलता था जिससे वह उस अथाह सागर को पार करके किनारे पर लग सकें। और हर समय वह इसी उधेड़ बुन में लीन रहा करते थे।

सबेरे का समय था। बेगम वजीरुन्निसा के साथ बैठ कर नाश्ता आदि करके वह दीवानखाने में आ बैठे थे। अकेले ही थे। अभी तक कोई मुसाहब सोहबती उनकी खिदमत में हाजिर नहीं हुआ था, जिससे कुछ इधर-उधर की बातें करके दिल बहलाया जा सके। अतः वही अंग्रेजों के प्रति दुर्भावना-घृणा उन्हें घेरे हुए थी। विचारों का ताँता लगा हुआ था। इन चोट्टों ने हमारे घर में घुस कर कैसे पैर फैला रखे हैं? कैसा रोब जमा रखा है? हमारी रियासत, हमारे बाप-दादों का कमाया हुआ मुल्क और उस पर ये बदजात अंग्रेज अपनी सत्ता अपनी हुकूमत कायम किए हुए हैं। जो जी में आता है बेखौफ कर गुजरते हैं? कोई हाथ-पैर हिलाने वाला नहीं है? कोई इनकी सत्ता को उखाड़ने वाला नहीं है। आज हम अपने घर से निकाल कर बाहर फेंक दिए गए हैं। अपने बाप-दादों के घर में कदम नहीं रख सकते? ये जिसे चाहें उसे रखें, जिसे चाहें उसे दें। कैसा अँधेर है? कोई उपाय, कोई तरकीब-तदवीर ऐसी नजर नहीं आती कि इन बदमाशों को इनकी बदमाशी का बदला दिया जाए। इन्हें मुल्क से निकाल बाहर कर दिया जाए।

ऐसे ही विचारों के सिलसिले में उन्हें सहसा महाराजा झाऊलाल की घटना याद आई। सोचने लगे—महाराजा झाऊलाल अवध राज्य के कितने शुभचिन्तक, कैसे स्वामि-भक्त थे। अपने स्वामी स्वर्गवासी नवाब आसफुद्दौला की परेशानियों को दूर करने के लिए, इनकी घाँधली से बचाने के लिए उन्होंने कुछ दूर की सोची थी। मगर उनकी सूझ सफल न हो पाई। इन कम्बख्तों ने उन्हें दूध की मक्खी की तरह लखनऊ से निकाल कर बाहर फेंक दिया....अब्बा की मृत्यु भी उनके विछोह के कारण हुई थी।

इस स्मरण ने नवाब वजीरअली खाँ को चौंका सा दिया। मानो उन्हें अपनी उलझन का छोर मिल गया। संभल कर बैठ गए। दिमाग में जो सुरसुराहट पैदा हुई थी उसकी गहराइयों को झाँकने लगे—क्यों न महाराजा झाऊलाल की सूझ-समझ को पुनः जगा कर सफल बनाया जाए....मुल्क में शक्तियों की अब भी कमी नहीं है।.... पड़ोस में बुन्देलखण्ड, बाँदा के गुसांई अनूपगिरि हिम्मत बहादुर, नवाब अली बहादुर हैं....ग्वालियर के महाराजा सेंधिया बहुत बड़ी शक्ति रखते हैं....राजस्थान की बड़ी-बड़ी रियासतों की राजपूती शक्ति भी है....यदि इन सभी शक्तियों का संगठन कर लिया जाए, सभी मिल कर अंग्रेजों की जड़ काटने के लिए कमर कस लें, तो जरा भी सन्देह नहीं कि अंग्रेजों की सत्ता भागी-भागी फिरती नजर आए और सात समन्दर पार ही जाकर सांस लें....नवाब ढाका, नवाब अरकाट तथा बादशाह काबुल को भी अपना बनाया जा सकता है....देश में अंग्रेजों की छावनियों में जो हिन्दुस्तानी सिपाही हैं, समझा-बुझा कर उन्हें

भी शामिल किया जा सकता है।

इस गुनताड़े ने नवाब वजीरअली खाँ के चेहरे का रंग बदल दिया। कसरती शरीर की नसों में जोशीला खून दौड़ पड़ा। ऐसा प्रतीत होने लगा मानो सफलता उनके सामने हाथ बाँधे खड़ी है। वह मसनद से उठ कर दीवानखाने में घूमने लगे। जरा देर चक्कर काटने के बाद उन्होंने दीवानखाने की एक खिड़की से झाँक कर बाहर की तरफ देखा। बाहर काफी धूप फैल रही थी। डेढ़ पहर दिन चढ़ चुका था। दीवानखाने के बाहरी बरामदे में जहांदारअली पहरेदार दीवार से टिका बैठा था। वजीरअली खाँ ने उसको आवाज दी। जहाँदारअली चौंक सा पड़ा। हड़बड़ा कर उठा और दीवानखाने में आकर हुक्म का इन्तजार करने लगा। वजीरअली खाँ ने कहा—"इतना दिन चढ़ गया। आज मुखाहिब लोगों में से किसी एक का भी पता नहीं है।" फिर जरा तेज स्वर से कहा—"सब के सब जाने कहाँ मर गए? जाकर एक-एक को बुला ला। कुत्ते की चाल जाना और बिल्ली की चाल आना।" और वह पुनः तेजी के साथ टहलने लग गए।

जहाँदारअली हुक्म पाकर चला गया।

कुछ देर बाद सभी मुसाहिबों ने आकर नवाब साहब को सलाम किया। उनके आते ही वजीरअली खाँ मसनद पर जम गए। आँखों का इशारा पाकर मुसाहिब लोग भी कालीनों पर जम गए।

एक क्षण की खामोशी के बाद वजीरअली खाँ ने मुसाहिबों की तरफ नजर घुमा कर कहा—"आप लोग आज अभी तक नींद में गरकाब थे? हम इन्तजार करते-करते थक गए।"

सभी मुसाहिबों ने कोई न कोई उजुर-बहाना-अर्ज करके माफी की इल्तजा की।

इसके बाद कुछ क्षण दीवानखाने का वातावरण मौन रहा। फिर वजीरअली खाँ के हुक्म से कोठी के बाहर फाटक आदि पर कड़े पहरे बैठ गए। किसी को आने देनी की मनाही हो गई। मुसाहिबों को हैरत हुई कि आज इस वक्त ऐसा क्यों हो रहा है। इसमें क्या राज है? लेकिन भेद मालूम करने की कोई हिम्मत न कर सका। सब नीची नजर किए बुत बने बैठे थे।

वजीरअली खाँ ने मर्दानअली खाँ की तरफ नजर उठा कर कहा—"मालूम है? कल नवाब कासिमअली खाँ वगैरह लखनऊ वापस चले गए। और अपने बाप नवाब अशरफअली खाँ के साथ हमारी निकाही बेगम साहिबा भी तशरीफ ले गईं।"

मर्दानअली बोला—"नवाब कासिमअली खाँ तो बहुत दिनों से लखनऊ वापस जाने का इरादा कर रहे थे। उनका दिल यहाँ नहीं लग रहा था। लेकिन बेगम साहिबा का चला जाना एक हैरत की बात है। वह क्यों तशरीफ ले गईं?"

"कुछ भी हैरत की बात नहीं है। हमारे सिर से झंझट टल गई।" नवाब ने लापरवाही के साथ कहा—"हम भी चाहते थे कि वह हमसे दूर ही रहें। जब उनका

हमारा दिल मेल नहीं खा रहा था तो उनका यहाँ रहना बेकार ही था। हमारे लिए एक परेशानी थी। हम बहुत खुश हैं।" फिर एक क्षण रुक कर कहा—"और कासिमअली खाँ वगैरह के चले जाने का भी हमें कोई अफसोस नहीं है। वह लोग भी हमारे लिए एक दर्द-सर थे। उनका तौर-तरीका इधर बहुत बदल गया था। कासिमअली खाँ ने कंधों पर नये पंख पैदा कर लिए थे। उड़-उड़ कर रजीडेन्ट की कोठी पर पहुँचने लग गए थे। इधर हमारे भी सगे बने रहना चाहते थे, उधर अंग्रेज बच्चे के आगे भी सिर झुकाना चाहते थे। खुशामद से उसे खुश रखना चाहते थे। मुमकिन है रजीडेन्ट ने उनके आगे कुछ टुकड़े फेंक रखे रहे हों। खैर, अल्ला-अल्ला खैर सल्ला।"

मर्दानअली बोला—"मालूम हुआ है कि चेरी साहब ने एक शिफारशी चिट्ठी भी लखनऊ के रजीडेन्ट के नाम लिख कर कासिमअली खाँ को दी है। उन्होंने उस चिट्ठी में उनके गुजर-बसर के लिए कम्पनी सरकार से कुछ गुजारा माहीना दिलवा देने की शिफारिश की है। इससे पता चलता है कि कासिमअली खाँ चेरी साहब की इसलाह से ही लखनऊ गए है।"

"अंग्रेजों की चालों को हम खूब समझते हैं।" वजीरअली खाँ ने गम्भीर होकर कहा। फिर जरा देर सन्नाटे में बैठे रहने के बाद कुछ और अधिक संजीदा हो गए और उसी हालत में बड़े गौर तथा भेद-भरी दृष्टि से मुसाहिबों की तरफ देखा।

मुसाहिब लोग उनकी उस नजर को देख कर कुछ चौंके। लेकिन कोई कुछ बोला नहीं। सब उनके चेहरे की तरफ ही देखने लगे।

नवाब बोले—"इस वक्त हम जानना चाहते हैं कि तुम सभी लोग हमारे सच्चे खैरख्वाह हमारे हुक्म को मानने वाले हो? आगे हम जिस रास्ते पर चलने के लिए कदम उठाना चाहते हैं तुमलोग भी सच्चे दिल से हमारा साथ दोगे या कासिमअली खाँ वगैरह की तरह लखनऊ का रास्ता नापने लग जाओगे?"

एक साथ चार-पाँच मुसाहिब बोल उठे—"आज हुजूर ये क्या फरमा रहे हैं? हमलोग हुजूर पर जान निसार करने वाले, हुजूर के वह साथी हैं कि मरते दम तक साये की तरह हुजूर के साथ लगे रहेंगे। हुजूर जिस रास्ते पर चलेंगे हमलोग आँखें बन्द करके बढ़ते नजर आएँगे।"

वारिसअली जोश के साथ बोला—"हम लोग कासिमअली खाँ नहीं हैं? हुजूर जिस तरह चाहें, हमें ठोंक-बजा कर देख लें।"

मर्दानअली बोला—"हमलोग हुजूर के बचपन के साथी हैं। क्या हुजूर ने अभी तक हमें नहीं परखा जो आज ऐसा फरमा रहे हैं?"

शेर खाँ बोला—"हजरत अपनी जबान मुबारिक से फरमाएँ तो सही? देखें कि हमलोग जलती आग में कूद कर खाक हो जाते हैं या नहीं।"

"ठीक है। हम यही जानना-सुनना चाहते थे ?" वजीरअली खाँ ने इतमीनान से कहा ?

जरा देर तक वातावरण मौन रहा। नवाब वजीरअली खाँ गम्भीर मुख-मुद्रा से किसी विचार में लीन रहे। फिर मुसाहिबों की तरफ देखा, बोले—"तुम लोगों के साथ हमें एक शर्त और करनी है। यानी हमने जो कुछ सोचा है, जिस रास्ते पर चलने का इरादा किया है, उसे जाहिर करने से पहले तुमलोग यह शर्त बदो, ये कसम लो कि उसकी खबर तुमलोगों के सिवा किसी गैर को न होगी ? क्योंकि हमारा सोचा-विचारा हुआ बहुत राजदार और खतरनाक है। उसे अपने दिलों में छिपा कर रखने और अमल करने की जरूरत है।"

"खुदा रसूल और कुराने-पाक हमारे दरमियान है ?" मुसाहिबों की जवान से निकली हुई आवाज गूंज गई।

"अच्छा सुनो ?" वजीरअली खाँ ने गम्भीरतापूर्वक कहना शुरू किया—"आज जो हुकूमत हमारे मुल्क पर हावी है। जो ताकत अपने काले कारनामों से मुल्क के छोटे-बड़े सभी हुक्मरानों को तबाह किये है और रोज-ब-रोज तबाह करती चली जा रही है, वह किसी से छिपी नहीं है। तुम लोग भी उसे अच्छी तरह जानते-समझते होगे। वह ताकत, वह हुकूमत अंग्रेजों की है। अंग्रेजों की कम्पनी सरकार अपनी मनमानी और धाँधली कुछ इस तरह करने पर आमादा हो गई है कि आज हर समझदार की बर्दाश्त से बाहर है। तुम सब को मालूम है कि अंग्रेजों ने बेवजह हमसे अवध रियासत छीन कर दूसरे को बख्श दी और आज हम इस बनारस में बेवतनी, बेसरोसामानी की जिन्दगी बसर कर रहे हैं। इसलिए जरूरी है कि उस ताकत के मुकाबले पर खड़ा हुआ जाए। उसे मुल्क से उखाड़ फेंकने की कोशिश की जाए। उसे मुल्क से एकदम नेस्त-नाबूत कर दिया जाए।"

नवाब के साँस लेते ही एक मुसाहिब ने कहा—"बहुत ही वजा इर्शाद है। इन मुट्ठी भर अंग्रेजों ने सारे मुल्क में तहलका मचा रखा है। उसके ऐवज में इन्हें जरूर सबक मिलना चाहिए।"

वजीरअली खाँ पुनः गम्भीर स्वर से बोले—"आज तक किसी ने भी इस बात को नहीं सोचा और न कोई अंग्रेजों की मोखालफत पर खड़ा हुआ। लखनऊ में महाराजा झाऊलाल ने जरूर इस पर गौर किया था और कुछ करना चाहा था मगर बेचारे नाकामयाब रहे। उनकी नाकामयाबी की एक वजह यह भी थी कि कोई उनका साथी न था। अकेला चना किस तरह भाड़ फोड़ सकता था ? हमारे साथ तुम सब लोग हो। इसलिए हमें उम्मीद है कि हम अपने इरादे में जरूर ही नहीं विलाशक कामयाब होंगे।"

इसके बाद अँग्रेजों की सत्ता को उखाड़ने के लिए वजीरअली खाँ ने जो कुछ सोचा-विचारा था, हिन्दुस्तान की जिन मौजूदा ताकतों की सहायता लेकर आगे कदम

बढ़ाना चाहा था, सविस्तार मुसाहिबों को बताया।

दिलावरअली बोला—"बहुत बेहतर योजना है। अपने हिन्दुस्तान की इन ताकतों को एक कर लेने से आन की आन में अँग्रेजों को सात समन्दर पार खदेड़ा जा सकता है। अभी तक अँग्रेजों ने सही तरीके से हिन्दुस्तानी तलवार की चमक को नहीं देखा, उसकी धार का अनुभव नहीं किया। कमबख्तों को भागते राह नहीं मिलेगी। सारी तिकड़मबाजी भूल जाएगी।"

मीर इज्जतअली ने कहा—"हुजूरवाला से मेरी अर्ज है कि इसी वक्त हम सब को काम बाँट दिए जाएँ। और हम लोग उसे गाँठ में बाँध कर पूरा करने के लिए कदम आगे बढ़ा दें। देर करने की जरूरत नहीं है। एक हिन्दी कहावत है—'काल करंते आज कर और आज करंते अब'।"

"ऐसा नहीं?" वजीरअली खाँ ने कहा—"हम अपनी तरफ से किसी को काम नहीं सौंपना चाहते। जो शख्स जिस काम को चुस्ती, चालाकी, होशियारी और समझदारी से अंजाम दे सकता हो, उसमें पूरी कामयाबी हासिल कर सकता हो, वह खुद उसके लिए कमरबस्ता हो जाए। हमने तो अपने इरादे और योजना से आगाह कर दिया। अब उसे सफल बनाना आपलोगों का काम है। शर्त यही है कि सभी मददगारों से ऐसे पक्के वायदे ले लिए जाएँ कि एक ही दिन तारीख में मुखालफत का झंडा-निशान हर तरफ खड़ा हो जाए। क्योंकि चारों तरफ से मार पड़ने पर ही दुश्मनों के पैर डगमगा सकते हैं।"

एक क्षण खामोशी का वातावरण रहने के बाद बहादुरअली ने कहा—"आला हजरत, बुन्देलखण्ड का काम कमतरीन अपने जिम्मे ले रहा है। मैं कल सुबह ही उधर को कूच कर जाऊँगा और वहाँ पहुँच कर बाँदा के नवाब अलीबहादुर और हिम्मत बहादुर गुसाईं अनूप गिरि को अपने मतलब के लिए राजी-तैय्यार कर लूँगा। उनके अलावा उधर की छोटी-मोटी दूसरी ताकतों को भी राह पर ले आऊँगा।"

"हमें मंजूर है?" वजीरअली खाँ ने कहा—"लेकिन पूरी खबरदारी के साथ अपना मतलब पूरा किया जाय। उन लोगों को इस तरह ऊँचा-नीचा समझाया जाए, हमारे इरादे का इस तरीके से इजहार किया जाए कि वह लोग फौरन साथ देने को तैय्यार हो जाएँ इसी में तुम्हारे काम की खूबी होगी।"

"बन्दा अभी कुछ नहीं कहता।" बहादुरअली ने सगर्व कहा।

"लौटने पर मेरी कारगुजारी हुजूर के सामने रोशन हो जाएगी। लेकिन एक अर्ज है।"

"क्या?" वजीरअली खाँ ने पूछा।

"हुजूर एक चिट्ठी अपनी कलम से लिख कर और मोहर करके नवाब अलीबहादुर और गुसाईं अनूपगिरि को दे दें।"

"चिट्ठियाँ और अपने इरादे का पूरी-पूरी कैफियत तो हम हर एक मददगार को अभी लिख कर दे देंगे। बिला हमारी चिट्ठी और इरादे की खुली कैफियत के कैसे काम पूरा पड़ेगा ?" उन्होंने इतमीनान से कहा।

बुन्देलखण्ड का मसला तय हो गया।

मर्दानअली बोला—"अगर हुजूर पसन्द फरमाएँ तो मैं महाराज सिंधिया के पास ग्वालियर चला जाऊँ ?"

वज़ीरअली खाँ से कोई जवाब मिलने के पहले वफा बेग मर्दानअली की तरफ मुड़ कर बोला—"हर्गिज नहीं ? चार यारों में से एक भी बाहर नहीं जाएगा। यहाँ हुजूर के पास भी तो कुछ लोगों को रहना चाहिए। बाहर जाने के लिए हमलोग काफी हैं। ग्वालियर मैं जाऊँगा।" फिर वजीरअली खाँ की तरफ रुख करके कहा—"हुजूर, महाराज महादजी सिंधिया से मिलने और उन्हें अपने मतलब के लिए तैय्यार कर लेने में मुझे आसानी भी है। वहाँ मेरे मामूँ रहते हैं। बारूदखाने के दारोगा हैं। सिंधिया की उन पर इनायत रहती है। उनके जरिए सब काम बन जाएगा।"

"बेहतर है ?" वजीरअली ने कहा।

"नवाब शमशुद्दौला के पास ढाका फिदवी जा रहा है।" वारिसअली ने कहा।

"ठीक है।" वजीरअली खाँ ने कहा—"शमशुद्दौला से और बादशाह काबुल से काफी राह-रसम है। उन्हीं के जरिए हमारी चिट्ठी काबुल भिजवा देना। वह अपनी तरफ से भी जो कुछ और लिखना चाहें बादशाह शाहजमाँ को लिख देंगे।"

मोहम्मद इसहाक ने राजपूताने का सफर अपने जिम्मे ले लिया। रहीम खाँ अर्काट जाने को तैय्यार हो गया।

नवाब वजीरअली खाँ ने उसी समय कलमदान मँगा कर सबके के नाम चिट्ठियाँ लिख कर जाने वालों के हवाले कर दी।

इसके बाद वजीरअली खाँ ने कहा—"अब सिर्फ एक बात ही बाकी रह गई है।"

सब लोग उनके चेहरे की ओर देखने लगे।

"मगर वह बाकी रहने वाली बात जरा टेढ़ी-सी है। लेकिन यह भी एक हकीकत है कि अगर वह आसान हो जाय तो हमारे हंगामे में चार चाँद लग जाएँगे। अँग्रेजों के हाथ-पैर फूल जाएँगे।"

"वह क्या बात है हुजूर ?" मीर इज्जतअली ने पूछा।

"अँग्रेजों की फौजी छावनियों में जो हिन्दुस्तानी सिपाही हैं। उन्हें भी मुखालिफ बना कर हंगामे में शरीक कर लेना जरूरी है। लेकिन यह काम बनिसबत औरों के बहुत मुश्किल मालूम होता है। छावनियों में घुस कर सिपाहियों को उभारना, मुखालफत के लिए तैय्यार करना, एक टेढ़ी खीर है। अगर पड़ोस की सकरौर छावनी के ही

हिन्दुस्तानी सिपाही हमारा साथ दे जाएँ तो बहुत कुछ बात बन जाए। उन्हें देख कर दूसरी छावनियों के सिपाहियों में जोश पैदा हो सकता है और वह भी हंगामे में शरीक हो सकते हैं।"

इज्जतअली सगर्व बोला—"हुजूर की यह मंशा भी पूरी हो जाएगी। ये काम बन्दा पूरा करेगा।"

वजीरअली खाँ ने उनकी तरफ देखा। नजर में सम्मान भरा हुआ था। बोले—"मीर इज्जतअली! हम तुम्हारी हिम्मत और जवाँमर्दी की कदर करते हैं। लेकिन काम उतना आसान नहीं है जितना तुम समझ रहे हो। फिर अगर छावनी के अँग्रेज अफसरों को इस राज का जरा भी पता चल गया तो सारा गुड़ मिट्टी हो जाएगा। बना बनाया खेल चौपट हो जाएगा।"

"हुजूर का फरमाना सही है।" इज्जतअली ने कहा—"मैं भी इसे अच्छी तरह समझता हूँ। लेकिन इंसान क्या नहीं कर सकता? सब की आँखों में धूल झोंक कर अपना मतलब पूरा करके न लौटा तो मेरा इज्जतअली नाम नहीं। आप वहाँ जाने की इजाजत तो दीजिए।"

"हमारी तरफ से इजाजत ही है। लेकिन काम बहुत टेढ़ा है।"

"कुछ भी टेढ़ा नहीं है। हुजूर का इकबाल उस टेढ़े को सीधा बना देगा।"

तभी अन्दर से एक कनीज ने आकर अर्ज किया—"हुजूर दस्तरख्वान लग चुका है। बेगम साहिबा इन्तजार कर रही हैं।"

वजीरअली खाँ ने सभी मुसाहिबों की तरफ देख कर कहा—"अच्छा, हमारी कामयाबी आप लोगों की चुस्ती होशियारी पर ही मुनस्सर है। आगे खुदा हाफिज।" वह उठ कर जनानखाने की तरफ चले गए।

मोसाहिब लोग भी चले गए।

उसी दिन तीसरे पहर जब चार यार नवाब वजीरअली खाँ की खिदमत में हाजिर हुए, उन्होंने उन चारों के सामने अपनी एक दूसरी योजना रखी। उन चारों को बनारस के इर्द-गिर्द, अड़ोस-पड़ोस के देहातों-गाँवों में जाने का हुक्म दिया। समझाया कि देहातों-गाँवों में जाकर तुमलोग चुपचाप पूरी खामोशी और राजदारी के साथ वहाँ के तीन-चार हजार नौजवानों को तैय्यार करो ताकि उन्हें नौकर रखा जाए। उन्हें तीन माह की तनखाह पेशगी चुका दी जाए। वह लोग अपने मकानों पर ही मौजूद रहें। अभी उनसे कुछ भी काम नहीं लिया जाएगा। हमारा हंगामा शुरू होने पर उनकी जरूरत होगी, उसी वक्त उनसे काम लिया जाएगा। अभी उन लोगों से सिर्फ इतना ही काम लिया जाएगा कि चार-पाँच सौ जवानों के जत्थे बारी-बारी से रोजाना हमारे पास सुबह कोठी में हाजिर हुआ करें। इस हाजरी का मतलब हम बाद में बताएँगे।"

आदेश पाकर चार यार गाँवों का चक्कर काटने लग गए। और उनके इस

अथक परिश्रम से दस-पाँच दिन में ही कई हजार जवान नौकर बन गए तथा चार पाँच सौ जवान प्रतिदिन सबेरे अपने-अपने गाँव-घरों से आकर दुर्गाकुण्ड की कोठी पर हाजिर होने लग गए।

दुर्गाकुण्ड की कोठी के अहाते के भीतर एक लम्बा-चौड़ा बड़ा-सा अखाड़ा तैयार कराया गया। लेजम, मुग्दर, भाला, तलवार, छुरी, कटार आदि काफी संख्या में जमा किए गए। देहाती नवयुवकों की जो टोलियाँ आया करतीं वे लँगोट बाँध कर अखाड़े में उतरा करतीं। चार यार भी उन्हीं के साथ अखाड़े में उतरते। बैठकें लगाई जातीं, लेजम मुग्दर हिलाए जाते और भाला-तलवार, छुरी-कटार आदि हथियारों के चलाने का अभ्यास किया जाता। लिपटन्त, कुश्ती और दाँव-पेंचों की भी मश्क की जाती थी। नवाबअली खाँ वहीं अखाड़े के सामने बरामदे में कुर्सी नशीन रहा करते थे और एक-एक जवान का दिल बढ़ाते रहते थे। इस समय बाहर का कोई गैर व्यक्ति वहाँ कोठी के अहाते के अन्दर नहीं आने पाता था। अहाते का फाटक बन्द रहता था और कड़े पहरे बैठे रहते थे।

सर्व साधारण में यह खेल-तमाशा नवाब वजीरअली खाँ का एक मशगला तथा दिल बहलाव का रंग-ढंग, तौर-तरीका मशहूर था। बल्कि कोठी के नौकर-चाकर तक नहीं जानते थे कि इसके पीछे क्या राज छिपा हुआ है। वह लोग भी इसे युवक नवाब का एक शौक ही समझते थे। क्योंकि यह सभी जानते थे कि नवाब वजीरअली खाँ को बचपन से कसरत का शौक है, इसलिए यह कोई नई बात नहीं समझी जाती थी।

३१

दुर्गाकुण्ड की कोठी में बड़े सबेरे से अखाड़ा गरम था। चार-पाँच सौ देहाती नवयुवक लँगोट बाँधे, अखाड़े की मिट्टी देह पर मले बड़े उत्साह, उमंग तथा लगन के साथ अपने-अपने अभ्यासों में तल्लीन थे। कुछ बैठकें लगा रहे थे, कुछ लेजम मुग्दर हिला रहे थे और कुछ तलवार-भाले, छुरी कटार आदि धारदार हथियारों को चलाने का अभ्यास कर रहे थे। अखाड़े में एक तरफ लिपटन्त भी हो रही थी। दाँव-पेंच लगाए जा रहे थे। एक दूसरी तरफ बन्दूकों से निशानेबाजी भी हो रही थी। नवाब वजीरअली खाँ कुर्सी पर डटे बैठे थे। एक-एक का दिल बढ़ा रहे थे। दिन का पहला पहर समाप्ति पर आ गया था, किन्तु अखाड़ा अभी गरम था।

सहसा अहाते के बन्द फाटक पर शाहजादे मिरजा मुजफ्फर बख्त का घोड़ा आकर रुक गया। पहरे पर चाक-चौबन्द पहरेदारों ने उन्हें सलाम बजाया, क्योंकि शाहजादे

नवाब वजीरअली खाँ के विशेष मिलने वाले थे। अकसर कोठी में आया-जाया करते थे। इसलिए कोठी का प्रत्येक नौकर उन्हें जानता-पहचानता था। शाहजादे ने फाटक खोलने के लिए कहा।

एक पहरेदार ने नम्रतापूर्वक अर्ज किया—"हुजूर, बिना नवाब साहब की आज्ञा के इस समय फाटक नहीं खोला जा सकता। खोल देने पर हमारी जान जोखम में पड़ जाएगी।"

"क्यों ?" शाहजादे ने कुछ आश्चर्य से पूछा।

"नवाब साहब का ऐसा ही आदेश है।"

"खैर," शाहजादे ने सहज भाव से कहा—"ठीक है। तब हमारे आने की खबर नवाब वजीरअली खाँ तक पहुँचा दो।" और वह मचलते हुए घोड़े को सँभालने लगे।

एक पहरेदार ने फाटक के भीतर वाले एक दूसरे पहरेदार को इशारे से अपने निकट बुला कर नवाब वजीरअली को शाहजादे के आने की खबर करने को कहा। उसने जाकर नवाब से इत्तला की और नवाब ने फाटक खोल कर उन्हें अन्दर दाखिल कर लेने की इजाजत दे दी। पहरेदार ने फाटक खोला और शाहजादे का घोड़ा अन्दर दाखिल हो जाने पर पुनः फाटक बन्द हो गया।

शाहजादे मिरजा मुजफ्फर बख्त घोड़े से उतर कर बरामदे में पहुँचे। वजीरअली खाँ ने उठ कर उनका स्वागत किया। दूसरी कुर्सी आ गई। शाहजादे कुर्सीनशीन हो गए। अखाड़चियों का खेल-तमाशा देखते हुए शाहजादे मुस्कराए किन्तु मौन ही रहे। कुछ देर में अखाड़ा ठण्डा हो गया। अखाड़ची नवयुवक अपने-अपने कपड़े पहिन कर नवाब वजीरअली खाँ के सामने आए और कायदे से सलाम किया। वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए उन सबको अपने-अपने गाँव घर जाने की इजाजत दे दी। और वे सब चले गए। उनके जाने के बाद वजीरअली खाँ वहाँ से उठ कर शाहजादे को साथ लिए दीवानखाने में आ गए और दोनों मसनदों तकियों पर आसीन हो गए।

शाहजादे मिरजा मुजफ्फर बख्त ने मुसकराते हुए कहा—"आपने यह नया मशगला कब से अख्तियार किया ? यह अखाड़ा कब से गरम होने लगा ?"

"यह तो हमारा पुराना शौक और मशगला है।" नवाब ने कहा—"बचपन से हमें अखाड़े में उतरने का शौक है। और कामों मशगलों में नागा भी हो सकता है। लेकिन कसरत में कभी नागा नहीं हो सकता। अखाड़े में उतर कर कुछ देर लेजम मुग्दर हिला लेना, जोर आजमाई कर लेना हम अपनी एक खुराक समझते हैं।"

"इसकी गवाही तो खुद आपका पहलवानी जिस्म दे रहा है।" शाहजादे ने मुस्कराते हुए कहा—"वाकई आप एक पहलवान हैं।"

"भाई साहब ! आप हमारे पहलवानी जिस्म पर नजर न लगा दीजिएगा ?"

"लेकिन हमें हैरत तो इस बात पर है कि ये इतने देहाती नौजवान कहाँ से आकर

आपके अखाड़े में शरीक हो जाते हैं ?"

वजीरअली खाँ ने अपने राज-भेद को छिपाने के अभिप्राय से कहा—"जिन्हें पहलवान बनने का शौक है वे आकर जमा हो जाया करते हैं। आप जानते हैं कि दंगल-मंगल हर जगह होते रहते हैं। फिर बनारसी पहलवान तो मशहूर हैं। हमारी पहलवानी का पता पाकर जोर आजमाई को नौजवान लोग आ जाया करते हैं। हमारा भी वक्त कट जाता है।"

जरा देर खामोश रहने के बाद शाहजादे ने कहा—"हमने सुना है कि कुछ लोग आपका साथ छोड़ कर बनारस से लखनऊ वापस चले गए हैं ?"

"ऊँह," नवाब ने लापरवाही से कुछ मुँह बिगाड़ कर कहा—"ऐसे दगाबाजों, बेईमानों का चला जाना ही अच्छा था। वे लोग हमारे लिए एक दर्द सर ही थे।"

"क्या वह लोग बेईमान-दगाबाज थे ?" शाहजाद ने कुछ हैरत से कहा—"लखनऊ से तो आपके साथ आए थे ?"

"साथ आए थे तो क्या हुआ ?" वजीरअली खाँ ने गम्भीर स्वर-लहजे से कहा—"ऐसे ही दगाबाजों ने हमें ये दिन दिखाए हैं। लखनऊ में जिस तरह हमारे साथ दगा करते रहे, वही तरीका यहाँ भी उन लोगों का था।"

शाहजादे मिरजा मुजफ्फर बहुत कुछ नहीं बोले। उन्हें प्यास लग रही थी, इस-लिए इधर-उधर नजर घुमा कर धीरे से कहा—"कोई है नहीं ? प्यास सता रही है।"

वजीरअली खाँ ने आवाज देकर पानी मँगाया।

अन्दर से कनोज फातमा चाँदी के थाल में सोने के गिलास में, जिस पर रेशमी रूमाल पड़ा था पानी लेकर आ गई। उसके चेहरे पर झीनी रंगीन नकाब पड़ी हुई थी। जिसके अन्दर से उसके चेहरे का हुस्नो जमाल तथा चुस्त चालाक बड़ी-बड़ी दो आँखें झलक रही थीं। उसने बड़े अदब कायदे के साथ शाहजादे को पानी पेश किया। शाहजादे ने प्यास बुझा कर गिलास थाल में रखते हुए एक बार गौर से उसकी तरफ देखा। कनीज फातमा ने भी अपने झीने नकाब से उन्हें देखा, पहचाना और चली गई।

उसके चले जाने के बाद शाहजादे ने वजीरअली खाँ की तरफ मुड़ कर कहा—"ये कहाँ की कौन कनीज है ? क्या इसे आप लखनऊ से अपने साथ लाए थे ?"

"जी नहीं, यह लखनऊ की कनीज नहीं है। लखनऊ से जो कनीज हमारे साथ आई थी, वह यहाँ आते ही कजा कर गई। यह यहीं बनारस की रहने वाली हैं।"

"लेकिन बहुत सलीकेदार मालूम होती हैं।"

"हाँ, बनिसबत औरों के तमीजदार है।" वजीरअली खाँ ने कहा—"लखनऊ की कनीजों के अदब कायदे को तो नहीं पा सकती मगर फिर भी गनीमत है।"

कनीज फातमा पानों की तश्तरी लाकर अदब कायदे से शाहजादे के सामने रख कर चली गई। शाहजादे साहब एक पान की गिलौरी उठा कर मुँह में रखा। एक क्षण

उसे एक रस करते रहे फिर बोले—"आपने नवाब सआदतअली खाँ का एक किस्सा सुना है ?"

"क्या ?" वजीरअली खाँ ने गौर से उनकी तरफ देखा।

"हमें दिल्ली से एक आने वाले ने बताया था।" शाहजादे ने कहा—"किस्सा यों है कि नवाब सआदतअली खाँ ने बादशाह दिल्ली से अपना खानदानी वजारत का दर्जा-मर्तबा और खिलअत हासिल करने की कोशिश की थी। किसी लुत्फअली खाँ नाम के अपने खास ऐतवारी को बादशाह सलामत की खिदमत में भेजा था। नजर नजराना भी कुछ इर्साल किया था।"

"तब ?" वजीरअली खाँ ने कुछ आश्चर्य के भाव से पूछा—"बादशाह सलामत ने खिताब के साथ उन्हें खिलअत बख्श दी ?"

"अजी, इस वक्त दिल्ली की बादशाहत का भी अजीब नकशा है।" शाहजादे ने कहा—"बादशाह हजरत शाह आलम तो कोरे नाम के बादशाह हैं। बादशाहत तो कर रहा है निजामुद्दीन।"

"निजामुद्दीन कौन है ?" वजीरअली ने अनभिज्ञता के भाव से पूछा।

"निजामुद्दीन महादजी सिंधिया की तरफ से रखा गया दिल्ली का सूबेदार है।" फिर जरा रुक कर कहा—"और यों समझना चाहिए कि इस वक्त महाराजा सिंधिया ही दिल्ली की बादशाहत को जिन्दा बनाए हुए हैं। वरना गुलाम कादिर रुहेला ने तो उसे खतम ही कर दिया था।"

वजीरअली खाँ ने गम्भीर स्वर से कहा—"तब इसके मानी ये समझ में आते हैं कि आज इस हिन्दुस्तान में महाराजा सिंधिया की बहुत बड़ी ताकत है।" और वह कुछ सोचने-से लग गए।

"इसमें क्या शक है।" शाहजादे ने कहा—"आज अपने मुल्क में जिस कदर भी देशी ताकतें हैं सिंधिया की ताकत उन सबसे जबर्दस्त है।"

"हम समझते हैं कि अगर महाराजा सिंधिया चाहें तो अंग्रेजों की सत्ता को भी उखाड़ सकते हैं ?"

"उनकी ताकत तो ऐसी ही है।" शाहजादे ने कहा—"लेकिन अंग्रेजों की सत्ता को उखड़ने में अकेले सिंधिया की ताकत ही काम नहीं कर सकती। अगर उनकी ताकत के साथ मुल्क की दो चार और ताकतें भी मिल जाएँ और सब अंग्रेजी हुकूमत को खतम कर देने पर तुल जाएँ तो बिलाशक कामयाबी हासिल हो सकती है।"

वजीरअली खाँ खामोश रह कर किसी विचार से उलझ गए।

शाहजादे ने उनके चेहरे पर नजर डाल कर कहा—"आप फिर गहराई में डूब गए ? वह सआदतअली खाँ वाला किस्सा तो अधूरा ही रह गया।"

"कुछ नहीं ?" वजीरअली खाँ ने सिर उठा कर कहा—"हाँ, तब क्या हुआ

निजामुद्दीन ने कोई अड़ंगा डाल दिया ?"

"निजामुद्दीन भी एक-ही है।" शाहजादे ने संजीदा स्वर से कहा—"उसने कहा, बजारत के मर्तबे की खिलअत बादशाह दिल्ली से सआदतअली खाँ को उसी वक्त हासिल हो सकती है जब वह मेरी कुछ शर्तों को पूरा कर दें। और शर्तों को सुनते ही सआदत-अली खाँ के सफीर लुत्फअली खाँ के ताजिए ठण्डे हो गए।"

"निजामुद्दीन की क्या शर्तें थीं ?"

शाहजादे साहब मुस्कराए, फिर बोले—"निजामुद्दीन ने लुत्फअली खाँ से कहा—नवाब सआदतअली खाँ को लखनऊ की मसनद पर बैठ कर नवाब वजीरअली खाँ का जिस कदर नकद और जिस हाथ आया है वह सब जब्ती के कायदे तरीके से बादशाह दिल्ली के खजाने में दाखिल किया जाए। उसके बाद बजारत का मर्तबा और खिलअत अता होने के बारे में जो नजर नजराना मुनासिब समझा जाएगा तलब किया जाएगा और उसके दाखिल हो जाने पर उनको खिलअत बख्श दी जाएगी। बस, मामला खटाई में पड़ गया। लुत्फअली खाँ ने हिम्मत करके एक बार फिर बादशाह सलामत से अर्ज किया। वह भला निजामुद्दीन के खिलाफ कैसे जा सकते थे ? साफ जवाब दे दिया कि निजामुद्दीन का कहना ही हमारा कहना है। जब हर तरफ से टका सा जवाब मिल गया तो सआदतअली खाँ ने अपने दिल की भड़ास यों निकाली कि अवध के खजाने से बाद-शाह दिल्ली के बावर्चीखाने के लिए सात हजार रुपया माहवार भेजा जाता था उसे भेजना बन्द कर दिया है।" फिर हँस कर कहा—"इस तौर तरीके से वह बादशाह दिल्ली की नजरों-ख्यालों से गिर गए हैं।"

"काश वह दुनिया की नजरों से गिर जाएँ।" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा। फिर शाहजादे की तरफ देख कर कहा—"भाई-साहब ! अब सआदतअली खाँ को बाद-शाह दिल्ली की क्या परवाह है ? क्या वास्ता गरज है ? अंग्रेज तो उनकी पुश्तपनाह के लिए मौजूद हैं।"

"आप नहीं समझते ?" मुजफ्फर वख्त ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"अंग्रेज वह बन्दर हैं कि हाथ के चने भी खा लेंगे और काट-नोच भी लेंगे। ये किसी के भी सगे नहीं कहे जा सकते। सिर्फ अपने मतलब के सगे हैं। इधर टुकड़ा फेंक कर अपना मतलब साधना, उधर टुकड़ा फेंक कर अपना मतलब साधना, यही अंग्रेजों का काम है। इसी चमगादड़ी करतब के बदौलत इस जाति ने हमारे मुल्क पर कब्जा कर रखा है।" फिर धीरे से कहा—"खुदा जाने कब इन बदजातों को गारत करेगा, कब ये हमारे मुल्क से टलेंगे।"

"जब वक्त आएगा, गारत भी हो जाएँगे और मुल्क से भी टल जाएँ।" उन्होंने भी धीरे से कहा।

"जाने कब वक्त आएगा !"

"दुआ कीजिए ? आपके दुआ करने से बहुत जल्द वक्त आएगा। और वजीरअली

खाँ हँस पड़े।

शाहजादे भी हँसने लगे।

इसके बाद मुजफ्फर बख्त चलने को तैयार हुए। बोले—"आप हमारी तरफ कब तशरीफ लाएँगे? आपके बगैर महफिलें सूनी ही रहा करती हैं।" और वह उठ कर खड़े हो गए।

"देखिए, किसी दिन हाजिर हूँगा।"

शाहजादा मुजफ्फर बख्त चले गए। उन्हें बाहर तक पहुँचा कर वजीरअली खाँ जैसे ही दीवानखाने में लौटे मर्दानअली खाँ ने आकर सलाम किया। वजीरअली खाँ मसनद पर बैठ गए। मर्दानअली भी बैठ गया और बोला—"हुजूर मैं इस वक्त इसलिए हाजिर हुआ हूँ कि कल कुछ रुपयों की जरूरत होगी। क्योंकि देहाती जवानों की तादाद काफी बढ़ गई है। पिछले हफ्ते जो रकम अता फरमाई गई थी वह खतम हो गई है। करीब डेढ़ हजार जवान जो इस हफ्ते में नौकर रखे गए हैं, कल उन्हें पेशगी तनखाहें देनी पड़ेंगी।"

"ठीक है। हम शाम को रुपया तुम्हारे हवाले कर देंगे।" फिर जरा रुक कर कहा—"मुसाहिबों में से अभी तक कोई वापस नहीं आया।"

"हुजूर! वह लोग अपना काम पूरा कर लेने पर ही वापस आएँगे। फिर मंजिलें भी तो दूर-दर-दूर की हैं।"

इसके बाद मर्दानअली चला गया। वजीरअली खाँ भी उठ कर जनानखाने की तरफ चले गए। नवाब वजीरुन्निसा बेगम अपने कमरे से बाहर आ गईं।

वजीरअली खाँ ने उनसे पूछा—"क्या तुम्हारे पास अशर्फियों के एक दो तोड़े हैं?"

"एक दो का क्या जिक्र है?" बेगम ने मुस्कराते हुए कहा—"हमारे पास अशर्फियों के तोड़ों का ढेर है।"

"मजाक नहीं, सच बताओ?" उन्होंने गम्भीर लहजे से कहा।

"मजाक नहीं करती हूँ सच ही अर्ज कर रही हूँ।" बेगम ने भी संजीदा होकर कहा—"लखनऊ से अशर्फियों के जितने भी तोड़े साथ लाए गए थे सभी ज्यों-के-त्यों मौजूद हैं। उन्हें खर्च करने की अभी तक कोई जरूरत ही सामने नहीं आई।"

"तब उनमें से एक दो तोड़े हमें दे सकती हो?"

"क्या कीजिएगा?"

"जरूरत है।"

"हमारे कब्जे की जो भी दौलत है, हुजूर की ही है। जो चाहें हुजूर ले सकते हैं। खर्च कर सकते हैं।" फिर जरा मुस्करा कर कहा—"क्या अशर्फियों को भी जवाहरातों की तरह खरल के हवाले करना चाहते हैं?"

"उन्हें खरल के हवाले नहीं करना चाहते। बल्कि उनके जरिए उन खरल वाले जवाहरातों वगैरह की पूरी कीमत वसूल करना है।"

"वह किस तरह ?" बेगम ने जरा आश्चर्य के साथ पूछा।

"हम एक दाँव लगा रहे हैं।"

"कोई जुआ खेल रहे हैं।"

"ऐसा ही समझ लो ?"

"जुआ मत खेलिए !" बेगम ने गम्भीर होकर कहा—"जुआ खेलना और दाँव लगाना बहुत ही बदतर मशगला है।"

"मगर वह जुआ खेलना और दाँव लगाना बहुत जरूरी है। बिला उसके हमें चैन नहीं मिल रही।" वजीरअली खाँ ने अधिक गम्भीर होकर कहा।

"हमारी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा ?" बेगम ने कहा—"जरा साफ तौर पर कहिए।"

"अभी साफ कहने की जरूरत नहीं है। खेल शुरू हो जाने दो। तुम खुद ही समझ जाओगी। थोड़ा इन्तजार करो।"

बेगम नीची नजर किए दो क्षण खामोश रहीं। फिर उनकी तरफ देख कर कहा—"जब जी चाहे अशर्फियों के तोड़े ले लीजिएगा। धन-दौलत की क्या बात है, अगर हुजूर चाहें हमारी जान भी दाँव पर लगा सकते हैं।" और वह मुस्करा कर रह गईं।

"हम अपनी और तुम्हारी, दोनों की जानें दाँव पर लगाएँगे।"

इसके बाद नवाब और बेगम, एक दूसरे को आलिंगन किए एक कमरे की तरफ चले गए।

कनीज फातमा एक बरामदे में चुपचाप खड़ी कान लगाए नवाब वजीरअली खाँ तथा बेगम वजीरुन्निसा की बातें सुन रही थी। क्योंकि उसका वहाँ की नौकरी का विशेष अभिप्राय यही था कि हर भेद पर अपने कान खड़े किए रहे। यद्यपि आज की भेद भरी बातें उसकी समझ में नहीं आई थीं। वह केवल इतना ही समझ पाई थी कि बेगम के पास अशर्फियों के ढेरों तोड़े मौजूद हैं और नवाब साहब उनमें से कुछ तोड़े लेकर कोई जुआ खेलना चाहते हैं, कोई गहरा दाँव लगाना चाहते हैं। लेकिन उस राज को समझ पाने या न समझ पाने से कोई मतलब न था। उसका काम तो बातों को अपनी गाँठ में बाँध लेना और गाँठ को अपने अब्बा खैरातअली के सामने खोल देना था। वह जानती थी कि अब्बा खैरातअली भी शायद इन बातों को सारहीन समझेंगे, फिर भी वह रजीडेन्ट के कानों तक पहुँचा देंगे। रजीडेन्ट उन्हें निचोड़ कर जो रस निकालना चाहेंगे, निकालते रहेंगे। अतः मौका ताक कर कनीज फातमा ने घर जाकर नवाब और बेगम की वार्ता को खैरातअली को सुना दिया और खैरातअली ने जान चेरी के कान भर दिए।

सभी मुसाहिब अपने-अपने जिम्मे का काम पूरा करके लौट आए थे। केवल मीर इर्ज्जतअली अभी तक वापस नहीं आया था। क्योंकि वह गया भी औरों से कई दिन बाद गया था।

दिन का चौथा पहर आरम्भ हो गया था। जाड़ों के दिन थे। धूप भागती चली जा रही थी और सरदी कदम बढ़ाती चली आ रही थी। नवाब वजीरअली खाँ अपने चार यारों तथा मुसाहिबों के साथ दीवानखाने के अन्दर जमे बैठे थे। कोठी के बाहरी फाटक तथा दीवानखाने के बाहरी द्वार पर कड़े पहरे बैठे थे। परिन्दा पर नहीं मार सकता था। क्योंकि इस समय नवाब वजीरअली खाँ तथा अपने-अपने जिम्मे के कामों को पूरा करके लौटे हुए मुसाहिबों में भेद भरी बातें चल रही थीं।

एक खामोशी के बाद नवाब वजीरअली खाँ ने मुसाहिबों की तरफ निगाह उठाई, बोले—"तुम सब लोगों की कोशिश-कारगुज़ारी हमें यकीन दिला रही है कि हम अपने इरादे में जरूर कामयाबी हासिल करेंगे। मंजिल मकसूद तक पहुँच जाएँगे।"

"अब तो मंजिल बहुत नजदीक दिखाई दे रही है।" रहीम खाँ ने इतमीनान के साथ कहा—"हुजूर का इकबाल जबर्दस्त है। किसी ठिकाने से भी इनकार नहीं हुआ। हर जगह से पक्के वायदे ही हाथ आए हैं और हुजूर के इरादे-हौसले की तारीफ की गई।"

रहीम खाँ के चुप होते ही मिरजाई बेग ने कहा—"इनकार होता कैसे? इन बदजात फिरंगियों की कमीनी हरकतों से सारा मुल्क हैरान-परेशान हो रहा है। एक-एक को इनकी धाँधली व ज्यादती खटक रही है। कैसी बेतुकी बात है? हमारा घर, हमारी जायदाद और उसके मालिक सात समन्दर पार वाले फिरंगी? जिसे चाहते हैं लात मार कर घर से बाहर निकाल देते हैं, टुकड़ों-टुकड़ों को मोहताज कर देते हैं। इन सब का बदला अब एक साथ चुक जाएगा।"

रहीम खाँ ने एक नजर मिरजाई बेग की तरफ घुमाई और जोश के साथ कहा—"बदला क्या चुक जाएगा, हमारे दिल की आग ठण्डी हो जाएगी। जिस वक्त एक ही दिन एक ही तारीख में चारों तरफ मोखालफत और हंगामा नजर आएगा, सालों की हैकड़ी हवा हो जाएगी। सिवाय समन्दर के रास्ते के दूसरा चारा न रह जाएगा।"

नवाब वजीरअली खाँ ने वफाबेग की तरफ निगाह उठा कर कहा—वफाबेग। महाराजा महादजी सिंधिया ने दिलचस्पी के साथ हमारे हंगामे में शरीक होने का वायदा किया था?"

वफाबेग बड़े इतमीनान से बोला—"हुजूर, क्या अर्ज करूँ। चिट्ठी को पढ़ कर उनके चेहरे पर एकदम जोश झलक उठा था और एकदम उनके मुँह से निकल पड़ा था—

'नवाब वजीरअली खाँ का इरादा बहुत मूल्यवान है। हमें बहुत पसन्द आया।" फिर अपने एक सरदार से कहा—"हम भी यही चाह रहे थे, लेकिन नवाब वजीरअली खाँ ने हमसे पहले कदम उठा लिया।"

"इस वक्त मुल्क में महाराजा सिंधिया की बहुत बड़ी ताकत है।" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा।

"इसमें क्या शक है।" वफाबेग ने कहा—"हमारे हंगामे में सिंधिया का शामिल होना चार चाँद लगा देगा।"

बहादुरअली ने नवाब की तरफ रुख करके कहा—"हुजूर बाँदा के नवाब अलीबहादुर और गुसाईं अनूपगिरि की ताकतें भी कुछ कम नहीं हैं। बुन्देलखण्ड के राजपूत उन लोगों की फौजों में हैं? उनकी तलवारें दुश्मनों के गले से दुलहिन की तरह लिपट जाती हैं।"

वजीरअली खाँ हँस पड़े। बोले—"इस वक्त तुम्हारी ये मिसाल बहुत खूब रही। हमें पसन्द आई।"

"हुजूर झूठ नहीं अर्ज कर रहा। हकीकत बयान कर रहा हूँ। मेरे बाबा रज्जबखाँ जब बुन्देलखण्ड को फतह करने गए थे, उन्हीं का यह कहना था। कहते थे कि कम्बख्त बुन्देले राजपूतों की तलवारें साँस भी नहीं लेने देतीं।"

"नवाब अलीबहादुर ने हमारी चिट्ठी पढ़ी थी?" वजीरअली खाँ ने पूछा।

"उन्हें लखनऊ के उथल-पुथल और अँग्रेजों की ज्यादती का पूरा किस्सा मालूम था। हुजूर की चिट्ठी पढ़ने के बाद कहा था—'अँग्रेजों ने वाकई नवाब वजीरअली खाँ के साथ बहुत बड़ी बेइन्साफी की है। नवाब वजीरअली खाँ का मुखालफत पर खड़ा होना सही है। वह तो हमारे भाई हैं। हम उनके हंगामे को जरूर कामयाब बनाएंगे।"

"और गुसाईं अनूपगिरि का क्या कहना था?"

"गुसाईं हिम्मत बहादुर ने तो बड़े जोश के साथ वादा किया था। उनका कहना था कि अवध की रियासत और वहाँ के नवाबों से हमारा पुराना ताल्लुक है। हम नवाब शुजाउद्दौला बहादुर के पास रह चुके हैं। हमें हिम्मत बहादुर का खिताब नवाब शुजाउद्दौला ने ही बख्शा था। इसलिए हम सबसे पहले नवाब वजीरअली खाँ का साथ देने को तैय्यार हैं।"

जरा देर की खामोशी के बाद वजीरअली खाँ ने मोहम्मद इसहाक से पूछा—"तुम राजपूताने की किन-किन रियासतों में पहुँच सके थे?"

"जयपुर, जोधपुर और उदयपुर, यही तो वहाँ की बड़ी-बड़ी रियासतें हैं।" इसहाक ने सँभल कर बैठते हुए कहा—"हुजूर की चिट्ठियाँ तो इन्हीं रियासत के राजाओं के नाम की थीं। मगर कमतरी उधर की और भी छोटी-छोटी दो-चार रियासतों को टटोलता उभारता आया है।"

"बड़ी रियासतों में कहीं से वादे मिल सके ?"

"जी हाँ," इसहाक ने जरा मुस्करा कर कहा—"अगर वादे न लाता तो फिर मेरी कारगुजारी ही क्या थी ? लेकिन वादों के साथ उन तीनों बड़ी रियासतों के राज्यों की यह शर्त लगी रही कि नवाब साहब हंगामा शुरू करें। हंगामा का रंग-ढंग देख कर हम लोग मैदान में उतर आएँगे।"

"हंगामा तो हम शुरू ही करेंगे।" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा।

इसके बाद नवाब वजीरअली खाँ गम्भीर मुद्रा से कुछ देर तक किन्हीं विचारों में लीन रहे। फिर वारिसअली की तरफ देख कर कहा—"नवाब शमशुद्दौला ने बादशाह काबुल के पास हमारी चिट्ठी तुम्हारे सामने ही रवाना कर दी थी ?"

"जी हाँ।" वारिसअली ने कहा—"उन्होंने खुद भी एक चिट्ठी लिख कर हुजूर की चिट्ठी के साथ मेरे रूबरू अपने एक ऐतबारी मुलाजिम अनवर खाँ को सौंप कर काबुल की जानिब रवाना कर दिया था। अगर जब तक मैं ढाका में मौजूद रहा अनवर-खाँ वापस नहीं आया था। नवाब शमशुद्दौला साहब तो मुझे रोक रहे थे। फरमा रहे थे कि काबुल का जवाब आ जाने के बाद जाना, लेकिन मैं नहीं रुका। मुझे फिक्र लगी हुई थी कि हुजूर इन्तज़ार कर रहे होंगे।"

वाकई तुम सब के लौटने का हम बड़ी बेचैनी के साथ इन्तजार कर रहे थे।" वजीरअली खाँ ने गम्भीरतापूर्वक कहा।

"और इधर का क्या हाल है ?" वारिसअली ने पूछा।

चार यारों की मदद से इधर भी कई हजार देहाती नौजवान नौकर रख कर हंगामे के लिए तैय्यार कर लिए गए हैं। उनका अखाड़ा भी यहाँ रोजाना गरम हुआ करता है।" नवाब ने सन्तोष के साथ कहा—"हाँ, अभी तक हथियारों का कोई इन्तजाम नहीं हुआ। हथियार, बन्दूकें, तलवारें, भाले, छुरियाँ वगैरा काफी तादाद में जमा करने की बहुत सख्त जरूरत महसूस हो रही है।"

दिलावर अली बड़े इतमीनान से बोला—"हुजूर हथियारों की तरफ से बेफिक्र रहें।"

"क्यों ?" नवाब ने आश्चर्य भरी नजर से उसकी तरफ देख कर कहा—"बिला हथियारों के कैसे लड़ाई लड़ी जाएगी ? हाथा पाई से थोड़े ही काम चलेगा। बल्कि कुछ छोटी-मोटी तोपें और गोले भी अपने पास होना चाहिए।"

"हमारे देहाती जवान कोरे देहाती ही नहीं हैं ?" दिलावरअली बोला—"उनमें काफी जोश है। उन्होंने खुद काफी तादाद में हथियार जमा कर लिए हैं। फिर हथियारों की तरफ मेरा ध्यान पहले ही जा चुका था। इसलिए मैंने चुपचाप महाराजा बनारस के सिलहखाने के दारोगा को मिला लिया है। उसने वक्त पर सिलहखाने का दरवाजा खोल देने का वादा किया है। सात-आठ तोपें और काफी तादाद में गोले-बारूद भी देने का

वादा किया है। साथ ही दारोगा खुद भी हमारे हंगामा में शरीक होगा।"

"भई वाह," वजीरअली खाँ ने बड़े संतोष के साथ कहा—"ये तो तुमने बड़े मारके का काम कर डाला है। अब हमें उम्मीद है कि हम अपने इरादे में जरूर कामयाब होंगे।" फिर जरा रुक कर कहा—"एक तरह से यह एक खुदाई इमदाद है।"

रुसतम खाँ बोला—"हुजूर! एक मेरी कोशिश भी गोशगुजार करके फरमाया जाए कि कहाँ तक सही है?"

"क्या?" नवाब ने उसकी तरफ गहरी नजर से देखा।

"बनारस के पड़ोस के बहुत से जमींदार अपने हथियारबन्द आदमियों के साथ हमारा साथ देंगे। वह सब बेचैनी के साथ हंगामे की तारीख का इन्तजार कर रहे हैं।"

"खुदा का शुक्र है। वही हमारे कदम को मजबूत बनाने वाला है।" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा।

कुछ क्षण खामोशी और सोच-विचार में गुजर गए। उसके बाद वजीरअली खाँ ने कहा—"अब सिर्फ एक ही कसर बाकी रह गई। अगर खुदावन्द करीम उसे भी पूरा कर दे तो हमारी कामयाबी सामने खड़ी नजर आने लग जाए।"

"वह कौन-सी कसर है हुजूर?" वारिसअली ने उत्सुकता के साथ पूछा।

"वह कसर है अंग्रेजों की छावनियों के सिपाहियों की। अगर वह भी हमारे साथ मुखालफत पर तैयार हो जाते तो फतह ही फतह थी।"

"मीर इज्जतअली ने सकरौर की छावनी में जाने और सिपाहियों को अंग्रेजों की मुखालफत पर आमादा करने का जिम्मा तो लिया था, मगर अभी तक उनका कुछ पता नहीं है।" वारिसअली ने धीरे से कहा।

"बहुत टेढ़ी खीर है!" नवाब ने नाउम्मीद लहजे से कहा—"मीर इज्जतअली ने जिम्मा जरूर लिया था और शायद उधर गए भी हों, लेकिन मतलब पूरा होना हमें नामुमकिन-सा मालूम होता है।"

"शायद इसी वजह से मीर इज्जतअली वापस नहीं लौटे। सोचते होंगे कि खाली हाथ क्या मुँह लेकर हुजूर के सामने जाएँ। मर्दानअली ने कहा।

"उनका ऐसा सोचना गलती है।" वजीरअली खाँ ने कहा।

उसी वक्त कोठी के अहाते वाले बन्द फाटक पर एक आवाज गूंज उठी—"दवा, दाद की दवा, खाज की दवा, फोड़े की दवा, फुंसी की दवा, सिर की दवा, आँख की दवा, कान की दवा, नाक की दवा, दाँत की दवा, मसूड़ों की दवा, पेट की दवा, हाजमे की दवा, हाथ की दवा, पैर की दवा, दिल की दवा, दिमाग की दवा, फिक्र की दवा, चिन्ता की दवा, राज की दवा, भेद की दवा, हर मर्ज की द....वा....दवा।"

आवाज बार-बार और तेज स्वर से गूंज रही थी। बल्कि हर क्षण और अधिक

ऊँची उठती चली जा रही थी।

उस आवाज ने दीवानखाने के वातावरण को भी बदल दिया। सबका ध्यान एकदम उसकी तरफ आकर्षित हो गया।

आवाज सुन कर नवाब वजीरअली खाँ थोड़ा मुस्कराए और बोले—"यह कौन कहाँ का दवाफरोश है जो इन्सान के हर अजो, हर मर्ज की दवा बेचता है। यहाँ तक कि दिल-दिमाग, चिन्ता-फिक्र और राज-भेद की भी दवा इसके पास है। अभी तक तो इस बनारस में ऐसी आवाज लगाने वाला कोई दवाफरोश देखने-सुनने में नहीं आया था।"

वारिसअली ने धीरे से कहा—"कोई बाहरी दवाफरोश मालूम होता है।"

बहादुरअली बोला—"हुजूर जरा बुला कर देखा जाए। चिन्ता-फिक्र और राज-भेद की क्या कौन-सी दवा उसके पास है?"

"लेकिन कोठी के फाटक पर ही क्यों बार-बार आवाज दे रहा है?" मिरजाईबेग ने कहा—"कोई अंग्रेजों का जासूस या भेदिया न हो? कुछ भेद लेने आया हो।"

बहादुरअली उसकी तरफ मुड़ कर बोला—"भेदिया-जासूस होगा तो उसके लिए यहाँ क्या भेद रखा है। हमलोग तो हुजूर के पास रोज के बैठने वाले हैं। आज इस वक्त भी बैठे हैं। इसमें उसे राज-भेद की क्या जानकारी हासिल होगी?"

आवाज पुनः उसी प्रकार सुनाई दी।

"बेहतर है बुलाया जाए?" नवाब ने कहा—"एक मजाक ही रहेगा।"

दीवानखाने के बाहर बैठे पहरेदार को आवाज देकर कहा गया—"फाटक के पहरे वाले से कह दो कि फाटक खोल कर उस दवाफरोश को अन्दर भेजा जाए।"

कुछ देर बाद दवाफरोश दीवानखाने में आ गया। आते ही उसने नवाब वजीर-अली खाँ को फर्शी सलाम किया। फिर उपस्थित लोगों को एक नजर से देखा और कायदे से एक कदम पीछे हट कर खड़ा हो गया।

दीवानखाने में उपस्थित लोगों के दिलों में दवाफरोश की आवाज ने जितना आकर्षण तथा आश्चर्य पैदा किया था, उससे कहीं अधिक उसकी हुलिया ने लोगों के दिलों में कौतूहल उत्पन्न कर दिया।

दवाफरोश की विचित्र हुलिया थी। सिर के बड़े-बड़े अस्त-व्यस्त बालों पर मैले लाल रंग की पतली-सी दो-तीन हाथ लम्बी अँगोछी लिपटी हुई थी। शरीर मैली-कुचैली मिरजाई तथा दोनों जाँघों को आधा ढाँके रहने वाली धोती थी। जिसका एक सिरा कुछ लम्बा दोनों जाँघों के बीचो-बीच झूल रहा था। सिर की पगड़ी में दो-तीन मोर पंख भी खुँसे हुए थे। गले में काले मोटे डोरे से बँधी चोखे लाल रंग के कपड़े में लिपटी-सिली हुई एक बड़ी-सी ताबीज लटक रही थी। डाढ़ी मुड़ी हुई थी, लेकिन मूँछें जरूरत से ज्यादा बड़ी थीं। दोनों आँखों में सुर्मे की सलाई खिंची हुई थी। किन्तु आँखों की पलकें बहुत

मोटी नजर आ रही थीं। दाहिने गाल पर बड़े चने के बराबर मसा था और एक उतना ही बड़ा मसा बाएँ कान के निकट था। उसकी पीठ पर एक पुरानी अँगौछी से कसी-बँधी छोटी-सी सन्दूकची थी जिसका एक छोर दाहिने कंधे के ऊपर से तथा दूसरा छोर बाएँ बगल के नीचे से आकर छाती पर गाँठ बाँधे हुए था। हाथ में बाँस की एक बहुत मामूली सी लाठी थी। पैरों में जूते न थे उनके बजाय धूल की अनेक पर्तें चढ़ी हुई थीं। रंग पक्का काला तथा उम्र अधेड़ थी।

दवाफरोश की इस हुलिया को देख कर बरबस ही लोगों के होठों पर मुस्कानें आ-आकर लौट जाती थीं। किन्तु दवाफरोश बहुत शान्तिपूर्वक खड़ा था। केवल उसकी दोनों आँखें नाच रही थीं और नजर उपस्थित लोगों को अपनी तराजू में तोल रही थी।

नवाब वजीरअली खाँ उसके विचित्र बनाव, रूप-रंग को देख कर मुस्कराते रहे। फिर उसे बैठ जाने का आदेश दिया। दवाफरोश दोनों घुटनों को टेक कर ऊँट की बैठक से उनकी मसनद के सामने कुछ पीछे हट कर बैठ गया।

एक क्षण की खामोशी के बाद वजीरअली खाँ ने उससे पूछा—"तुम दवाफरोश हो?"

"जी हाँ सरकार!" उसने जवाब दिया।

"कहाँ के रहने वाले हो?"

"कहाँ का रहने वाला हूँ? यह बताना तो मेरे लिए कुछ कठिन-सा है।" दवाफरोश ने कहा—"मेरे दोनों पैरों के तलुओं में चक्कर के निशान हैं। इसलिए चलता-फिरता रहता हूँ। कहीं एक जगह घर बना कर रहने का मौका ही हाथ नहीं आता। वैसे बाप-दादों के रहने का स्थान अमरकण्टक है। लेकिन मैंने तो जब से होश सँभाला, आज तक कहीं महीने-दो-महीने जम कर नहीं रहा। आज इस बनारस में हूँ, कल लखनऊ में, परसों कलकत्ता में और तरसों दिल्ली की गलियों में चक्कर लगाता नजर आऊँगा। इस तरीके से हुजूर मुझे खानाबदोश ही समझ लें। कहाँ का रहने वाला हूँ यह बताना मेरे लिए कठिन-सा है। जहाँ हूँ, वहीं का रहने वाला हूँ।"

"तुम्हारे बाप-दादे अमरकण्टक में रहते थे?" वजीरअली खाँ ने पूछा—"यह अमरकण्टक कहाँ पर है?"

"मैंने तो देखा नहीं?" दवाफरोश ने अनभिज्ञता के भाव से कहा—"सुना है कि कोई रीवा-बाँधोगढ़ रियासत इस मुल्क में है। अमरकण्टक उसी रियासत का एक जंगली स्थान है।"

वजीरअली खाँ एक क्षण चुप रहे। फिर पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

दवाफरोश किंचित मुस्कराया। फिर सँभल कर बोला—"हुजूर, मेरा पैदायशी और शायद माँ-बाप का पुकारा हुआ नाम तो कुछ और ही था। मुझे वह नाम अब याद भी नहीं है। लेकिन इधर अपने धंधे के अनुसार मैंने अपने नाम रख लिए हैं। जब

बादशाहों, नवाबों के दरबार में दवाफरोशी के लिए पहुँचता हूँ, उस वक्त मेरा नाम 'काले खाँ' होता है। राजा-महाराजाओं की सभा में पहुँचने पर 'कौआ सिंह' कहलाता हूँ और इसी तरह मुल्क में जो विलायती अंग्रेज रहते हैं उनके सामने पहुँचने पर 'ब्लैक मैन' कह कर पुकारा जाता हूँ।"

वजीरअली खाँ हँस पड़े। मुसाहबों ने भी उनका साथ दिया।

वातावरण शान्त होने पर मिरजाईबेग ने दवाफरोश की तरफ देख कर कहा—"नामों के मुताबिक तो तुम एक बहुरूपिया मालूम होते हो?"

दवाफरोश उनकी तरफ मुखातिब होकर बोला—"क्या करूँ, यह जमाना ऐसा ही है। बिना बहुरूपिया बने काम नहीं पूरा पड़ता, पेट नहीं पलता। अतः अपने मतलब के लिए सब कुछ करना पड़ता है। जमाने की चाल देख कर ही इंसान को अपना कदम उठाना चाहिए।" फिर जरा रुक कर कहा—"हमारे मुल्क का जमाना पहले ऐसा नहीं था। बड़ी सचाई और ईमानदारी थी। छल-कपट तो कोई जानता ही नहीं था। लेकिन जब से फिरंगी आकर हमारे देश में जम गए हैं, छल-कपट, दगा-फरेब धोखा-दुराव ने यहाँ अपने पैर फैला रखे हैं! इसीलिए जरूरी है कि देश का हर मनुष्य बहुरूपिया बनता रहे। तभी वह अपनी जिन्दगी को अपने इरादों को कामयाब बना सकता है।"

मर्दानअली ने पूछा—"अच्छा यह बताओ, तुम कुछ पढ़े-लिखे भी हो?"

दवाफरोश उनकी तरफ मुड़ कर बोला—"पढ़ना-लिखना क्या होता है? सुना है कि काला अक्षर भैंस की तरह होता है। मैं तो अपना धंधा ही जानता हूँ। वही मेरी विद्या और पढ़ना-लिखना है। बड़े-बड़े हकीमों, वैद्यों और अंग्रेज डाक्टरों के कान ऐंठ सकता हूँ।"

"लेकिन तुम्हारी जबान तो बहुत साफ है। उर्दू-हिन्दी सभी बोलते हो।"

मर्दानअली के बगल में बैठा हुआ शेर खाँ बोल उठा—"जबान क्या है कैंची है। हर तरह के काट-ब्योंत दिखाती है।"

दवाफरोश किंचित मुस्कराया। फिर बोला—"भाई साहब, आप जैसे हुजूरों, मुसाहबों के सामने पहुँचते रहने से मेरी जबान कतरनी बन गई है। जहाँ कहीं पहुँचता हूँ वहीं की भाषा-जबान बोलनी पड़ती है।"

नवाब वजीरअली खाँ को दवाफरोश की बातों में रस मिल रहा था। उन्होंने मुस्कराते हुए पूछा—"तुम्हारी जाति और मजहब क्या है?"

"हुजूर मेरी जाति कोई खास नहीं। खुदा-ईश्वर के यहाँ से कोई जाति-पाँति लेकर नहीं आया करता। मैं भी किसी जाति को लेकर नहीं पैदा हुआ था। मेरे नजदीक आदमी की एक ही जाति है।" फिर सांस लेकर बोला—"और हुजूर ने जो मजहब के बारे में दरयाफ्त किया तो मेरी अर्ज यह है कि जब मैं मुसलमानों के दरबार-घेरे में होता हूँ, उस वक्त मैं खुदा रसूल पर ईमान लाने वाला कहलाता हूँ। जब हिन्दुओं के पास

पहुँचता तो कौआ सिंह का धर्म सनातन धर्म हुआ करता है और अंग्रेजों के सामने मैं पक्का ईसाई, ब्लैकमैन हुआ करता हूँ।"

दीवानखाने में पुनः एक कहकहा गूंज गया।

इसके बाद दवाफरोश ने बड़े इतमीनान के साथ छाती पर बँधी हुई गाँठ खोली। सन्दूकची को सामने रखा। फिर उसे खोल कर नवाब वजीरअली खाँ की तरफ देखा और बड़े मीठे स्वर से कहा—"हुजूर? किस मर्ज की दवा पेश करूँ। मेरे पास हर एक मर्ज की दवा मौजूद है। असली शिलाजीत है, मिसरी है, साँडे का तेल है, शेर का नाफा है, जहर मोहरा है? इनके अलावा कुछ ऐसी जड़ी-बूटियाँ हैं कि अगर उनकों सौ वर्ष का बूढ़ा खाए तो दस-पाँच दिन के अन्दर पच्चीस वर्ष का नौजवान पट्ठा नजर आने लग जाए।"

"भई, हमें कोई दवा नहीं चाहिए।" वजीरअली खाँ ने कहा—"हमने तो यों ही तुम्हारी अवाज सुन कर बुला लिया था। हमें कोई मर्ज नहीं है, जिसकी दवा तुमसे खरीद करें।"

"ऐसा मुमकिन नहीं है?" दवाफरोश बड़े इतमीनान से बोला—"हर इंसान को छोटा बड़ा, जाहिरा या छिपा हुआ मर्ज जरूर होता है। हुजूर को भी कोई मर्ज जरूर होगा। जिसमानी, रूहानी, दिल-दिमाग का जो भी रोग मर्ज हो उसकी दवा जरूर खरीद ली जाए।" और उसने संदूकची से कुछ जड़ी-बूटियाँ निकाल कर बाहर रखीं। बोला—"फरमाइए, कौन से मर्ज की दवा दूँ। आन की आन में मर्ज जाता रहेगा।"

"क्या तुम हमारी तन्दुरुस्ती को नहीं देख रहे?" वजीरअली खाँ ने कहा—"जानते हो? हम अखाड़ची पहलवान हैं। रोजाना लेजम-मुग्दर हिलाते हैं। कोई बीमारी हमारे पास कैसे आ सकती है?"

"हुजूर! मेरी दवाएँ बहुत प्रभावशाली हैं। बादशाह, नवाब, राजे-महाराजे और बड़े-बड़े अंग्रेज अफसर आजमा चुके हैं। एक बार हुजूर भी आजमा कर देखें।"

"लेकिन जब हमें कोई मर्ज नहीं है तो किस तरह आजमा कर देखें। दवा तो किसी मर्ज के होने पर ही आजमाई जा सकती है।"

"जाहिरा तौर पर अगरचे हुजूर को कोई मर्ज नहीं मालूम होता। मगर बीमारियाँ कई तरह की हुआ करती हैं और सब से खतरनाक बीमारी दिल की जलन-कुढ़न और दिमाग में हर वक्त उसकी खटक, चिन्ता और फिक्र हुआ करती है। ऐसी मानसिक पीड़ा की मेरे पास अचूक दवा है। उसे हुजूर जरूर पसंद करेंगे।" और दवाफरोश अपनी संदूकची में दवा ढूंढने-तलाशने लगा।"

वजीरअली खाँ हँस पड़े। बोले—"तुम तो अजीब हकीम साबित हो रहे हो। जबरदस्ती, बिल। किसी रोग के दवा खिलाना चाहते हो?"

मुसाहिबों ने भी जोरदार हँसी हँस कर दवाफरोश को खिल्ली उड़ाई। मगर वह जरा भी न झेंपा। बोला—"हुजूर आजकल बादशाह, नवाबों और राजा-महाराजाओं को जो रोग सता रहे हैं वह बहुत खतरनाक हैं। उसकी विशेष दवा मेरे पास है। और मेरा ख्याल है कि हुजूर को भी वही रोग घेरे हुए है। इसलिए मेरी दवा से वह रोग हमेशा के लिए नेस्त-नाबूद हो जाएगा।"

नवाब वजीर खाँ दवाफरोश की बातें सुन कर बड़े आश्चर्य में थे। बड़े गौर से उसकी तरफ देखकर सोचने लगे—ये कैसा दवाफरोश है? पढ़ा-लिखा कुछ भी नहीं, लेकिन बात कितनी गहरी और मारके की करता है। एक-एक गहराई को झाँकता छानता है।

मुसाहिब लोग भी चकित थे। उनके दिलों में सन्देह बढ़ रहा था। उनको वह दवाफरोश अंग्रेजों का भेजा हुआ भेदिया ही प्रतीत हो रहा था। सोचते थे—इससे बात करना गुनाह है। कहीं जबान से कोई बात निकल गई तो संभालना मुश्किल हो जाएगा। ये जाने किस मतलब से यहाँ आया है। इसी असमंजस में वे लोग खामोश बैठे थे।

दवाफरोश ने उचटती नजर से मुसाहिबों की तरफ देखा। उसके होठों के कोनों पर हलकी-सी मुस्कान उभरी, किन्तु शीघ्र ही वह उस मुस्कान को चबा गया। फिर नवाब वजीरअली खाँ की तरफ रुख करके मीठे स्वर लहजे से बोला—"हुजूर किसी मर्ज की दवा नहीं ले रहे? मैं बहुत बड़ी उम्मीद लेकर आया था। बनारस के रजीडेन्ट की कोठी पर दवाएँ बेंच कर जब वहाँ से चलने लगा तो रजीडेन्ट के एक जमादार ने बताया कि दुर्गाकुण्ड वाली कोठी में लखनऊ के नवाब साहब कयाम फरमाते हैं। वहाँ जाने से तुम्हारी काफी दवाएँ बिक जाएँगी। मनचाहा दाम पा जाओगे—लेकिन यहाँ से मुझे मायूस होकर लौटना पड़ रहा है।" और वह गम्भीर मुख-मुद्रा से अपनी संदूकची बन्द करने लगा।

वजीरअली खाँ ने कहा—"भई, हम मजबूर हैं। बिला वजह अपने को बीमार समझ कर कोई दवा कैसे खरीद करें?" फिर जरा मुस्करा कर कहा—"तुमने अपना पैदायशी नाम नहीं बताया? माँ-बाप तुम्हें किस नाम से पुकारते थे। जरा उसे भी सुन लें।"

"हुजूर ने जब मेरी सारी दवाओं को बेकार समझ लिया है तो मेरा पैदायशी नाम जान लेने से क्या होगा? उसे छिपा ही रहने दीजिए।" दवाफरोश ने निराश स्वर से कहा।

इसके बाद दवाफरोश संभल कर बैठ गया। गले में जो काले धागे में बँधी हुई तावीज पड़ी थी, उसे खोल कर तावीज को तोड़ा और उसके अन्दर से चौपर्त किया हुआ कागज का एक टुकड़ा निकाला। फिर उस कागज को नवाब वजीरअली खाँ की तरफ बढ़ा कर

बोला—"मैं हुजूर को नाराज नहीं करना चाहता। अपना पैदायशी नाम भी बता रहा हूँ। मैं लिखा-पढ़ा नहीं हूँ। बचपन में ही मेरे माँ-बाप कजा कर गए थे। उस समय शायद मैं तीन वर्ष का था। मेरी बूढ़ी दादी या नानी ने मुझे पाला-पोसा था। पाच वर्ष का होने पर एक बार उस बूढ़ी ने यह तावीज मेरे गले में डाल कर कहा था—"तू कौन है और तेरा नाम वगैरह क्या है, वह सब इस कागज के टुकड़े में लिखा है और तावीज में बन्द है। इसलिए हुजूर पढ़ लें।"

वजीरअली खाँ ने उस चौपर्त कागज को लेकर खोला पढ़ा। उसमें लिखा था—हुजूर का एक अदना गुलाम मीर इज्जतअली सकरौर की छावनी से वापस आकर खिदमत में हाजिर है।

उधर वजीरअली खाँ कागज की तहरीर पढ़ रहे थे और उपस्थित मुसाहिब कौतूहल से भरे हुए आँखें गड़ाए उनकी तरफ देख रहे थे। इधर दवाफरोश ने बड़ी तत्परता के साथ अँगौछे से अपना चेहरा पोंछ-रगड़ डाला। चेहरे पर की समस्त बनावटी कारगुजारी खतम हो गई। वे बड़ी-बड़ी मूँछें एकदम साफ हो गईं। गालों पर के मसे और आँखों के मोटे टोपे जाने कहाँ गायब हो गए और अब वह वही नवाब वजीरअली खाँ का एक मुसाहिब मीर इज्जत अली दिखाई दे रहा था।

वजीरअली खाँ ने कागज की लिखावट को पढ़कर जैसे ही उस पर से नजर हटा कर दवाफरोश की तरफ देखा, मीर इज्जतअली ने उठ कर कायदे के साथ नवाब को आदाब बजाया। एक क्षण के लिए नवाब तथा दरबारी सन्नाटे में रह गए। सबकी आश्चर्य भरी नजरें मीर इज्जतअली से चिपटी हुई थीं।

वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए कहा—"भई वाह मीर इज्जतअली! तुमने तो आज कमाल ही कर दिखाया। हम सब को अच्छा बेवकूफ बनाया।"

मीर इज्जतअली बोला—"ऐसा न फरमाएँ हुजूर! ये अदना गुलाम किसी को बेवकूफ बनाने की जुर्रत नहीं रखता।"

हैरत यही है कि इतनी देर की—गुफ्तगूं में हम सब में से कोई भी तुम्हें न पहचान सका।"

मिरजाई बेग बोला—"मुझे तो पूरा यकीन था कि कोई अंग्रेजों का भेजा भेदिया है। किसी खास मतलब से यहाँ आया है और मैं यही चाह रहा था कि कब ये यहाँ से टल जाए!"

वफाबेग बोला—"यही ख्याल मेरा भी था। दिल धक-धक कर रहा था कि ये बला कहाँ से आ गई।"

इसके बाद कुछ क्षण जोरदार कहकहे गूँजते रहे।

वातावरण शान्त हो जाने पर नवाब वजीरअली खाँ ने मीर इज्जतअली से पूछा—"इस वक्त कहाँ से आ रहे हो?"

"सीधा सकरौर की छावनी से ही आ रहा हूँ।" उसने कहा।

मिरजाई बेग ने पूछा—"क्या इसी दवाफरोश वाली हुलिया से छावनी में गए थे?"

"बजिस इसी हुलिया से" उसने कहा।

"कमाल है?" मिरजाई बेग ने धीरे से कहा।

"खैर, अब कहो, वहाँ क्या कैसा रहा?" वजीरअली खाँ ने उत्सुकता भरे लहजे से कहा—"वहाँ तुम्हें कुछ कामयाबी हुई? उम्मीद की कोई सूरत नजर आई?"

"हुजूर का इकबाल है?" इज्जतअली ने कहा—"पूरी उम्मीद लेकर वापस आया हूँ।"

"खुदा का शुक्र है।" वजीरअली खाँ ने धीरे से कहा। फिर उसकी तरफ नजर उठा कर बोले—"अब जरा वहाँ पहुँचने बगैरह की पूरी कैफियत बयान करो। तुम किस तरह छावनी के अन्दर पहुँच पाए? फौजी भाइयों से कैसे मिले? क्या बातचीत हुई?"

इज्जतअली इतमीनान से बोला—"जिस हुलिया से वहाँ पहुँचा था उसे तो हुजूर ने मुलाहजा ही कर लिया है। सकरौर की छावनी में अवध के बहुत लोग हैं। सिपाहियों के अलावा हवलदार, सूबेदार और दूसरे फौजी-ओहदों पर हमारे अवध के भाई-बिरादर मौजूद हैं। लखनऊ में अंग्रेजों ने जो जैसी उथल-पुथल मचाई उससे छावनी के सिपाही और ओहदेदार अच्छी तरह वाकिफ थे। खैर, पहले दिन अपनी दवाओं की आवाज लगाता हुआ छावनी में दाखिल हुआ। दोपहर का समय था। सिपाही अपनी बारकों में भोजन-रसोई बनाने खाने में व्यस्त थे। दो-चार सिपाहियों ने मेरी आवाज को सुन कर दूसरे दिन तीसरे पहर के बाद आने को कहा। मैं ठीक समय पर जा पहुँचा। एक बारिक में सिपाहियों और ओहदेदारों का जमघट हो गया। कुछ दवाएँ बेंची। काफी दाम अंटी में मौजूद हो गए। सिपाहियों अफसरों से मेरी काफी जान-पहचान हो गई। मेरी बातों पर सब लोग रस लेने लगे। बहुत खुश नजर आते थे।"

"जिस तरह तुमने हम लोगों को अपनी मीठी-मीठी बातों से बाँध लिया था, उसी तरह वे लोग भी बँध गए होंगे।" वजीरअली खाँ ने मुस्कराते हुए कहा।

इज्जतअली भी मुस्करा कर बोला—"अब जैसा हुजूर ख्याल फरमाएँ? खैर, उस दिन जब मैं तीसरे पहर के बाद गया तब एक एकान्त बारिक में एक सूबेदार की कोठरी के अन्दर बैठक जमी। वहाँ जितने भी फौजी भाई थे सभी अवध के थे। दवाएँ दिखाते-बेचते और बातें करते हुए मैंने अपने मतलब को हाथ में लिया। सभी लोग मेरे मतलब पर झुक पड़े और उमंग में आ गए। मुझे सांस मिल गई। अंग्रेजों की मोखालफत, हँगामा का इरादा, शुरू करने की तारीख और शामिल होने वाली देशी ताकतों को उँगलियों पर गिना दिया। सब ने एक आवाज होकर कहा—"नवाब वजीरअली खाँ ने बहुत सही कदम उठाने का इरादा किया है। अंग्रेजों की सत्ता को उखाड़ देने की तरफ

आज तक किसी ने न ध्यान दिया न कदम उठाया। इन विदेशियों ने हमारे मुल्क में ऊधम, धाँधली, ज्यादती मचा रखी है। अपने घर में इनकी हुकूमत किसे न खटकेगी। हम नवाब वजीरअली खाँ के साथ है। पक्का वादा करते हैं, बचन देते हैं, उनका हँगामा शुरू होते ही हमारी छावनी की सभी हिन्दुस्तानी पलटनें मैदान में आकर हँगामों को सफल बनाएँगी। इसके अलावा हम यह भी वादा करते हैं कि दूसरी छावनियों की पलटनों और हिन्दुस्तानी भाइयों को हम लोग खींच लाएँगे, अपना साथी बना लेंगे।"

"वाह इज्जतअली?" नवाब ने प्रसन्न-मुख से कहा—"तुम्हारी कारगुजारी सबसे ऊँची और कीमती रही।" फिर जरा ठहर कहा—हँगामा शुरू होने की तारीख तो फौजी अफसरों को बता दी थी न?"

"जी हाँ।"

"तुमने वह काम किया है जो किसी के भी काबू का न था।"

"खैर," इज्जतअली ने कहा—"जब दूसरे ठिकानों और मददगारों का हाल मुझे भी मालूम होना चाहिए।"

"खुदा का शुक्र है, किसी ठिकाने से इनकार नहीं हुआ। सब ने पक्के वादों के साथ हँगामा को कामयाब बनाने और अंग्रेजों को मुल्क से निकाल बाहर करने को कहा है। सिर्फ बादशाह काबुल के यहाँ से अभी तक कोई जवाब नहीं मिला। लेकिन हमें यकीन है कि वहाँ से भी पक्का वादा ही आएगा।"

"खुदा हमारा मददगार है?" इज्जत अली ने कहा।

दो क्षण वजीरअली खाँ इज्जतअली की तरफ टकटकी बाँधे देखते रहे फिर मुस्करा कर बोले—"अब तुम्हारी हर एक दवा खरीद सकते हैं।"

इज्जतअली भी हँस कर बोला—"लेकिन अब वह दवाफरोश कहाँ है। अब तो इज्जतअली हुजूर के सामने है।"

मिरजाई बेग भी मुस्कराते हुए बोला—"आज से तो मैं इनको कौआ सिंह ही कहा करूँगा।"

रुस्तम खाँ बोला—"और मैं ब्लैकमैन कहा करूँगा।"

शेर खाँ बोला—"नहीं, काले खाँ नाम अच्छा है।"

और दीवानखाना ठहाकों से भर गया।

३३

उस दिन जब बनारस के रजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी के सामने सोने की तश्तरी में रखे हुए करोड़ों रुपयों के मूल्य के हीरे-जवाहरात अपनी आभा बिखेर रहे थे। तब वह

एक स्वप्न सा देख रहे थे। सोचते थे—अब मेरे सामने कम्पनी सरकार की नौकरी बेकार है। इन जवाहरातों को पाकर मैं विलायत का एक धनी-मानी व्यक्ति बन जाऊँगा। विलायत के बड़े-बड़े लार्डों की मेरे सामने कोई हकीकत न होगी। जीवन का एक अनोखा रूप मेरी आँखों के सामने होगा। जानचेरी उन जवाहरातों के मोह में खो से गए थे।

कुछ ही क्षणों बाद जब वह मोह भरा सपना टूट गया। जवाहरात उनके सामने से हट गए, उस समय मानो उनका लाखों का घर लीक हो गया था। उनके मंसूबों पर एकदम तुषार बरस गया था और जब उन्हें पता चला कि नवाब वजीरअली खाँ ने अपने हाथों से उन हीरों को खरल में पीस कर कूड़े में फिकवा दिया है, उनका हृदय धक-धक कर उठा था। उनके दिल में नवाब वजीरअली खाँ के प्रति एक घृणा, कुढ़न तथा खीझ उत्पन्न हो गई थी। फिर कासिमअली खाँ ने भी लखनऊ जाते समय उन्हें चेतावनी दी थी—'यह युवक नवाब अपनी जवानी के जोश में जो कुछ न कर गुजरे वही कम है। हुजूर इस नादान युवक से सचेत रहेंगे।'

उसी घड़ी से रेजीडेन्ट महोदय वजीरअली खाँ की ओर से सतर्क हो गये थे। चूँकि कासिमअली खाँ के जरिए उन्हें नवाब की नादान गतिविधियों का समाचार मिल जाया करता था, लेकिन कासिमअली खाँ लखनऊ चले गए थे। अब रजीडेन्ट के पास भेद देने वाला कोई न था। यद्यपि उन्होंने कनीज फातमा को नवाब के जनानखाने में दाखिल कर रखा था। लेकिन अकेले उससे उनका दिल नहीं भर रहा था। आखिर वह एक स्त्री ही तो थी। फिर जो कुछ उसे जनानखाने के अन्दर मालूम हो सकता था वही उनके कानों तक पहुँचा सकती थी। जनानखाने के बाहर कोठी में मुसाहिबों को जमा कर के नवाब वजीरअली खाँ किस गुनताड़े में रहते हैं? किस गतिविधि के साथ दिन गुजारते हैं, उनके दिमाग में किसी प्रकार का फितूर तो नहीं पैदा हो रहा? इन सब बातों की जानकारी प्राप्त होती रहना उन्हें आवश्यक प्रतीत होती थी। अतः अनुभवी-रजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी ने एक चुस्त गुप्तचर बाहर की खबरें देने के लिए नवाब वजीरअली खाँ के पीछे लगा रखा था।

जान चेरी की चिट्ठी लेकर कासिमअली खाँ वगैरह लखनऊ पहुँच चुके थे। लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन ने जानचेरी की चिट्ठी पाकर नवाब सआदतअली खाँ से कासिमअली खाँ वगैरह की काफी शिफारिश कर दी थी और नवाब सआदतअली खाँ ने रजीडेन्ट की शिफारिश को मान कर तथा उन लोगों को खानदानी तथा अपना सगा समझ कर अपना दरबारी बना लिया था। तनखाहें भी लगा दी थीं। कासिमअली खाँ ने अपने रसूख के लिए खुशामदाना तरीके को अपना लिया था। हवा का रुख देखते हुए उन्होंने नवाब सआदतअली खाँ से वजीरअली खाँ के लड़कपन तथा बदमिजाजी को खूब नमक-मिर्च लगा कर बयान किया था। यहाँ तक चापलूसी की थी कि वजीरअली खाँ के दिल में अवध रियासत को लौटा कर अपना बना लेने की बू-बास अब तक बाकी है। हविस

उन्हें जाने कैसे-कैसे सुनहले सपने दिखलाती रहती है।

सआदतअली खाँ ने उनकी इस चाटुकारी को सही समझ कर लखनऊ के रजीडेन्ट मिस्टर लिम्सडन को आगाह किया। रजीडेन्ट ने उसको एकदम बात का बतंगड़ बना दिया। अपना पुचाड़ा देकर गवर्नर जनरल को लिख भेजा। नतीजा यह हुआ कि गवर्नर जनरल ने बनारस के रजीडेन्ट जानचेरी को सचेत करते हुए नवाब वजीरअली खाँ पर पूरी निगाह रखने के लिए ताकीद की। जानचेरी गवर्नर की उस ताकीद से चौंक पड़े थे। यद्यपि वह बेहोश न थे। उन्होंने पहले से ही अपनी समझ के अनुसार प्रबन्ध कर रखा था। फिर भी उनके दिल दिमाग में गवर्नर की वह ताकीद हर वक्त गूंजती रहती थी। और वे अपने जासूसों, गुप्तचरों को खड़खड़ाते रहते थे। उन्हें राई-रत्ती की खबर देने के लिए सचेत करते रहते थे।

इधर उनके भेदिए ने ताजा खबर सुनाई थी—'नवाब वजीरअली खाँ के जो एक दर्जन मुसाहिब थे और हर समय साए की तरह उनके पीछे लगे रहते थे। एक अर्से से उन मुसाहबों का पता नहीं है। जाने कहाँ गायब हो गए हैं। केवल चार यार ही उनकी सोहबत में हैं। इसके अलावा एक नयी खबर यह मालूम हुई है कि नवाब वजीरअली खाँ ने अपने उन चार यारों के जरिए बनारस के अड़ोस-पड़ोस के गाँवों के कई हजार युवक, नौजवान देहातियों को नौकर रखा है। किस काम के लिए नौकर रखा है? इसका तो पता नहीं चल रहा। लेकिन देखने में यह आ रहा है कि चार-पाँच सौ देहाती युवक जवान रोजाना, बड़े तड़के कोठी दुर्गाकुण्ड के अहाते के अन्दर जमा हो जाते हैं। और अहाते का फाटक बन्द होकर उस पर कड़े पहरे बैठ जाते हैं। परिंदा पर नहीं मार सकता। एक पहर दिन चढ़ जाने के बाद तक फाटक बन्द रहा करता है। वे चार-पाँच सौ देहाती जवान कोठी के अहाते के अन्दर दाखिल होकर क्या काम करते हैं, क्या ताना-बाना बुनते हैं, कुछ पता नहीं चलता। उन जवानों का पीछा करके पूछ-ताछ की काफी कोशिश भी की गई, लेकिन वे सब ऐसे रंग में रंग दिए गए हैं कि इस बारे में जरा भी मुँह नहीं खोलते।'

इस खबर से बनारस के रजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी एकदम चौंक पड़े थे। सन्देह से हृदय धक-धक करने लगा था। उसी शाम को कनीज फातमा ने उनके पास खबर भेजी थी—'नवाब वजीरअली खाँ ने बेगम से अशर्फियों के कई तोड़े लेकर अपने चार-यारों के सिपुर्द किए हैं। किस काम के लिए? इसका भेद नहीं मिल सका।'

इन खबरों से जानचेरी अजीब सी परेशानी में पड़ गए थे। बहुत सोचने पर भी समझ में नहीं आता था कि नवाब वजीरअली खाँ किस गुनताड़े में हैं? क्या करने वाले हैं? कई हजार जवानों को अपना नौकर बना लेने का क्या अभिप्राय है? और प्रतिदिन उनकी कोठी में चार-पाँच सौ जवान क्यों जमा होते हैं? कोठी का फाटक क्यों बन्द रहता है? उस पर कड़े पहरे क्यों बैठे रहते हैं? जरूर कोई राज की बात है। अशर्फियों के

तोड़े निकाल कर लुटाना-खर्च करना अवश्य कोई गहरा अर्थ रखता है। नवाब वजीर-अली खाँ को बनारस में लाकर बैठा दिया जाना एक बला बन गयी थी।

जान चेरी इस उलझन और परेशानी में कभी सोचते थे—क्यों न वजीरअली खाँ को बुला कर या खुद उनकी कोठी पर पहुँच कर इस बारे में पूछ-ताछ की जाए? लेकिन दूसरे ही क्षण ऐसा सोचना गलत साबित होता। कोई अपने भेद को क्यों जाहिर करेगा और फिर वजीरअली खाँ जैसा बदमिज़ाज? उन्हें कासिमअली खाँ का कहना भी याद आ जाता—"इस नादान लड़के से सचेत रहने की जरूरत है। जवानी के जोश और मिजाज की तेजी में जाने क्या कर बैठे।"

अन्त में मिस्टर जान चेरी इस नतीजे पर पहुँचे कि किसी तरकीब से वजीरअली खाँ को बनारस से हटाना चाहिए। क्योंकि अगर उसने कोई तूफान खड़ा कर दिया तो मुझे सम्भालना कठिन हो जाएगा। लेकिन वह बनारस से हटाया किस तरह जाए। गवर्नर जनरल ने उसे यहाँ बैठाया है। वही हटा सकते हैं। उन्हीं को लिखने पर सम्भव है यह बला मेरे सिर से दूर हो जाय। अतः मिस्टर जान चेरी ने नवाब वजीरअली खाँ की भेद-भरी सभी गतिविधि को तथा बदमिजाजी, जवानी के जोश-खरोश को काफी चिकना-चुपड़ा बना कर एक चिट्ठी गवर्नर जनरल को लिखा और सुबह की डाक से कलकत्ता रवाना करने के लिए लिफाफे में बन्द करके रख दिया।

शाम का अंधकार धीरे-धीरे गहरा होता चला जा रहा था। जान चेरी अपनी कोठी के बाहरी बरामदे में धीरे-धीरे टहल रहे थे। दिमाग में वही नवाब वजीरअली खाँ की हरकतें चक्कर काट रही थीं। सहसा जमादार खैरातअली ने आकर साहब को सलाम किया।

"क्या है?" जान चेरी ने उसकी तरफ नजर घुमा कर पूछा।

"हुजूर, एक खबर है।" जमादार ने अर्ज किया।

"क्या खबर है?"

"हुजूर!" जमादार खैरातअली ने सँभल कर कहा—"कनीज फातमा ने कोठी दुर्गाकुन्ड से आकर बयान किया—"अभी शाम होने से कुछ पहले बेगम साहिबा नवाब साहब के कमरे से लौटी थी। वहाँ वह क्या करती रहीं या उन दोनों में क्या गुप-चुप बातें होती रही थीं, उनका मुझे पता नहीं चल सका। लेकिन लौटने पर मैंने देखा बेगम साहिबा का चेहरा बहुत प्रसन्न था। आकर वह बरामदे में बिछी मसनद पर बैठ गईं और मुझे अपने पास बुला कर बड़े इतमीनान के साथ कहा—कनीज फातमा! आज हम तुझसे एक बात पूछना चाहती हैं।"

"पूछिए हुजूर! लौंडी हाजिर है!" मैंने अर्ज किया।

बेगम ने प्रसन्नता भरे लहजे से कहा—"अगर हमारी लखनऊ की रियासत-हुकूमत फिर से हमारे हाथ में आ जाएगी और हम बनारस से लखनऊ वापस चलेंगे, तो

तू हमारे साथ लखनऊ चल सकेगी ?"

बेगम के मुंह से यह एक नई बात सुनकर पहले तो मैं आश्चर्य में पड़ गई, सोचने लगी कि कैसे इन्हें छीनी हुई हुकूमत वापस मिल जाएगी ? लेकिन आगे उनका कहना सुनने जानने की गरज से मैंने खुशामद भरे लहजे से अर्ज किया—"जहे नसीबे ! जरूर हुजूर के साथ लखनऊ चलूंगी ।"

बेगम मुस्कराती हुई बोलीं—"ठीक है, तो तू तैय्यार रहना । खुदा चाहेगा तो जल्द ही हम लखनऊ चलेंगी । हमारे फिर वही सोने के दिन और चाँदी की रातें होंगी ?"

मैंने पूछा—"क्या अंग्रेजों ने हुजूर को लखनऊ की हुकूमत वापस लौटा देने का वादा कर दिया है ?"

"अंग्रेज भला क्यों वादा करने लगे और छीनी हुई चीज क्यों वापस देने लगे ?" बेगम ने मुंह बना कर कहा ।

"तब हुजूर ! कैसे लखनऊ वापस चलेंगी ?" मैंने पूछा ।

"यह अभी हम नहीं बता सकते । जरा इन्तजार कर, तुझे खुद मालूम हो जाएगा ।"

इसके बाद बेगम उठ कर पुनः नवाब साहब के पास चली गईं और मुझे दूसरे कामों में लगा गईं ।"

खैरातअली बोला—"हुजूर ! कनीज फातमा ने यह सब बता कर मुझ से कहा था कि तुम जाकर यह सब रजीडेन्ट साहब को सुना देना । इसके जो मानी निकल सकते होंगे हजूर रजीडेन्ट साहब निकाल लेंगे ।"

जान चेरी आश्चर्य से बोले—"तब क्या नवाब वजीरअली खाँ अपने रियासत-हुकूमत वापस लेने की कोई तदबीर कर रहे हैं ? और वह कमरे के अन्दर चले गए । मेज पर बैठकर उन्होंने वह लिफाफा जो गवर्नर के पास भेजने के लिए बन्द करके रखा था, उठा लिया । उसे फाड़ कर अपनी चिट्ठी निकाली और उसमें इतना और बढ़ा दिया —"नवाब वजीरअली खाँ अपनी हुकूमत पुनः वापस लेने के लिए किसी गहरे गुनताड़े में हैं । इसलिए उनका लखनऊ के नजदीक बनारस में रहना कुछ खतरनाक मालूम होता है । फिर अपनी तहरीर को एक दूसरे लिफाफे में बन्द करके रख दिया ।

मिसेज चेरी साहब के पास आ गईं । जान चेरी ने उनको अपने बराबर की कुर्सी पर बैठाया । मिसेज चेरी ने उस लिफाफे पर नजर डाली और मुस्कराते हुए कहा—"आपकी यह कोई तहरीर गवर्नर जनरल के पास जाने वाली है । कोई बहुत जरूरी मालूम होती है । आपने लिफाफे पर लाल सियाही से 'बहुत जरूरी' लिख रखा है ।"

जानचेरी गम्भीरता पूर्वक बोले—"यह चिट्ठी बहुत जरूरी ही है । इसे जल्द से जल्द गवर्नर जनरल के पास पहुँच जाना चाहिए ।"

"क्यों ऐसी क्या बात है ?" मिसेज ने कहा—"क्या कोई परेशानी भरा मसला है।"

"कम्पनी सरकार के लिए इस मुल्क के बादशाह, नवाब और राजे एक परेशानी की सूरत में है। उनकी हरकतों से हर वक्त आगाह रहने की जरूरत है। तभी अंग्रेजी हुकूमत कायम रह सकती है। दूसरे के मुल्क में अपनी हुकूमत को कायम रखने के लिए जरा-जरा सी बात पर ध्यान देना पड़ता है।" फिर कुछ अधिक गम्भीर होकर कहा—"जब तक इस मुल्क के ये नवाब-राजे और इनकी रियासतें खतम नहीं होगी, परेशानी दूर नहीं हो सकती।"

"आपका यह कहना सही है।" मिसेज चेरी ने कहा—"लेकिन देशी हुकूमत को आहिस्ते-आहिस्ते ही खतम करना चाहिए। एकदम खतम करना खतरे का सामना है।"

जान चेरी कुछ नहीं बोले।

मिसेज चेरी भी एक क्षण मौन रहीं, फिर नजर उठा कर बोलीं—"सुनते हैं कि इस मुल्क के बादशाहों नवाबों के पास दौलत बहुत है। और खासतौर पर हीरे-जवाहरात।"

"किससे सुना है ?"

"वह लखनऊ का नवाब जो गद्दी से हटा कर बनारस में लाकर रखा गया है और दुर्गाकुण्ड की कोठी में रहता है। उसके पास ढेरों कीमती हीरे-मोती और कीमती जवाहरात हैं। उस नवाब का एक किस्सा खानसामा की बीबी बता रही थी।"

"क्या ?" चेरी ने गौर से मिसेज की तरफ देखा।

"कह रही थी कि मेरी छोटी बहिन अजीजन नवाब के जनानखाने में कनीजों में है। वह गाती भी अच्छा है। कहते हैं कि एक दिन अजीजन ने कोई गजल गाकर नवाब को सुनाई थी। नवाब इतने खुश हुए थे कि अपनी उँगली से अँगूठी उतार कर उसे बख्श दी। उस अँगूठी में कोई बहुत कीमती हीरा जड़ा हुआ था। जिसका मूल्य जौहरी लाखों रुपया आँकते थे।

जान चेरी को वे पाँच हीरे फिर याद आ गए, जो उस दिन कासिमअली खाँ ने नवाब के पास से लाकर उनके सामने रखे थे। बोले—"ओ, नवाब वजीरअली खाँ के पास जवाहरात जरूर हैं लेकिन वह बहुत बदमिजाज है। जवानी का जोश, बदमिजाजी और नादानी एक दिन उसे तबाह कर देगी।"

"नवाब तेज मिजाज और गुस्सेवर तो जरूर है। यही खानसामां की बीबी भी कह रही थी कि लखनऊ में जब वह नवाबी गद्दी पर थे अपनी किसी बेगम से इतने नाराज हो गए थे, इस कदर गुस्से से भर गए थे कि कटार से उसके कान और नाक काट कर लखनऊ से निकलवा दिया था।"

चेरी साहब जरा देर चुप रहे। फिर धीरे से कहा—"ओह, वह बहुत खतरनाक

नवाब है। हमारी यह चिट्ठी वजीरअली खाँ का मसला लेकर ही गवर्नर जनरल के पास जा रही है।"

"तब ऐसे खतरनाक का बनारस में रहना अच्छा नहीं।"

इसके बाद साहब-मेम दोनों उठकर खाने वाले कमरे की तरफ चले गए।

जान चेरी का पत्र गवर्नर जनरल के पास पहुँच गया और लौटती डाक से जवाब भी आ गया। गवर्नर ने आदेश दिया था—"नवाब वजीरअली खाँ को मुनासिब तरीके से कलकत्ता रवाना कर दिया जाए। उन्हें यहाँ हमारे पास कलकत्ता में ही कायम करना होगा। लेकिन उनकी रवानगी में बहुत चुस्ती होशियारी बरती जाए।"

गवर्नर जनरल के आदेश से जान चेरी बहुत प्रसन्न थे। उनके सिर से एक खतरा, एक बलाय और एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी टल रही थी। नवाब वजीरअली खाँ कलकत्ता में रहकर जो चाहें करें! अपनी रियासत वापस लें या कोई दूसरा फसाद खड़ा करें, उसका इलजाम उनके सिर नहीं आ सकता। अब एक यही जरा टेढ़ा प्रश्न था कि नवाब वजीरअली खाँ बनारस से किस हिकमत से बिदा किए जाएँ? दो-तीन दिन तक जान चेरी अपनी इस उलझन का छोर ढूँढते रहे। अन्त में इस निश्चय पर पहुँचे कि पहले वजीर-अली खाँ को बुलाकर गवर्नर जनरल के आदेश से आग्रह करके उसकी तामील करने के बारे में ठण्डे तरीके से समझाया जाए। अगर वह समझाने से समझ जाएँ और कलकत्ता कूच करने को राजी हो जाएँ तो एक बहुत बड़ी परेशानी दूर होगी।

उसी दिन लगभग डेढ़ पहर दिन चढ़ जाने पर नवाब वजीरअली खाँ के पास मुलाकात करने के लिए रजीडेन्ट का पैगाम पहुँच गया। वजीरअली खाँ पैगाम को पाकर समझे कि इधर बहुत दिनों से हमारी रजीडेन्ट की मुलाकात नहीं हुई। न वह हमारी कोठी पर आए और न हम ही मिलने के लिए उनकी कोठी पर जा सके। इसलिए मुला-कात करना जरूरी है। जब उन्होंने खुद पयाम दिया है और हम न जाएँगे तो उचित न होगा। जाने वह क्या ख्याल कर बैठें। फिर हमने जो इरादा हाथ में लिया है, जो योजना सोची-बनाई है, जब तक वह सफलता की सीढ़ी न पकड़ ले किसी प्रकार के शक-शुभा पैदा करने वाली बात अपनी जानिब से न होने देना चाहिए।

अतः नवाब वजीरअली खाँ अपने अंगरक्षक चार यारों को साथ लेकर चार घोड़ों की बग्घी पर सवार हुए और रजीडेन्ट की कोठी पर जा पहुँचे। पैगाम देने के बाद ही जान चेरी उनकी राह देखने लग गए थे। अपने विशेष कमरे से बाहरी बरामदे में आकर टहल-टहल कर इन्तजार कर रहे थे। नवाब वजीरअली खाँ की बग्घी ज्योंही कोठी के अहाते में दाखिल हुई, जानचेरी झपट कर बग्घी के पास पहुँच गए। बड़े तपाक से स्वागत करके वजीरअली खाँ को बग्घी से उतारा और हाथ में हाथ लेकर कोठी में लाए। अपने विशेष कमरे में बड़ी इज्जत के साथ कुर्सीनशीन किया। चार यार भी नवाब की कुर्सी के पीछे कुर्सियों में बैठ गए। इसके बाद इत्र, पान, इलायची आदि से

भली प्रकार आदर सत्कार किया और एक कुर्सी खींच कर मिस्टर जान चेरी नवाब वजीर-अली खाँ के सामने बैठ गए।

एक क्षण की खामोशी के बाद जान चेरी ने नवाब की तरफ देखा और बहुत नरम स्वर तथा चापलूस लहजे से कहा—"हमने इस वक्त आपको मुलाकात के लिए तकलीफ दी इसकी माफ़ी चाहते हैं।"

"माफी माँगने की क्या जरूरत है?" वजीरअली खाँ ने सहज भाव से कहा—"इधर एक अर्से से हमारी आपकी मुलाकात भी नहीं हुई थी। हम खुद मिलना चाहते थे। मगर आपका पैगाम पहले पहुँच गया।"

दो एक इधर-उधर की चर्चाएँ करने के बाद जानचेरी ने मुस्कराते हुए कहा—"आपका दिल इस बनारस में न लगता होगा?"

"क्यों? न लगने की क्या वजह है?" नवाब ने कहा।

"इसलिए कि बनारस आपके लखनऊ के सामने एक देहात है। लखनऊ की चहल-पहल और रौनक यहाँ कहाँ है।"

"जहाँ बैठ जाओ वहीं दिल लग जाता है। जंगल में मंगल होने लग जाता है।" नवाब ने कहा।

"इस मुल्क में आपके लखनऊ का मुकाबला करने वाला शहर कलकत्ता ही है। उसकी रौनक और नजारे वगैरह बहुत दिलचस्प हैं। कलकत्ता बहुत अच्छी जगह है।"

"नहीं, बनारस में हमारी तबीयत काफी तौर पर लग गई है। यहाँ की आब-हवा भी माफिक आ गई है।"

"लेकिन मुझे तो कलकत्ता बहुत पसन्द है।" जान चेरी ने धीरे से कहा।

छूटते ही वजीरअली खाँ बोले—"आपको कलकत्ता इसलिए पसन्द होगा कि वह कम्पनी राज्य की राजधानी है।" और वह मुस्कराए।

जान चेरी भी मुस्करा कर बोले—"लेकिन बादशाह और नवाब राजधानी में ही कयाम फरमाते हैं। उनके रहने की जगह कोई देहात नहीं हुआ करती।"

"लेकिन आप जो कुछ कह रहे हैं वह बादशाहों नवाबों के लिए कुछ मानियों तक सही हो सकता है। हमारे लिए नहीं। क्योंकि हम अब नवाब कहाँ रहे। अब तो हमारी हैसियत वही है जो बनारस में रहने वाले एक मामूली शख्स की है।"

"आप यह क्या फरमा रहे हैं?" जान चेरी ने मीठ और चाप-लूसी भरे लहजे से कहा—"आप तो खान्दानी नवाब हैं। नवाबी आप से कौन छीन सकता है। आप तो नवाबी मर्तबा और शान-शौकत लेकर ही इस दुनिया में पैदा हुए हैं।"

वजीरअली खाँ जोर से हँस पड़े। फिर बोले—"यह आपका कहना हम मान सकते है। हम नवाब बे-मुल्क जरूर हैं।"

"मुल्क और हुकूमत तो चार दिन की चाँदनी हुआ करती है। चार दिन के

उजाले के बाद वही अँधेरा नजर आने लग जाता है। मुल्क और हुकूमत का भी यही हाल है। हवा के एक झोंके से इधर-उधर हो आया करती है। आज जहाँ जिसकी हुकूमत है, वहाँ कल दूसरे की और परसों तीसरे की देखी जा सकती है।" चेरी ने गम्भीर लहजे से कहा।

वजीरअली खाँ गम्भीर होकर खामोश रह गए। जानचेरी भी चुप रहे। कुछ देर बाद उन्होंने नजर उठा कर वजीरअली खाँ की तरफ देखा, बोले—"हम समझते हैं कि हुजूर के कयाम फरमाने के लिए इस बनारस के बजाय कलकत्ता बहुत बेहतर जगह होगी। वहाँ हुजूर के लायक हर तरह का साज-सामान मौजूद हो सकता है। कम्पनी सरकार के आला अफसर नवाब गवर्नर जनरल बहादुर भी वहाँ रहते हैं। उनसे मेल-मुलाकात और रसूख पैदा हो सकता है जो हुजूर के लिए बहुत फायदे का साबित हो सकता है।" उन्होंने गहरी नजर से वजीरअली खाँ की तरफ देखा। वजीरअली खाँ नीची निगाह किए गम्भीर मुद्रा से किसी विचार में डूबे हुए थे। चेरी साहब पुनः बोले—"यह ख्याल एक मेरा ही नहीं है।"

वजीरअली खाँ बीच में बोल उठे—"और किसका है?"

"नवाब गवर्नर जनरल बहादुर का भी यही ख्याल है। क्योंकि उनकी जो तहरीर हमारे पास आई है, उसमें उन्होंने लिखा है। बनारस बहुत छोटी जगह है। वहाँ पर दिल वस्तगी का भी कोई साज सामान नहीं है। हमने उस वक्त बेसोचे समझे ही नवाब वजीरअली खाँ बहादुर को कयाम करने के लिए उस जगह को तजवीज करके उन्हें वहाँ भेज दिया था, मगर अब हमें अपनी वह गलती महसूस हो रही है। उनके कयाम फरमाने के लायक जगह कलकत्ता है। जो लखनऊ से किसी तरह भी कम नहीं है। बनारस तो बहुत छोटी जगह है। नवाब साहब का दिल भी वहाँ न लग रहा होगा। इसलिए उनसे कहा जाए कि वह बनारस से कलकत्ता का सफर करने की तकलीफ उठाएँ। यहाँ आकर कयाम करें। यहाँ हमारी उनकी मुलाकातें भी होती रहा करेंगी।" जान चेरी एक साँस में कह गए। फिर कहा—"इसके आगे गवर्नर ने मुझे आदेश के तौर पर लिखा है।"

"आप के लिए क्या लिखा है?" वजीरअली खाँ ने पूछा।

"मुझे हुक्म दिया है कि नवाब वजीरअली खाँ बहादुर के बनारस से कलकत्ता सफर करने का पूरा-पूरा और मुनासिब इन्तजाम किया जाए। किसी तरह की उन्हें तकलीफ न होने पाए। वह जिस रास्ते से यानी दरिया या खुशकी से सफर करना पसंद करें, वैसा ही इन्तजाम करना तुम्हारी जिम्मेदारी होगी। लेकिन हम उन्हें दरिया से सफर करने की इसलाह देते हैं।"

वजीरअली खाँ सन्नाटे में आ गए। चेहरे पर भावों की रंगसाजी होने लगी। वह गम्भीर स्वर में धीरे से कहा—"हमें बनारस से कलकत्ता जाकर कयाम करना किसी सूरत में पसंद नहीं है।"

जान चेरी बहुत मीठे मुलायम स्वर से बोले—"मैं तो सफर करने में कोई हर्ज नहीं समझता। कलकत्ता बहुत बड़ी जगह है।" फिर चाटुकारी के रूप में कहा—"मैं हुजूर से अर्ज कर चुका हूँ कि कलकत्ता में कयाम करने से गवर्नर जनरल बहादुर से रसूख बढ़ जाएगा जो हुजूर के बड़े फायदे का साबित होगा।"

वजीरअली खाँ कुछ नहीं बोले।

कुछ देर बाद जानचेरी ने गहरी दृष्टि से नवाब वजीरअली खाँ के चेहरे की तरफ देखा, बोले—"गवर्नर जनरल साहब की इच्छा को रखना आपके लिए और उनके आदेश का पालन करना मेरे लिए लाजिमी-जरूरी है। आप जरा गौर करें, समझें, सोचें, उनकी इच्छा को ठुकरा देना कहाँ तक सही और वाजिब कहा जा सकता है।"

वजीरअली खाँ ने सिर ऊँचा किया। उनकी नजर से नजर मिलाई और कुछ रूखे स्वर से कहा—"हम कह चुके हैं कि हमें कलकत्ता जाना पसंद नहीं है।"

जानचेरी बहुत ठण्डे स्वर से बोले—"ऐसा नहीं। इस मसले पर आपको बहुत ठण्डे दिल से विचार करने की जरूरत है। बिला सोचे-समझे इनकार करना, अपनी जिद्द पर कायम रहना खराबी का बाइस हो सकता है।"

वजीरअली खाँ कुर्सी से उठ कर बोले—"देखिए, सोचूंगा।" और वह कमरे से बाहर आ गए। चार यार उनके पीछे थे। बग्घी पर सवार हुए और बग्घी कोठी दुर्गा-कुण्ड की ओर दौड़ गई।

नवाब के चले जाने के बाद जानचेरी मामले की गहराई को छानने लगे। उन्हें मसला टेढ़ा मालूम हुआ। सोचा—वजीरअली खाँ की तरह क्या मेरा भी खामोश या गाफिल बैठा रहना उचित है? नहीं, मुझे अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए। वजीर-अली खाँ बदमिजाज और जिद्दी हैं, वह सीधे तरीके से कलकत्ता का सफर नहीं कर सकते। गवर्नर के हुक्म की तामील के लिए तथा अपने सिर से बला टालने के लिए मेरा यही फर्ज होगा कि वजीरअली खाँ को जबर्दस्ती, फौजी ताकत के घेरे में कलकत्ता रवाना करूँ। लेकिन मुमकिन है कि वजीरअली खाँ हाथ पैर चलाएँ। जैसा कि जासूसों के जरिए मालूम हुआ है उन्होंने कुछ देहाती नौजवानों को अपना मददगार बना रखा है। ऐसी सूरत में पहले को भी मजबूत और ताकतवर बना लेना जरूरी है। बेहतर होगा कि कलकत्ता से एक पल्टन तथा एक छोटा तोपखाना बुला लिया जाए।

३४

फरवरी सन् १७९९ ईस्वी का सबेरे का समय था। दुर्गाकुण्ड कोठी के दीवान-खाने में नवाब वजीरअली खाँ की बैठक जमी हुई थी। बैठक में उनके चार यार तथा

सभी मुसाहिब शरीक थे। किन्तु आज की बैठक कुछ उदास-सी थी। उपस्थित व्यक्तियों के चेहरे गम्भीर हो रहे थे। चिन्ता की रेखाएँ उभर रही थीं।

कल बनारस के रेजीडेण्ट ने कलकत्ता के गवर्नर जनरल का जो आदेश नवाब वजीरअली खाँ को सुनाया था, बनारस से कलकत्ता जाने की जो मनहूस खबर दी थी, इस समय की बैठक में वही मसला पेश था। उसी पर विचार हो रहा था।

गवर्नर जनरल के उस प्रस्ताव ने नवाब वजीरअली खाँ को रात भर सोने नहीं दिया था। तरह-तरह के विचारों से उलझते हुए तथा करवटें बदलते हुए उन्होंने सबेरा किया था। मुँह-हाथ धोकर और लिया-दिया-सा नाश्ता करके दीवानखाने में आ बैठे थे। चार यार तथा मुसाहिब भी आ गए थे। वजीरअली खाँ ने उसी मनहूस मसले को लेकर सबसे उचित मशविरा चाहा था। किन्तु एक खामोशी थी।

अपना विचार जाहिर करते हुए नवाब वजीरअली खाँ ने कहा—"अगरचे मेरा पक्का इरादा बनारस छोड़ने का नहीं है फिर भी आप सबके मशविरे की जरूरत है।"

बहादुरअली ने अपने विचारों को स्पष्ट किया। बोला—"पहले तो यही एक सवाल मेरी समझ में नहीं आ रहा कि कलकत्ता से बनारस छोड़ने और उधर का सफर करने का हुक्म आया ही क्यों? इसमें गवर्नर जनरल का क्या राज-मतलब छिपा हुआ है?"

"यह सब बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी की बदमाशी है।" मिरजाई बेग ने कहा—"मेरा ख्याल यह कह रहा है कि रजीडेन्ट को शायद कुछ शक हो गया है। इस लिए उसने गवर्नर के यहाँ से ये हुक्म मँगा लिया है। कोठी में जो अपना अखाड़ा गरम होता है शायद उसी पर उसके दिल में कुछ शुबहा पैदा हुआ है। सोचा होगा कि अगर यहाँ कोई फसाद-हंगामा खड़ा हो गया, तो उसका इलजाम मेरे सिर पर रखा जाएगा। एक अखाड़ा गरम होने की खबर से ही जान चेरी के हाथ-पैर फूल गए? जब हंगामा शुरू होगा तब तो शायद उनकी जान ही निकल जाएगी।"

वारिसअली खाँ ने कहा—"हमें एक यही अफसोस हो रहा है, यही फिक्र परेशान कर रही है कि हमारे फसाद हंगामे की तारीख अभी दूर है। कहीं हमारे हंगामे की तारीख को रजीडेन्ट ने हमें गवर्नर का यह हुक्म सुनाया होता, बनारस से जाकर कलकत्ता में कयाम करने को कहा होता तो हम उनके इस हुक्म का ऐसा सही जवाब देते कि विलायत की धरती तक काँप जाती।"

वजीरअली खाँ ने कहा—"अभी हंगामा के जिक्र और उसके उधेड़बुन से कोई फायदा नहीं है। अभी तो बनारस से कलकत्ता जाने का सवाल है। उसी पर गौर किया जाना चाहिए।"

"वारिसअली बोला—"हुजूर! बनारस से जाकर कलकत्ता में रहने के मानी कैदफिरंग हैं। मेरा पक्का ख्याल है कि कलकत्ता पहुँचते ही पकड़ कर किसी किले के

कैदखाने में जिन्दगी भर के लिए बन्द कर दिए जाएँगे।"

मिरजाई बेग ने कहा—"आलाहजरत! वारिसअली का कहना हर्फ-हर्फ सही है। यह ख्याल करना, सोचना-समझना कि कलकत्ता पहुँच कर आजादी और ऐश-आराम की ज़िन्दगी बसर होगी, ख्वाब की बात है। अंग्रेजों से इसकी उम्मीद नहीं रखना चाहिए।"

मिरजाबेग का समर्थन करते मीर इज्जतअली ने कहा—"मिरजाई बेग का कहना हकीकत रखता है। कलकत्ता में न हुजूर की कोई इज्जत-आबरू रहेगी और न यह आजादी। शान-शौकत तो बहुत दूर की चीज है। बात-बात में गवर्नर की धमकियाँ बर्दाश्त करनी पड़ेंगी। यह भी मुमकिन कहा जा सकता है कि हमलोगों की सोहबत भी खतम कर दी जाए। कोई पास फटकने न पाए। हमलोग जाने कहाँ कैद में डाल दिए जाएँ। इसलिए बहुत दूर की सोचने की जरूरत है।"

मर्दानअली तथा दिलावरअली एक आवाज होकर बोले—"कैद में सड़-कर सड़ने से तो यही बेहतर मालूम होता है कि हमलोग यहीं बनारस में कट-मर जाएँ।"

रुसतम खाँ बोला—"हम हुजूर के बचपन के साथी अखाड़ची चार यार हैं। मरने दम तक हुजूर का साथ नहीं छोड़ सकते। हर सूरत में कुर्बान होने को तैय्यार हैं। हमलोग यह नहीं देखना-सुनना चाहते कि कलकत्ता आकर हुजूर कैद फिरंग में आ गए।"

वजीरअली खाँ सँजीदा होकर दृढ़ स्वर से बोले—"हम कैद होने के लिए हरगिज कलकत्ता नहीं जा सकते। देखेंगे के चेरी साहब हमें किस तरह वहाँ भेजते हैं?" स्वर गरम था।

"हमारे हाथों में भी तलवारें हैं। हमलोग कुछ काठ के पुतले नहीं हैं कि जरा भी हिल-डुल न सकें। खून की नदियाँ बहा देंगे।" रहीम खाँ ने जोश के साथ कहा—"लखनऊ का बदला यहाँ बनारस में चुका लिया जाएगा।"

वफा बेग ने कहा—"सबसे बड़ी और गौर करने की एक बात है। जरा उसको भी ख्याल में लाने की जरूरत है। इतनी कोशिशों से जो हंगामा की एक सूरत बनी है। हर तरफ से वादे मिले हैं और इन बदजात अंग्रेजों के खात्मा होने के दिन आए हैं वह बना-बनाया खेल बिगड़ जाएगा। बनारस से कूच कर जाने पर सब चौपट हो जाएगा।"

सहसा बाहर से एक पहरेदार ने आकर वजीरअली खाँ से अर्ज किया—"आला-हजरत! रजीडेन्ट के सवार फाटक पर हाजिर हैं। शायद रजीडेन्ट का कोई जरूरी पैगाम लाया है।"

"उसे हमारे पास भेजो।" नवाब ने कहा।

दूसरे ही क्षण सवार ने दीवानखाने में आकर कहा—"हुजूर को रजीडेन्ट साहब ने ठीक दस बजे अपनी कोठी पर मुलाकात के लिए पैगाम दिया है।"

"अच्छा!" नवाब ने धीरे से कहा।

सवार सलाम करके चला गया।

दिलावरअली ने कहा—"हजरत, सलामत, शायद इस पैगाम की तह तक पहुँच गए होंगे। उसी कल वाले गवर्नर के हुक्म का जवाब चाहते होंगे। कलकत्ता जाने की तारीख वगैरह जानना चाहते होंगे।"

वारिसअली ने जोश के साथ कहा—"हुजूर! तशरीफ ले चलें। घबड़ाने की कोई बात नहीं है। हम सबलोग साए की तरह हुजूर के साथ चलेंगे। हमारे जिस्म में भी दिल-गुर्दा मौजूद है। आज ही हंगामा की तारीख समझ ली जाएगी।"

"वाह, इस वक्त तुमने हमारे दिल की बात छीन ली।" वजीरअली खाँ ने कहा—"हम भी यही सोच रहे थे।" फिर मसनद से उठ कर कहा—"हमारे लिए और अपने सभी लोगों के लिए घोड़े मँगा लो। हम अभी तैयार होकर आ रहे हैं।" और वह जनानखाने की तरफ चले गए।

चार जामों से लैस सोलह घोड़े आ गए। कुछ देर में वजीरअली खाँ तैय्यार होकर आ गए। कमर में विलायती तलवार झूल रही थी। चेहरे से तेज टपक रहा था। मुसाहिबों की कमर में भी तलवारें लटक रही थीं। फेंटों में छुरियाँ और पेश कब्ज़ खुंसे हुए थे। चेहरों पर जोश की सुर्खी थी।

वजीरअली खाँ घोड़े पर सवार हो गए। शेष घोड़ों पर चार यार और ग्यारह मुसाहिब छलाँगें मार कर बैठ गए। और घोड़े रजीडेन्सी की ओर दौड़ पड़े।

रजीडेन्ट की कोठी के अहाते का फाटक खुला हुआ था। घोड़े दौड़ते हुए अन्दर दाखिल हो गए। घोड़ों की टापों की आवाज़ सुन कर रजीडेन्ट जान चेरी अपने कमरे से बरामदे में आ गए। रजीडेन्सी के साईसों ने आगे बढ़ कर नवाब साहब तथा अन्य सभी के घोड़े थाम लिए। टहलाने लग गए।

जान चेरी नवाब वजीरअली खाँ को अपने कमरे में ले गए। चार यार तथा मुसाहिब लोग उनके पीछे थे। जान चेरी ने बड़ी इज्जत के साथ नवाब साहब को एक विशेष कुर्सी पर बैठाया। उनके पीछे पड़ी हुई कुर्सियों पर चार यार तथा मुसाहिब लोग जम गए। आदर सत्कार के बाद जान चेरी भी नवाब साहब के निकट सामने बैठ गए। रजीडेन्ट की कुर्सी के पीछे दो-चार कुर्सियाँ और भी बिछी हुई थीं, किन्तु उन पर बैठने वाला वहाँ कोई न था।

जान चेरी ने मुस्कराते हुए कहा—"आपको घोड़े पर आने में तकलीफ़ हुई होगी। बग्घी पर ही तशरीफ़ लाना मुनासिब था।"

"हम बचपन से घोड़े की सवारी के आदी हैं?" वजीरअली खाँ ने मुस्करा कर कहा—"शायद आपको मालूम नहीं है। हम अखाड़ची हैं। तीस-चालीस कोस की मंजिल घोड़े पर बैठ कर तय कर सकते हैं।"

जान चेरी मुस्कराते हुए बहुत मीठे स्वर से बोले—"इस वक्त हमने आपको

इसलिए तकलीफ़ दी है कि मैं जानना चाहता हूँ कि आप कलकत्ता कब जाने को तैय्यार हैं ? जिससे आगाह होकर मैं आपके सफ़र का पूरा-पूरा मुनासिब इन्तजाम कर दूँ। और यह भी मालूम हो जाना जरूरी है कि सफ़र दरिया की राह से किया जाएगा या खुश्की की राह से ?"

वजीरअली एकदम गम्भीर हो गए और रुखे स्वर से बोले—"आपको हमारे सफ़र का इन्तज़ाम करने की जरूरत नहीं है। हम हरगिज कलकत्ता नहीं जाएँगे। यहीं बनारस में रहेंगे।"

"ऐसा नहीं !" जान चेरी ने भी गम्भीर होकर कहा—"गवर्नर जनरल के हुक्म को इस तरह नहीं ठुकराना चाहिए ? कलकत्ता जाकर वहाँ कयाम करने से आप फ़ायदे में रहेंगे। गवर्नर जनरल की मुलाकातों से फायदे की बहुत सी सूरतें निकल आएँगी। फिर कलकत्ता बहुत बड़ी जगह है। आपकी दिलवस्तगी की वहाँ काफी गुंजायश है। इस बनारस में आपके लिये क्या है ? ये तो एक देहात की तरह है।"

"कुछ भी हो।" उन्होंने लापरवाही से कहा—"हम बनारस नहीं छोड़ सकते।"

जान चेरी एक क्षण चुप रहे। फिर बहुत ही ठण्डे लहजे व बुजुर्गाना तरीके से बोले—"नवाब साहब ? हर बात में ज़िद्द अच्छी नहीं हुआ करती। मेरा कहना मानिए और कलकत्ता जाकर कयाम करना मंजूर कर लीजिए। मैं आपसे बड़ा हूँ, दर्जे में नहीं, उम्र में, इसलिए समझा रहा हूँ। आप मेरे सामने अभी लड़के ही हैं। जवानी में दूरंदेशी और मामले-मसले की गहराई को छानने की आदत नहीं हुआ करती। जवानी का जोश सोचने-समझने नहीं देता, क्योंकि उसमें गर्मी ज़्यादा हुआ करती है। उस जोश-खरोश और गर्मी में इंसान अकसर ऐसी गलतियाँ कर जाता है जिनके लिए सारी उम्र पछताना पड़ता है। इस वक्त आपकी जिद्द भी एक ऐसी ही गलती कही जा सकती है जो बाद में नुकसानदेह साबित हो सकती है। इसलिए आपको गवर्नर जनरल का हुक्म बखुशी मान लेना चाहिए और कलकत्ता जाने के लिए तैय्यार हो जाना चाहिए।"

"हरगिज नहीं !" वजीरअली खाँ ने दृढ़ स्वर से कहा—"हमने खूब सोच-समझ लिया है। हम बिलकुल नादान बच्चे नहीं हैं ?" फिर साँस लेकर जरा तेज़ स्वर से कहा—"कोई ज़बर्दस्ती है कि हम अपने दिल के कहने को ठुकरा कर गवर्नर का हुक्म मान लें ? क्या यह भी लखनऊ की गद्दी छोड़ने की तरह का कोई हुक्म है ? हर बात में गवर्नर की जबर्दस्ती भी नहीं चल सकती। ये हमारे रहने—कयाम करने का सवाल है। अगर ऐसा था तो पहले ही से कलकत्ता में रहने को कहा गया होता। हम कोई खानाबदोश हैं जो इधर-उधर मारे-मारे फिरा करें ? आज गवर्नर का हुक्म बनारस से कलकत्ता जाने का है, कल वह कलकत्ता से किसी दूसरे ठिकाने पर कयाम करने का हुक्म देंगे और हम कंधों पर अपना सामान लिए फिरा करेंगे ?" फिर धीरे से कहा—"अच्छा मज़ाक है ! गवर्नर

ने हमें राह का एक रोड़ा समझ रखा है ? जब जिक्र को जी चाहा लुढ़का दिया। हम हरगिज़ उनका यह हुक्म मानने को तैय्यार नहीं हैं।" फिर नजर उठा कर कहा—"आप हमारा यही सब कहना गवर्नर को लिख कर भेज दीजिए। हम बनारस से कभी भी नहीं हिल सकते।"

"बनारस तो आप को लाज़िमी तौर पर छोड़ना पड़ेगा।" जान चेरी ने नवाब की तरफ देख कर दृढ़तापूर्वक कहा—"मुझे जो हुक्म मिला है उसकी पावन्दी करना मेरे लिए भी लाजिमी है। हमारा यही फर्ज़ होगा कि हम आप को कलकत्ता की तरफ़ रवाना कर दें।"

नवाब वजीरअली खाँ का चेहरा सुर्ख हो गया। तमतमाहट दौड़ आई। गरम लहजे से कहा—"अगर हम अपनी खुशी से नहीं जाएँगे तो क्या आप हमें बाँध-पकड़ कर भेजेंगे ?" क्रोध की मात्रा बढ़ रही थी।

"बाँधने-पकड़ने की बात नहीं है।" रजीडेन्ट ने अधिक गम्भीर होकर कहा—"मुझे अपना फर्ज़ अदा करना जरूरी होगा। कोई न कोई तरीका जरूर अख्तियार करना पड़ेगा।"

नवाब वजीरअली खाँ जान चेरी के इस लहजे के साथ जवाब को बर्दाश्त न कर सके। क्रोध से भर गए, आँखों में खून झलक उठा। बड़ी तत्परता के साथ कमर में झूलती बिलायती तलवार मियान से निकाल कर रजीडेन्ट जान चेरी पर वार कर दिया। यह देखते ही चार यार तथा मुसाहिब भी अपनी तलवारें निकाल कर कुर्सियों से उठ कर खड़े हो गए।

जान चेरी पर तलवार का वार गहरा नहीं पड़ा था। कुर्सी से उठ कर उन्होंने बगल वाले दरवाज़े से श्रीमती चेरी के कमरे के अन्दर भागने की कोशिश की। लेकिन मौत ने भागने न दिया। पीछे बिछी हुई कुर्सी से टकरा कर फर्श पर गिर पड़े। इसी समय नवाब वजीरअली खाँ की तलवार ने दूसरा भरपूर वार किया। काम तमाम हो गया। जान चेरी दूसरी साँस भी न ले पाए।

श्रीमती चेरी अपने कमरे में मौजूद थीं। पहले वार पर तथा जान चेरी के लड़खड़ा कर गिरने की आहट पाकर ताक-झाँक करने लगीं थी। जान चेरी के शरीर के दो टुकड़े हुए देख कर एकदम चीख पड़ीं। और अपने प्राण बचाने की चिन्ता में पड़ गईं। कमरे का द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

रेजीडेन्ट के कमरे के बाहर जो दो-तीन चपरासी मौजूद थे। उन्होंने जैसे ही कमरे के भीतर तलवार की चमक, जान चेरी के शरीर के दो टुकड़े तथा नवाब वजीर-अली खाँ का खूनी चेहरा देखा। एकदम घबड़ा गए। अपने प्राणों का मोह आ पड़ा। भाग कर कोठी के पीछे वाले कमरों में जा छिपे।

नवाब वजीरअली खाँ के चेहरे पर अब भी वही क्रोध, वही जलाल और वही

खून मौजूद था। उसी प्रकार रक्त रंजित सधी हुई विलायती तलवार भी हाथ में थी। उन्होंने चाहा कि श्रीमती चेरी का भी काम तमाम कर दें। उनके कमरे के द्वार पर पहुँचे। पैर की ठोकर से द्वार खोलने का प्रयास किया किन्तु न खुला। अन्दर से बन्द था, अतः वजीरअली खाँ उधर से लौट पड़े। कमरे से बाहर आ गए। चार यार तथा मुसाहिब उनके पीछे थे। सभी अपने-अपने घोड़ों पर सवार हो गए। रेजीडेन्ट की कोठी के निकट ही करनल बर्नट की कोठी थी। वजीरअली खाँ साथियों सहित उस कोठी की तरफ़ मुड़े। और रुस्तम खाँ तथा शेर खाँ को समस्त देहाती नवजवानों को हँगामे की खबर देने के लिए दौड़ा दिया। उसी समय रेजीडेन्ट की कोठी के दस-बीस चपरासी तथा तीस-चालीस तिलंगे हाथों में बल्लम, तलवारें और छोटी-मोटी बन्दूकें थामे नवाब वजीरअली खाँ की फ़तह का नारा लगाते हुए आकर नवाब के दल में शरीक हो गए। शोर-गुल मच गया।

करनल बर्नट ने उस शोर-गुल को सुना। कमरे से बाहरी बरामदे में आकर विस्मित आँखों से इधर-उधर देखने लगे। तभी नवाब वजीरअली खाँ का घोड़ा उनके सामने आ खड़ा हुआ और वजीरअली खाँ की खूनी तलवार बर्नट के बाएँ कंधे पर पड़ी, किन्तु वार ओछा पड़ा। यदि तलवार थोड़ा तिर्छी और गहरी पड़ती तो निस्सन्देह बर्नट की गरदन धड़ से अलग हो गई होती। बर्नट बड़ी हिम्मत और साहस लेकर भागा और कमरे के अन्दर जाकर द्वार बन्द कर लिया। तिलंगों और चपरासियों ने द्वार खोलने की चेष्टा की, किवाड़ों पर धक्के मारने शुरू किये। बर्नट ने अपनी श्रीमती को कोठी की दूसरी मंजिल पर चढ़ा दिया और स्वयं जीने पर आकर जालियों से छर्रे मारने लगे। एक तिलंगा तथा दो चपरासियों के छर्रे लगे, किन्तु जख्म मामूली ही थे।

वजीरअली खाँ ने बर्नट का पीछा छोड़ दिया। बनारस शहर की तरफ चल पड़े। उधर रुस्तम खाँ—शेर खाँ को जबानी हँगामा शुरू हो जाने की खबर पाकर कई हजार हथियारबन्द जवान गाँवों से आकर वजीरअली खाँ के साथ हो गए। और कई जमींदार अपने नौकर-चाकरों को लेकर 'नवाब वजीरअली खाँ—जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुए नवाब के साथ हो गए। एक तूफान सा आ गया और उसका रुख बनारस शहर की तरफ़ बढ़ चला।

३५

शाहजादा मुजफ्फरबख्त अपने रंग में थे। कोठी के एक विशेष कमरे में उनकी महफिल जमी थी। बनारस की एक नवयौवना वेश्या सामने बैठी हुई गा रही थी। तबले

पर थापें पड़ रही थीं। सारंगी सुर भर रही थी और नवयौवना अपने हाव-भावों के साथ शाहजादे पर अपना जादू फेंक रही थी। शाहजादे साहब मंत्र-मुग्ध होकर पत्थर की मूर्ति बने बैठे थे। उन्हें न अपनी खबर थी न किसी दूसरे की।

बनारस शहर में नवाब वजीरअली खाँ के हंगामें का शोर गुल मच रहा था। हड़कम्प सा पड़ा था। गली-कूचों, सड़कों-चौराहों में उसी की चर्चा थी, उसी की धूम थी और 'नवाब वजीरअली खाँ-जिन्दाबाद, अंग्रेज सत्ता-मुर्दाबाद' के नारे सुनाई दे रहे थे।

शाहजादे का एक युवक खिदमतगार कौतूहलवश कोठी के फाटक पर पहुँच गया। आने जाने वाली भीड़ से उस शोरगुल की जानकारी ली और उसकी सूचना शाहजादे को देने के लिए बदहवासों की तरह भाग कर उनके सामने आ खड़ा हुआ। उसी समय वेश्या ने तान तोड़ कर साँस ली और रूमाल से अपने चाँद से मुखड़े का पसीना पोंछने लगी। शाहजादे की चैतन्यता लौटी। उन्होंने उस खिदमतगार की तरफ नजर उठा कर देखा, पूछा—"क्या है ? बदहवास क्यों हो रहा है ?"

"हुजूर बनारस शहर में एक फसाद हंगामा मच गया है। लोगों में हड़कम्प पड़ी पड़ी हुई है। नारे लग रहे हैं ?"

"कैसा फसाद, कैसा हंगामा ?" शाहजाद ने विस्मय के साथ पूछा।

खिदमतगार जरा सावधान होकर बोला—"ऐ हुजूर ! लोग-बाग कह रहे हैं कि दुर्गाकुन्ड की कोठी में कयाम फरमाने वाले लखनऊ के नवाब साहब ने अंग्रेजों के खिलाफ फसाद और हंगामा खड़ा किया है।"

"ऐं ?" शाहजादे ने हैरत के साथ कहा—"नवाब वजीरअली खाँ ने अंग्रेजों की मुखालफत में फसाद खड़ा कर दिया है ?"

"जी हाँ ? लोग ऐसा ही बता रहे हैं।"

"हमारी समझ में नहीं आ रहा।" शाहजादे ने थोड़ा झुंझला कर कहा—"लोगों ने जो कुछ बताया हो और तूने जो कुछ सुना हो उसे साफ तौर पर बयान कर तो कुछ हमारी समझ में भी आए ?"

"हुजूर !" खिदमतगार बोला—"लोग-बाग फसाद हंगामा के बारे में इस तरह कह रहे हैं कि लखनऊ के उन नवाब साहब ने अपने मुसाहिबों वगैरह के साथ बनारस के रेजीडेन्ट की कोठी पर जाकर रेजीडेन्ट के टुकड़े-टुकड़े कर डाले हैं और उसी खूनी तलवार से रजीडेन्ट के पड़ोस की एक दूसरी कोठी में रहने वाले अंग्रेज करनल को भी घायल किया है। और बनारस से अंग्रेजों की हुकूमत उठा देने के लिए अब नवाब साहब उधर से शहर में आ गए हैं ?"

"अंग्रेजों ने उनके साथ बहुत बड़ी ज्यादती की थी। उसी का बदला उन्होंने चुकाया होगा।" शाहजादे ने धीरे से कहा।

नौकर कुछ नहीं बोला।

शाहजादे ने पुनः धीरे से कहा—"दिलजला क्या नहीं कर सकता....काश यह चिनगारी शोला बन जाए ! मुल्क से अंग्रेजों का नाम-निशान गायब हो जाए ?" फिर नौकर की तरफ देख कर कहा—"कुछ पता है, इस वक्त नवाब वजीरअली खाँ कहाँ हैं ?"

"शहर में घूम रहे हैं ?"

"वे अकेले ही हैं ?"

"जी नहीं," नौकर ने कहा—लोगों का कहना है कि उनके साथ उनके मुसाहिब लोग तो हैं ही उनके अलावा हजारहां हथियार बन्द नौजवान, बनारस के अड़ोस-पड़ोस के जमींदार, उनके नौकर-चाकर और हजारहां तमाशबीन हैं। बहुत बड़ी भीड़ है। खासा हंगामा है।"

शाहजादे मुजफ्फरबख्त का चेहरा भी चमक उठा। तबीयत में उमंग उठी, तबीयत भुरभुराई और नवाब वजीरअली खाँ का साथ देने के लिए जी में मतली सी पैदा हो गई। नजर उठा कर जोश के साथ कहा—"हाथी तैय्यार कराओ। हम भी नवाब वजीरअली खाँ के हंगामें में शरीक होंगे। वह हमारे दोस्त हैं। दोस्ती किस दिन काम आएगी ? हमारी दिल्ली की बादशाहत भी तो अंग्रेजों ने छीनी है। हम भी तो एक दिलजले हैं।"

महफिल बरखास्त करके शाहजादा मिरजा मुजफ्फरबख्त दूसरे कमरे में गए और शीघ्र ही तलवार पेश कब्ज आदि से सुसज्जित होकर आ गए। खिदमतगार ने हाथी आ जाने की खबर दी और शाहजादे दिल में जोश व उमंग लिए हाथी पर बैठ कर शहर की ओर चल पड़े।

कुछ आगे जाकर देखा। नवाब वजीरअली मुसाहिबों सहित घोड़ों पर सवार चले आ रहे हैं। पीछे हजारों हथियार बन्द देहाती जवानों, जमींदारों आदि का हुजूम है। बनारस के शोहदे-गुंडों की एक बहुत बड़ी भीड़ भी उनके साथ है।

शाहजादे ने हाथी रोक दिया। नवाब वजीरअली खाँ अपना घोड़ा चमकाते हाथी के पास आ गए। नवाब के हाथ में अब भी वही चेरी साहब के खून से रंगी हुई नंगी तलवार थी।

शाहजादे ने हाथी पर बैठे-बैठे कहा—"भाई साहब ? ये बहुत खूब रहा। आपने बहुत अच्छी शुरुआत की है। हम भी आप के साथ हैं। इसे खुदा का हुक्म ही समझ लेना चाहिए। खुदा चाह रहा है कि हमारा आपका वह पुराना बादशाह वजीर का रिश्ता एक बार फिर से जाग उठे। मुल्क में हम आप बादशाह वजीर बन कर रहें। दोनों मिल कर हंगामे को कामयाब बनाएँ।"

"काश आपका कहना सच हो !" नवाब वजीरअली खाँ ने घोड़े से कूद कर कहा। फिर बहादुरअली से कहा—"हमारे घोड़े को फिलहाल तुम सँभालो।"

बहादुरअली ने अपना घोड़ा एक देहाती युवक को सौंप दिया और खुद वजीर-अली खाँ के घोड़े पर सवार हो गया।

हाथी पर जीना लग गया। नवाब वजीरअली खाँ चढ़ कर शाहजादे मिरजा मुजफ्फरबख्त के पीछे खवासी में बैठ कर बोले—"अब हमारे बैठने की जगह यहँ है। बादशाह वजीर का पुराना रिश्ता यही है। सलतनत मोगलिया में वजीर हमेशा बादशाह के मोरछल बरदार रहा है, इसलिए हम भी अपने बादशाह के मोरछल बरदार हैं।"

'काश, हंगामा कामयाब होकर ये रिश्ता हमेशा-हमेशा के लिए मजबूत बना रहे।" शाहजादे ने कहा—"अब हम दोनों दुश्मनों की एक-एक ज्यादती का बदला चुका देंगे।"

वहाँ से हाथी बाजार की तरफ मुड़ चला। जिन्दाबाद के नारे लगाता हुआ सारा हुजूम पीछे चला।

× × ×

बनारस शहर से बाहर सारनाथ के पड़ोस में नटबेड़ियों का डेरा पड़ा हुआ था। नट-बेड़िए खानाबदोश थे। जिस शहर ठिकाने पर पहुँचते थे, शहर के बाहर कोस पौन कोस की दूरी पर अपना डेरा डालते थे। वहाँ से शहर में जाकर कमाई करते रहते थे। नट-बेड़ियों के कमाई के जरिए अनेक थे। खेल-तमाशे दिखाना, बाँसों रस्सों पर चलना-दौड़ लगाना, उछलना कूदना कलाबाजियाँ करना। ढोलक बजा कर आल्हा-ऊदल की गाथाएँ गाना। पैंतरे बदल-बदल कर उनकी लड़ाइयों का दृश्य उपस्थित करना आदि इनके खेल-तमाशों की विशेषताएँ थीं। अवसर पर लूट-खसोट भी इनकी कमाई में शामिल थी। जहाँ पुरुषों के ये धंधे थे वहाँ स्त्रियों के भी विशेष करतब थे। बड़े घरों के द्वार-द्वार पर जाकर नाचना-गाना और मनचले जवानों को अपनी ओर आकर्षित करना आदि उनकी विशेषताएँ कही जाती थीं।

सारनाथ के उस मैदान में दूर तक लाल-पीले-नीले मोटे-फटे पुराने कपड़ों के पैबन्द लगे पाल-तम्बू तने हुए थे। पालों के भीतर गृहस्थी जमा थी। गृहस्थी में चूल्हा-चक्की, सिल-बट्टा, मिट्टी के बर्तन, सूप-टोकनियाँ, लकड़ी के लट्ठे, बाँस, रस्सी से लेकर कुत्ते-बिल्लियाँ, बकरे-बकरियाँ, तोते-तीतर के पिंजड़े आदि सभी कुछ मौजूद थे। एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रस्थान करने के लिए बैल, भैंसे, गधे-खच्चर भी मौजूद थे।

लगभग सौ डेढ़ सौ पुरुष-स्त्रियाँ तथा बच्चों का गिरोह था। गिरोह का मुखिया एक सत्तर-अस्सी वर्ष का बूढ़ा, किन्तु अपने स्वास्थ्य से साठ वर्ष का मालूम होने वाला चोखा नाम का नट था। गिरोह के समस्त लोगों पर उसकी हुकूमत थी। जिस प्रकार चोखा की हुकूमत पुरुषों पर चलती थी उसी प्रकार उसकी बुढ़िया अनोखी की हुकूमत स्त्रियों पर कायम थी। इसलिए सभी नटनियाँ अनोखी को हाथों पर लिए रहती थीं। डर रहता था कि अगर बुढ़िया की नजर जरा भी बदल गई तो मुश्किल हो जाएगी। चोखा तथा अनोखी को प्रसन्न रखने का केवल एक ही उपाय था कि उन दोनों के हाथों

का मिट्टी का प्याला-चुकरिया खाली न होने पाए। उसमें मदिरा मौजूद रहे और वे दोनों बैठे चुस्की लेते रहें। चोखा और अनोखी सवेरे से रात में सोते समय तक मदिरा की चुस्की लेते रहते थे।

चोखा-अनोखी की सन्तानें काफी थीं। बारह लड़के थे, किन्तु लड़की केवल एक ही थी, जिसका नाम विलासी था। विलासी उनकी अन्तिम सन्तान थी इसलिए वह लड़कों से अधिक प्यारी थी। गिरोह के सभी नट-नटनियाँ भी विलासी को अपना दुलार देने में कभी नहीं चूकते थे। ईश्वर ने उसे नट जाति में उत्पन्न अवश्य किया था। लेकिन रंग-रूप, सौन्दर्य खुले हाथों से दिया था। उसके अंग-अंग मानो साँचे में ढले थे। शरीर में इतनी लचक, इतनी फुरती और इतना आकर्षण था कि नट धंधे के अनुसार खेल-कूद, कलाबाजियाँ तथा नाचने-गाने में गिरोह की एक भी नटनी उसका मुकाबला नहीं कर सकती थी। इस समय बिलासी की आयु अठारह-उन्नीस वर्ष की थी। यौवन फटा पड़ता था। उसकी काली कजरारी आँखों में तो मानो जादू भरा था। नजर मिलाते ही तमाशबीनों के दिलों में दर्द पैदा हो जाता था। और सोने-चाँदी के टुकड़ों से उसका आँचल भारी हो जाया करता था।

इस समय नट-नटनियों को बनारस शहर में आकर अपने धंधे के अनुसार कमाई करने का लालच तो था ही, इसके अलावा एक विशेष लालच से उनके दिल बेचैन हो रहे थे। सुना था कि बनारस शहर में लखनऊ के कोई नवाब तथा दिल्ली के बादशाह के एक शाहजादे रह रहे हैं। लखनऊ के नवाब तो नाच-गाने और खेल-तमाशों के शौकीन नहीं हैं किन्तु दिल्ली के बादशाह के शाहजादे बड़े रसिया तथा नाच-गाने के शौकीन हैं। उनकी कोठी में दिन-रात सारंगी सुर भरती रहती है। तबले पर थापें पड़ती रहती हैं और घुघरुओं की छनछनाहट गूंजती रहती है। जो भी नाचने गाने वाली उनकी कोठी पर पहुँच जाती है, मालामाल होकर लौटा करती है। और अगर कहीं कोई नवयौवना नाक-नकश से भी चुस्त हुई तब उसके नसीबे का क्या कहना है। शाहजादे के गले का हार ही बन जाया करती है। उस गिरोह के जवान नटनियों लड़कियों के लिए यह खबरें बड़ी दिलचस्प तथा लालच से भरी हुई थीं। विशेष रूप से बिलासी के दिल में तो उथल-पुथल सी मच रही थी।

नट लोगों के लिए भी लालच की एक विशेष खबर सुनाई दी थी। सुना था कि बनारस में रहने वाले लखनऊ के नवाब बड़े कसरती और अखाड़ची हैं। इसलिए उन्हें नटों के खेल-तमाशे बहुत पसंद है। उनकी कोठी में प्रतिदिन अखाड़ा गरम होता है और तरह-तरह के शारीरिक करतबों का अभ्यास किया जाता है। अतः नट लोग उमंगों से भरे हुए उनकी कोठी पर पहुँच कर अपने करतब दिखाने और इनाम इकराम से मालामाल होने के लिए उत्सुक थे।

आज सबेरे से नटों के डेरों में हड़कम्प सी मची हुई थी। प्रौढ़ तथा युवक नट

अपने करतबों के साधन लम्बे-लम्बे मजबूत बाँस, लकड़ी के लट्ठे, रस्से-रस्सियाँ, भैंसों के बड़े-बड़े सींग, ढोलकें, उछाल लगाने वाले मजबूत पटिए और जाने क्या-क्या अगड़म-बगड़म पालो के अन्दर से निकाल कर झाड़ पौंछ रहे थे। कुछ ढोलकों की ढीली डोरियाँ खींच कस कर उनकी आवाज को सुरीली बनाने में व्यस्त थे। और आपस में बड़ी लम्बी-चौड़ी उम्मीदों भरी बातें भी करते जा रहे थे।

नटनियाँ भला कब पीछे रहने वाली थीं। वह तो पुरुषों से दस कदम आगे रह कर अपने करतब दिखाना चाहती थीं। अतः उनसे बहुत पहले सचेत होकर साज-सिंगार में जुट गई थीं। कुछ बालों में कंघी करके गोंद लगा-लगा कर पाटी सँवार रही थीं। कुछ लाल, हरे, नीले लहंगों को झाड़ने फटकारने में व्यस्त थीं। कुछ अपने दुपट्टों को पानी से धो कर सुखा रही थीं। कुछ घुंघरुओं की डोरी को मजबूत बना रही थीं और कुछ अपने गिलट-रांगे के गहनों को खजूर की कूची से साफ करके चमकाने में तल्लीन थीं।

लेकिन बिलासी इनसे चुस्त नजर आ रही थी। वह सब से पहले ही कंघी चोटी से लैस, लंहगे-दुपट्टे में लिपटी जीती-जागती गुड़िया बनी इधर से उधर लंहगा फहराती फिर रही थी। उसका लहंगा दुपट्टा तथा कुर्ती दूसरी नटनियों की अपेक्षा कुछ नया भड़कीला तथा चमकदार था। उनमें कच्चे गोटे की भी झलक-चमक नजर आ रही थी। उसके गले में रांगे की जो हवेल पड़ी हुई छाती पर झूल रही थी उसमें छोटे-छोटे शीशे के टुकड़े जड़े थे और नाभी पर झूलने वाला बीच का पान इतना बड़ा था कि आरसी का काम दे रहा था। बिलासी बार-बार उस पान में अपने चेहरे का बनाव-सिंगार निहार लेती थी। उसे अपने साज-सिंगार पर गर्व हो रहा था।

चोखा और अनोखी पालु के बाहर एक फटी-पुरानी खजूर की चटाई पर बैठे चुकरियाँ हाथों में थामे दारू के घूंट गले उतार रहे थे। तभी बिलासी मुस्कराती हुई उन दोनों के पास आ गई।

अनोखी ने अपनी लाडली को ऊपर से नीचे तक देखा और चौंक सी पड़ी। बोली—"अरी बिलसिया तूने यह कैसा अधूरा सिंगार किया है?"

बिलासी बोली—"क्यों? मेरे सिंगार में किस चोज की कमी रह गई है?"

अनोखी बोली—"आँखें सूनी और छोटी-छोटी दिखाई देती हैं। उनमें काजल क्यों नहीं लगाया? बिना काजल आँखों में आँजे सिंगार अधूरा ही माना जाता है।" फिर मदिरा का घूंट गले उतार कर कहा—"जा, पाल के भीतर से काजल की डिबिया उठा ला। मैं तेरी आँखों में काजल लगा कर उन्हें कटीली बना दूँ। तभी न तू उनका चमत्कार दिखाएगी।" और बुढ़िया मुस्करा दी।

बिलासी धीरे से बोली—"मैंने काजल लगाया तो था। रेख पतली खिंची है।" और वह पाल के भीतर काजल की डिबिया लेने चली गई।

चोखा ने मदिरा की चुस्की लेने के बाद अनोखी से कहा—"अपनी बिलसिया अगर शाहजादे की आँखों में बस गई तो फिर पौबारा ही पौबारा हैं।"

"शाहजादे की आँखों में बिलसिया को बसी-बसाई ही समझो?" अनोखी ने कहा—"हमारी बिलसिया उनकी सैकड़ों रंडी-पतुरियों को पीछे धकेलती है। जरा उसे उनके सामने नाचने-गाने और हाव-भाव तो दिखाने दो। एक ही कटाक्ष में उनको घायल कर देगी।" और उसने मदिरा गले उतारी।

बिलसिया काजल की डिबिया लेकर आ गई। अनोखी ने अपनी उँगलियों में कुछ अधिक मात्रा में काजल लेकर उसकी आँखों में लगा दिया और मुस्करा कर बोली—"ले, अब देख कितनी बड़ी-बड़ी आँखें हो गई हैं।"

बिलसिया ने छाती पर लटकती हुई हवेल के बड़े पान में मुखड़ा देखा और हँस-कर बोली—"आहरे, कितना भर-भर आँखों काजल लगा दिया है।"

"कटाक्ष ऐसी ही आँखों से किया जाता है?" अनोखी ने कहा। फिर उसके सिंगार को पैनी आँखों से परख कर बोली—"अब भी सिंगार में मुझे कमी दिखाई पड़ती है।"

"अब किस चीज की कमी है?" उसने पूछा।

अनोखी ने उठ कर कहा—"ठहर मैं बताती हूँ किस चीज की कमी है?" और वह पाल के भीतर गई। एक पोटरी को खोल कर उसमें से एक लाख का कंठा निकाला और लाकर बिलासो के गले में बाँध कर बोली—"इसकी कमी बाकी थी। अब तेरा सिंगार बहुत ऊँचा उठ गया। जीत कर ही लौटेगी।"

बिलासी वहाँ से दूसरे पालों की तरफ चली गई।

सूर्य सिर पर आ रहा था किन्तु धूप अब भी प्यारी लग रही थी, क्योंकि हवा कुछ ठंडी बह रही थी। नट-नटनियों के जत्थे बनारस शहर को जाने के लिए तैय्यार होकर पालों से निकल पड़े। डेरे में केवल चोखा तथा अनोखी चार-पाँच अन्य गर्भवती नटनियाँ तथा कुछ छोटे बच्चे रह गए।

चोखा ने अपने लड़कों से पुकार कर कहा—"बिलासी को लेकर शाहजादे की कोठी पर अवश्य जाना।"

सब चलने को हुए। तभी बनारस शहर की ओर से एक युवक नट ने आकर कहा—'जल्दी चलो सब लोग। आज बड़ा शुभ दिन है। बनारस शहर तथा बाजार लुटने वाला है। तमाम इधर-उधर के गावों के लोग लूट-खसोट के लिए दौड़े चले आ रहे हैं। इसलिए अपने धंधे की कमाई के साथ आज कुछ लूट का माल भी हाथ लगेगा।"

चोखा ने पूछा—"शहर बाजार क्यों लुटने वाला है? कुछ इसका भी पता चला है?"

"इसका कुछ भी पता मुझे नहीं है?" युवक नट ने कहा—"मैंने तो जैसे ही शहर बाजार लुटने की खबर सुनी, उलटे पैरों सबको खबर देने के लिए भाग लिया।

लेकिन रास्ते में जो गाँवों के लोग उधर को दौड़े चले जा रहे थे, उनके मुँह से इतना जरूर सुना है कि अंग्रेज मार डाले गए। उनका राज उठ गया। बनारस में अब लखनऊ के नवाब का राज है।"

"तब जल्दी जाओ ?" चोखा ने इतमीनान से कहा—"अगर लूट हो रही हो तो करतब, खेल दिखाने में मत पड़ना। तुम सब लोग भी लूट-खसोट में जुट जाना।"

इसके बाद नट-नटनियों के जत्थे बनारस शहर की ओर चल पड़े।

३६

जब नवाब वजीरअली खाँ तथा उनके साथी करनल बर्नट का पीछा छोड़ कर बनारस शहर की ओर चले गए। तब करनल बर्नट ने सन्तोष की साँस ली। श्रीमती बर्नट भी ऊपर की मंजिल से उनके पास आ गईं। लेकिन घबराई हुई थीं। आते ही उन्होंने बर्नट के जखम को देखा। यद्यपि बहुत साधारण सा जख्म था। उन्होंने खून को धो-धो कर पट्टी बाँध दी।

बर्नट बोला—"अगर मैं झपट कर कमरे के अन्दर न हो गया होता तब नवाब की तलवार गहरी पड़ती और जख्म खतरनाक होता।"

"लेकिन नवाब ने वहाँ आकर तलवार चलाई क्यों ?" श्रीमती ने पूछा।

"मुझे भी यही आश्चर्य है ?" बर्नट ने कहा—"लेकिन उनकी तलवार खून से रंगी हुई थी। मालूम होता है कि वह किसी का खून करके इधर आए थे।"

"उनके साथ रजीडेन्ट की कोठी के कुछ चपरासी तथा तिलंगे भी थे। क्या मामला है ? कुछ समझ में नहीं आया।"

बर्नट ने एक जाली से झाँक कर बाहर की ओर देखा और बोला—"अब तो बाहर का वातावरण साफ है। कोई नहीं दिखाई पड़ता...."

श्रीमती बोल उठीं—"नवाब और उसके सभी साथी शहर की ओर चले गए हैं। मैंने ऊपर से देखा था।"

"तब बाहर जाकर नवाब के इस पागलपने का पता लेता हूँ। आखिर उन्होंने आज क्यों ये बेजा हरकत की है और किसके खून से अपनी तलवार को रंगा है ?" और वह कमरे का द्वार खोलने लगा।

श्रीमती बोलीं—"फिर भी सचेत होकर बाहर जाइए।"

बर्नट लौट पड़ा। आलमारी से पिस्तौल निकाली, उसमें कारतूस चढ़ाया। फिर उसे हाथ में लेकर द्वार खोलने के लिए बढ़ा।

बर्नट ने बड़ी सावधानी और चैतन्यता के साथ द्वार खोला। बरामदे में आकर इधर-उधर नजर दौड़ाई। कहीं कोई न था। किस से पूछ-ताछ की जाए। बर्नट इसी चिन्ता में बरामदे में खड़ा इधर-उधर देख रहा था।

तभी दो चौकीदार तथा एक तिलंगा साहब के सामने आ गए। वह लोग नवाब वजीरअली खाँ के तूफान से भयभीत होकर इधर-उधर छिप गए थे। बर्नट ने उन लोगों से नवाब को इस बेजा हरकत का कारण जानना चाहा।

तिलंगा बोला—"हुजूर नवाब की इस बेजा हरकत का कारण तो मुझे नहीं मालूम। लेकिन अभी-अभी रजीडेन्ट की कोठी के एक चौकीदार से ज्ञात हुआ है कि नवाब वजीरअली खाँ रजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी का खून करके हुजूर की कोठी की तरफ आए थे।"

बर्नट ने आश्चर्य के साथ कहा—"ओ, जान चेरी का खून ?'

"जी हाँ ?" तिलंगा बोला—"चौकीदार कह रहा था कि उनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े अभी तक वहीं उनके कमरे में पड़े हुए हैं।"

करनल बर्नट को पता था कि कलकत्ता से गवर्नर जनरल का आदेश आया है कि नवाब वजीरअली खाँ बनारस से कलकत्ता रवाना कर दिए जाएँ। वह सोचने लगे—शायद रजीडेन्ट मिस्टर जान चेरी ने नवाब को वह आदेश सुनाया होगा। मुमकिन है नवाब को नागवार गुजरा हो और आपस में कुछ बात बढ़ गई हो। जिसके कारण ही नवाब ने कम्पनी सरकार की मुखालफत इख्तियार करके जान चेरी का खून कर डाला हो ?

करनल बर्नट की विचारधारा और आगे बढ़ी—अब नवाब वजीरअली खाँ शहर की तरफ हैं। सम्भव है बनारस के बदमाश, शोहदे गुंडों को अपने पक्ष में लेकर हुकूमत के खिलाफ कोई तूफान खड़ा करें ? कम्पनी सरकार का एक अधिकारी होने के नाते जान चेरी की सारी जिम्मेदारी मेरे ऊपर आती है। इस वक्त लाजमी तौर से मेरा फर्ज है कि नवाब वजीरअली खाँ के फसाद हंगामा को आगे न बढ़ने दूँ। जैसे भी बन पड़े उसकी रोक-थाम करूँ।

अपनी इस धारणा के अनुसार करनल बर्नट ने तिलंगा से कहा—"तुम इसी वक्त भाग कर जाओ और बनारस के शहर कोतवाल मिरजा प्राँचू तथा रईस नवाबअली अकबर खाँ को मेरे पास बुला लाओ।"

तिलंगा हुक्म पाकर चला गया।

बर्नट चिन्ता से भरे हुए बरामदे में घूमने लगे।

कुछ देर बाद शहर कोतवाल तथा कम्पनी सरकार के खैरख्वाह अकबरअली खाँ आ गए। करनल उन दोनों को कोठी के अन्दर ले गए। कुर्सियों पर बैठाया फिर बोले—"आप लोगों को मालूम है ? बनारस में कयाम करने वाले लखनऊ के नवाब वजीर-

अली खाँ ने मुखालफत इख्तियार कर ली है। कम्पनी सरकार के खिलाफ तलवार खींच कर बनारस के रजीडेन्ट जान चेरी के टुकड़े-टुकड़े कर डाले हैं। हमारी कोठी पर आकर हमारे ऊपर भी वार किया था लेकिन उनकी तलवार चूक गई और हमारे कंधे पर मामूली-सा ही जख्म आया।" फिर साँस लेकर कहा—"हमारी कोठी से वह शहर की तरफ गए थे। वहाँ उन्होंने क्या किया और क्या कर रहे हैं या क्या करने का इरादा रखते हैं, यही जानने के लिए हमने आप लोगों को बुलाया है। क्योंकि रजीडेन्ट जान चेरी की जिम्मेदारी अब हमारे ऊपर है। हम चाहते हैं कि उनका ये हंगामा-फसाद जोर न पकड़ने पाए। उनकी कोठी को घेर कर गिरफ्तार कर लिया जाए या कोठी के बाहर पहरे बैठा कर फिलहाल वह नजरबन्द कर दिए जाएँ।"

शहर कोतवाल मिरजा पाँचू ने कहा—"हुजूर नवाब वजीरअली खाँ का फसाद मामूली नहीं मालूम होता। कई हजार हथियारबन्द देहाती जवान और अड़ोस-पड़ोस के कुछ जमींदार उनके साथ हैं। इसके अलावा शहर के शोहदे, गुंडे, लफंगे और बेफिकरे भी उनके साथ हो गए हैं। उनकी ताकत कदम-कदम पर बढ़ती चली जा रही है। बादशाह देहली के शाहजादे मिरजा मुजफ्फरबख्त जो एक अर्से से बनारस में रह रहे थे, वह भी नवाब वजीरअली खाँ के साथी बन गए हैं।"

करनल बर्नट का चेहरा गम्भीर हो गया। दो क्षण खामोश रहे, फिर बोले—"हमने आप लोगों को इसीलिए बुलाया है कि हमें मशविरा दें कि नवाब का यह फसाद किस तरकीब से रोका जा सकता है?" और उन्होंने अलीअकबर खाँ की तरफ देखा।

अलीअकबर खाँ बोले—"हुजूर! कमतरीन के ख्याल से ये हंगामा-फसाद बिला फौजी ताकत के नहीं रुक सकता। एक तरह से ये हंगामा नवाब बादशाह का है। इसे कोई मामूली ताकत, दस-बीस तिलंगे चपरासी नहीं रोक सकते। फिर एक जबर्दस्त बात और भी है। जो हंगामा को बढ़ावा देने वाली कही जा सकती है।"

"वह क्या बात है?" बर्नट ने विस्मय से उनकी तरफ देखा।

"वह बात ये है?" अलीअकबर खाँ ने कहा—"बनारस में जो कुछ हिन्दुस्तानी पल्टन मौजूद हैं उनके अधिकं सिपाही—तिलंगे और अफसर लखनऊ-अवध इलाके के रहने वाले हैं। चूंकि ये फसाद लखनऊ के नवाब वजीरअली खाँ ने खड़ा किया है, इस लिए सिपाही तिलंगों में खिचड़ी पक रही है। ये लोग भी शामिल होना चाहते हैं।"

"आपको यह कैसे मालूम हुआ?"

"मेरा एक नौकर जो अवध का ही रहने वाला है, अभी-अभी इधर आने से जरा पहले उसने खबर दी थी।" फिर जरा रुक कर कहा—"इसी वजह से फिदवी का ख्याल है कि ये तूफान बिला फौजी ताकत के खतम न होगा।"

"लेकिन फौज, पल्टन तो यहाँ बनारस में नहीं है?" बर्नट ने चिन्ता के साथ कहा—"कलकत्ता से बुलाना पड़ेगा।"

"तब तक नवाब साहब का तूफान काफी जोर पकड़ लेगा ?" मिरजा पाँचू ने धीरे से कहा।

बर्नट ने एक बार नजर घुमा कर उनकी तरफ देखा। फिर नीचा सिर करके चिन्ता में डूब गए।

तभी झंडा सिंह सवार के आने की खबर हुई। बर्नट ने उसे अपने पास बुला कर पूछा—"क्या बात है ? फसाद की कोई खबर लाए हो ?"

झंडा सिंह ने कहा—"हुजूर फसाद का तो कोई हाल मुझे मालूम नहीं है। मैं ये अर्ज करने के लिए हाजिर हुआ हूँ कि जिस काम के लिए रजीडेन्ट साहब ने मुझे कलकत्ता जाने का हुक्म दिया था, वह पूरा हो गया है। लेकिन यहाँ आने पर मैंने मनहूस खबरें सुनी हैं। रजीडेन्ट साहब की श्रीमती ने साहब के मार डाले जाने का हाल बताया और मुझे हुक्म दिया कि तुम जिसके लिए भेजे गए, उसकी खबर जाकर कर्नल बर्नट को दे दो। क्योंकि अब कम्पनी सरकार के बड़े अफसर यहाँ बनारस में वही हैं।"

"तुम किस काम के लिए कलकत्ता भेजे गए थे ?"

"रजीडेन्ट साहब ने वहाँ से एक पल्टन तथा एक छोटा तोपखाना बुलाया था। अतः पल्टन और तोपखाना आकर बनारस की छावनी में ठहरा हुआ है।"

करनल बर्नट के चेहरे पर रौनक दौड़ आई। बोले—"वेल, तुम उलटे पैरों छावनी में जाकर पल्टन के अफसर से बोलो कि पल्टन का कोई सिपाही कमर न खोले। फसाद दबाने के लिए तैय्यार रहे। हम अभी छावनी पहुँच रहे हैं।'

झण्डा सिंह चला गया।

बर्नट ने कुर्सी से उठ कर शहर कोतवाल मिरजा पाँचू से कहा—"आप जाएँ और शहर की हिफाजत के लिए जो कुछ कर सकते हों करें। मैं छावनी की तरफ जा रहा हूँ।" फिर अलीअकबर खाँ से कहा—"आप कम्पनी सरकार के खैरख्वाह हैं। इस हंगामा को रफा-दफा करने के लिए शहर कोतवाल को इमदाद देते रहें।"

मिरजा पाँचू और अलीअकबर सलाम करके चले गए।

बर्नट ने घोड़ा मँगाया और सवार होकर छावनी की राह पर घोड़े को दौड़ा दिया। उनके पीछे दो सिक्ख सवार भी दौड़ रहे थे।

उधर बनारस शहर में नवाब वजीरअली खाँ के हंगामे तथा अंग्रेजों की मुखालफत का हुल्लड़ मच रहा था। उनके हुजूम में भूखे देहाती, शहर के गुण्डे-शोहदे आदि अधिक थे, जिन्हें न लड़ाई-दंगे से कोई मतलब था, न फसाद-मुखालफत से। उनका मतलब तो केवल लूट-खसोट से था। अतः बाजार में पहुँचते ही हुजूम का रंग बदल गया। सेठ-साहूकारों, जौहरियों और बजाजों आदि की दूकानों में भरा हुआ सोना-चाँदी, हीरे-मोती के जेवरात तथा चमचमाते रेशमी और जरी के काम वाले कपड़ों को देख कर गुण्डों की तबीयत भुरभुरा उठी। मुंह में पानी भर आया और लूट-खसोट मच गई।

यद्यपि नवाब वजीरअली खाँ नहीं चाहते थे कि बनारस की प्रजा बेवजह सताई जाए। उनकी सम्पति लूटी जाए। उनका ध्येय तो बनारस शहर से अंग्रेजी-सत्ता को उठा देना था। लेकिन इस लूट-खसोट से अंग्रेजी हुकूमत को धक्का लग रहा था और हंगामा का आतंक बढ़ रहा था, इसलिए उन्होंने लूट-पाट को रोकने की चेष्टा न की।

नट-नटनियों के जत्थों ने बनारस शहर में प्रवेश किया। पुरुषों के कानों में लूट की आवाज गूँज गई। अपने धन्धे से कमाई करना भूल गए। और लूट-खसोट करने वाले शोहदे-गुण्डों के साथी बन गए। लूटने-खसोटने वाले बिना किसी प्रकार के डर-भय के दूकानों पर टूट पड़े। छलाँग मारने तथा शारीरिक फुरती में नट-समाज वैसे ही चुस्त था। बनिसबत शोहदों-गुण्डों के कहीं ज्यादा माल-असबाब हथियाने लग गया।

नटनियाँ गली-कूचों में बिखर गईं। और बड़े-बड़े घरों के द्वारों पर लँहगे फहरा-फहरा कर नाचने-गाने लग गईं। घरों के द्वार खुल गए। महिलाएँ अपना काम-काज छोड़ कर उनका नाच-गाना देखने-सुनने लगीं। पैसे बरसने लगे।

हाथी पर सवार बादशाह वजीर यानी शाहजादा मिरजा मुजफ्फरबख्त तथा नवाब वजीरअली खाँ धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे। जय-जयकार के नारे लगाता हुआ विद्रोही दल साथ चल रहा था। एक खबर सुनाई पड़ी—"अंग्रेजों की फौज तथा तोप-खाना कलकत्ता से आ गया है।" और विद्रोह को दबाने के लिए छावनी से नगर की ओर आ रही है।

हुजूम में हलचल पड़ गई। आगे बढ़ना रुक गया। मुकाबले के लिए एक स्थान ताक लिया गया। विद्रोही तिलंगों ने मोर्चा बाँधा। बनारस के राजा के सिलहखाना से प्राप्त की हुई छोटी-छोटी तोपों को मोर्चे पर जमा लिया। देहाती जवानों ने भी तलवारें, भाले-बल्लम तथा लाठियाँ सँभाल लीं। और मुकाबले के लिए जम गए।

अंग्रेजी पलटन कदम बढ़ाती, हुजूम का पता लेती हुई चली आ रही थी। सामने मोर्चा बँधे देख कर कुछ दूर पर रुक गई और तोपों से गोले तथा बन्दूकों से गोलियाँ-छर्रे बरसाना आरम्भ कर दिया।

इधर विद्रोही दल में केवल तिलंगों के पास अंग्रेजी-बन्दूकें थीं किन्तु वे इतनी साधरण थीं कि दूर तक मार नहीं कर सकती थीं। शेष हुजूम एक प्रकार से खाली हाथ ही था। तलवारें बल्लम का वहाँ काम न था। क्योंकि तलवारें तो भिड़न्त की लड़ाई लड़ने वाली थीं। इसके अलावा आधा हुजूम अंग्रेजी पल्टन तोपखाना का आना सुन कर तितर-बितर हो गया था। गुण्डे-शोहदे बेफिकरे लूट-खसोट में तल्लीन हो रहे थे। नवाब के जो देहाती जवान थे तिलंगों के पीछे मोर्चे पर डटे थे। उनके साथ मुसाहिब लोग भी मौजूद थे। किन्तु अंग्रेजी पल्टन के तोप-गोलों तथा गोलियों की बौछार के आगे विद्रोही मोर्चा कमजोर पड़ गया। यद्यपि नवाब वजीरअली खाँ उन सब का दिल बढ़ा रहे थे फिर भी पैर उखड़ गए। मोर्चा टूटने सा लगा। यह देख कर नवाब वजीरअली खाँ हाथी

से उतर कर अपने घोड़े पर सवार हो गए। हाथ की तलवार ऊँची करके कहा—"भाइयों! यही हिम्मत और साहस का समय है। हार-जीत तो हुआ ही करती है। यदि यह मोर्चा नाकामयाब रहा है तो इसका यह मतलब नहीं है कि हम मुकाबला छोड़ दें। कहीं दूसरे स्थान पर जम कर मुकाबला करना चाहिए।"

वहाँ से हट कर पड़ोस के एक बाग में मोर्चा बाँधा गया। लेकिन देहाती जवानों का धीरज साथ छोड़ चुका था। क्योंकि वे लोग न तो खानदानी सिपाही थे न उन्होंने अपनी आँखों से कभी तोप बन्दूकों की लड़ाई देखी थी। चार दिन नवाबी अखाड़े में जोर आजमाई के साथ छुरी, कटार तथा तलवार के पैंतरे बदलना सीखा था, अतः बाग के मोर्चे में भी वे लोग लड़खड़ा गए। और आँख बचा कर दस-दस, बीस-बीस की टोलियों में भागना शुरू कर दिया। उधर अंग्रेजी पल्टन गोले बरसाती हुई आगे बढ़ती चली आ रही थी।

अब बाग के मोर्चे पर नवाब वजीरअली खाँ चार यार, मुसाहिब तथा शाहजादा और उनके दो-तीन खिदमतगार ही दिखाई पड़ते थे। तिलंगे जो अभी तक मोर्चा थामे हुए थे आधे से अधिक कट-मर चुके थे। उनकी छोटी-मोटी तोपों का भी मुँह बन्द हो चुका था।

लेकिन नवाब वजीरअली खाँ के जोश में कमी न थी। रक्त की बूंद-बूंद गरम हो रही थी। मुग्दर, लैजम हिलाने वाली बाँहें फड़क रही थीं। चेहरा तेज से चमक रहा था। उन्होंने शाहजादे की तरफ देखा और जोश के साथ कहा—"देखिए भाई साहब! हमने तलवार म्यान से बाहर निकाली है। अब वह म्यान में दाखिल नहीं हो सकती। हमारा साथ छोड़ कर जिसे भागना हो वह भाग जाए। हम गीदड़ की तरह दुम दबा कर भागने वाले नहीं हैं। डट कर मुकाबला करेंगे। अगर खुदा को कुछ और ही मंजूर होगा। और हमारी तलवार टूट कर हाथ से गिर जाएगी तो हम भी मैदानेजंग में गिर जाएँगे। आखिर एक दिन तो मरना ही है। कल न सही आज ही सही।"

शाहजादा मुजफ्फरबख्त उस समय जोश में आकर नवाब वजीरअली खाँ के साथी जरूर बन गए थे, लेकिन उनमें कोई दम-खम न था। समझे थे कि नवाब ने रेजीडेन्ट का खात्मा करके बनारस से अंग्रेजों का राज उठा दिया है। चलो हम भी उनका हाथ बँटा कर नाम कमा लें। फायदे में आधा-साझा हो जाएगा। उन्हें अंग्रेजी पल्टन के आ जाने का जरा भी ख्याल न था। इसके अलावा वह दिल फेंक आदमी ऐश-आराम में डूबे रहने वाले थे, अतः उन्होंने सोचा—इस हंगामा में मेरा कबाड़ा हो जाएगा। अपने हाथों से फाँसी का फन्दा गले में डालना पड़ जाएगा। हाथी पर बैठे-बैठे ही बोले—"भाई जान यह लड़ाई है। बनती भी है बिगड़ती भी है। जवानी के जोश में सिर्फ अपनी बाजुओं की ताकत से अंग्रेजी पल्टन का मुकाबला नहीं किया जा सकता। और इस तरह से अपनी जान खो देने से क्या हासिल होगा?"

"तब नामर्दों, कायरों की तरह मोर्चा छोड़ दिया जाए ?" वजीरअली ने जोश के साथ कहा।

"नामर्दी जवामर्दी का कोई सवाल नहीं है। सवाल सोचने-समझने का है।"

"क्या सोचा-समझा जाए ?"

"इस वक्त यहाँ से निकल चला जाए। कोठी पर पहुँच कर ठण्डे दिल से मसले पर ग़ौर किया जाएगा। अपनी ताकत बढ़ाई जाएगी। जंग का काफ़ी साज़ सामान जमा किया जाएगा, उसके बाद मुकाबले पर आया जाएगा।"

संध्या का अंधकार गहरा होता जा रहा था। शाहजादा मुजफ्फरबख्त ने अपना हाथी कोठी की तरफ़ बढ़ा दिया। राह चलते हुए देखा कि एक बड़ी सी हवेली के द्वार पर एक परी जमाल नवयौवना मधुर कंठ-स्वर से गा रही है और मयूर की भाँति थिरक भी रही है। ढोलक की आवाज़ के साथ उसके पैरों के घुंघरु छनछना रहे हैं। और दस-पाँच अधेड़ स्त्रियाँ अपनी तालियों के चटाचट के साथ उस नवयौवना के नृत्य-संगीत को सफल बना रही हैं। हवेली के द्वार पर स्त्रियों की एक खासी भीड़ उपस्थित है। क्या उस भीड़ से गायिका की ओर चाँदी के टुकड़ों की बौछार भी हो रही है।

शाहजादे ने कुछ निकट पहुँच कर हाथी को रुकवा दिया। उस नाचने-गाने वाली सौन्दर्यमयी प्रतिमा को खुली आँखों से निहारने लग गए। टकटकी सी बँध गई।

जैसे ही शाहजादे का हाथी अपनी चाल रोक कर वहाँ खड़ा हुआ नटनियों ने अपनी तालियों की चटाचट ध्वनि बन्द कर दी और उनकी निगाहें हाथी पर बैठे हुए शाहज़ादे की ओर उठ गईं। बिलासी ने भी अपनी फिरकी पूर्ण कर के शाहज़ादे की तरफ़ आँखें घुमाईं। उसे समझने में देर न लगी। शीघ्र ताड़ लिया कि हाथी पर बैठा यह सुन्दर नवयुवक अवश्य कोई रईस पुत्र या कोई शाहजादा है। उसने डेरे में सुना था कि बनारस में जो दिल्ली के बादशाह के शाहजादे रहते हैं वह अकसर सुबह शाम हाथी पर बैठ कर सैर को निकला करते हैं। सम्भव है ये वही हों। अतः उसने अपनी कजरारी आँखों का एक कटाक्ष शाहजादे की ओर फेंक कर आँखें चुरा लीं।

बिलासी की आँखों के एक ही चमत्कार, एक ही कटाक्ष ने शाहजादे को घायल कर दिया। उन्हें वह दिन भर का फसाद हँगामा, लड़ाई मुकाबला एकदम भूल गया। मुस्कराते हुए बिलासी से कहा "तुम कहाँ की नाचने गाने वाली हो ?"

बिलासी ने मुस्कानों के साथ पुनः अपनी आँखों का एक चमत्कार दिखा कर मीठे स्वर से कहा—"सरकार, मैं नट-बाला हूँ और नाचना-गाना ही हमारा धंधा है।"

"हमारी कोठी पर आओ ?" उन्होंने कहा—"वहाँ हम तुम्हारे गुणों को देखें परखेंगे ?"

"सरकार की कोठी कहाँ है ?" एक प्रौढ़ा नट्नी ने पूछा ।

"यहाँ से पचास साठ गज़ आगे ।"

"हुजूर चलें । हमलोग अभी हाजिर हो रही हैं ।" नटनी ने कहा ।

शाहजादे ने मुस्कराते हुए बिलासी से कहा—"ऐ, तुम हमारे साथ हाथी पर बैठ कर चल सकती हो ?" और उन्होंने हाथी पर ज़ीना लगवा दिया ।

बिलासी ने सकुचा कर साथ की नटनियों की तरफ़ देखा । उन सबने आँखों के इशारे से हाथी पर सवार हो जाने की सम्मति प्रदान कर दी । बिलासी ज़ीना चढ़ कर हाथी पर पहुँच गई । शाहजादे ने उसे अपनी बगल में बैठा लिया और हाथी कोठी की ओर चल पड़ा । दूसरी सभी नटनियाँ हाथी के पीछे चल रही थीं ।

उधर संध्या के अंधकार ने जब बाग़ के कोने-कोने पर काली चादर तान दी, हाथ को हाथ न दिखाई पड़ने लगा, नवाब वजीरअली खाँ ने भी मोर्चा छोड़ दिया । चार यार तथा मुसाहिबों सहित दुर्गाकुन्ड की कोठी की ओर चल पड़े । बेगम वजीरुन्निसा दिन भर की कैफियत सुन चुकी थीं । और बड़ी बेचैनी के साथ नवाब के आने की प्रतीक्षा कर रही थीं ।

नवाब वजीरअली खाँ मुसाहिबों आदि को साथ लिए ज्यों ही कोठी में दाखिल हुए और उन सब को दीवानखानों में बैठा कर अन्दर जनानखाने में पहुँचे तो वजीरुन्निसा दौड़ कर उनसे लिपट गई । वक्ष में अपना मुंह छिपा लिया और सिसकियाँ भरने लगी ।

वजीरअली खाँ ने बेगम को बाहों में भर कर कहा—"अरे, यह क्या ? तुम इतनी घबड़ा क्यों रही हो ?"

बेगम ने सिर हटा कर कहा—"हुजूर आज सारे दिन कहाँ रहे ? यहाँ जो कैफियत हमारे कानों में गूंज रही थी उससे एक बहशत सी सिर पर सवार हो रही थी । खुशी और अफसोस दोनों में जंग सी छिड़ रही थी ।"

"तुम्हारी वह खुशी-अफसोस की जंग सही थी ।" नवाब ने कहा—"हम एक न एक दिन जरूर अपने इरादे में कामयाब होंगे । हमने जो कदम उठाया है वह गलत नहीं है । कामयाब और नाकामयाबी खुदा के हाथ है ।"

बेगम विस्मय भरी नजरों से उनके चेहरे को देखने लगी ।

वजीरअली खाँ गम्भीर स्वर से बोले—"अब हमारी तुम्हारी ये आखिरी मुलाकात है । अब हम जा रहे हैं ।"

"कहाँ जा रहे हैं ?" बेगम ने हैरत भरे लहजे से पूछा ।

"कामयाबी की तलाश में ।" नवाब ने कहा—"अगर कामयाबी हमारे हाथ आ गई, तब तो मिलना-मिलाना रोज का क्या हर वक्त का है । वरना ये आखिरी ही भेंट मुलाकात है ।"

"क्या हम हुजूर के साथ नहीं चल सकतीं ?" बेगम ने उदास स्वर से पूछा—

"हमें भी अपने साथ लिए चलें ?"

"नहीं ?" वजीरअली खाँ ने गम्भीर होकर कहा—"तुम्हारा हमारा साथ खुदा की मर्जी और इरादे की कामयाबी पर ही मुनहसर है।" फिर जरा रुक कर कहा—रंजीदा होने की जरूरत नहीं है। एक बाजी बिछी है। हार जीत का दाँव लगा है। उस बाजी की हार जीत में हमीं को उलझने दो। तुम चाहना तो बनारस में इसी कोठी में रहना या अगर अकेले यहाँ जी न लगे तो लखनऊ चली जाना। चाहे यहाँ रहो चाहे लखनऊ में, तुमको कोई नहीं सताएगा।"

बेगम कुछ नहीं बोली—उनके अन्दर एक उथल-पुथल सी मची हुई थी।

वजीरअली खाँ बोले—"कनीज फातमा कहाँ है ? दस्तरख्वान लगवाओ। हम और हमारे साथी सभी लोग दिन भर के भूखे हैं। इसलिए वहीं दीवानखाने में सबके खाने का जल्दी इन्तजाम करो। हम भी वही साथियों के साथ दस्तरख्वान पर बैठेंगे।"

"कनीज फातमा तो आज दोपहर से गायब है। जाने कहाँ मर गई ?" बेगम ने झुँझलाहट भरे स्वर से कहा—"लेकिन दस्तरख्वान अभी लगा जाता है।"

बेगम ने अजीजन को आवाज देकर बुलाया और सबके लिए दीवानखाने में दस्तरख्वान लगाने की आज्ञा दी। सब ने एक साथ बैठ कर खाना खाया। इसके बाद नवाब वजीरअली खाँ पुनः जनानखाने में आए। बेगम से जवाहरात का संदूकचा तलब किया। वह झपट कर ले आईं। नवाब ने संदूकचा खोल कर उसमें से आधे अमूल्य जवाहरात अपने कब्जे में कर लिए। शेष जवाहरात को उसी में रहते देकर संदूकचा बेगम को सौंप कर कहा—"ये बाकी जवाहरात तुम्हारी जिन्दगी के लिए बहुत काफी होंगे। आराम के साथ रहना और खर्च करना।" फिर एक क्षण चुप रह कर कहा—"अब यहाँ ज्यादा देर रुकने का समय नहीं है। हमें इजाजत दो।"

बेगम वजीरुन्निसा ने उनके गले में हाथ डाल कर अपना सिर उनकी छाती में टेक दिया और सिसकियाँ भरने लग गई। उनके गरम-गरम आँसुओं से वजीरअली खाँ की छाती भींग गयी। उनकी भी आँखें कुछ गीली हुईं। लेकिन शीघ्र ही उन्होंने अपनी आँखों के पानी को पी लिया आगे साहस के साथ बेगम का सिर वक्ष पर से हटा कर कहा—"जानेमन ? ये रोने-सिसकने या दिल में किसी तरह रंज-अफसोस पैदा करने का वक्त नहीं है। खुद हिम्मत रख कर हमारा दिल बढ़ाने का वक्त है। हमें अब भी उम्मीद है कि अगर हमारा इरादा सही और सच्चा है। हमने सचाई के साथ अंग्रेजों से मुखालफत अख्तियार की है तो जरूर खुदा हमारी मदद करेगा और हम एक दिन कामयाब होकर ही लौटेंगे।"

बेगम खामोश रह कर आँचल से आँखें पोंछने लगी।

रात भींगने लग गई थी। कमरे के बाहर साईस कसे घोड़े पकड़े खड़े थे। वजीरअली खाँ तथा उनके सभी साथी दीवानखाने से बाहर आ गए। सभी उछल कर अपने-

अपने घोंड़ों पर सवार हो गए। और उस टूटती अँधेरी रात में घोड़े बनारस की तंग गलियों को पार करते हुए आजमगढ़ की राह पर आ गये। सबके आगे नवाब वजीरअली खाँ का घोड़ा था। ऐड़ दी गई और घोड़े सरपट भागने लग गए।

३७

रात हो चुकी थी। बाग के अन्दर नवाब वजीरअली खाँ के हू-हल्लड़ की कोई आहट नहीं मिल रही थी। अंग्रेजी पल्टन के जवान महताबें जला कर बाग के अन्दर दाखिल हुए। कोना-कोना छान डाला। कहीं कोई फसादी न था। केवल तिलंगों की लाशें तथा दो-तीन छोटी तोपें चर्ख से उतरी पड़ीं थीं।

कर्नल बर्नट ने पल्टन के कप्तान राबर्ट कोलन्स से कहा—"यहाँ का झगड़ा-फसाद खतम हो गया। फसादी नवाब वजीरअली खाँ तथा उनका साथी दिल्ली का शाहजादा भाग गया। शायद नवाब वजीरअली खाँ यहाँ से भाग कर अपनी कोठी में जा छिपा होगा। इसलिए तुम पल्टन को छावनी में वापस ले जाओ। मैं यहाँ से शहर की तरफ जा रहा हूँ। सुना था कि शहर-बाजार में लूट-खसोट मची हुई है। अतः उसको बन्द करना जरूरी है।"

पल्टन बाग से छावनी को वापस चली गई। करनल बर्नट अपने साथ के कुछ सिक्ख सवारों तथा कोतवाल शहर मिरजा पांचू तथा उनके दस बीर बरकन्दाजों सहित शहर-बाजार की तरफ चल पड़े।

संध्या होने से कुछ पहले शहर-बाजार में लूट आरम्भ हुई थी और अब तक जारी थी। बल्कि रात का अंधकार पाकर उसका रूप अधिक भयंकर हो उठा था। बाजार को खोखला करके अब शहर के रईस अमीर धनी सेठ साहूकारों की हवेलियाँ तथा घर-मकानों में लूट की धूम मची थी। कीमती माल असबाब तो लुट ही रहा था। छोटी-छोटी चीजें भी चोर गिरहकट लेकर भाग रहे थे। मकानों के मालिक अपनी आँखों से बाप-दादों की जमा की हुई जायदाद तथा अपने पसीने की कमाई-सम्पत्ति बाँध-बटोर कर ले जाते हुए देख रहे थे, पर उनकी चीख-पुकार सुनने वाला कोई न था।

एक खुशामदी अंग्रेजों के खैरख्वाह रईस ने अंग्रेजों की दुहाई दी थी। अंग्रेजों से पुकार करने की धमकी देना चाही थी। इस पर लुटेरों ने उसे रस्सी से बाँध कर एक नीम के वृक्ष में उलटा लटका रखा था।

एक मोहल्ले में एक विचित्र सी घटना घट गई थी। मोहल्ले के एक छोर पर किसी सेठ की एक विधवा रह रही थी। घर में अकेली ही थी। आगे-पीछे कोई नहीं था। किन्तु घर में सोना चाँदी अचक भरा हुआ था। सेठानी की आयु तीस-चालीस वर्ष

के बीच में थी। उसका शरीर लम्बा तथा रंग साँवला था। सिर के बाल इतने बड़े व लम्बे थे कि कमर से नीचे झूला करते थे। सेठानी के मकान से दूर मोहल्ले के दूसरे छोर पर रहने वाले सेठ साहूकारों की हवेलियों में लूट हो रही थी। अराजकता का पूर्ण दृश्य दिखाई पड़ रहा था। लुटेरे गठरियाँ बाँध कर घरों की चीजें ले जा रहे थे।

अपने मकान में बैठी हुई सेठानी घबड़ा रही थी। सोच रही थी कि लुटेरे अवश्य ही मेरे घर को ताकेंगे। मेरा सोना-चाँदी लुट जाने पर जीवन व्यर्थ हो जाएगा। द्वार-द्वार पर भीख माँगने का समय आ जाएगा। ये भी सब जानते हैं कि मैं घर में अकेली हूँ। ऐसी अवस्था में लूटने वालों को कोई झिझक संकोच, भय-डर भी नहीं हो सकता। फिर मेरी चीख-पुकार कौन सुन सकता है। सुना है कि लुटेरे अब निर्दयता पर उतर आए हैं। जरा भी चीख पुकार करने पर बाँध कर वृक्षों से लटका देते हैं। छूरियों-कटारों का भी भय दिखाते हैं। सम्भव है मेरे पेट में कटार चुभा दें। साँस भी न लेने दें और सारी सम्पति उठा ले जाएँ। मैं बेकफन पड़ी रह जाऊँ।....जब इस प्रकार मरना है तो उससे अच्छा तो यही है कि लुटेरों से जूझ कर मरूँ....मगर क्या मैं उनसे जीत सकूंगी?

सेठानी कुछ देर तक बैठी कुछ सोचती रही। फिर उठी। अपनी सफेद साड़ी उतार दी। लाल कपड़े की एक लँगोटी लगा ली। वक्ष पर भी एक लाल कपड़ा लपेट कर पीठ पर गाँठ लगा ली। सिर के असाधारण लम्बे बालों को बिखेर लिया। इसके बाद उसने गेरू के लाल रंग, चूने की सफेदी तथा काले काजल से अपने समस्त शरीर को टीका। रंगने से कोई अंग शेष न छोड़ा। चेहरे को उसने विशेष रूप से रंग कर महा भयंकर बना लिया। फिर उसे संतोष नहीं हुआ। मिट्टी के घड़े को फोड़ कर उसके निचले अर्ध भाग में तेल में डुबो कर कपड़े के चीथड़े जला कर काली का खप्पर तैय्यार किया। घर में साग काटने वाला बड़ा सा हँसिया मौजूद था, अतः दाहिने हाथ में हँसिया तथा बाएँ हाथ में जलता हुआ खप्पर लेकर जिधर लूट हो रही थी चीखती-गरजती उधर को दौड़ पड़ी। उसका भयंकर रूप देख कर लुटेरों के होश-हवास खो गए। उस काली रात में सेठानी लुटेरों को साक्षात काली का रूप दिखाई पड़ी। लुटेरे उस मोहल्ले से भाग गए। इस प्रकार सेठानी के कौतूहल पूर्ण साहस ने केवल एक अपने ही घर-सम्पति की रक्षा नहीं की थी; बल्कि सारे मोहल्ले के घरों को लूट-खसोट से बचा लिया था।

करनल बर्नट तथा शहर कोतवाल मिरजा पांचू शहर में पहुँचे। देखा लूट-खसोट जारी है। लुटेरे सिर कंधों पर लूट का माल असबाब लिए इधर से उधर भाग दौड़ लगाए हुए हैं। ऐसा मालूम हो रहा है मानो शहर में किसी का शासन ही नहीं है। पूर्ण अराजकता का प्रभाव छाया हुआ है। लुटेरों को किसी का तनिक भी भय डर नहीं है।

बर्नट ने मिरजा पांचू से कहा—"ये लूट-खसोट एकदम बनारस शहर को तबाह कर देगी और अंग्रेजी हुकूमत के लिए एक बहुत बड़ी बदनामी का बाइस कही जाएगी।

जैसे भी मुमकिन हो इसे बहुत जल्द बंद होना चाहिए।"

मिरजा पांचू गम्भीर होकर बोले—"हुजूर ये लूट इस तरह नहीं बन्द हो सकती।"

"और किस तरह बन्द हो सकती है ?" बर्नट ने विस्मय के साथ कहा।

"बिला पल्टन के आए और छर्रेबाजी किए लूट नहीं रुकेगी।"

"पल्टन को तो हमने वापस छावनी भेज दिया है ?" बर्नट ने धीरे से कहा—फिर जरा ठहर कर बोले—"हमें क्या मालूम था कि लुटेरे अभी तक अपना काम जारी किए हुए हैं। खैर हम खुद छावनी जाते हैं और पल्टन को लाने की चेष्टा करते हैं। जब तक पल्टन यहाँ आए, आप इन्तजाम करते रहें।" और उन्होंने अपने घोड़े को छावनी की ओर दौड़ा दिया।

मिरजा पाँचू का किया कुछ भी न हो सका। उनकी आँखों के सामने सारी रात शहर लुटता रहा। सबेरा होने से कुछ पहले करनल बर्नट पल्टन तथा दो छोटी तोपों को साथ लेकर आ गए। पल्टन के सिपाही सड़कों, गली, कूचों तथा बाजार मोहल्ले में बिखर फैल गए। छर्रेबाजी होने लग गई। दो-तीन फायर हवाई तोपें भी दागी गईं। सूर्य उदय होते ही शहर में अमन स्थापित हो गया।

लूट-खसोट आदि की ओर से संतोष की साँस लेकर करनल बर्नट ने नवाब वजीरअली खाँ की ओर ध्यान आकर्षित किया। विश्वास था कि वह बाग से भाग कर सीधे अपनी कोठी में पहुँच गए होंगे। अतः वह पल्टन के कुछ सिपाहियों को लेकर दुर्गा-कुण्ड की कोठी पर पहुँचे। कोतवाल तथा नवाब अली अकबरखाँ भी उनके साथ थे।

बर्नट ने कोठी के दारोगा राहतअली खाँ को बुला कर पूछा—"नबाब वजीरअली खाँ क्या कह रहे हैं ?"

राहतअली बड़ी सावधानी से बोला—"नवाब साहब यहाँ कोठी में नहीं हैं। सिर्फ बेगम साहिबा ही कोठी के जनानखाने में मौजूद हैं।"

"और नवाब साहब कहाँ हैं ?"

"मुझे मालूम नहीं।" राहतअली ने अनभिज्ञता के भाव से कहा—"मैं तो सिर्फ इतना जानता हूँ कि नवाब साहब कल नौ-दस बजे के करीब बनारस के रेजीडेन्ट साहब से मिलने, मुलाकात करने तशरीफ ले गए थे। उसके बाद इस वक्त तक कोठी में वापस नहीं आए।"

"झूठ बोलता है ?" बर्नट ने डाँट कर कहा—"नवाब ने रेजीडेन्ट मिस्टर चेरी का खून किया। दिन भर शहर में हंगामा-फसाद बरपा किया और तुम कहता है कि कुछ नहीं मालूम ? नवाब वजीरअली खाँ जरूर बाग से भाग कर कोठरी में आए होंगे।"

"झूठ नहीं बोल रहा हुजूर ?" राहतअली ने कहा—"आप कोठी की तलाशी लेकर इतमीनान कर सकते हैं। नवाब साहब यहाँ नहीं है। सिर्फ बेगम साहिबा ही

जनानखाने में हैं।

"तब वह कहाँ चले गए ?" बर्नट ने झुंझलाहट के साथ कहा—"जमीन आसमान में कहीं उनका पता है ?"

"इस बारे में फिदवी क्या अर्ज करे ?" उसने कहा।

बर्नट जरा देर खामोश रहे। फिर कोठी के चारों तरफ कड़े पहरे बैठा दिए। और कोतवाल को हुक्म सुनाया—"नवाब साहब जब भी कोठी आएँ हमको खबर की जाए। बेगम से कोई छेड़-छाड़ न की जाए। उनसे कोई मतलब नहीं है। फरसाद नवाब ने पैदा किया है। हमें उन्हीं की तलाश है और उन्हीं से मतलब गरज है। इसलिए उनकी तरफ से गाफिल न रहा जाए।" फिर जरा ठहर कर कहा—"अब शहर में एक तरह से अमन है। लूट-पाट बन्द हो चुका है। लेकिन फिर भी उधर से गाफिल रहना मुनासिब नहीं है। आपकी गश्त जारी रहे। मुमकिन है लुटेरे फिर ऊधम मचने लगें।" फिर नवाब अली अकबर की तरफ रुख करके कहा—"शहर में अमन-चैन कायम रखने में आपकी मदद की भी जरूरत है।"

अली अकबरखाँ बोले—"बन्दा हर तरह से हाजिर है।"

इसके बाद करनल बर्नट वहाँ से कुछ सवारों को साथ लेकर शाहज़ाद मिरजा मुजफ्फरबख्त की कोठी की तरफ़ चल पड़े।

उस दिन बनारस में जो लूट मची थी और जहाँ लुटेरों के हाथ धन-सम्पति तथा कीमती माल असबाब लगा था, यहाँ शाहजाद साहब भी खाली हाथ नहीं लौटे थे। परम सुन्दरी नटवाला बिलासी उनके हाथ लग गई थी। उसे हाथी पर बैठा कर कोठी में लाए थे। सारी रात उसे अपनी बगल में बैठा कर, उसके एक-एक गुण को परखा-समझा था। बिलासी पूर्ण रूप से उनकी कसौटी पर खरी उतरी थी। अतः उसी समय उन्होंने बिलासी को अपनी बेगम बना कर हरम में दाखिल करने का निश्चय कर लिया था।

अपने इस निश्चय को जब शाहजादे ने बिलासी से स्पष्ट किया तो वह बोली—"मैं आप की बेगम बनने को तय्यार हूँ। लेकिन इस विषय में केवल मेरी ही स्वीकृति काफी नहीं हो सकती। मेरे माता-पिता की मंजूरी आवश्यक होगी।"

बिलासी का कहना शाहजादे ने मान लिया। उसी रात में अपने एक विश्वासी नौकर को नटों के डेरे पर भेज कर चोखा तथा अनोखी को बुलाया गया। पाँच हजार रुपया नक़द तथा कुछ कीमती कपड़े देकर उन दोनों की स्वीकृति प्राप्त कर ली गई। चोखा और अनोखी तो चाहते ही थे कि उनकी पुत्री किसी बड़े रईस-अमीर के गले लग जाए। दिल्ली के शाहज़ादे की बेगम बन जाने से उनकी छाती फूल गई। इससे बढ़ कर बिलासी के लिए और क्या हो सकता था। रुपया तथा कपड़ों की गठरी लेकर दोनों अपने डेरे को चले गए थे।

इस प्रकार रात भर के जागे हुए शाहजादा मुजफ्फरबख्त सबेरे की मीठी नींद

ले रहे थे। यद्यपि एक पहर दिन चढ़ चुका था फिर भी उनकी आँखें बन्द थी। कहाँ क्या हो रहा है, हंगामा-फसाद किस हद तक पहुँचा ? नवाब वजीरअली खाँ कहाँ गए ? उनका क्या हशर हुआ ? शाहजादे को इसकी कोई चिन्ता न थी।

करनल बर्नट उनकी कोठी पर आ पहुँचे। उन्हें देख कर कोठी के पहरेदार सक्पका गए।

बर्नट ने पूछा—"शाहजादे साहब कहाँ हैं ?"

"आशायश में हैं। मीठी नींद ले रहे हैं।" पहरेदार ने अर्ज़ किया।

"अभी तक आशायश में है ?" बर्नट ने कुछ विस्मय से पूछा।

"जी हाँ हुजूर ?" दरबान ने कहा—"रात भर के जागे हुए हैं। इसलिए सबेरे की नींद ले रहे हैं ?"

"रात भर क्यों जागे हैं ?"

"हुजूर ! बादशाहजादे हैं। ऐश आराम में गाफिल रहना ही उनका काम है। फिर नयी बेगम को पाकर प्रेम-प्यार का आनन्द लूटते रहे हैं।"

लूट का शब्द सुन कर बर्नट चौंक पड़े। बोले—"क्या शहर की लूट में शाहजादे साहब भी शामिल थे ?"

"ऐसा ही समझ लीजिए ?" प्रहरी ने कहा—"लेकिन उनकी लूट धन-दौलत की नहीं थी। बल्कि उन्होंने अपनी गाँठ की दौलत लुटा कर एक प्रेम मूर्ति को लूटा है।"

पहरेदार का कहना बर्नट की समझ में न आया। लेकिन उनके दिल में ख्याल जम रहा था कि शाहजादे भी लूट में शरीक थे। कुछ रूखे स्वर से बोले—"शाहजादे को जगा कर हमारे आने की खबर करो।"

दरबान अन्दर गया। उसी समय शाहजादे साहब जाग कर पलंग पर बैठे आँखें मल रहे थे। उसने कुछ सवारों सहित करनल बर्नट के आने की इत्तला की। शाहजादे साहब पहले तो घबड़ा से गए, एकदम विचार दौड़ा—क्या नवाब वजीरअली खाँ का खड़ा किया हुआ हँगामा-फसाद हमारे सिर पड़ेगा ? फिर सँभल कर दरबान से कहा—"साहब को दीवानखाने में कुर्सीनशीन करो। हम आ रहे हैं।"

कपड़े बदल कर शाहजादे बर्नट के पास पहुँचे और एक कुर्सी पर बैठ गए। लेकिन उनके चेहरे पर हवाइयाँ उठ रही थीं।

"कल आप भी नवाब वजीरअली खाँ के साथ फसाद में शरीक थे ?" बर्नट ने पूछा।

शाहजादे ने कहा—"जी नहीं, हम फसाद में शरीक नहीं थे।"

"लेकिन हमें तो खबर पहुँची थी कि आप हाथी पर बैठ कर उनके हँगामा में शरीक होने निकले थे और बाग के मोर्चे में भी नवाब के साथ मौजूद थे ? क्या वह

खबर गलत थी ?"

"सरासर गलत थी ?" शाहज़ादे ने अपने बचाने के अभिप्राय से बात बनाई। कहा—"हम हाथी पर बैठ कर जरूर निकले थे, मगर हँगामे में शरीक होने के लिए नहीं, बल्कि नवाब वजीरअली खाँ को समझाने के लिए। क्योंकि उनकी ये बेजा हरकत हमें पसंद नहीं आई थी। कम्पनी सरकार की मुखालफत पर खड़ा होना हमें बहुत नागवार गुजरा था। इसलिए उनसे मिल कर हमने उन्हें काफी समझाया। हर तरीके से सचेत किया और उनसे अँग्रेज सरकार से माफी माँग लेने के लिए कहा। लेकिन वह तो अँग्रेज सरकार की खिलाफत पर तुले हुए थे। किसी तरह भी अपना इरादा छोड़ने को राजी नहीं हुए। आखिर हमें लौट आना पड़ा था।" और शाहजादे बर्नट के चेहरे की तरफ देखने लगे।

बर्नट एक क्षण चुप रहे फिर कहा—"लेकिन हमको पता चला है कि आप शहर की लूट में भी शरीक थे। लूट का कोई माल अपने हाथी पर रख कर कोठी लाए थे ?"

शाहजादे समझ गए कि ये बिलासी के बारे में ही कहा जा रहा है। थोड़ा मुस्करा कर बोले—"जिसे आप लूट का माल कह समझ रहे हैं वह एक नट जाति की जवान लड़की है। हमें उसका हुस्न जमाल पसंद आ गया था और वह भी हमारे पास रहने को तैय्यार हो गई। इसलिए हम उसे हाथी पर बैठा कर कोठी में लाए थे। उसके बाद हमने उसके माँ-बाप से उसे खरीद लिया है।"

"खैर, आप के इस शौक से हमें कोई मतलब नहीं है ?" बर्नट ने कहा—"हम यह जानना चाहते हैं कि नवाब वजीरअली खाँ कहाँ है ?"

"हमें उनका कोई पता नहीं ?" शाहजादे ने कहा—"जब उन्होंने हमारा समझाना नहीं माना था, हमें सख्त नागवार गुजरा था ? हम वापस लौट पड़े थे। उसके बाद उनकी और उनके हँगामे को हमें कोई खबर नहीं है।"

मिरजा मुजफ़्फरबख्त की सफाई से बर्नट को संतोष नहीं हुआ। कुर्सी से उठ कर कहा—"खैर, अब आप अपनी कोठी से कहीं बाहर न जाएँगे।" और उन्होंने कोठी के चारों तरफ़ अपने पहरे खड़े कर दिए।

इतना सब करके थके-माँदे करनल बर्नट अपनी कोठी में वापस आए। अब उनके जिम्मे सिर्फ एक ही बात रह गई थी यानी बनारस के इस फसाद हँगामे की सविस्तार सूचना कम्पनी सरकार के प्रतिनिधि गवर्नर जनरल के पास पहुँचाना। अतः लगे हाथों उन्होंने यह काम भी पूरा कर डाला। कुर्सी-मेज़ पर बैठ कर आदि से अन्त तक जो कुछ जैसा गुजरा था लिख डाला और नवाब वजीरअली खाँ का गायब हो जाना भी लिख कर गवर्नर जनरल के पास भेज दिया।

गवर्नर जनरल ने बर्नट की तहरीर को पाकर उन्हीं को बनारस का रेज़ीडेन्ट

बना दिया और लिखा—'बनारस शहर की पूरी हिफाज़त की जाए। आगे किसी तरह का फसाद न खड़ा होने पाए। नवाब वजीरअली खाँ का पता लगाया जाए कि वह कहाँ है। शाहजादा मुजफ्फरबख्त बनारस से फर्रुखाबाद को रवाना कर दिए जाएँ। आगे उनका कयाम वहीं रहेगा।'

करनल बर्नट ने शाहजादे को बुला कर गवर्नर का आदेश सुना कर उनके जाने का इन्तजाम कर दिया और वह चुपचाप अपना साज सामान लेकर फर्रुखाबाद चले गए।

३८

साँझ के झुरमुट में वजीरअली खाँ अपने साथियों सहित आज़मगढ़ पहुँच गए। वहाँ के राजा नादिरशाह को नवाब के आने की खबर हुई। उसी सुबह नादिरशाह ने नवाब वजीरअली खाँ की मुखालफत तथा बनारस के विद्रोह का समाचार सुना था। चूंकि नवाब आसफुद्दौला की उस पर नजरे इनायत रहा करती थी, इस ख्याल से उसने आगे बढ़ कर वजीरअली खाँ का स्वागत किया और अपना मेहमान बनाया। खिदमत में हाजिर होकर कहा—"हुजूर जो कुछ इर्शाद करें, फरमाएं, उसकी तामील के लिए बन्दा हाजिर है। अगर यहाँ से किसी तरफ़ जाने का इरादा है, फरमाया जाए, उसका इन्तजाम करूँ। क्योंकि आजमगढ़ हुजूर के लिए कोई महफूज़ जगह नहीं है। बनारस यहाँ से कितनी दूर है? अँग्रेजों को पता चल सकता है। दोस्त दुश्मन हर जगह हुआ करते हैं।"

"हम खुद आज़मगढ़ में नहीं रहना चाहेंगे?" वजीरअली खाँ ने कहा—"क्योंकि यहाँ रह कर हमें अपने इरादे में कामयाबी हासिल नहीं हो सकती?"

"तब जिधर जाने का इरादा हो फरमाया जाए?"

"हम घाघरा पार करके गोरखपुर के जंगलों की तरफ़ जाना चाहते हैं।"

"बेहतर है?" नादिरशाह ने कहा—"अभी तो दो-चार दिन खादिम को मेहमान-नवाज़ी का शरफ़ बख्शा जाए। फिर दरियाय घाघरा को पार करा दूँगा।"

वजीरअली खाँ कुछ सोचने लगे।

वारिसअली ने उनकी तरफ़ देख कर कहा—"हुजूर आजमगढ़ वाकई एक मखदूश जगह है। यहाँ रात गुजारना भी खतरनाक साबित हो सकता है। बनारस में लाजिमी तौर पर हुजूर के निकल भागने की खबर फैल चुकी होगी। तलाश हो रही होगी। खुदा-न-ख्वास्ता कहीं इधर का सुराग़ अँग्रेजों को मिल गया तो अपना इरादा खतम हो जाएगा। इसलिए आज रात में ही घाघरा उतर चलना मुनासिब है।"

मिरजाई बेग ने कहा—"वारिस अली का कहना सही है। दिन में दरिया का पार करना भी मुनासिब न होगा। आलमगढ़ में शोरगुल मच जाएगा।"

वजीरअली खाँ ने नादिरशाह की तरफ रुख करके कहा—"इसलाह सही है। हम रात में ही दरिया पार करना चाहते हैं। अगर इन्तजाम कर सके तो हम आपके मशकूर होंगे।"

"हुजूर इतमीनान रखें। सुबह से पहले, रात में ही दरिया पार करा दूँगा। कमतरीन तो हुजूर का एक खिदमतगुजार है। नवाब आसफुदौला बहादुर का बख्शा मर्तबा है। और हुजूर उनकी एक यादगार हैं। जो भी हुक्म देंगे उसकी तामील मेरे सर आँखों पर है।"

वजीरअली खाँ कुछ नहीं बोले।

रात का पहला पहर समाप्त होने वाला था। नादिरशाह ने दस्तर-ख्वान बिछवाए। सबको खाना खिलाया और दरिया पार करने का प्रबन्ध करने चले गए।

दिलावरअली ने वजीरअली खाँ से कहा—"घाघरा को पार करके किस तरफ को कदम उठाया जाएगा?"

वजीरअली खाँ मुस्करा कर बोले—"तुम्हारा यह सवाल तो इस वक्त कुछ अजीब सा मालूम होता है। पहले दरिया तो पार कर लें। फिर उस किनारे पर पहुँच कर इतमीनान से सोचें-समझेंगे।"

"बजा फरमाना है?" वारिसअली ने कहा—"अभी यहाँ बैठे हुए क्या कहा जा सकता है। उस किनारे पर पहुँच कर देखा जाएगा कि उधर का कैसा माहौल है। जंगल ही जंगल है या कहीं कोई गाँव वगैरह भी है।"

मीर इज्जतअली ने कहा—"सही कहना है। अभी तो यही समझना चाहिए कि बनारस के उस बाग में अंग्रेजी पैल्टन से मुकाबला कर रहे हैं।" और वह हँस पड़ा।

वजीरअली खाँ भी किंचित मुस्करा कर रह गए।

राजा नादिरशाह ने आकर कहा—"हुजूर! तशरीफ ले चलिए? दरिया पार करने का इन्तजाम हो चुका है।"

रात आधी से अधिक बीत चुकी थी। वजीरअली खाँ साथियों सहित मेहमान खाने से निकल कर बाहर आ गए। बाहर राजा के बीस-पच्चीस नौकर मशालें लिए मौजूद थे। घोड़ों पर सवार होकर सब लोग नदी की ओर चल पड़े। यद्यपि रात का अंधकार काफी गहरा था, किन्तु मशालों की रोशनी रास्ता दिखला रही थी। नादिरशाह अपने घोड़े पर सवार आगे मार्गदर्शक का काम कर रहे थे। राजा के कुछ और भी नौकर साथ थे। कुछ देर में सब लोग नदी के किनारे पहुँच गए।

घाघरा इठलाती हुई बही जा रही थी। पाट बहुत चौड़ा था। हवा भी अपना जोर बाँधे थी। दरिया का पाट, बहाव और हवा का रुख देख कर पार उतरने वालों के

दिल कुछ कहने सुनने लगे। चेहरों पर चिन्ता सी नजर आने लगी। लेकिन वजीरअली खाँ के चेहरे पर किसी प्रकार की चिन्ता न थी।

उन्होंने साथियों के चेहरों पर निगाह डाली। मुस्कराए और बोले—"गोमती में तो बहुत तैराकी की जाया करती थी। आज घाघरा में तैराकी करने से क्या तबीयत घबड़ा रही है ?"

मर्दानअली सगर्व बोला—"हुजूर हुक्म दें, अभी तैर कर उस किनारे पर जा खड़ा हूँगा।"

मिरजाई बेग बोला—"गोमती की तैराकी रोजाना का सबक था। घाघरा की तैराकी मोलवी साहब का इम्तिहान है।"

वजीरअली खाँ हँस पड़े।

नदी के किनारे छः नावें मौजूद थीं। नादिरशाह ने कहा—"हुजूर छः नावें हैं। मैं समझता हूँ कि पहले खेवे में आप सब लोग दरिया पार करके उस किनारे पर पहुँच जाएँ। दूसरे खेवे में घोड़े पहुँच जाएँगे।"

छूटते ही वजीरअली खाँ ने कहा—"ऐसा नहीं हो सकता। हम अपने मुसाहब को नहीं छोड़ सकते। हमारा घोड़ा हमारे साथ दरिया पार करेगा।"

बहादुरअली ने नादिरशाह की तरफ मुड़ कर कहा—"हुजूर का फरमाना वजा है। हमारे घोड़े ही तो हमारे सच्चे साथी हैं। साथियों को छोड़ कर कैसे नदी पार की जा सकती है। खुदा जाने दूसरा खेवा घोड़ों को लेकर कब उस किनारे पहुँचता है ? क्या होता है ? उस हालत में हमलोग बिलकुल अपाहिज हो जाएँगे।"

मल्लाह डाँड़ थामे, नावों पर बैठे सवारियों की प्रतीक्षा कर रहे थे। नादिरशाह ने उनकी तरफ नजर घुमा कर कहा—"अगर दो-दो सवारी और दो-दो घोड़े नावों पर सवार हो जाएँ, तो नदी पार करने में क्या कोई असुविधा होगी ? इस तरीके से एक ही खेवे में सवारियाँ तथा घोड़े उस किनारे पर पहुँच जाएँगे।"

एक मल्लाह ने दृढ़तापूर्वक कहा—"सरकार, तनिक भी अड़चन असुविधा नहीं होगी। हमरी नावें बहुत बड़ी और मजबूत हैं। एक-एक नाव पर चार-चार सवारियाँ और घोड़े सवार हो सकते हैं। नदी पार करने में किसी प्रकार का डर भय नहीं है। जोखम के हमलोग जिम्मेदार हैं।"

अपने-अपने घोड़ों को थाम कर सवार नावों पर बैठ गए। मल्लाहों ने डाँड संभाल लिए। नावों की रस्सियाँ खुल गईं।

नादिरशाह ने वजीरअली खाँ से कहा—"अगर हुजूर हुक्म दें तो मैं भी साथ चल कर उस किनारे तक पहुँचा दूँ।"

"नहीं ?" वजीरअली खाँ ने कहा—"आपकी इतनी ही हिमायत-इनायत काफी है। हम आपके बहुत-बहुत ऐहसानमन्द हैं।"

नावें चल पड़ीं, घाघरा का प्रवाह मचल रहा था। हवा के तेज झोंकों के साथ धारा की गर्जना हृदय कँपा रही थी। लहरें ऊँची उठ कर जल उछाल रही थीं, चारों ओर अंधकार छाया था, किन्तु नावें धारा को चीरती हुई आगे बढ़ी चली जा रही थी। मांझी साहस के साथ डाँड़ चलाते हुए कुछ गुन-गुनाते जा रहे थे। लेकिन सवारियाँ खामोश तथा सन्नाटे में थीं। सबों के होठ बन्द थे। आँखें उस किनारे को ताक रही थीं। मगर पानी के सिवा कुछ भी नहीं दिखाई दे रहा था।

राजा नादिरशाह अपने नौकरों सहित अभी इसी किनारे पर मौजूद थे। वह इस प्रतीक्षा में थे कि जब नावें नवाब वजीरअली खाँ को उस किनारे पर उतार कर लौट आवें, हमें मालूम हो जाए कि सब लोग सकुशल पार उतर गए, तब हम यहाँ से वापस हों। कुछ देर बाद नावें सवारियों को उस पार उतार कर वापस लौट पड़ीं। तभी इस किनारे पर एक विचित्र घटना घट गई।

नदी के इस किनारे पर काफी दलदल था। माँझी तो उसे भली-भाँति जानते-समझते थे, किन्तु अपरिचित दूसरे लोगों के लिए वह रेत भरा दलदल बहुत खतरनाक था। फिर काली अँधेरी रात में तो उसका कुछ पता ही नहीं चलता था। राजा नादिर-शाह भी उससे परिचित न थे। उससे लगे खड़े नावों के लौटने की प्रतीक्षा कर रहे थे। जल-थल की ओर उनका कोई ध्यान नहीं था। सहसा माँझियों का राग-स्वर उन्हें सुनाई पड़ा, प्रसन्नता से भर गए। हृदय कह उठा—मेरा कार्य पूरा हो गया। आई बला भी सिर से टल गई। वरना मेरे लिए एक खतरा ही था। नावें कुछ अधिक निकट आ गईं। मशालों के उजाले में नावों पर बैठे मल्लाह दिखाई पड़ने लगे। राजा का कौतूहल बढ़ा। माँझियों के मुख से उधर की कुशल सुनाने के लिए उत्सुक हो उठे और आगे को कदम बढ़ा दिए। और दलदल में धँस-फँस गए। राजा नादिरशाह स्थूल शरीर के थे। एकदम जाँघों के ऊपर तक दलदल में धँसे-फँसे खड़े एक खम्भे से दिखाई पड़ने लगे। थोड़ा भी हिलने-डुलने की शक्ति न थी। घबड़ाहट ने और अधिक शक्तिहीन बना दिया था। कमर के ऊपर शरीर का भाग अवश्य चैतन्य था। हाथ खुले हुए थे लेकिन कोई सहारा न था कि हाथों से पकड़ कर कुछ जोर लगा सकें। और राजा नादिरशाह अपाहिज बने घबड़ा रहे थे।

नौकर-चाकरों ने राजा का जो यह हाल देखा तो हाय-तोबा मचा दी। उन्हें दलदल से निकालने के उपाय खोजने लगे, लेकिन कोई तरकीब नहीं सूझ रही थी। उनके निकट पहुँच कर सहारा देने का भी साहस नहीं हो रहा था क्योंकि स्वयं विपत्ति में पड़ जाने का भय था। राजा की चीख-पुकार के साथ नौकरों की भी चिल्ल-पौं मची हुई थी।

तभी नावें किनारे पर आ गईं। मल्लाहों ने इस दृश्य को देखा। मुस्कराए, नावों से उतर कर किनारे पर आए। उनके लिए वह घटना कुछ विशेष न थी। उन्हें तो रोज

ही ऐसी विपत्तियों का सामना करना पड़ता था। दलदल, पानी, भँवर, धारा और हवा-तूफान से उलझना-सुलझना पड़ता था। अतः माँझियों ने शीघ्र ही राजा को दलदल से बाहर करने का उपाय किया। एक नाव पर से एक लम्बा मोटा रस्सा निकाला और उसका एक छोर राजा की ओर फेंक कर कहा—"रस्से के छोर को मजबूती के साथ अपनी कमर से बाँध लीजिए। गाँठ पक्की लगे। और दोनों हाथों को आगे बढ़ा कर बलपूर्वक रस्से को पकड़ लीजिए।"

राजा ने मल्लाहों का कहना किया। माँझियों ने मिल कर रस्सा खींचना आरम्भ किया किन्तु राजा जरा भी न हिल-डुल सके। एक बूढ़े अधिक अनुभवी माँझी ने राजा से निवेदन किया—"हाथों से रस्सा छोड़ दीजिए। उसके बदले जब हम लोग रस्सा खींचे आप दोनों हाथों से सामने के दलदल को चीरते-हटाते हुए साहस से आगे बढ़िये।" बूढ़े माँझी का उपाय सही साबित हुआ। रस्सा खींचते-तानते और उधर सामने का दल-दल चीरने-हटाने से राजा हिलने-डुलने लगे। पैरों को कुछ ताकत मिलने लगी। किनारा अधिक दूर न था। इस उपाय से राजा नादिरशाह घसिट कर किनारे पर आ गए। नौकरों ने झपट कर उन्हें थाम लिया। विपत्ति टल गई। राजा नादिरशाह नौकरों तथा माँझियों सहित अपने महलों में वापस लौटे। उन्होंने माँझियों को इनामों-इकरामों से माला-माल कर दिया। क्योंकि एक तो उन लोगों ने सकुशल नवाब वजीरअली खाँ को नदी के दूसरे तट पर उतारा था। इसके अलावा उन पर टूट पड़ने वाली विपत्ति को भी टाला था।

नवाब वजीरअली खाँ का अपने साथियों सहित बनारस से आजमगढ़ की ओर भागना बनारस के नये रजीडेन्ट कर्नल बर्नट से छिपा न रहा। दस-पाँच दिन बाद ही उन्हें मालूम हो गया। उसके बाद उन्होंने जैसे ही आजमगढ़ में उनकी खोज की तो पता चल गया कि वहाँ के राजा नादिरशाह की सहायता से वह घाघरा पार करके शायद नैपाल की घाटियों में छिप रहे हैं। बर्नट ने इस अता-पता की सूचना सविस्तार गवर्नर जनरल को दे दी और राजा नादिरशाह को भी अंग्रेज सरकार का मुखालिफ साबित कर दिया। अतः गवर्नर-जनरल ने राजा नादिरशाह को तबाह करने का पक्का इरादा कर लिया और तबाही के बहाने तलाशे जाने लगे। इसके अलावा नवाब वजीरअली खाँ की ओर से भी गवर्नर-जनरल महोदय गाफिल न रहे। लार्ड वेलेजली वैसे ही एक चुस्त गवर्नर थे। उन्होंने सबसे पहले अवध के नवाब सआदतअली खाँ को ताकीद की—बनारस में नवाब वजीरअली खाँ ने अंग्रेज सरकार के खिलाफ फसाद खड़ा करके खून-खराबी पैदा की थी। अब वह वहाँ से भाग कर तथा घाघरा पार करके गोरखपुर के जंगलों में घुस गए हैं। उनके दिल में हमारी मुखालफत और अपनी हुकूमत लौटाने की हविस अभी भी मौजूद मालूम होती है। इसलिए उनकी तरफ से आप बेहोश न रहें। अपनी फौजी ताकत के जरिए वजीरअली खाँ को गिरफ्तार करें। क्योंकि जब तक वह पकड़े न जाएँगे हमारे

आपके, दोनों के लिए खतरा बने रहेंगे। सैकड़ों शक्लों से फसाद-हंगामा के शोले भड़काते रहेंगे। आप की हुकूमत भी झमेले में पड़ जाएगी। बल्कि आप भी फसाद-हंगामा चाहने वाले और कम्पनी सरकार के मुखालिफ समझे जाएँगे।

गवर्नर-जनरल के इस आदेश को पाकर नवाब सआदतअली खाँ घबड़ा गए। वजीरअली खाँ के फसाद का समाचार उन्हें मिल चुका था और वह सोच-समझ भी रहे थे कि अगर वजीरअली खाँ खुदा-न-ख्वास्ता अपने इरादे में कामयाब हो गए, तो वाकई तौर पर हमारी नवाबी खतम हो जाएगी। क्योंकि हमारी नवाबी तो अंग्रेज सरकार के पैरों पर ही खड़ी है।

इसलिए अवध के नवाब सआदतअली खाँ ने लार्ड वेलेजली का ताकीदी फरमान पाकर कुछ पैदल जवान तथा एक रिसाला के सवारों को वजीरअली खाँ को गिरफ्तार कर लाने के लिए गोरखपुर के जंगलों की तरफ रवाना कर दिया।

३९

कनीज फातमा उस दिन दोपहर में कोठी दुर्गाकुण्ड के जनानखाने से भागी तो सारी रात और दिन, संध्या होने तक गायब रही थी।

कनीज फातमा एक चुस्त, समझदार तथा अलिफ-बे का ज्ञान रखने वाली युवती थी। नीयत की भी सच्ची थी। दगा-फरेब, धोखा-दुराव उसके स्वभाव में न था। लेकिन अपने पिता के समझाने-बुझाने, दबाव डालने तथा रजीडेन्ट द्वारा सोने-चाँदी के टुकड़ों से आँचल भारी कर दिए जाने की लालच ने उसे विवश कर दिया था और उसने नवाब वजीरअली खाँ के जनानखाने की जासूसी इख्तियार कर ली थी।

फिर भी उसके दिल में एक धक्का-सा लगता था। बेगम वजीरुन्निसा की खिदमत में रह कर उनके स्वभाव, व्यवहार-बर्ताव को देख कर जब कभी वह फुरसत में कहीं एकान्त में बैठी होती और उसे अपना छल-कपट तथा जासूसी याद आ जाती तो वह अपने को धिक्कारा करती थी। सोचती मैं कितनी नीच हूँ, कितनी पतित हूँ। बेगम मुझे सच्चे दिल से चाहती हैं। मुझ पर विश्वास रख कर अपनी कोई बात नहीं छिपातीं, दिल खोल कर रख देती हैं। और मैं निगोड़ी उनके साथ क्या कर रही हूँ? लानत है मेरे इस कार्य पर! बेगम के अलावा नवाब भी मुझे एक सीधी-सादी बसलीका कनीज समझते हैं। मेरे अदब-कायदे से प्रसन्न रहते हैं। उन्हें क्या पता कि इस अदब-सलीके के आवरण के भीतर मेरा कैसा भयंकर रूप छिपा हुआ है।

लेकिन उस दिन की खबरों ने कनीज फातमा को विवश कर दिया था कि वह

अपनी आत्मा की आवाज को सुने और सच्चे रास्ते पर चले। अपने घर में बैठी वह सोच रही थी—रजीडेन्ट का खात्मा हो चुका। अब उनसे मेरा कोई वास्ता नहीं रहा। बनारस शहर में अँग्रेजों की सत्ता उठ-सी गई है। लोगों के दिलों में नवाब वजीरअली खाँ की श्रद्धा भक्ति उत्पन्न हो गई है। किन्तु पिता ने बताया है कि बाग के मोर्चे से नवाब कहीं भाग गए हैं? भाग कर कहाँ जाएँगे? कोठी में पहुँच गए होंगे। बनारस से कहीं बाहर थोड़े ही चले गए होंगे। कोठी में बेगम साहिब हैं। उनको अकेला छोड़ कर कहाँ जाएँगे। अभी-अभी एक खबर ये भी सुनाई पड़ी है कि दुर्गाकुण्ड की कोठी पर घेरा पड़ा है। अँग्रेजी पल्टन के पहरे उसके चारों ओर बैठे हैं। तब बेचारी बेगम वजीरुन्निसा पर कैसी बीत रही होगी? मैं भी उनके पास नहीं हूँ। मुझे वह अपनी कनीज नहीं सहेली समझा करती थीं। दुख-सुख सब कह डालती थीं। इस मुसीबत को किससे कहती होंगी?

इन विचारों ने कनीज फातमा को एकदम बदल दिया। वह उठ कर अपने बाप के पास पहुँची और खुले शब्दों में कहा—"अब तक मैंने अच्छा-बुरा जो कुछ भी किया, वह किया। लेकिन अब मैं अपनी आत्मा को धोखा नहीं दे सकती। आगे वही करूँगी जो मेरा दिल कहेगा। मैं बेगम वजीरुन्निसा की सच्ची दासी बन कर रहूँगी। किसी प्रकार के छल-कपट या बातों को इधर से उधर करना मेरा काम न होगा। मुझे कोई लालच नहीं; केवल अपने पिछले कामों का पछतावा है। इसलिए अगर मैं सच्चाई से रहूँगी तो खुदा पिछले गुनाहों को भी माफ कर देगा। जीते जी बेगम का साथ नहीं छोड़ूँगी। इस घर में भी नहीं आऊँगी।" और कनीज फातमा घर से निकल कर दुर्गाकुण्ड की कोठी की ओर चल पड़ी। धीरे-धीरे संध्या निकट चली आ रही थी।

कनीज फातमा कोठी के फाटक घर पहुँची। फाटक बन्द था। अँग्रेजी पहरे कायम थे। परन्तु थोड़ी सी पूछ-ताछ और छान-बीन के बाद फाटक खुल गया। उसे कोठी के अन्दर जाने की इजाजत मिल गई।

कनीज फातमा जनानखाने में पहुँच गई। दूर से देखा बेगम वजीरुन्निसा आँगन के बरामदे में बिछे हुए तख्त पर तकिए का सहारा लिए बैठी हैं। चेहरा उदास है। नीची नजर किए किसी गहरे विचारों में उलझी हैं। उसने पास जाकर सलाम किया और नीची निगाह करके चुपचाप खड़ी हो गई।

बेगम ने अपने ख्यालों का पीछा छोड़ कर सिर ऊँचा किया। उसकी तरफ देख कर कहा—"ऐ, कल दोपहर से गायब होकर आज इस वक्त लौटी हो? हमें कुछ बताया भी नहीं कि कहाँ जा रही हो?" फिर धीरे से कहा—"हम अकेले यहाँ घबरा रहे थे। तुम हमारे पास से चली गईं। जरा भी हमारी हालत पर तरस न आया?"

"हुजूर?" कनीज फातमा ने ऊँचा सिर करके कहा—"वह बेईमान, झूठी, मक्कार, दगाबाज कनीज फातमा आपके पास से गायब हो गई? उस जासूस, धोखा देने

वाली कनीज फातमा को खुदा जल्द गारत करे। दुनिया जहान की सारी बलाय उसी पर टूट पड़े। वह हुजूर की खिदमत में हरगिज़ रहने के क़ाबिल न थी ?"

बेगम की समझ में न आया कि कनीज फातमा क्या कह रही है। किसको ये तरह-तरह की गालियाँ दे रही है ? बड़े आश्चर्य से उसको देखा और क्षण भर एकटक देखने के बाद कहा—"तुम यह सब किसके लिए कह रही हो ?"

"उसी कम्बख्त, निगोड़ी, दुनिया भर की फरेबिन कनीज फातमा के लिए कह रही हूँ। जो हुजूर के साथ दगा करने आई थी और कल दोपहर के पहले तक जिसने हुजूर के साथ दगाबाजी की थी।" कनीज फातमा ने इतमीनान के साथ कहा।

फिर भी बेगम की समझ में कुछ न आया। बोलीं—"और तुम कौन हो ? क्या आज अपने होश-हवास में नहीं हो ? हमें उलझन हो रही है। साफ सीधी बात करो ?" और वह गौर से उसकी तरफ देखने लगी।

कनीज फातमा फूट पड़ी। आँचल से मुँह छिपा कर फफक कर रोने लगी। बेगम वजीरुन्निसा समझीं शायद इसे कोई बीमारी हो गई है। जिनून ने इसके दिल-दिमाग पर कब्जा कर लिया है। तभी उलटी-सीधी बातें करती है और बिला वजह फफक-फफक कर रो रही है। बहुत मीठे मुलायम स्वर से कहा—"कनीज फातमा, इस तरह रो क्यों रही है ? मामला क्या है। तुम्हारे गायब हो जाने से हम कोई नाराजगी का इजहार थोड़े ही कर रहे हैं। यों ही पूछा था कि कहाँ गायब रहीं। कोई तकलीफ-बीमारी हो तो उसे भी बयान करो। कोई तदबीर की जाए ? हम तुम्हें उसी तरह चाहते हैं जैसा अब तक चाहते रहे हैं ?" फिर साँस लेकर कहा—"बैठ जाओ और जो बात हो इतमीनान के साथ कहो।"

बेगम के इस कहने ने कनीज फातमा के दिल को पानी बना दिया। वह आँखें पोंछ कर तखत के नीचे बैठ गई और बड़ी दीनता भरी नजर से बेगम की ओर देखने लगी। अब भी उसकी आँखें बड़े-बड़े मोतियों की लड़ियाँ पिरो रही थीं। कुछ कहने का साहस नहीं कर पा रही थी, चुप थी।

"बोलो-कहो ? चुप क्यों हो ?" बेगम ने कहा।

कनीज फातमा ने ओढ़नी के छोर से आँसू पोंछ लिए, बोली—"हुजूर ! मुझ दगाबाज जालसाजिन को जिन्दा दफन करा दीजिए। या मेरे जिस्म की बोटी-बोटी कुत्तों के हवाले कर दीजिए।" और वह उठ कर बेगम के कदमों से लिपट गई।

बेगम ने उसे कदमों से उठा कर कहा—"ऐसा क्यों करें ? तुम अब भी हमें उलझन में डाले हुए हो ?"

कनीज फातमा ने आदि से अन्त तक अपनी कहानी सुना कर कहा—"अब हुजूर अपने हाथों से मेरा गला घोंट दें। कसूरवार हूँ। आह तक न करूँगी।"

सुन कर बेगम खामोश रह गईं।

कनीज फातमा ने धीरे से कहा—"अब मुझ निगोड़ी को इस दुनिया और उस दुनिया में, कहीं भी जगह नहीं है।" फिर सिर उठा कर कहा—"मेरा तो काला मुँह हो गया। ये भी कितनी बड़ी बेशरमी है कि अपनी करतूत सुनाने के लिए हुजूर के सामने आकर बैठी हूँ। इस जहान में मुझ-सा बेशरम और कौन होगा?" और उसने पुनः ओढ़नी से आँखें पोंछ लीं।

बेगम ने अपनी खामोशी भंग की। बोली—"खैर, जो कुछ हो गया उसके लिए अब क्या रोना-धोना है? हम समझ रहे हैं कि रजीडेन्ट ने जिस तरह तुम्हें जनानखाने का जासूस बना रखा था, उसी तरह नवाब के पीछे भी पचासों जासूस लगा रखे होंगे।" फिर दो क्षण मौन रहने के बाद कहा—"हमें यही खुशी है कि तुमने अपने बुरे कामों को समझ लिया। खुदा ने तुम्हारी समझ तुम्हें लौटा दी।"

कनीज फातमा कुछ नहीं बोली। नीची निगाह किए बैठी रही।

"अब क्या इरादा है?" बेगम ने पूछा—"हमारे पास रहोगी या कहीं और जगह नौकरी तलाश ली है?"

"अगर हुजूर को छोड़ कर कहीं दूसरी जगह नौकरी करने जाऊँ, तो लानत है मेरी जिन्दगी पर। मरते दम तक हुजूर का साथ नहीं छोड़ सकती।" कनीज फातमा ने दृढ़ स्वर से कहा—"अगर हुजूर लात मार कर भगा देंगी, तो उसका मुझे जरा भी दुख-अफसोस न होगा, क्योंकि मैं इसी लायक हूँ। जाकर किसी नदी तालाब में डूब मरूँगी।"

"हमें तो तुमसे दिली मोहब्बत हो गई थी। इस मुसीबत में तुम्हारी बार-बार याद आ रही थी। यही सोच रही थी कि बिला कनीज फातमा के हमारे काले दिन कैसे कटेंगे। हम अकेले कैसे जिन्दा रह सकेंगे।"

"मुझ निगोड़ी ने हुजूर की बेलौस सच्ची मोहब्बत की जैसी कदर की और अपने हाथों मुँह में जैसी कालिख पोती है, क्या वह कभी धुल सकती है?"

"खैर, अब उसे भूल जाओ।" बेगम ने कहा।

रात शुरू हो गई थी। कनीज फातमा ने उठ कर झाड़ फानूसों को रोशन कर दिया। और पुनः आकर अपनी जगह पर बैठ गई।

कुछ देर दोनों ओर से खामोशी रही।

फिर बेगम ने कहा—"यहाँ, बनारस की कैफियत तुम सुन चुकी होगी?"

"उसी कैफियत ने तो मेरी उलटी समझ को सीधा किया है। लेकिन मुझे दुख इस बात का है कि नवाब साहब हुजूर को कोठी में अकेला छोड़ कर बनारस से कहीं बाहर चले गए।"

"क्या करते? बनारस में रह कर उनका इरादा पूरा नहीं हो सकता था।"

"किधर को तशरीफ ले गए हैं?"

"इसका हमें पता नहीं है। न उन्होंने बताया और न हमने पूछा। जिधर उन्हें कामयाबी की उम्मीद होगी उधर गए होंगे?"

"लड़ाई तो नवाब साहब की अँग्रेजों से है न?"

"यह किससे छिपा है?" बेगम ने कहा—"देखा ही होगा, कोठी के बाहर चारों तरफ अँग्रेजी पहरे बैठे हुए हैं। एक तरह से हम भी यहाँ कैद में ही हैं।"

कनीज फातमा कुछ नहीं बोली।

कुछ देर बाद बेगम वहाँ से उठ कर कमरे में चली गईं और पलंग पर लेट गईं। कनीज फातमा काम्काज में लग गई।

दस पन्द्रह दिन गुजर गए। कोठी के बाहर अब भी अंग्रेजों के पहरे बैठे हुए थे। लेकिन पहरेदारों को कोठी के जनानखाने या बेगम से कोई मतलब न था। बेगम से किसी प्रकार की छेड़-छाड़ नहीं की जाती थी। उनकी चौकसी विशेष रूप से नवाब वजीरअली खाँ के लिए थी। बर्नट का ख्याल था कि जब कोठी में नवाब की बेगम मौजूद हैं तो एक न एक दिन नवाब अवश्य ही लौट कर कोठी में आएँगे। इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम गाफिल न रहें। उन्हें गिरफ्तार करके गवर्नर जनरल को खबर कर दें। इसके अलावा शहर कोतवाल मिरजा पाँचू भी घोड़े पर सवार होकर सुबह-शाम कोठी का चक्कर लगा जाया करते थे और मनुष्यता, भलमनसाहत के विचार से बेगम की कुशल खैरियत भी दरयाफ्त करा लिया करते थे।

एक सबेरे नाश्ता करते हुए बेगम वजीरुन्निसा ने कनीज फातमा से कहा—"अब हमारा दिल यहाँ नहीं लग रहा? इस कोठी और बनारस के माहौल से तबीयत घबरा रही है।"

कनीज फातमा सहानुभूति के भाव से बोली—"जरूर तबीयत घबरा रही होगी। बिला नवाब साहब के कोठी खाने को दौड़ती सी महसूस होती है। बाहर अंग्रेजी पहरे लगे हुए हैं। कोठी क्या है निगोड़ी जेल खाना है।" फिर धीरे से कहा—"और अब नवाब साहब लौटते नहीं मालूम होते।"

"हम तो समझती हैं कि नवाब को लौट कर यहाँ आना भी न चाहिए।" बेगम ने इतमीनान से कहा—"यहाँ आने पर उनके लिए खतरा ही खतरा है। अंग्रेजों ने उन्हें अपना मुखालिफ, दुश्मन समझ ही लिया है, लौटते ही मुसीबत में फँस जाएँगे।"

"इसमें क्या शक है!" कनीज फातमा ने कहा—"उनके लिए ही तो बाहर पहरे बैठे हैं।" फिर धीरे से कहा—"नवाब साहब का खुदा मददगार है। वह एक न एक दिन जरूर अपने इरादे में कामयाब होंगे।"

बेगम ने नाश्ते से फारिग होकर कहा—"कनीज फातमा? अब हमारा इरादा यहाँ से जाकर लखनऊ में रहने का हो रहा है। नवाब साहब ने भी जाते वक्त फरमाया था कि अगर तुम्हारा दिल बनारस में न लगे तो तुम लखनऊ चली जाना। तुम्हें कोई

नहीं छेड़ेगा।"

"यह तो ठीक है। हुजूर को कोई क्यों छेड़ेगा? हुजूर ने किसी का क्या लिया-दिया है।" उसने कहा—"लखनऊ तो हुजूर का वतन है। अजीज-अकारब, जान-पहचान वाले सब कोई वहाँ मौजूद होंगे।" फिर थोड़ा मुस्करा कर कहा—"लखनऊ के सामने यह बनारस तो निगोड़ा एक देहात है।"

"तुम कभी लखनऊ गई हो?" बेगम ने पूछा।

"ऐ हुजूर?" उसने थोड़ा मुस्करा कर कहा—"लखनऊ तो मेरे भी बाप-दादों का घर है। मैं वहीं पैदा हुई, वहीं पली और जवान हुई थी। चौक के पीछे एक गली में रहती थी। मेरे अब्बा पहले लखनऊ की ही रेजीडेन्सी में जमादार थे और जान चेरी साहब वहाँ रेजीडेन्ट थे। अब्बा पर बड़ी मेहरबानी रखते थे। जब उनका तबादला लखनऊ से बनारस की रेजीडेन्सी में हुआ तो अब्बा भी लखनऊ से अपने साथ बनारस ले आए थे। उनके साथ मैं और मेरी माँ भी आ गई थीं।"

"तुम्हारी माँ अभी मौजूद हैं न?"

"जी नहीं।" उसने जरा रुक कर कहा—"इस मनहूस बनारस में आते ही वह बीमार पड़ गईं और एक दिन हमलोगों को छोड़ कर इस दुनिया से दूसरी दुनिया की सफर कर गईं।"

बेगम दो-चार क्षण खामोश रही। फिर उसकी तरफ नजर उठा कर कहा—"कनीज फातमा? मान लो हमारा इरादा लखनऊ जाने का पक्का हो गया तब तुम हमारे साथ लखनऊ चल सकोगी?"

कनीज फातमा गम्भीर होकर बोली—"एक बार और हुजूर ने मुझसे ऐसा ही पूछा था? लेकिन उस वक्त मैं एक दगाबाज जासूसिन की शकल में हुजूर की खिदमत-गुजारी कर रही थी। इसलिए खुशामद के लिहाज से मैंने हाँ, हूँ कर दिया था। अब मैं हुजूर की एक सच्ची खिदमतगुजार हूँ। बल्कि हुजूर के दुख-सुख की साथिन हूँ। इसलिए अर्ज करती हूँ कि अब मैं हुजूर की साया हूँ। जहाँ आप जाएँगी मैं पीछे लगी रहूँगी। हुजूर हटाना चाहेंगी तब भी नहीं हटूंगी।"

कुछ क्षणों के लिए वातावरण मौन हो गया।

कनीज फातमा ने बेगम की तरफ़ देखा, बोली—"ऐ हुजूर, तब कब यहाँ से लखनऊ चलने का इरादा है?"

बेगम मुस्कराई, बोली—"अरे इतनी जल्दी कैसे चल सकते हैं? यहाँ से कूच करना भी तो अपने हाथ की बात नहीं मालूम होती। माहौल तो देख रही हो कि कितना खतर नाक है।" फिर जरा देर खामोश रह कर कहा—"यहाँ से लखनऊ जाकर रहने के लिए अंग्रेजों से इजाजत हासिल करनी पड़ेगी अगर उन्होंने इजाजत दे दी तब तो ठीक है, वरना यहीं उनकी कैद में रहना-सड़ना पड़ेगा।"

"यह भी हुजूर का फरमाना बजा है ?"

बेगम उठ कर कमरे के अन्दर चली गईं। कनीज फातमा दूसरे कामों में व्यस्त हो गई।

दूसरे दिन सबेरे जब शहर कोतवाल मिरजा पांचू कोठी पर गश्त लगाने आए और अन्दर से कनीज फातमा को बुला कर बेगम से खैर खबर दरयाफ्त कराई तब बेगम ने उनसे अपना इरादा जाहिर करा कर इजाजत दिलवा देने को कहा। जवाब में मिरजा पांचू ने कहला दिया—"बेगम साहिबा अपने इरादे को कलमबन्द करके मुझे दे दें। मैं उस अरीजा को करनल बर्नट के सामने रख कर अपनी तरफ से कोशिश करूँगा। अगर उन्होंने इजाजत दे दी तो बाकी सफर का इन्तजाम मैं कर दूँगा और बेगम साहिबा आराम के साथ लखनऊ पहुँच सकेंगी।"

बेगम ने अपना इरादा लिख कर मिरजा पाँचू के पास भिजवा दिया। मिरजा पाँचू ने उसे रजीडेन्सी करनल बर्नट के सामने रखा। रजीडेन्ट ने कहा—"बेगम साहिबा चाहे बनारस में तशरीफ रखें, चाहे लखनऊ में। उनसे हमारा कोई मतलब नहीं है। और न उनसे हमें किसी तरह का डर-खौफ या खतरा है। हमारा मतलब तो नवाब वजीरअली खाँ से है। अंग्रेज सरकार के खिलाफ उन्होंने सिर उठाया है। बेगम साहिबा अगर लखनऊ में रहना चाहती हैं तो हम अपनी शिफारिश के साथ अर्जी गवर्नर जनरल के पास भेजते है। वहाँ से इजाजत आ जाने पर वह सफर कर सकेंगी।"

दस पन्द्रह दिन बाद गवर्नर के यहाँ से इजाजत आ गई। मिरजा पांचू ने बेगम के सफर का पूरा प्रबन्ध कर दिया। तारीख रवानगी भी नियत हो गई।

अब बेगम वजीरुन्निसा के सामने एक दूसरा प्रश्न आ खड़ा हुआ कि लखनऊ पहुँच कर कहाँ कयाम किया जाएगा ? किसका दरवाजा खटखटाया जाएगा ? यद्यपि नवाब वजीरअली खाँ की निकाही-बेगम नवाब बन्नो बेगम साहिबा लखनऊ में मौजूद थीं। नवाब सआदतअली खाँ ने उन्हें एक बहुत बड़ी हवेली कयाम के लिए दे रखी थी। पाँच सौ रुपया माहवार गुजारा भी दे रहे थे। लेकिन बन्नो बेगम तथा वजीरुन्निसा बेगम में आज तक कभी न साक्षात हुआ था और न आड़-पर्दे से कभी बोलचाल की नौबत आई थी। हमेशा सवतियाडाह चलती रही थी। ऐसी अवस्था में जाकर उनका द्वार खटखटाना बड़ी नामूसी की बात थी।

अतः इस समस्या को बेगम वजीरुन्निसा ने इस तरह सरल बना लिया। कोठी के दारोगा राहतअली को लखनऊ रवाना कर के एक हवेली किराए पर तय कर आने का आदेश दिया। राहतअली ने लखनऊ पहुँच कर सआदतगंज मोहल्ले में एक अच्छी हवेली किराए पर तय कर ली तथा बेगम को उसकी सूचना दे दी।

निश्चित दिन-तारीख को बेगम वजीरुन्निसा अपना समस्त सामान तथा कनीजें

फातमा सहित कोठी दुर्गाकुण्ड से निकल कर लखनऊ की ओर चल पड़ीं। मिरजा पांचू शहर कोतवाल ने दस बरकंदाज उसकी हिफाजत के लिए साथ कर दिए।

४०

घाघरा पार उतर कर नवाब वजीरअली खाँ अपने साथियों सहित उधर के जंगलों, छोटी-छोटी बस्तियों, गाँवों में घूमने-फिरने लग गए। उनका घूमना-फिरना तथा अपने ध्येय को किसी न किसी रूप में सफल बनाना व्यर्थ न गया।

उधर के इलाके गाँवों में कुछ दिन पहले से यह खबर तेजी के साथ फैल रही थी कि लखनऊ में जो नये नवाब सआदतअली खाँ गद्दी पर बैठे हैं, उन्होंने अवध की रियासत पाने के लिए बहुत पहले से अँग्रेज सरकार से सौदा पटा रखा था। गद्दी पाने के बदले में अवध का आधा इलाका कम्पनी सरकार को देने का वादा कर दिया था। अतः अँग्रेजों ने अपने आतंक तथा शक्ति से नवाब आसफुद्दौला के जांनशीन, उनके बेटे कहे जाने वाले नवाब वजीरअली खाँ को अकारण गद्दी से हटा कर सआदतअली खाँ को बिठा दिया था। अब सआदतअली खाँ अपना वह वादा पूरा कर रहे हैं। अवध का आधा इलाका कम्पनी सरकार के हवाले कर रहे हैं। और शीघ्र ही इस इलाके में अँग्रेजों की सत्ता स्थापित होने वाली है।

उधर की जनता अँग्रेजों की धाँधली, जबरदस्ती और बेइन्साफी से भली प्रकार वाकिफ थी। वह अपने घर-गाँवों में अँग्रेजों की धमाचौकड़ी नहीं देखना चाहती थी। समझते थे कि ये विदेशी हमारे दुख-सुख के साथी नहीं हो सकते। इनका काम तो केवल प्रजा को लूटना-खसोटना ही है। अतः उधर का जन-समुदाय चिन्ता में डूबा हुआ था।

गाँवों के लोगों, जमींदारों आदि ने जब नवाब वजीरअली खाँ को अपने कुछ साथियों सहित उधर के जंगलों में घूमते-फिरते सुना तो उनसे सम्पर्क किया। बनारस के विद्रोह के साथ उनके ध्येय को सुना-समझा। और अन्त में हर तरह से उनका साथ देना स्वीकार कर लिया।

वजीरअली खाँ के बाजुओं में नयी शक्ति उत्पन्न हो गई। विद्रोह की जो आग बनारस में एक दिन के लिए भड़की थी वह इधर के गाँवों में भी भड़क उठी। और उसकी लपटें पड़ोसी कम्पनी-राज्य तक जा पहुँची। वहाँ भी असंतोष फैल गया। वजीर-अली खाँ का पक्ष अधिक प्रबल हो गया। अँग्रेजों के खजाने लुटने लग गए। दफ्तर कचेहरियाँ जलने लग गईं।

इस प्रकार अवध के उस इलाके में नवाब वजीरअली खाँ के विद्रोह ने तहलका

मचा दिया। कम्पनी सरकार तथा अवध के नवाब दोनों की हुकूमत उठ सी गई। पड़ोसी कम्पनी राज्य आए दिन लुट रहा था तथा अवध के नवाब को लगान नहीं चुकाया जा रहा था, न उनका कोई हुक्म माना जा रहा था। दोनों हुकूमतें एक ही तराजू में तुल रही थीं। इसके अलावा कम्पनी सरकार को एक मालो घाटा और हो रहा था। अँग्रेजी पल्टनें जो लखनऊ में रह रही थीं, उनके खर्चे की भारी रकम अवध के खजाने से हर माह कम्पनी सरकार को चुकाई जाती थी। इस विद्रोह से उसकी अदायगी भी झमेले में पड़ गई। क्योंकि अवध के खजाने में रुपया न था। रकम अदा करने की ताकीद पर नवाब सआदतअली खाँ अपनी विवशता जाहिर करके लिख देते थे कि वजीरअली खाँ के विद्रोह के कारण उस इलाके से लगान की एक पाई वसूल नहीं हो रही। रकम किस तरह अदा की जाए ? अतः कम्पनी सरकार तथा अवध के नवाब की मिली-जुली सैनिक शक्तियाँ विद्रोह को दबाने तथा नवाब वजीरअली खाँ को बन्दी बना लेने के लिए प्रयत्न-शील हो गईं। उधर के जंगलों में घुस कर वजीरअली खाँ की टोह-खबर लेती फिर रही थीं।

दोपहर का समय था। घने जंगल तथा पहाड़ियों के बीच में एक छोटी-सी नदी वह रही थी। उस पहाड़ी नदी के दोनों तट घने छायादार वृक्षों से ढँके थे। अंधकार-सा छाया था। इस तट पर नवाब वजीरअली खाँ अपने सभी साथियों साहित भोजन आदि से निवृत्त होकर कमरें सीधी कर रहे थे। और आगे के कार्यक्रम पर विचार भी कर रहे थे।

नवाब वजीरअली खाँ ने साथियों के सामने अपना एक प्रस्ताव रखा, इधर के जंगलों-गाँवों में घूमते-फिरते काफी दिन हो गए हैं। गरचे गाँवों के लोग सचेत होकर हमारा साथ दे रहे हैं। झगड़ा-फसाद बराबर चल रहा है। अँग्रेज परेशान भी हैं। लेकिन इससे हम अपने इरादे को पूरा नहीं कर सकते। मौजूदा काम तो सिर्फ अँग्रेजी हुकूमत को एक परेशानी में डालने वाला ही है। हमारा मतलब जो कुछ है वह तुम सब को मालूम है। उस मतलब के लिए हमें बाहरी-भीतरी दोनों तरह की ताकतों की जरूरत है। लेकिन हमें अभी तक बाहरी ताकत नहीं मिल रही उसे हासिल करने की सूरत पैदा करनी चाहिए।

"हुजूर का फरमाना वजा है ?" वफा बेग ने कहा—"यह एक हकीकत है। बाहरी ताकत के इमदाद के बगैर अँग्रेजी हुकूमत नहीं उखाड़ी जा सकती। यहाँ की रिआया के दिलों में एक जोश जरूर है लेकिन वह लड़ाई नहीं लड़ सकतीं। गाँव-बस्तियों के रहने वाले मैदान-जंग में उतरना नहीं जानते। जितना वह कर सकते हैं, कर रहे हैं। बाहरी इमदाद हासिल करने के बारे में मेरी समझ में यह आ रहा है कि यहाँ से नवाब शमशुद्दौला के पास ढाका चला जाए और उनसे मशविरा करके बल्कि उनको साथ लेकर काबुल का सफर किया जाए, तभी अपना मतलब पूरा पड़ सकता है।"

वजीरअली खाँ ने कहा—"काबुल पहुँचने को तो हम सोच रहे हैं, लेकिन अभी

उधर जाना मुनासिब नहीं मालूम होता। क्यों ? इसलिए कि काबुल हमारे मुल्क से बाहर है। पहले अपने मुल्क की ताकत हासिल हो जाना बेहतर मालूम होता है।"

वफा बेग कुछ नहीं बोला। अपने बिस्तर पर लेटा हुआ मीर इज्जतअली उठ कर बैठ गया और वजीरअली खाँ की तरफ रुख करके बोला—"अगर गुस्ताखी माफ फरमाने का वादा किया जाय तो इस वक्त मैं कुछ अर्ज करूँ।"

"हाँ, हाँ, कहो ?" वजीरअली खाँ ने इतमीनान से कहा।

"हुजूर ने जोश में आकर जीती हुई बाजी उलट दी।" उसने कहा।

"किस तरह ?" वजीरअली खाँ ने कहा।

"हंगामा की तारीख से पहले तलवार खींच ली और जान चेरों का कत्ल करके मुखालफत का इजहार कर दिया। वरना देश की छोटी-बड़ी तभी ताकतें यहाँ तक कि छावनी के सिपाही भी इमदाद के लिए तैय्यार थे। मगर वह खेल ही शुरू होने से रह गया। अब अपने मुल्क के ताकतवरों से किस तरह इमदाद चाही जाए ?"

वजीरअली खाँ बोले—"हमें भी उसका पछतावा है। हमसे वह गलती जरूर हुई।....मगर क्या करें, बचपन से हमने किसी की कड़ी बात नहीं बर्दाश्त की। चेरी का कहना खटक गया और गुस्सा आ गया, तलवार खींच ली। उस गुस्से और जोश में न हमें हंगामा याद रहा न उसकी तारीख। उस वक्त तो अँग्रेज बच्चे की गर्दन उड़ा देना ही याद था।"....फिर जरा देर खामोश रह कर कहा—"खैर, जो हो गया उसका अब क्या जिक्र और क्या पछतावा ?" फिर जरा देर चुप रह कर कहा—"यहाँ से नैपाल करीब है। बल्कि एक तरह से हमलोग नैपाल की तराई में ही हैं। इसलिए क्यों न नैपाल चला जाए और वहाँ के राजा को अपना साथी बना लिया जाए ? हमें उम्मीद है कि नैपाल का राजा जरूर हमें मदद देगा। क्योंकि नवाब आसफुद्दौला से उसका दोस्ताना था।"

मिरजाई बेग बोला—"गुस्ताखी माफ कीजिएगा। कमतरीन की तो यह इसलाह है कि किसी भी हालत में यह जंगल न छोड़ा जाए। अगर हमलोग यहाँ से नैपाल पहुँच गए तो उसके मानी यही होंगे कि घिर कर कैद हो गए। क्या यकीन कि राजा हमारी इमदाद करेगा ? हम न इधर के रह जाएँगे न उधर के ?"

"खैर, अगर सब की राय नैपाल चलने की नहीं है तो बेहतर है यहीं रह कर हाथ-पैर मारे जाएँ। लेकिन एक दूसरा भी सवाल सामने है। यानी अपने पास का नकद रुपया खतम हो रहा है। आगे खाने-पीने का इन्तजाम किस तरह होगा ? यों, हीरे जवाहरात हमारे पास जिन्दगी भर खाने के लिए मौजूद हैं, लेकिन यहाँ उनका खरीददार कौन है ?"

"यह मसला जरूर पेचीदा है ?" बहादुर अली ने कहा—"भूख की आग बुझाने की तदबीर गौरतलब है।"

सब लोग चुप रह गए।

इधर इस किनारे पर तो यह हो रहा था। उधर नदी के दूसरे किनारे घने पेड़ों की आड़ लिए लखनऊ के कंधारी रिसाले के पाँच-सात सवार अपने घोड़ों को पानी पिलाने आए थे। सहसा एक सवार को वजीरअली खाँ का दल दिखाई पड़ गया। उसने अपने एक साथी से उस दल की तरफ इशारा करके कहा—"जरा नदी के उस किनारे की तरफ निगाह दौड़ा कर देखो? वे कौन लोग हैं? कहीं नवाब वजीरअली खाँ और उनके साथी तो नहीं हैं?"

दूसरे सवार ने आँखें फैला-गड़ा कर उधर देखा, बोला—"वह लोग तो हैं गुलामअली?" फिर इशारा करके कहा—"वो जो बड़े पेड़ के नीचे घोड़े का चारजामा बिछाए, तने से टिके बैठे हैं, वही तो नवाब वजीरअली खाँ हैं। उनके चेहरे पर की चमक-दमक और कसरती जिस्म ही उन्हें पहचान लेने के लिए काफी है।"

गुलामअली ने कहा—"तब तो ये बहुत अच्छा मौका है। चल कर कालन्स साहब को खबर देनी चाहिए। उनकी पल्टन दूर नहीं है। घेर कर बड़ी आसानी से नवाब वजीरअली खाँ को गिरफ्तार किया जा सकता है।"

दूसरे सवार ने कहा—"इस झंझट में मत पड़ो। चलो यहाँ से दूसरी तरफ निकल चलें। कालन्स साहब को खबर देने की जरूरत नहीं है?" "ऐसा क्यों?" गुलाम-अली ने कुछ विस्मय के साथ कहा—"नवाब वजीरअली खाँ सामने मौजूद हैं। आसानी के साथ कब्जे में आ जाएँगे। ये रोज-रोज का बखेड़ा, जंगलों की छान-बीन खतम हो जाएगी। करनल कालन्स हमलोगों की कारगुजारी से खुश हो जाएगा।"

"मियाँ गुलामअली? एक करनल कालन्स की खुशी के लिए अपना मुँह काला न करना चाहिए। अपने हाथों कलंक का टीका माथे पर न लगाना चाहिए।" दूसरे सवार ने कहा।

"क्या विद्रोही नवाब वजीरअली खाँ को गिरफ्तार कराना कोई गुनाह का काम है? यहाँ आए किसलिए हैं? उन्हें ढूँढ़ने-खोजने और गिरफ्तार करने के लिए ही तो जंगलों-जंगलों मारे-मारे फिर रहे हैं।" गुलामअली ने जोश के साथ कहा।

"गुलामअली? तुम अभी लड़के हो?" दूसरे सवार ने कहा—"तुम जो कुछ कह रहे हो, उसका जवाब तुम्हारे बुजुर्गवार चचा रमजानअली दे सकते हैं।"

सहसा अपना घोड़ा लिए रमजानअली भी वहाँ आ गया। उस दूसरे सवार ने रमजानअली को इशारे से अपने पास बुलाया। आ जाने पर नवाब को दिखा-पहचनवा कर कहा—"मियाँ रमजानअली! तुम्हारे ये भतीजे गुलामअली कह रहे हैं, चलो दौड़ कर करनल कालंस को खबर कर दें। वह घेर कर नवाब को गिरफ्तार कर लें। अच्छा मौका है।"

रमजानअली उस दूसरे सवार से बोला—"अमाँ रसूलबख्श, गुलामअली क्या

जानें ! अभी इनकी उम्र कितनी है ? ज्यादा से ज्यादा तेईस-चौबीस बरस की होगी। ये इन बातों को क्या जाने समझें ? नया खून है, नया जोश है। इसलिए अपनी कारगुजारी दिखाने को तैय्यार हैं। जितनी गहराई को हम तुम छान सकते हैं, ये अभी नहीं छान सकते। हमने तुमने नवाब आसफुद्दौला बहादुर का नमक खाया है। उनकी दरियादिली के फायदे उठाए हैं। नवाब वजीरअली खाँ उन्हीं नवाब आसफुद्दौला के तो बेटे हैं। जमाने का फेर है कि आज जंगलों-जंगलों भटकते फिर रहे हैं। खुदा अंग्रेजों को गरत करे जिन्होंने उनको इस हालत को पहुँचाया है।....तोबा, तोबा ! वजीरअली खाँ को खुद गिरफ्तार करना या कप्तान कालन्स को खबर देकर पकड़वा देना हमलोगों का काम नहीं है। हजार बार लानत है ऐसी नीयत और कारगुजारी पर ! चलो यहाँ से हट चलें।" और उसने अपना घोड़ा दूसरी तरफ को मोड़ दिया।

रसूलबख्श, गुलामअली की तरफ देख कर मुस्कराया। फिर अपना भी घोड़ा रमजानअली के बगल से लगा दिया। गुलामअली भी चुपचाप उन दोनों के पीछे चल पड़ा।

दिन आगे बढ़ आए।

नवाब वजीरअली खाँ के पास का नकद रुपया खतम हो चुका था। जवाहरातों का वहाँ कोई मूल्य न था, अतः खाने के लाले पड़ने लगे थे। यद्यपि वजीरअली खाँ ने कुछ हीरे वगैरह, बेचने की गरज से रहीम खाँ के हवाले करके उसे लखनऊ की तरफ भेजा था लेकिन रहीम खाँ का कहीं पता न था।

सूर्य डूब चुका था किन्तु संध्या का अंधकार अभी नहीं फैला था। फिर भी पक्षियों के समूह अपने घोसलों की ओर लौटने लगे थे। वजीरअली खाँ एक पहाड़ी की तराई में झरने के किनारे बैठे साथियों की प्रतीक्षा कर रहे थे। साथी इधर-उधर के गाँवों, बस्तियों में खाने की सामग्री लेने गए थे। वजीरअली खाँ इस समय तरह-तरह के विचारों से उलझ सुलझ रहे थे। एक विचार कह रहा था—अब इन जंगलों के तिनके बटोरना व्यर्थ है। इस तरह से अपना ध्येय कभी पूरा नहीं हो सकता। अब यहाँ से बाहर निकल कर शक्तियों का संगठन करना जरूरी है। देश के शक्तिशाली रजवाड़ों में जाकर वहाँ के राजाओं को अपने पक्ष में करने से ही काम बन सकता है।....

एक-एक, दो-दो करके साथी आना आरम्भ हो गए।

आते ही शेख बहादुरअली बोला—"एक नई बात सुनने में आई है।"

"क्या ?" वजीरअली खाँ ने उसकी तरफ देख कर पूछा।

"गाँवों के लोगों से मालूम हुआ है कि इस इलाके में कोई नया वजीरअली खाँ पैदा हो गया है। उसके साथ तीन-चार सौ हथियारबन्द जवान हैं। वह अपने को लखनऊ का नवाब ही कहता है। इस इलाके से मिला-जुला जो कम्पनी का राज्य है, वहाँ गाँवों में लूट-पाट मचा रहा है। अंग्रेजों तथा नवाब अवध की फौज उसे यही समझ रही

हैं कि वह बनारस से भागे हुए नवाब वजीरअली खाँ ही हैं। और नये नवाब वजीरअली खाँ के पीछे लग रही है। गिरफ्तार करना चाहती है।"

सुन कर वजीरअली खाँ कुछ देर खामोश रहे। फिर धीरे से कहा—"कुछ मानियों में ये खबर बहुत अच्छी है। इससे हमारा मतलब पूरा पड़ सकता है।"

बहादुरअली ने पूछा—"इस खबर से हुजूर का क्या मतलब पूरा पड़ सकता है।"

"हमें यहाँ से निकल जाने का मौका मिल सकता है।" उन्होंने कहा—"क्योंकि अब हम इस जंगली इलाके में नहीं रहना चाहते। यहाँ भटकते फिरते रहने से हमारा इरादा कभी भी पूरा नहीं होगा और जिन्दगी बरबाद जाएगी।"

बहादुरअली चुप रहा।

वजीरअली खाँ फिर बोले—"अब हम इस फिक्र में हैं कि यहाँ से किस तरह निकला जाए? इसी लिबास और इसी तरह अपने-अपने घोड़ों पर बैठ कर यहाँ से किसी दूसरी जगह पहुँचना तो खतरे से खाली नहीं है।"

बहादुरअली बोला—"लिबास और शकल तबदील करना तो मीर इज्जतअली खूब जानते हैं। पक्के उस्ताद हैं। उनसे इस बारे में इसलाह ली जाए।"

तभी कुछ खाने की सामग्री लिए मीर इज्जतअली एक तरफ से आते नजर आए।

पास आकर मीर इज्जतअली ने कहा—"क्या मामला दरपेश है?"

बहादुरअली ने नवाब वजीरअली खाँ की इच्छा और चिन्ता उससे जाहिर कर दी।

सुन कर मीर इज्जतअली मुस्कराया, फिर बोला—"इसकी फिक्र करना बेकार है। ऐसी सूरतें शकलें बना कर सबको यहाँ से निकाल दूँ कि देखने वालों की आँखें अंधी हो जाएँ, पहचानना तो बहुत दूर की बात है।"

तभी वफा बेग, मिरजाई बेग, वारिसअली तथा चार यार आदि सभी साथी आ गए।

आते ही वफा बेग ने नवाब की ओर रुख करके कहा—"हुजूर! उठिए चलिए। जल्दी कीजिए।"

"ऐसी क्या बात है?" वजीरअली खाँ ने कहा—"यहाँ से चलने की कोई वजह भी जाहिर करोगे?"

"अंग्रेजी पल्टन और लखनऊ के कंधारी रिसाले के सवार, हमलोगों का पता लेते हुए बहुत करीब आ गए हैं। जल्द यहाँ से किसी दूसरी तरफ निकल चलना मुनासिब है।" वफा बेग ने कहा।

पूर्णिमा का चाँद वृक्षों की ऊँची-ऊँची टहनियों को चाँदी की तरह चमका रहा था। चाँदनी धीरे-धीरे जमीन पर उतरती चली आ रही थी।

वजीरअली खाँ उठ कर अपने घोड़े पर सवार हो गए। साथियों ने भी रकाबों

में पैर डाल कर घोड़ों की पीठें पकड़ लीं। और घोड़े उस स्थान से विपरीत दिशा की ओर दौड़ने लग गए। सबके आगे नवाब का घोड़ा था। रात आधी से अधिक व्यतीत हो गई। जंगल, छोटे बड़े झाड़-झन्खाड़ों तथा कँटीली झाड़ियों से भरा था। कहीं कोई पगडंडी राह भी नहीं नजर आती थी। झाड़ियों से उलझते वृक्षों की डालियों से टकराते-बचते घोड़े आगे बढ़े चले जा रहे थे। आगे कुछ सूखे झन्खाड़ों के समूह थे। इधर-उधर कुछ बड़े वृक्षों की डालियाँ टूटी पड़ी थीं।

सहसा नवाब का घोड़ा भड़का और उछल पड़ा। नवाब ने ख्याल किया कि शायद यहाँ कोई खतरा है, इसी कारण से घोड़ा भड़का है। उस स्थान को शीघ्र पार कर लेने के अभिप्राय से उन्होंने सँभल कर घोड़े को ऐड़ दी। घोड़ा तेज़ी के साथ आगे बढ़ गया। नवाब के घोड़े के पीछे बहादुरअली का घोड़ा था। कुछ आगे जाकर दूधिया चाँदनी के उजाले में पीछे से बहादुरअली ने देखा नवाब के घोड़े के पैर में एक पतली रस्सी सी उलझ लिपट रही है। पुकार कर नवाब से कहा—"जरा देखिए तो सही आपके घोड़े के पैर में क्या उलझ लिपट रहा है।" नवाब ने घोड़े की पीठ छोड़ कर देखा, वह कोई रस्सी न होकर घोड़े की आँत थी। किसी सूखे वृक्ष की नुकीली डाल उसके पेट में घुस गई थी और आँत बाहर निकल आई थी। नवाब ने घोड़े को पुचकारा सहलाया। घोड़ा जमीन पर गिर पड़ा और छटपटाने लगा। नवाब के मुख से निकल पड़ा—"वाह मुसाहब तुमने भी ऐन मौके पर हमें दगा दी।" घोड़े ने फटी आँखों से उनकी तरफ देखा और ठण्डा हो गया।

लेकिन वहाँ ठहर कर दुख मनाने का अवसर न था। दूसरे घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ गये।

४१

"शराब पिलाओ ? शराब पिलाओ ?" एक ही धुन बार-बार गूंज रही थी।

संध्या का समय, गहरा अंधकार। मुल्क अवध की पुरानी राजधानी फैजाबाद में यूनस की प्रसिद्ध सराय के भीतर मुसाफिरों की काफी भीड़ थी। अपनी-अपनी मंजिल की राह तय करके दिन भर के थके-माँदे मुसाफिर रात में पैर फैला कर सोने के लिए सराय में पिले पड़े थे। सराय का भटियारा कल्लू खाँ तो एक कोने में चारपाई पर बैठा हुक्का गुड़गुड़ा रहा था; लेकिन उसकी भटयारिन चुस्त थी। बड़ी चुस्ती बेबाकी के साथ मुसाफिरों से उलझ-सुलझ रही थी। मुसाफिरों को अपनी-अपनी पड़ी थी। भटयारिन को घेर कर कोई खाली कोठरी माँग रहा था। कोई चारपाई माँग रहा था। कुछ अपने घोड़ों

के लिए सुभीते का स्थान तथा दाना-घास के लिए चीख रहे थे। एक अफीमची-मियाँ मिट्टी का छोटा सा हुक्का हाथ में थामे चिलम चढ़ाए भटयारिन को बार-बार छेड़कर कह रहे थे—"ऐ, बीबी भटयारिन ? सुनती नहीं हो ? हम कब से चिल्ला रहे हैं ? हमारा दम निकला जा रहा है। दोपहर से शाम हो गई। हुक्के की एक चिलम भी गरम नहीं की। जरा एक चिलम के लिए तम्बाखू और आग के दो कोयले दे दो। हम और कुछ नहीं चाहते।"

सराय की सभी कोठरियाँ मुसाफिरों, सौदागरों तथा दूसरे लोगों से भरी थीं। किसी में कोई हींग बेचने वाला काबुली आगा ठहरा हुआ था। किसी कोठरी में कोई इत्र-फरोश जमा हुआ था। इत्रों की बू-बास से उसकी कोठरी भरी हुई थी। एक कोठरी में एक दवा-फरोश ठहरा था। एक दूसरी कोठरी में एक मदारी बन्दर-बंदरिया तथा एक बकरे के साथ मौजूद था। एक छैल-छबीला जौहरी भी एक कोठरी में पैर फैलाए चारपाई पर लेटा हुआ था। उसी की बगल वाली कोठरी में एक फकीर अल्ला-अल्ला की रटन लगाए था। गरज सराय की सभी कोठरियों में भिन्न-भिन्न रूपों और भिन्न-भिन्न पेशों-धंधों वाले मौजूद थे।

लेकिन इन सबसे निराला एक युवक अलमस्त फकीर जो दुनिया को एकदम भूला हुआ सा जान पड़ता था अपनी अनोखी धज में था। वह न भटयारी से कुछ माँगता था न किसी मुसाफिर से कुछ चाहता था। केवल सराय को हर कोठरी के द्वार पर जाकर झाँकता और गौर से भीतर को निहार कर अपनी आवाज लगाता था—"शराब पिलाओ, शराब पिलाओ ?" और फिर दूसरी कोठरी के द्वार पर पहुँच जाता था। इस अलमस्त फकीर की वेशभूषा बिलकुल मजजूबों की तरह थी। सिर के बढ़े हुए बालों की लटें दोनों कंधों पर झूल रही थीं। डाढ़ी मूंछ भी कुछ बेतुकी सी ही थी। शरीर के ऊपरी भाग में एक छोटा सा काला कम्बल लिपटा था और निचले भाग में तहमत बँधी थी, उसका रंग नीला था। बगल में छोटा-सा एक डन्डा दबा था और हाथ में शराब का प्याला था।

अपनी आवाज लगाता वह मस्ताना युवक फकीर उस कोठरी के द्वार पर पहुँचा जो जौहरी वाली कोठरी के बगल में थी और जिसमें एक फकीर पहले से ठहरा हुआ था। आवाज लगा कर ज्यों ही उसने कोठरी के अन्दर झाँक कर देखा, अन्दर वाला फकीर झपट कर द्वार पर आ गया और उस युवक फकीर को पकड़ कर बोला—"तू ने अभी तक शराब नहीं पी ? आ, मैं तुझे शराब पिलाता हूँ।" उसने युवक फकीर को अपनी कोठरी के अन्दर ले जाकर भीतर से द्वार बन्द कर लिया।

पहर रात तक सराय में काफी चहल-पहल रही। लोग आते-जाते रहे, उसके बाद फाटक बन्द हो गया। कोठरियों के द्वार भी बन्द हो गए। एक सन्नाटा-सा छा गया। सूर्य निकलने के कुछ पहले से पुनः चहल-पहल आरम्भ हुई, किन्तु बहुत थोड़ी देर के लिए। एक-एक करके सभी मुसाफिर सराय से निकल कर अपना रास्ता पकड़ने लग

गए। लेकिन उन दोनों फकीरों को किसी ने न किसी तरफ को जाते देखा और न वे उस कोठरी में ही मौजूद थे।

मस्ताना युवक फकीर नवाब वजीरअली खाँ ही थे तथा उस संध्या को जितने भी वेशधारी मुसाफिर भटयारिन से उलझ-सुलझ रहे थे या कोठरियों में ठहरे हुए थे सभी नवाब के साथी थे। नैपाल की तराई को छोड़ कर इधर आ गए थे।

× × × ×

फैजाबाद की सराय से निकल कर नवाब वजीरअली खाँ का गिरोह लखनऊ आ गया। सबकी वेश-भूषा वही थी। लखनऊ में चौक बाजार वाली हिरन की सराय में डेरा डाला। दूसरे दिन सवेरे सभी सराय से निकल कर लखनऊ की गलियों कूचों में बिखर गए और अपने-अपने वेश के अनुसार लोगों से मिल-मिला कर वहाँ का अता-पता लेने लग गए। केवल नवाब वजीरअली खाँ सराय की एक कोठरी में मौजूद थे। पहर दिन चढ़े उनकी तबीयत भी लखनऊ घूमने के लिए भुर-भुरा उठी।

फकीरी वेश तो उन्होंने बना ही रखा था, अब उसमें थोड़ा और हेर-फेर किया। लोहे की जंजीर से बँधा एक कशकोल कंधे से नीचे लटकाया। लोहे की एक मोटी लम्बी जंजीर कमर में लपेट ली और लोहा शाह बन कर सराय से निकल पड़े।

लोहा शाह सीधे बड़े इमामबाड़े में जा पहुँचे। उस समय वहाँ कोई न था। लोहा शाह नवाब आसफुद्दौला की कब्र से लिपट गए। आँसू बहाने लगे। उन्हें लगा मानो कब्र के अन्दर से आवाज आ रही है—"रास्ता सीधा था, मगर अपने हाथों टेढ़ा बना लिया। नजदीक आकर मंजिल दूर चली गई। अब अकेले तुम्हारे किए कुछ नहीं हो सकता। अगर अपने इरादे में कामयाब होना चाहते हो तो संगठन करो। ताकतों को जमा करो....लेकिन बहुत मुश्किल है....हवा का रुख दूसरी तरफ है।....मगर कोशिश करना फर्ज है।"

लोहा शाह ने कब्र को छोड़ कर इधर-उधर देखा। कोई नहीं था। एक बार फिर कब्र पर माथा टेका और उठ कर इमामबाड़े से बाहर आ गए।

उस दिन रज्जब की नौचन्दी थी। सोचा, चलो शुजरत, अब्बास की दरगाह की भी जयारत करते चलें। दरगाह में पहुँच गए। वहाँ लोगों का काफी मजमा था। दरगाह की सहन में एक तरफ खड़े हो गए। अन्दर कोई मर्सिया पढ़ रहा था। खड़े-खड़े सुनते रहे। मर्सिया खतम हो जाने पर हदीस पढ़ी गई। उसके बाद भीड़ छँटने लग गई। लोग अपने घरों को जाने लग गए। लोहा शाह ने भी लौटने का इरादा किया। दरवाजे की तरफ बढ़े। तभी देखा जनानी दरगाह की तरफ से कनीज फातमा चली आ रही है। पहली नजर में ही उसे पहचान गए। लेकिन कनीज फातमा लोहा शाह को न पहचान सकी। पास आने पर लोहा शाह ने उसे गौर से देखा। रहा-सहा सन्देह भी जाता रहा। सोचा यह तो बनारस में थी, लखनऊ में क्यों नजर आ रही है। सम्भव है

किसी काम से आई हो ? शायद बेगम वजीरुन्निसा ने ही किसी मतलब से लखनऊ भेजा हो ? इससे बेगम का कुछ हाल मालूम हो सकता है। मगर पूछना गुनाह है। अपना भेद खुल जाने का डर है !

कनीज फातमा उनके नजदीक से गुजरी। लोहा शाह ने जान-बूझ कर उसे हलका-सा धक्का दे दिया।

कनीज फातमा ने उचटती निगाह से उनकी तरफ देख कर कहा—"ऐ, शाह साहब ? कैसे चल रहे हो ? ठीक से चलो ?"

लोहा शाह ने मीठे स्वर से कहा—"माफ करना कनीज फातमा ? गलती से धक्का लग गया।"

कनीफ फातमा ने घूर कर उनकी तरफ देखा। सोचने लगी—शाह साहब ने मेरा नाम किस तरह जान लिया ? मैंने तो पहले इन्हें कभी देखा भी नहीं था। फिर कुछ आश्चर्य भरे लहजे से बोली—"ऐ, शाह साहब ! आपने मेरा नाम किस तरह जान लिया ?"

"फकीरों से किसका नाम छिपा रहता है ?" लोहा शाह ने कहा।

"तब आपने अपनी खुदा-परस्ती से मेरा नाम जान लिया है ?"

"हूँ।" लोहा शाह ने धीरे से कहा और चलने को हुए।

"जरा रुकिए शाह साहब ?" कनीज फातमा ने विनती भरे स्वर से कहा।

"क्यों क्या काम है ?" लोहा शाह ने पैर रोक कर कहा।

"क्या आप अपना नाम बता सकते हैं ?" उसने पूछा।

"हमारा नाम लोहा शाह है ?"

"घर या तकिया कहाँ पर है ?"

लोहा शाह जरा मुस्कराए। फिर बोले—"कैसी नादान हो ? फकीरों का कहीं घर होता है ? पानी बहता रहे और फकीर चलता रहे तभी उसमें अच्छाई होती है। जिस तरह पानी एक जगह रुक जाने से गंदा हो जाता है, उसी तरह फकीर एक जगह घर बना कर बैठ रहे तो उसमें भी गन्दगी पैदा हो जाती है।"

कनीज फातमा लोहा शाह की बातों से बहुत प्रभावित हुई। उसका हृदय कह उठा कि यह अवश्य कोई सच्चा फकीर है। एक क्षण उनकी तरफ देखते रहने के बाद बोली—"शाह साहब ! अगर आपसे कोई सवाल किया जाए, कोई मतलब की बात पूछी जाए तो आप उसका सच्चा और सही जवाब दे सकेंगे ?"

"अगर सच्चे दिल से सवाल किया जाए और हम समझ लेंगे कि सवाल सच्चा है, तब खुदा के हुक्म से जरूर सही जवाब दे सकेंगे।" फिर जरा गम्भीर होकर कहा—"तुम क्या कोई सवाल करना चाहती हो ?"

"मैं खुद कोई सवाल नहीं करना चाहती ?" कनीज फातमा ने कहा—"मैं

आपसे कुछ छिपाऊँगी नहीं। मैं एक कनीज़ हूँ और एक बेगम साहिबा की खिदमत में रहती हूँ। हमारी बेगम साहिबा एक अर्से से बहुत दुखी रहती हैं। एक जबरदस्त मसला उन्हें दामनगीर हो रहा है। इसलिए अगर वह आपसे सवाल करना चाहें तो आप जवाब दे सकेंगे ?"

"खुदा का हुक्म होगा तो जवाब दिया जा सकेगा।"

"आप यहाँ कहाँ रुके हैं ?"

"चौक की हिरन वाली सराय में।"

"अगर हमारी बेगम साहिबा अपना कोई सवाल लेकर आपकी खिदमत में हाजिर होना चाहें तो किस वक्त हाजिर हों ?"

"रात के पहले पहर में।" लोहा शाह ने कहा—"क्योंकि उसके बाद मैं यादे-खुदा में मसरूफ हो जाऊँगा। और पौ फटते ही यहाँ से किसी दूसरी तरफ को कूच कर जाऊँगा।" और लोहा शाह ने अपने कदम बढ़ा दिए।

कनीज़ फातमा ने घर पहुँच कर बेगम वजीरुन्निसा को लोहा शाह की मुलाकात का हाल बताया। जो बातें हुई थीं सुना कर कहा—"हुजूर मुझे तो वह एक खुदा-रसीदा फकीर मालूम हुए हैं। जब बिला बताए वह मेरा नाम जान गए तो जरूर उनमें करामात मौजूद है। मेरी राय है कि उनकी खिदमत में हाजिर होकर नवाब साहब के बारे में कुछ पूछा जाए ? मुझे यकीन है कि वह सच्चा और सही जवाब देंगे।"

"क्या कहूँ कनीज फातमा ?" बेगम ने उदास भाव से कहा—"नवाब की याद आते ही हमारा दिल बैठने लग जाता है। जिस घड़ी से जुदा हुए आज इस वक्त तक उनकी कोई खैर-खबर नहीं मालूम हुई।" फिर एक क्षण चुप रहने के बाद नजर उठा कर पूछा—"क्या नाम बताया उन्होंने अपना ?"

"लोहा शाह ?" कनीज फातमा ने कहा—"हुजूर, क्या अर्ज करूँ। मन दो मन वजन की भारी एक लोहे की जंजीर कमर में लपेटे हुए थे। मगर इस तरह चलते थे कि जैसे उसका कोई वजन ही नहीं है। उनके लिए वह वजनी जंजीर मानो फूलों की माला ही थी। लेकिन आज भर ही वह लखनऊ में रुकने को फरमा रहे थे। पौ फटते ही किसी दूसरी तरफ कूच कर जाएँगे।"

बेगम जरा देर मौन रहीं। फिर सिर उठा कर कहा—"ठीक है। चिराग जल जाने के बाद उनकी खिदमत में चला जाए। शाम को डोली-कहारों का इन्तजाम कर लेना।"

चिराग जल चुके थे। नवाब वजीरअली खाँ हिरन की सराय की एक कोठरी में लोहा शाह बने बैठे थे। उन्होंने समझ लिया था कि कनीज फातमा की स्वामिनी कोई दूसरी न होकर बेगम वजीरुन्निसा ही होंगी। शायद वह बनारस से लखनऊ आ गई हैं। अच्छा है उनसे दो बातें हो जाएँगी, क्योंकि अब जाने फिर मुलाकात हो या न हो।

उन्होंने इस राज से मर्दानअली वगैरह को भी वाकिफ कर दिया था और मर्दानअली उनका एक मुरीद बन कर सरेशाम से ही लोहा शाह की कोठरी के द्वार पर जम गया था।

चिराग जलने के बाद बेगम वजीरुन्निसा डोली में सवार होकर चौक की तरफ चल पड़ीं। कनीज फातमा डोली के साथ थी। सराय में पहुँच कर कनीज फातमा ने लोहा शाह की कोठरी का पता लिया और बेगम को साथ लेकर कोठरी के द्वार पर पहुँच गईं। बेगम वजीरुन्निसा नीचे से ऊपर तक बुर्के से ढँकी थीं।

मर्दानअली कोठरी के द्वार पर पहरेदार बना बैठा था। कोठरी का द्वार अन्दर से बन्द था।

मर्दानअली ने कनीज फातमा से पूछा—"तुम्हारा ही नाम कनीज़ फातमा है?"

"जी हाँ।" उसने कहा।

"और ये तुम्हारी मालकिन कोई बेगम हैं?"

"जी हाँ।"

"शाह साहब की जयारत हासिल करना चाहती हैं?"

"जी हाँ।"

"पीर साहब ने तुम्हारे आने से पहले मुझे आगाह कर दिया था। लेकिन एक सायत इन्तजार करना पड़ेगा। क्योंकि शाह साहब इस वक्त कोई वजीफा पढ़ रहे हैं। पूरा हो जाने पर ही मिल सकेंगे।"

बेगम और कनीज फातमा वहीं एक कोना ताक कर बैठ गईं।

कोठरी के अन्दर से नवाब वजीरअली खाँ बाहर की सब बातचीत सुन रहे थे। समझ गए कि बेगम आ गई हैं। एक सायत बाद उन्होंने साँकल खोल दी। किवाड़ ज्यों के त्यों बन्द रहे।

कोठरी के द्वार की साँकल खुल जाने की आहट पाकर मर्दानअली ने बेगम की तरफ रुख करके कहा—"बेगम साहिबा? शाह साहब का वजीफा पूरा हो चुका है। अब आप उनकी जयारत के लिए अन्दर जा सकती हैं।"

बेगम उठ कर खड़ी हो गईं। उनके साथ कनीज फातमा भी कोठरी के अन्दर जाने लगी।

मर्दानअली ने उसे रोक कर कहा—"कनीज फातमा, तुम यहीं रहो, शाह साहब सिर्फ बेगम साहिबा से ही मुलाकात करेंगे। उनका ऐसा ही हुक्म है।"

कनीज फातमा अपने कोने में जाकर बैठ गई।

बेगम ने धीरे से द्वार का एक किवाड़ खोल कर कोठरी में प्रवेश किया। शाह साहब ने उठ कर पुनः अन्दर से साँकल बन्द कर ली और अपने आसन पर बैठ गए। वह अब भी लोहा शाह की सूरत में थे। बेगम ने शाह साहब के कदम चूमे और दो कदम

पीछे हट कर नीची निगाह कर बैठ गईं।

एक क्षण खामोशी का वातावरण रहा। फिर शाह साहब ने कहा—"बेगम साहब ? आप हमसे क्या सवाल करने के लिए तशरीफ लाई हैं ? सवाल कीजिए, हम उसका सही-सहीं जवाब देंगे।"

आवाज सुन कर बेगम वजीरुन्निसा चौंकी। वह आवाज तथा स्वर लहजा उन्हें परिचित-सा मालूम हुआ। बिलकुल नवाब साहब का ही स्वर-लहजा मालूम हुआ। हृदय सन्देह से भर गया। यद्यपि शील-संकोच अड़ंगा डाल रहा था, फिर भी बेगम ने चेहरे पर से नकाब हटा कर उनकी तरफ गौर से देखा। लेकिन ठीक से पहचान न सकीं।

शाह साहब मुस्कराए, बोले—"अरे, बेगम वजीरुन्निसा ? तुमने अब तक हमें नहीं पहचाना ? इतनी जल्दी भूल गईं ? खैर यह बताओ, तुम बनारस से लखनऊ कब आ गईं ?"

बेगम का सन्देह एकदम दूर हो गया। अपने प्रिय नवाब को सामने बैठा देख कर वह हड़बड़ा पड़ीं और उठ कर उनसे लिपट गईं।

वजीरअली खाँ मुस्कराते हुए बोले—"ऐ, ये क्या ? लोहा शाह के गले से क्यों लिपट रही हो ?" और फिर पकड़ कर उन्हें अपनी बगल में बैठा लिया। धीरे-धीरे बातें करनी शुरू कीं—

"हाँ, तो बताओ ? बनारस से लखनऊ कब और किस तरह आ गईं ?"

बेगम ने अपने आने की कथा आदि से अन्त तक सुना कर कहा—"हुजूर ने यह अच्छा वेश बना रखा है। हम पूरा भी न पहचान सकीं। कितने दिनों बाद और किस तरह आज सामना हुआ है। खुदा का हजार-हजार शुक्र है कि उसने दीदार कराया।"

"मगर इस दीदार को अब इस जिन्दगी का आखिरी दीदार ही समझो।"

"ऐसा क्यों ?"

"इसलिए कि आगे अब मुलाकात होना गैरमुमकिन सा मालूम होता है। तुम्हें हमारा इरादा मालूम है। हम उसी इरादे को पूरा करने में लगे हुए हैं। लेकिन हमारा यह इरादा ऐसा नहीं है कि जल्दी पूरा हो सके। सूरतें बन-बन कर बिगड़ रही हैं। मुसीबतें सर पर टूट रही हैं। फिर भी हम अपने उस इरादे को नहीं छोड़ रहे। खुदा पर भरोसा रख कर हिम्मत के साथ आगे बढ़ते चले जाते हैं। मुसीबतों की हमें कोई परवाह नहीं है।"

"क्या अभी तक हुजूर को कामयाबी की कोई सूरत नजर नहीं आई ?" बेगम ने पूछा।

वजीरअली खाँ एक खामोशी के बाद बोले—"बेगम ? बुनियाद खोद कर उस पर एक खूबसूरत आलीशान इमारत खड़ी करना कुछ आसान काम नहीं है। इमारत

बनाने के लिए किस कदर सामान जमा करना पड़ता है। ईंट, पत्थर, चूना, लकड़ी वगैरह जमा हो जाने के बाद ही काम शुरू होता है। हम अपनी इमारत खड़ी करने के लिए अभी तक कुछ भी नहीं जुटा सके।"

"तब छोड़िए उस इमारत का पीछा।" बेगम ने कहा—"क्यों इतनी मुसीबत उठा रहे हैं?"

"हम अपनी जिन्दगी में उसे नहीं छोड़ सकते।" वजीरअली खाँ ने दृढ़ स्वर से कहा—"मुसीबतों से डर कर इरादे को छोड़ देना मर्दों का काम नहीं है। फिर अब तो हम खुलेआम अँग्रेज जाति के दुश्मन बन चुके हैं। हमारी उनकी ठन गई है। इस लिए न हम उन्हें छोड़ सकते हैं और न वह हमें।"

"अब यहाँ से कहाँ जाने का इरादा रखते हैं?"

"मुल्क के कोने-कोने में घूमने-भटकने का और अगर यहाँ अपने मुल्क में हमें अच्छी सूरत नजर न आई तो उसकी तलाश में मुल्क के बाहर भी जाना पड़ेगा।"

बेगम खामोश रह कर आँखें पोंछने लगीं।

वजीरअली खाँ ने बेगम को सीने से लगा लिया और अपने हाथों से उनके आँसू पोंछ कर कहा—"तुम क्यों अपना दिल ओछा कर रही हो? तुम्हें तो हमारी हिम्मत बढ़ाना चाहिए। हमारी कामयाबी के लिए खुदा से दुआ करनी चाहिए।"

बेगम ने धीरे से कहा—"हमारा खुदा तो जाने कहाँ खो गया है।"

"खुदा खो कहीं नहीं गया, हाजिर नाजिर है और अपने बन्दों का मददगार है।" फिर बेगम को छोड़ कर कहा—"देखो याद रखना।"

"क्या?" बेगम ने उनकी तरफ देखा।

वजीरअली खाँ बोले—"हमारे यहाँ आने के राज का किसी को कानों-कान खबर न हो। यहाँ तक कि कनीज फातमा को भी न मालूम हो सके।"

बेगम ने पुनः शाह साहब के कदम चूमे और अपने चेहरे पर नकाब डाल ली। कोठरी का द्वार खुला, बेगम बाहर आ गईं। डोली पर सवार हो गईं और डोली चौक की उस सराय से सआदतगंज की तरफ चल पड़ी। रात का पहला पहर समाप्त हो रहा था।

४२

उसी रात नवाब वजीरअली खाँ ने विविध वेशधारी अपने समस्त साथियों को अपनी कोठरी में बुला कर मंत्रणा की, आगे की योजना बनाई। सबकी सलाह से निश्चय हुआ कि यहाँ से सीधा जयनगर चला जाए। और जयनगर के राजा द्वारा राजपूताने

के सभी रजवाड़ों को अपने पक्ष में करके एक शक्ति-संगठित कर ली जाए। उसके बाद खुले रूप से अंग्रेजों से लड़ाई लड़ी जाए। उस समय यदि आवश्यकता समझी जाएगी तो काबुल से भी सहायता लेने का प्रबन्ध किया जाएगा। बादशाह काबुल ने फौजी सहायता देने का जो वादा किया था उनका वह पत्र नवाब वजीरअली खाँ के पास मौजूद था। उन्होंने सबको दिखा दिया।

पूरब में सफेदी फैलते ही वजीरअली खाँ का गिरोह सराय से निकल कर गोमती नदी के बटेरी घाट पर पहुँच गया। नदी पार करके बिजनौर होते हुए इलाहाबाद पहुँच गए। वहाँ से यमुना पार करके सीधे जयनगर पहुँच गए।

जयनगर के राजा को नवाब वजीरअली खाँ के आने की खबर हुई। आगे बढ़ कर नवाब का स्वागत किया। अपना मेहमान बना कर मेहमानखाने में ठहराया। दस-पाँच दिन की मेहमानी के बाद नवाब वजीरअली खाँ ने अपना इरादा तथा योजना राजा के सामने रखी। राजा ने उनकी योजना को स्वीकार कर लिया। अंग्रेज जाति को देश से निकाल बाहर कर देने के लिए तैय्यार हो गए। हर प्रकार से सहायता देने का वचन दिया। इसके अलावा अपने पड़ोसी राजाओं की शक्तियों को भी इस योजना में शरीक कर लेने का विश्वास दिलाया। बल्कि उसी समय पड़ोसी राज्यों के नाम पत्र भी लिख कर अपने विश्वासी नौकरों द्वारा भेज दिए। नवाब वजीरअली खाँ उत्साह से भर गए और समय की प्रतीक्षा करने लग गए। विश्वास जम गया कि अब हम अवश्य अपने इरादे में सफल हो जाएँगे।

नवाब वजीरअली खाँ जयनगर के मेहमानखाने में पड़े हुए एक प्रकार से संतोष की साँस ले रहे थे। दिन प्रतिदिन विश्वास बढ़ता जा रहा था। उधर कम्पनी सरकार के महाप्रतिनिधि भी वजीरअली खाँ की ओर से गाफिल न थे। जिस दिन से उन्होंने बनारस में अंग्रेजी सरकार की मुखालफत इख्तियार करके फ़साद-हंगामा खड़ा किया था और मोर्चा छोड़ कर भाग खड़े हुए थे उसी दिन से महाप्रतिनिधि नवाब वजीरअली खाँ के प्रति चुस्त तथा सचेत हो गए। गोरखपुर के जंगलों में रह कर नवाब ने कम्पनी राज्य के इलाकों में लूट-मार का जो तहलका मचाया था, अंग्रेजी हुकूमत के लिए वह जख्म पर नमक बन गया। इसलिए कम्पनी सरकार भी हाथ धोकर नवाब वजीरअली खाँ के पीछे पड़ गई। जैसे भी बन पड़े उन्हें पकड़ कर कैदखाने में बन्द कर देना चाहती थी।

सहसा गोरखपुर के जंगलों में एक दूसरा वजीरअली पैदा हो गया था और कम्पनी राज्य में नवाब वजीरअली खाँ के नाम से लूट-मार करता था। अंग्रेज सरकार धोखे में आ गई और उसके पीछे लग गई थी। इस गैबी मदद से नवाब वजीरअली खाँ को मौका मिल गया और वह गोरखपुर के जंगलों से निकल भागे थे।

अंग्रेज सरकार ने कुछ दिनों में उस नकली वजीरअली खाँ को पकड़ कर फाँसी पर चढ़ा दिया। उसके बाद वह पुनः नवाब वजीरअली खाँ की खोज में जुट गई।

लखनऊ में अंग्रेज सरकार की जो पल्टनें रह रही थीं। गवर्नर जनरल ने नवाब वजीरअली खाँ की गिरफ्तारी का काम उन्हें सौंप दिया। करनल कॉलंस तथा जान मिनस्टन फौजी अफसर एक-एक पल्टन को साथ लेकर नवाब वजीरअली खाँ की तलाश में निकल पड़े। अवध के नवाब सआदतअली खाँ के पैदल सिपाही तथा कंधारी रिसाला के सवार अंग्रेज अफसरों के साथ थे।

जब असली नवाब वजीरअली खाँ का नैपाल की तराई में कहीं पता न चला तब अंग्रेज सरकार की चिन्ता बढ़ गई। अतः करनल कॉलंस तथा जान मिनस्टन अधिक चुस्त हो गए। झूठ-सच जैसी भी सूचना उन दोनों को वजीरअली खाँ के विषय में मिल जाती थी, अविलम्ब उधर को दौड़ पड़ते थे। और जब नवाब वजीरअली खाँ हाथ न आते, उनकी खीझ बढ़ जाती और उस खीझ का शिकार भेदियों-जासूसों को होना पड़ता था।

आखिर भेदियों ने जी तोड़ दौड़-धूप तथा जमीन-आसमान एक कर देने के बाद नवाब वजीरअली खाँ की छाया को झाँक लिया और ताजी खबर करनल कॉलन्स के कानों में भर दी—"नवाब वजीरअली खाँ गोरखपुर के जंगलों से भाग आए हैं और राजस्थान की रियासत जयनगर में पहुँच कर राजा के मेहमान बने हुए हैं। लेकिन वहाँ वह कोरी मेहमानी नहीं कर रहे। जयनगर के राजा को अपने पक्ष में लेकर पड़ोसी राज्यों की शक्तियों का संगठन भी कर रहे हैं और खुल कर मैदान में आने का इरादा रखते हैं।"

भेदियों द्वारा इस सूचना को पाकर करनल कॉलंस एकदम घबड़ा गया। सोचने लगा—यदि वास्तव में वजीरअली खाँ ने राजपूताने के रजवाड़ों और शासकों पर अपना जादू चढ़ा दिया है, उन्हें अपने पक्ष में करके कम्पनी सरकार का विरोधी बना दिया है तब निस्सन्देह विद्रोह का रूप बहुत भयंकर हो जाएगा और उस दशा में विद्रोह की आग मुल्क के कोने-कोन में पहुँच जाएगी, और उस वक्त अंग्रेज सत्ता का लड़खड़ा जाना असम्भव नहीं कहा जा सकता।

इसलिए सबसे पहले करनल कॉलंस तथा लखनऊ के रेजीडेन्ट ने मिल कर इस समाचार की सूचना गवर्नर जनरल के पास पहुँचा दी। वहाँ से वापसी डाक से जवाब मिला—जिस तरह भी बन पड़े वजीरअली खाँ अपने कार्य में सफल न होने पाएँ। किसी भी मूल्य पर नवाब को अपने अधिकार में कर लिया जाए।

गवर्नर जनरल का आदेश पाकर करनल कॉलंस तथा लखनऊ के रेजीडेन्ट ने एकान्त में बैठ कर इस विषय में काफी विचार-विमर्श किया और अन्त में इस निश्चय पर पहुँचे कि जयनगर के राजा को अपने पक्ष में किया जाय और उसे पक्ष में करने का उपाय सिर्फ लालच है। सोने के टुकड़ों का ढेर सामने लगा कर झूठे-सच्चे वादे किए जाएँ। ऐसा करने से एक साथ दो कार्य सिद्ध हो सकेंगे। उधर की अन्य शक्तियों का संगठन खटाई में पड़ जाएगा तथा जयनगर के राजा द्वारा छल-कपट जिस प्रकार सम्भव हो सकेगा, वजीरअली खाँ अपने अधिकार में आ जाएँगे।

इस निश्चय के बाद करनल कालंस ने जाल बिछाना आरम्भ कर दिया। मिरजा बाकर लखनऊ के रेजीडेन्ट के मीर मुंशी थे। बहुत मीठा बोलने वाले, पक्के खुशामदी होने के साथ चुस्त-चालाक तथा तिकड़मबाज भी थे। रजीडेन्ट मीरमुंशी के हर एक गुण से वाकिफ थे, अतः उन्होंने मिरजा बाकर को करनल कालंस के सिपुर्द कर दिया। कालंस ने मिरजा बाकर को अपने हत्थे चढ़ा कर कहा—"जयनगर जाकर राजा को अपनी मुट्ठी में बन्द कर लेना आपकी हुस्नलियाकत, होशियारी तथा अंग्रेज सरकार की फरमाबरदारी का सबूत मानी जाएगी। आपके जरिए नवाब वजीरअली खाँ का गिरफ्तार हो जाना आपके लिए बहुत बड़े फायदे का होगा। तुम्हें इख्तियार दिया जाता है कि इस काम में जितना धन खर्च करना मुनासिब समझा जाए, खर्च किया जा सकता है। जिस मूल्य पर भी सौदा पटा सको बिला, झिझक संकोच के पटा सकते हो। कम्पनी सरकार की तरफ से झूठे-सच्चे वादे भी कर सकते हो।"

मिरजा बाकर ने सहर्ष कालंस की एक-एक बात को बड़ी मजबूती के साथ गाँठ में बाँध लिया और लखनऊ से अकेले ही जयनगर की ओर कदम बढ़ा दिया। जयनगर में उनके एक पुराने मुलाकाती नवाब नाजिर अहमदहुसैन खाँ थे। मिरजा बाकर ने जाकर उन्हीं के यहाँ डेरा जमा दिया। नवाब नाजिर अहमदहुसैन खाँ उनकी मेजबानी करने लग गए।

नवाब नाजिर अहमदहुसैन खाँ रिश्ते में जयनगर के राजा के बड़े भाई होते थे। और उनका यह रिश्ता इस प्रकार जुड़ा था कि जयनगर-महाराजा के पिता अपनी जवानी के आलम में एक बार लखनऊ आकर नवाब आसफुद्दौला बहादुर के मेहमान बने थे। आदर-सत्कार, खातिर-तवाजा के सिलसिले में लखनऊ की एक नौजवान वेश्या मुगलजान भी मुजरा के लिए उनके डेरे में हाजिर हुआ करती थी। महाराज का भी जवानी का आलम था। नजर लड़ा दी। मोहब्बत बढ़ गई। जब राजा लखनऊ से जयनगर वापस लौटे तो मुगलजान उनके साथ थी। राजा ने मुगलजान को अपने महलों में सात पर्दों के अन्दर बैठा दिया। समय पाकर मुगलजान की कोख से अहमइहुसैन ने जन्म लिया। चूंकि राजा के अभी तक कोई सन्तान न थी। अहमदहुसैन ही उनकी पहली सन्तान थे, इसलिए बड़े लड़के भी थे। लेकिन राजा ने मुगलजान के धर्म में कोई बाधा नहीं उत्पन्न की थी, वह अपने धर्म पर कायम थी। बल्कि उसके इबादत-नमाज के लिए उसके महलों से लगी हुई एक छोटी-सी मस्जिद भी राजा ने खड़ी करा दी थी। मुगलजान ने अपने धर्म के अनुसार ही बेटे का नाम अहमदहुसैन रखा था।

इसके चार-पाँच वर्ष बाद राजा की विवाहिता रानी से जयनगर के मौजूदा राजा का जन्म हुआ था। राज्य की परम्परा, धर्म-जाति आदि के अनुसार जयनगर की गद्दी का हकदार राजा की विवाहिता रानी का पुत्र ही माना गया था। किन्तु राजा अहमद-हुसैन को बड़े पुत्र की तरह ही चाहते थे। उसे नवाब नाजिर की उपाधि भी दे रखी

थी। जवान होने पर राजा ने अहमदहुसैन का निकाह अपने दरबार के एक मुसलमान दरबारी की लड़की से पढ़ा दिया था और रहने के लिए एक अलग सुन्दर हवेली भी बनवा दी थी। गुजारे के लिए डेढ़ हजार रुपया मासिक भी बाँध दिया था। इसके अलावा आराम, ऐश-इशरत का सभी समान उनके पास जमा कर दिया था। राजा की मृत्यु के बाद मुगलजान अपने महलों को छोड़ कर बेटे की हवेली में जाकर उन्हीं के साथ रहने लगी थी।

वर्त्तमान जयनगर नरेश नवाब नाजिर अहमदहुसैन को अपना बड़ा भाई ही मानते थे। आदर-सम्मान भी उसी प्रकार करते थे और कभी उनकी बात को नहीं टालते थे। अहमदहुसैन तो करीब-करीब रोज ही महाराज से मिलने आया करते थे। जब-तब जयनगर नरेश भी उनकी हवेली में पहुँच जाया करते थे। मुगलजान का भी माता जैसा ही आदर करते थे।

मीरमुंशी मिरजा बाकर ने दो-चार दिनों की मेहमानी के बाद अपने मतलब को हाथ में लिया। नवाब नाजिर से वजीरअली खाँ का जिक्र छेड़ा। उन्होंने बताया कि नवाब वजीरअली खाँ अपने कई साथियों सहित जयनगर आए हैं और आज तक महाराजा के मेहमान बने हुए हैं।"

"क्या वजीरअली खाँ जयनगर में सिर्फ मेहमानी करने आए हैं या किसी दूसरे मतलब से ?" मिरजा बाकर ने अनभिज्ञता के भाव से पूछा।

अहमदहुसैन बोले—"मैं खुद तो उनसे कभी मिला नहीं। लेकिन सुना है कि वह अंग्रेज सरकार के बहुत बड़े मोखालिफ हैं। अंग्रेजों ने उनके साथ जो बेइन्साफी की है, लखनऊ की हुकूमत उनसे छीन कर दूसरे को बख्श दी है, वह उन्हें बहुत खटक रही है। उसका बदला चुकाना चाहते हैं। एक बहुत बड़े संगठन के साथ अंग्रेजों के मुकाबले में आना चाहते हैं। जयनगर के महाराज भी उनकी इमदाद के लिए तैय्यार हैं। पड़ोस के राजाओं को मिलाने की भी कोशिश की जा रही है।"

सुन कर मिरजा बाकर ने अपने आने का अभिप्राय उनसे जाहिर किया, लेकिन बड़े विचित्र ढंग से। अपनी मीरमुंशीगीरी की समस्त योग्यता उसमें निचोड़ दी, बोले—"भाई साहब ! वजीरअली खाँ के बारे में जैसा आपने फरमाया हू-बहू ऐसा ही मैंने लखनऊ में सुना था और सुनते ही मेरा माथा ठनक उठा था। मुझे आपकी याद आ गई थी। और उस याद ने मेरे दिल में उथल-पुथल मचा दी थी। मेरा दिल कह उठा था कि अगर जयनगर के महाराज ने वजीरअली खाँ को किसी तरह की भी इमदाद दी, तो बड़ा गजब हो जाएगा। वजीरअली खाँ अपनी करतूतों से खुद तो बरबाद हुए हैं और आगे भी अपने नतीजे को पहुँचेंगे, लेकिन अपने साथ दूसरों को भी ले डूबेंगे। यानी जयनगर रियासत को भी तबाह कर देंगे।"

"वह किस तरह ?" नवाब नाजिर ने कहा।

"आप अभी नहीं समझे ?" मिरजा बाकर ने जरा गम्भीर होकर कहा—"भाई साहब ! अगर जयनगर रियासत मिट गई, तो आपका यह दर्जा-मर्तबा, यह हक-हकदारी कहाँ रह जायेगी !"

अहमदहुसैन कुछ नहीं बोले। विस्मय भरी नजर से उनकी तरफ देखने लगे।

मिरजा बाकर फिर बोले—"आप खुद अच्छी तरह जानते-समझते होंगे कि आज इस मुल्क में ऐसी कौन-सी ताकत है जो अंग्रेजों का मुकाबला कर सके। उनकी हुकूमत को उखाड़ सके। शायद आपने सुना होगा कि अवध के पिछले नवाब, शुजाउद्दौला बहादुर कितने हौसले वाले और तलवार के धनी थे। उन्होंने भूल से अंग्रेजों से ठान ली थी। बक्सर की लड़ाई में शरीक हो गए थे। पर उसका क्या नतीजा हुआ ? आखिर में अंग्रेजों के आगे सिर झुकाना पड़ गया, तब जाकर कहीं अवध की रियासत बंच सकी थी। ख्याल करने की बात है कि उस वक्त कम्पनी सरकार इतनी मजबूत व पायदार भी न थी। फिर आज जब उसकी तूती बोल रही है, हिन्दुस्तान के कोने-कोने में छाई हुई है, वजीरअली खाँ क्या खाकर उसका मुकाबला कर सकते हैं ? जिन राजाओं की अभी तक इज्जत-आबरू कायम है, अपनी रियासतों के खुदमुख्तार बने हुए, मौज की जिन्दगी बसर कर रहे हैं, वजीरअली खाँ का साथ देने के बाद दर-दर की ठोकरें खाते नजर आएँगे।" फिर थोड़ा मुस्करा कर कहा—"कैसी मजाक की बात है कि खुद के वजीरअली खाँ के पास पच्चीस सिपाही भी नहीं हैं और अंग्रेजों से मुकाबला करना चाहते हैं। दूसरों को भाड़ में झोंकना चाहते हैं। इसलिए मैं लखनऊ से भागा हुआ आपको चेताने के लिए दौड़ा आया हूँ। आप मेरे पुराने दोस्त हैं, आपका दर्द मेरा दर्द है, आपकी तबाही मेरी तबाही है। जैसे भी मुमकिन हो आप जयनगर के महराज को रोकें, समझाएँ। वह वजीरअली खाँ के झमेले में न पड़ें। क्यों अपनी रियासत को अपने हाथों से मिटाना चाहते हैं।" और वह अहमदहुसैन के चेहरे की तरफ देखने लगे।

मिरजा बाकर के इस कहने का नवाब नाजिर अहमदहुसैन के दिल पर काफी प्रभाव पड़ा था। चेहरा गम्भीर हो रहा था। उसी दशा में उन्होंने कहा—"मैंने आपका कहना सुना और एक-एक लफ्ज पर गौर किया। आपकी इसलाह गलत नहीं है बल्कि एक हकीकत है। मौका पाकर मैं महाराज से इसका जिक्र करूँगा और समझाऊँगा भी।"

"अगर आप उन्हें समझाएँगे तो ऐसा मुमकिन नहीं है कि वह न समझें या आपका कहना न मानें। जान-बूझ कर जिन्दा मक्खी कौन निगलने को तैय्यार होगा ?"

अहमदहुसैन चुप रहे।

मिरजा बाकर भी कुछ देर खामोश रहे फिर कहा—"इस सिलसिले में मेरा एक कहना और भी है।"

"क्या ?" अहमदहुसैन ने उनकी तरफ देखा।

"इस मौके पर महाराजा साहब को कुछ फायदा भी उठा लेना चाहिए।"

"यानी ?"

"अंग्रेजों से कुछ ऐंठ भी लेना चाहिए।"

"वह किस तरह ?"

"एक अच्छी खासी रकम कम्पनी से लेकर वजीरअली खाँ को अंग्रेजों के हवाले कर देना चाहिए।"

अहमदहुसैन थोड़ा मुस्कराए। फिर गम्भीर स्वर से कहा—"ऐसा तो महाराज न करेंगे। उनके लिए यह एक नामूसी की बात होगी।"

"बहरहाल सिर से बला तो टालनी ही पड़ेगी। वजीरअली खाँ को जयनगर से तो हटाना ही पड़ेगा। अपने यहाँ रखने में तो बहुत बड़ा खतरा है।"

"आपके कहने के मुताबिक खतरा तो जरूर है।"

"तब इस सुनहले मौके को हाथ से क्यों खोया जाए ? कम्पनी सरकार से एक बड़ी रकम क्यों न वसूल कर ली जाए ? साथ ही अपनी रियासत और मतंबे के लिए पक्के वादे भी ले लिए जाएँ।"

"क्या अंग्रेज ऐसा करने को तैय्यार हो जाएँगे ?"

"इसका मेरा जिम्मा है।" बाकर ने कहा—"मैं लखनऊ के रजीडेन्ट के जरिए सौदे पटवा दूँगा।"

"देखिए, महाराज से पहले जिक्र तो करूँ ! अगर उनका रुख ठीक होगा तो सौदे का भी जिक्र करूँगा।"

इसके बाद दोनों दस्तरख्वान पर बैठ गए।

४३

जयनगर नरेश के लिए नवाब वजीरअली खाँ ने एक जबर्दस्त फिसलन तथा मोह-भरा दलदल आँखों के सामने खड़ा कर दिया था। जयनगर महाराजा उसी मोह-माया में फँसे हुए विपरीत दिशा की ओर खिंचे चले जा रहे थे। इस समय उन्हें वजीर-अली खाँ की योजना, अपना योगदान आदि सब कुछ भूल सा रहा था।

नवाब वजीरअली खाँ के पास नकद रुपयों का एक अर्से से अभाव था। गाँठ में हीरे जवाहरात जरूर थे लेकिन वे सब पत्थर कंकरों के बराबर थे। अपनी योजना को सफल बनाने के लिए तो नकद रुपयों की आवश्यकता थी। इसी अभिप्राय की पूर्ति के लिए उन्होंने गोरखपुर के जंगलों से मुसाहब रहीम खाँ को दस-बीस जवाहरात देकर

लखनऊ की तरफ भेजा था, किन्तु रहीम खाँ जो गया था, तो आज तक लौट कर नहीं आया था। शायद उसकी नीयत में फर्क आ गया था। जवाहरात पाकर उनका साथ भी छोड़ बैठा था।

जयनगर आकर तथा अपने कार्य के सफलता की झलक देख कर नवाब का ध्यान पुनः धन की ओर गया। उन्होंने सोचा था—जयनगर राजपूताने का एक प्रसिद्ध राज्य है। प्राचीन समय से यहाँ के शासक हीरे-जवाहरातों की कदर करते चले आ रहे हैं, इसलिए यहाँ धनी-मानी तथा हीरे-जवाहरातों को परखने वाले, उनका सच्चा मूल्य आँकने वाले और रत्नों को खरीदने-बेचने वाले जौहरी आबाद हैं। जौहरी बाजार भी मौजूद है, अतः राजा के द्वारा सारे रत्न बेच कर नकद रुपया गाँठ में कर लेना मुनासिब है। राजा के द्वारा बेचने से किसी प्रकार का सन्देह भी नहीं किया जा सकता। इसलिए एक दिन मौका पाकर उन्होंने अपने अभिप्राय को जयनगर नरेश से जाहिर किया और जवाहरातों का सन्दूकचा उनके हवाले कर दिया था।

जयनगर नरेश ने ज्योंही जवाहरातों भरा सन्दूकचा पाया, वह आश्चर्य में पड़ गए थे। उनका राज्य पुराना था, पूर्वज जवाहरातों के शौकीन थे। मुगल बादशाहों के दरबार में रहते थे और रत्नों को हथियाते-जमा करते आए थे। फिर भी उनके राज्य कोष में नवाब वजीरअली खाँ के सन्दूकचे में भरे हुए जवाहरातों की तरह का एक भी हीरा-जवाहरात नहीं था। उनकी चमक-दमक, आब आदि कुछ और ही थी। लालच से मन भर गया था। उन्होंने जवाहरातों भरा वह सन्दूकचा अपने कब्जे में लेकर एक दिन जयनगर के बड़े-बड़े रत्नों के पारखी तथा खरीदने-बेचने वाले जौहरियों को अपने महलों में बुला कर वह सन्दूकचा खोल कर उनके सामने रख दिया और उसमें भरे रत्नों को परखने तथा उनका मूल्य आँकने की आज्ञा दी।

जौहरी लोग सन्दूकचे के जवाहरातों को देख कर हक्के-बक्के से रह गए। एक-एक जवाहरात को हथेली पर रख कर तथा आँखें गड़ा-गड़ा कर परखा-जाँचा। और अन्त में राजा से निवेदन किया—"अन्नदाता ये जवाहरात बड़ी दुर्लभ वस्तु हैं, अमूल्य हैं। शायद इनके जोड़ के जवाहरात संसार में कहीं न होंगे ?"

राजा ने साधारण भाव से पूछा—"क्या तुमलोग इन रत्नों को खरीद सकते हो ?"

"सरकार !" एक बूढ़े अनुभवी जौहरी ने कहा—"इनका मूल्य आँकना बहुत कठिन है। फिर भी यदि एक-दो रत्न औने-पौने मूल्य पर खरीद लेने के विचार से हम सभी जौहरी मिल कर अपनी सम्पत्ति एकत्र करें तब भी वह पूरी नहीं कही जा सकती। यह जवाहरात तो बादशाह नवाब आदि ही खरीद सकते हैं।"

जौहरियों का उत्तर सुन कर जयनगर महाराज आश्चर्य से भर गए। उन सब को विदा करके एक बार गौर से जवाहरातों को देखा। आँखों में चकाचौंध सी भर गई।

साथ ही नीयत भी बदल गई। जवाहरातों के मोहाकर्षण ने उन्हें डगमगा दिया। जयनगर नरेश के हृदय से उस समय नवाब वज़ीरअली खाँ का याराना-दोस्ताना, उनके जयनगर आने का अभिप्राय, सहायता करने का वादा आदि सभी कुछ एकदम गायब हो गया। केवल एक यही धुन सवार हो गई कि जिस प्रकार और जिस मूल्य पर भी हो सके इस सन्दूकचा को हजम कर जाना चाहिए। अब न यह जवाहरात बेचे जा सकते हैं, न नवाब वजीरअली खाँ को वापस दिए जा सकते हैं। और उसी क्षण उन्होंने वह सन्दूकचा अपने राजकोष में रखवा दिया था।

अब राजा जयनगर इसी उधेड़बुन में रात-दिन डूबे रहते थे कि नवाब वजीरअली खाँ को इस विषय में क्या जवाब दिया जा सकता है? क्या बहाना बनाया जा सकता है? या दूसरी कौन-सी तरकीब जवाहरातों को हजम कर जाने की हो सकती है। किन्तु जयनगर नरेश के सुलझाए यह गुत्थी नहीं सुलझ रही थी और दिन बीत रहे थे। जिस दिन से सन्दूकचा लाए थे, उसके बाद से आज तक नवाब वजीरअली खाँ से भी नहीं मिले थे।

दिन का तीसरा पहर था। जयनगर नरेश अपने महल के विशेष कमरे में बैठे हुए अपने गुनताड़े में लीन थे। कुछ देर पहले नवाब वजीरअली खाँ का पैगाम आया था। उन्होंने मुलाकात के लिए मेहमानखाने में पधारने का आग्रह किया था। जयनगर नरेश समझ गए थे कि पैगाम उन्हीं जवाहरात की बिक्री के विषय में पूछ-पाँछ करने के लिए होगा। कहला दिया था कि आज तो मैं एक दूसरे आवश्यक कार्य में फँसा हुआ हूँ। कल किसी समय मिलूंगा।

नवाब नाजिर अहमदहुसैन खाँ रोज ही महलों में आकर महाराज से मुलाकात करने का अवसर ताक रहे थे, लेकिन इधर दो-तीन दिनों से महाराज से भेंट ही नहीं हो रही थी। आज इस वक्त जैसे ही महलों में पहुँचे और अपने आने की सूचना महाराज के पास भिजवाई, महाराज ने शीघ्र ही उन्हें अपने पास बुला लिया। आदर के साथ उन्हें बैठाया।

अहमद हुसैन ने उचित अवसर पाकर बात छेड़ी। अपने पुराने मुलाकाती तथा मित्र लखनऊ रजीडेन्ट के मीर मुंशी मिरजा बाकर का जयनगर आना और उनके घर पर मेहमान होने का समाचार सुना कर नवाब वजीरअली खाँ के विषय में जो कुछ तथा जिस तरह की वार्तालाप उनसे हुई थी बता कर कहा—मेरे भी ख्याल में यही आ रहा है कि नवाब वजीरअली खाँ की मेहमानदारी कुछ खतरनाक है। बैठे-बैठाए का सर दर्द है। जरा सोचने-समझने की बात है कि उनके पास खुद की कोई ताकत नहीं है और पहाड़ से सर टकराना चाहते हैं। दूसरों के कन्धों पर रख कर बन्दूक चलाने का इरादा रखते हैं। साफ जाहिर है कि वह खुद तो मारे-मारे फिर ही रहे हैं। अंग्रेजों का मुखालिफ बना कर दूसरों को भी दर-दर का भिखारी बना देना चाहते हैं। इसलिए मेरा यही

मशविरा है कि आप किसी तरह नवाब वजीरअली खाँ को यहाँ से रफा-दफा कीजिए। क्यों झमेले में पड़ते हैं ?"

जवाहरातों को हजम कर लेने के फेर में जयनगर नरेश भी कुछ ऐसा ही सोचते थे लेकिन अभी तक उन्हें न कोई बहाना सूझ रहा था न इस बारे में किसी से कोई जिक्र ही छिड़ा था। नवाब नाजिर को वह एक सच्चा मशविरा देने वाला तथा अपना बड़ा भाई ही समझते थे। अकसर उलझन के मौकों पर उनसे इसलाह लिया करते थे और नवाब नाजिर भी सही-सच्ची सलाह देकर उनकी परेशानी को दूर कर दिया करते थे।

अहमद हुसैन का कहना सुन कर महाराज ने कहा—"भाई साहब, हम आपकी बात मानते हैं। हम भी सोचते हैं कि हम क्यों अंग्रेजों के मुखालिफ बनें। जब वह हमें नहीं छेड़ रहे, हमारी रियासत से कोई सरोकार नहीं रख रहे तो बिला वजह हम क्यों मैदान में उतर पड़ें ?"

अहमद हुसैन बोले—"मुझे तो मीर मुंशी मिरजा बाकर की इसलाह किसी हद तक बेहतर मालूम हुई।"

"क्या ?" महाराज ने जिज्ञासा भरी नजर से उनकी तरफ देखा।

"उन्होंने वजीरअली खाँ को यहाँ से टालने के बारे में एक मशविरा दिया था। कहा था कि यह एक सुनहला मौका है। महाराज को इससे फायदा उठाना चाहिए।"

"वह किस तरह ?" महाराज ने उनकी तरफ देखा।

"मीर मुंशी का कहना था।" नवाब नाजिर ने कहा—"यह मानी हुई बात है कि नवाब वजीरअली खाँ आज नहीं तो कल गिरफ्तार होकर अपने नतीजे को पहुँच जाएँगे। ऐसी सूरत में अगर महाराज उनको गिरफ्तार करा देंगे तो एक साथ दो फायदे हाथ आ सकते हैं। पहला फायदा तो यह है कि उनके सिर से बला टल जायगी। दूसरा फायदा यों है कि उनकी गिरफ्तारी के एवज में अंग्रेजों से एक अच्छा सौदा पटा लिया जाये। एक बड़ी रकम वसूल कर ली जाये। इसके अलावा कम्पनी सरकार से दोस्ताना बर्ताव व्यवहार का वादा भी किया जा सकता है।"

महाराज का चेहरा खिल उठा। प्रसन्नता झलकने लगी। उन्हें नवाब वजीरअली खाँ के जवाहरात हजम कर जाने के लिए बहुत सस्ती तथा अचूक दवा मिल गई। अहमद हुसैन की तरफ देख कर कहा—"भाई साहब, तब इस विषय में आपका क्या मशविरा है ?"

"अगर आप मेरा मशविरा चाहते हैं तो मैं यही कहूँगा कि मीर मुंशी मिरजा बाकर का कहना सोलहो आने सही है। नवाब वजीरअली खाँ एक न एक दिन जरूर पकड़ लिए जाएँगे। जब कम्पनी सरकार हाथ धोकर उनके पीछे पड़ गई है तो वह हरगिज नहीं बच सकते। ऐसी हालत में जरूर आपको फायदा उठा लेना चाहिए।"

महाराज बोले—"आप हमारे बड़े भाई हैं। आपका कहना हम कैसे टाल सकते

हैं ! लेकिन हम नवाब वजीरअली खाँ से वादा कर चुके हैं कि हम तुम्हारे साथ हैं । एक यही पशोपेश हो रहा है ।"

अहमद हुसैन दृढ़ स्वर से बोले—"महाराज ! ऐसे मामलों में वादा कोई चीज नहीं हुआ करता । अपनी भलाई पहले देखी जाती है । उनके लिये अपने को तबाह-बरबाद कर देना अकलमंदी के मानी नहीं हुआ करते ।"

महाराज खामोश रह कर सोचने लगे—एक तीर से दो पक्षी शिकार हो रहे हैं । इधर जवाहरात भी हजम हो रहे हैं, उधर अंग्रेजों से भी काफी रकम वसूल हो जाएगी । विचार ने जरा पल्टा लिया ।—हम अपने वादे से तो हट सकते हैं उसके बहुत से बहाने बनाये जा सकते हैं । कहा जा सकता है कि पड़ोसी कोई भी राज्य अंग्रेजों से झगड़ा मोल लेना नहीं चाहते । अकेले हम क्या कर सकते हैं । लेकिन अपने हाथों वजीर अली खाँ को गिरफ्तार करके अंग्रेजों के सिपुर्द कर देना बड़े नामूसी की बात है । ऐसा सोच कर उन्होंने अहमद हुसैन से कहा—"भाई साहब ? हम खुद तो नवाब वजीरअली खाँ को गिरफ्तार करके अंग्रेजों के हवाले नहीं करेंगे ? अगर कोई उन्हें गिरफ्तार करना चाहेगा तो उसकी मदद अवश्य कर देंगे । लेकिन अंग्रेजों से सौदा किस तरह पटेगा ? कौन बीच में पड़ कर हमें लम्बी रकम दिलायेगा ?"

"मीर मुंशी मिरजा बाकर ने इस काम की जिम्मेदारी अपने सिर ली है ।" नवाब नाजिर ने कहा ।

"तब ठीक है ।" महाराज ने मुस्करा कर कहा—"नवाब वजीरअली खाँ को गिरफ्तार करा देने का ऐवज हम एक करोड़ रुपया लेंगे ।"

अहमद हुसैन ने कहा—"बेहतर है । मैं जाकर मीरमुंशी को आगाह कर दूँगा ।"

ऐसा नहीं ? महाराज ने कहा—"चिराग जलने के बाद आप मीर मुंशी को अपने साथ हमारे पास ले आएँ, जिससे हम उन्हें अच्छी तरह ठोंक बजा कर परख भी लें ।"

अहमद हुसैन चले गये । महाराज प्रसन्न थे । उनके सिर से एक बोझ उतर गया था ।

चिराग जलने के बाद मिरजा बाकर तथा जयनगर नरेश की बैठक जमी । काफी देर तक बातें होती रहीं । राजा ने उन्हें अपनी शर्त सुना दी और मिरजा ने सहर्ष मंजूर कर ली ।

४४

एक करोड़ रुपया जयनगर के खजाने में दाखिल हो चुका था । मीर मुंशी मिरजा बाकर हिन्दुस्तानी पैदल तथा सवारों सहित जयनगर के एक कोने में ठहरे हुए थे । करनल कालंस भी गोरी पल्टन के साथ जयनगर आकर घात में लगे हुए थे ।

सबेरे का समय था। नवाब वजीरअली खाँ मेहमानखाने में बैठे अपने मुसाहिबों से बातें कर रहे थे।

वजीरअली खाँ ने वारिसअली की तरफ रुख करके कहा—"राजा साहब को हमारा इरादा काफी पसंद आया है। उन्होंने पड़ोसी राजाओं को भी हमारे इरादे की खबर देकर पैगाम भेजे हैं और हमारी मदद करने के बारे में काफी जोर दिया है। हम उम्मीद करते हैं कि इस जंग में हमें जरूर कामयाबी हासिल होगी। इस तरह से हमारा जय-नगर आना बेकार नहीं हुआ।"

"लेकिन अर्ज यह है?" वारिसअली ने कहा—"पड़ोसी राजाओं के पास पैगाम गए हुए आज कई दिन हो गए। कहीं से कोई जवाब नहीं आया।"

"यही मालूम करने के लिए तो हमने राजा साहब से मुलाकात चाही थी। मगर वह कल शायद अपने किसी राज-काज में मशगूल थे। आज मिलने का वादा किया है।" फिर दो क्षण रुक कर कहा—"इसके अलावा उनसे जवाहरातों के बारे में भी दरियाफ्त करना था कि उनका क्या हुआ?" उन्होंने कहा।

"जवाहरातों के बारे में कैसा?" वारिसअली ने अनभिज्ञता के भाव से कहा।

"तुम सबको मालूम है कि हमारे पास नगद नकद खतम हो चुका है। सिर्फ जवाहरात ही बच रहे थे। इधर मुकाबले की तैय्यारी के लिए अपनी गाँठ में कुछ नकद होना जरूरी था। इसलिए हमने जवाहरातों के वह पूरा संदूकचा राजा साहब के हवाले करके उन्हें बिकवा देने के लिए कहा है। औने-पौने बिक कर जो भी रकम हाथ आ जायगी, काम देगी। जवाहरातों को रख कर क्या करते? उनसे क्या काम निकल सकता था? लेकिन राजा साहब ने अभी तक उनके बारे में कोई जिक्र नहीं किया। कई दिन गुजर चुके हैं।"

"संदूकचे भर जवाहरात तो करोड़ों रुपए के हो सकते हैं। कहा नहीं जा सकता कि यहाँ कितनी कीमत के आँके जाते हैं।" वारिसअली ने धीरे से कहा।

"खैर, जो भी कीमत उनकी हाथ आ जाएगी, गनीमत समझी जाए।" नवाब ने लापरवाही से कहा।

इसके बाद दो चार क्षण सन्नाटा रहा। फिर वफा बेग ने नवाब की तरफ रुख करके कहा—"अगर गुस्ताखी माफ फरमाएँ तो मैं कुछ करूँ!"

"हाँ कहो?" नवाब ने उसकी तरफ देखा।

वफा बेग बोला—"अर्ज यह है कि मुझे यहाँ कोई उम्मीद नजर नहीं आती। बेकार की वक्तगुजारी हो रही है। इसलिए बेहतर यह मालूम होता है कि यहाँ से काबुल की तरफ कूच किया जाए। वहाँ से मदद लाकर लड़ाई शुरू की जाएगी। काबुल के बादशाह का खत भी हुजूर के पास आ चुका है। वह फौजी इमदाद देने के लिए तैय्यार हैं।"

"आखिर में तो काबुल चलना ही है।" वज़ीरअली खाँ ने कहा—लेकिन यहाँ भी बहुत कुछ उम्मीद नजर आ रही है। उसका भी नतीजा देख लेना जरूरी है। फिर एक खास बात और है। हम चाहते हैं कि अपने मुल्क की देशी रियासतों में भी अंग्रेजों की मुखालफत पैदा हो जाय। क्योंकि एक मोर्चे से काम नहीं चल सकता। कई मोर्चे खड़े होने चाहिए। जरूरी तो यह है कि मुल्क के कोने-कोने में हंगामा-फसाद जोर पकड़ ले। तभी अंग्रेजी हुकूमत को धक्का लग सकता है।

कोई कुछ नहीं बोला।

तभी जयनगर नरेश ने मेहमानखाने में प्रवेश किया। वजीरअली खाँ तथा समस्त मुसाहबों ने उठ कर उनका स्वागत किया फिर नवाब ने उन्हें अपने बराबर बैठा लिया।

एक दो क्षण की खामोशी के बाद नवाब ने कहा—"आज कई दिन बाद आपसे मुलाकात हो रही है।"

"जी हाँ ? महाराज ने कहा—"कुछ ऐसी ही झंझटें सामने आ गई थीं कि आप से मिल न सका।"

"हमारे हंगामें में शरीक होने के लिए आपने जो पड़ोसी रजवाड़ों को पैगाम भिजवाए थे, उनका क्या नतीजा निकला ?" नवाब वजीरअली खाँ ने कहा—"हमें बड़ी तशवीश हो रही है !"

"बड़ी कठिन समस्या है !" राजा ने धीरे से कहा। फिर नजर लड़ा कर बोले —"नवाब साहब ? अंग्रेजों का भाग्य बहुत प्रबल मालूम होता है।"

"कैसा ?" नवाब ने कुछ विस्मय के साथ कहा।

"क्या कहूँ ? मालूम होता है हमारे देश को उनकी गुलामी ही मंजूर है। बल्कि मुझे ऐसा जान पड़ता है कि अब युग-युग के लिए फिरंगियों का पैर यहाँ जम गया। अब वह किसी के हटाए नहीं हट सकते।"

"हम आपका कहना नहीं समझ रहे !" नवाब ने कहा—"जरा साफ तौर पर कहिए !"

"साफ तौर पर क्या अर्ज करूँ ?" राजा ने कहा—"आपका हंगामा और हमारा समर्थन दोनों गड्ढे में पड़ गए। अंग्रेजों का आतंक बुरी तरह लोगों के दिलों पर छा रहा है। पड़ोस का एक भी राज्य उनसे लड़ाई लेने के लिए तैय्यार नहीं हो रहा। एक भी राज्य का शासन विद्रोही बन कर अपनी स्वतंत्रता भंग नहीं करना चाहता। उनका विचार है कि अंग्रेजों की गुलामी, उनके आगे नतमस्तक होने से ही हमारी स्वतंत्रता बनी रह सकती है।

"बिलकुल गलत है ?" नवाब ने जोश के साथ कहा—"अंग्रेजों से यह उम्मीद करना कि वह किसी की आजादी को कायम रखेंगे, उसे अपना गुलाम नहीं बनाएँगे, यह एक ख्वाबख्याल है। अंग्रेज मुल्क का हर एक हुक्मरां, हर एक नवाब राजा को अपने हाथ

के अँगूठे के नीचे दबा कर रखना चाहते हैं। जब तक अंग्रेजों को मुल्क से निकाल बाहर नहीं किया जायगा, किसी की भी आजादी महफूज नहीं कही जा सकती।"

जयनगर नरेश बड़े इतमीनान के साथ बोले—"आपका फरमाना सही है। मेरे विचार भी आप ही की तरह हैं। लेकिन प्रश्न यह सामने आ जाता है कि एक अकेला व्यक्ति क्या कर सकता है? अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता, नवाब साहब! जरा गौर कीजिए। अगर पहाड़ से सिर टकराया जाय तो किसकी हार-जीत होगी?"

वजीरअली खाँ कुछ नहीं बोले। उनका चेहरा सुर्ख हो रहा था और उस पर कुछ चिन्ताओं और कुछ निराशा की रेखाएँ उभर रही थीं।

राजा भी एक क्षण चुप रहे, फिर कहा—"मैंने आपके मसले पर कई दिन विचार किया। अन्त में एक बात ही मेरी समझ में आई है।"

"क्या?" नवाब ने उनकी तरफ गौर से देखा।

"उसे कहने में कुछ संकोच अवश्य हो रहा है, लेकिन उसके सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं दिखाई देता।" राजा ने धीरे से कहा।

"कहिए?" नवाब ने उनके चेहरे पर दृष्टि जमा दी।

"आप अंग्रेजों के साथ सुलह कर लीजिए।" और राजा उनके चेहरे को देखने लगे।

नवाब वजीरअली खाँ का चेहरा तमतमा उठा। बोले—"गैर मुमकिन है। हम सुलह कभी नहीं कर सकते!" फिर धीरे से कहा—"बेकार वक्त बरबाद किया?"

राजा ने बहुत मीठे स्वर भाव से कहा—"नवाब साहब! मैं तो हर तरह से आपकी सहायता करने तथा साथ देने के लिए तैय्यार था और अब भी तैय्यार हूँ, मगर प्रश्न यही है कि एक अकेले मेरी शक्ति क्या कर लेगी?"

"अब हम यहाँ से काबुल का सफर करेंगे?" नवाब ने धीरे से कहा।

वारिसअली बोल उठा—"मैंने हुजूर से पहले ही अर्ज किया था कि यहाँ वक्त बरबाद करना फिजूल है। काबुल तशरीफ ले चला जाए। आखिर वही करना पड़ा।"

"खैर, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा!" नवाब ने उसकी तरफ देख कर कहा—"काबुल पहुँच कर हमारी उम्मीद जरूर बर आएगी।" फिर कुछ देर खामोश रह कर राजा की तरफ रुख करके कहा—"हमारे उन जवाहरातों के बारे में आपने क्या किया? क्योंकि अब हमें नकद रुपयों की बहुत जरूरत होगी।"

राजा ने इतमीनान से कहा—"आपके उन जवाहरातों का संदूकचा हमने उसी दिन जौहरियों को बुला कर सिपुर्द कर दिया था। जौहरियों ने उन्हें जाँच परख कर कहा था कि ये सब जवाहरात करोड़ों के हैं। इसलिए रुपया जुटा लेने की हमें कुछ मोहलत मिलनी चाहिए। सम्भव है अब उन्होंने रकम जुटा ली होगी या आज-कल में इकट्ठी कर लेंगे, आपकी खिदमत में पहुँचा दूँगा।" फिर एक क्षण चुप रहने के बाद नवाब की तरफ

देख कर कहा—"अभी मैंने एक खबर सुनी है। और उसे आपके कानों में डालना जरूरी समझ रहा हूँ। क्योंकि यह खबर कुछ खतरनाक सी है।"

"क्या खबर है ?" नवाब ने उनकी तरफ देखा।

खबर यह है कि लखनऊ रजीडेन्सी के फौजी अफसर करनल कालंस अंग्रेजी-हिन्दुस्तानी पल्टनों तथा रिसाला सवारों के साथ आपकी टोह लेते हुए जयनगर के करीब, कहीं घात में लगे हुए हैं। शायद उनको किसी भेदिए से पता चल गया है कि आप हमारे मेहमान हैं।"

सुन कर वजीरअली खाँ खामोश रह गए। मुसाहिबों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। एक दूसरे का मुँह ताकने लग गए।

राजा ने उन सब पर एक दृष्टि डाली। फिर वजीरअली खाँ से बड़े सहानुभूति भरे स्वर से कहा—"नवाब साहब ! इस खबर ने मुझे भी परेशान कर रखा है। क्योंकि मेरे यहाँ मेहमान रहते हुए अगर आप पर कोई आँच आ गई, तो वह मेरे लिए बहुत बड़ी लज्जा, बदनामी और डूब मरने की बात होगी। मैं हर प्रकार से आपका हित चाहता हूँ लेकिन विवश हूँ। अकेले कुछ नहीं कर सकता।"

"तब ?" नवाब ने उनकी नजर से नजर मिलाई।

"बहुत सोचने-समझने पर मेरी समझ में यही आ रहा है कि आप अब हंगामा-फसाद के विचार को दरगुजर कर दें। समय को देखते हुए सुलह कर लें। अगर अंग्रेज सरकार आपकी इच्छा अनुसार पेंशन देने के लिए तैय्यार हो जाय, आपकी इज्जत आबरू कायम रखने का सच्चा वादा करे और जहाँ आप कयाम करना पसंद करें, वह स्थान देने को राजी हो जाए, तो इस आवारागर्दी से सुलह बहुत बेहतर कही जाएगी।" फिर मुसाहिबों पर एक उचटती नजर डाल कर कहा—"आपके ये सब साथी भी परेशानियों से बच जाएँगे। अपने बाल-बच्चों से मिल कर जीवन व्यतीत कर सकेंगे।"

मिरजाई बेग ने धीरे से कहा—"राजा साहब का मशविरा तो किसी हद तक सही मालूम होता है।"

एक दो क्षण कुछ सोचने-समझने के बाद नवाब ने नजर उठा कर राजा साहब की तरफ गम्भीर दृष्टि से देखा और कहा—"एक शर्त पर हम सुलह करने को तैय्यार हो सकते हैं।"

राजा ने उत्सुकता से कहा—"फरमाइए ?"

"हमें खातिर-ख्वाह-गुजारे की जरूरत नहीं है। अवध का आधा राज्य हमें वापस कर दें।"

दो-चार मुसाहिबों ने एक जबान होकर कहा—"बहुत ही मुनासिब और वाजिब शर्त है। ऐसा ही होना चाहिए।"

जयनगर नरेश ने इतमीनान के साथ कहा—"आपकी इस शर्त पर विचार करते

हुए मैं यह उचित समझता हूँ कि मैं अपनी तरफ से करनल कालंस के पास संधि का सन्देश भेजूं और सुलह की शर्तें तय करने के लिए वह अपनी तरफ से अपने किसी जिम्मेदार व्यक्ति मीर मुंशी वगैरह को हमारे महलों में भेज दें। आप दोनों मुकाबले में बैठ कर शर्तें तय कर लें।"

"हमें आपका यह तरीका पसंद है।" नवाब ने कहा।

"तब मैं जाकर इसकी तदवीर करता हूँ?" और जयनगर नरेश उठ कर मेहमानखाने से चले गए।

४५

दो दिन गुजर गए। तीसरे दिन लगभग डेढ़ पहर दिन चढ़े जयनगर नरेश मेहमानखाने में पधारे। नवाब वजीरअली खाँ अपने मुसाहिबों से सुलह तथा अपनी शर्तों के विषय में सलाह-मशविरा कर रहे थे। राजा के आते ही उनकी बातें खतम हो गईं। सब का ध्यान राजा की ओर आकर्षित हो गया।

राजा ने आते ही कहा—"नवाब साहब तशरीफ ले चलिए। ईश्वर की कृपा है। मैं अपनी कोशिश में सफल हो गया। करनल कालंस ने मेरा प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया है और अपने मीर मुंशी मिरजा बाकर को पूरी जिम्मदारी सौंप कर शर्तें तय करने के लिए भेज दिया है। वह मेरे महलों में आकर बैठे हुए हैं। अब आप तशरीफ ले चल कर उन से बात कर लीजिए। अपनी इच्छा अनुसार सुलह की शर्तें तय कर लीजिए।"

नवाब वजीरअली खाँ तुरन्त उठ कर राजा के साथ चल पड़े। मुसाहिब लोग मेहमान खाने में ही बैठे रहे।

मीर मुंशी मिरजा बाकर पचास तिलंगों को अपने साथ लेकर आए थे। तिलंगे हथियारों से लैस थे। राजा ने अपने महल के पीछे वाले हिस्से में मुलाकात का प्रबन्ध किया था। महल के जिस लम्बे चौड़े कमरे में मीरमुंशी बैठे हुए नवाब वजीरअली खाँ से मिलने का इन्तजार कर रहे थे उसके चारों तरफ तिलंगे घात में लगे हुए थे। मीर मुंशी ने उन्हें अच्छी तरह सिखा-पढ़ा दिया था कि नवाब वजीरअली खाँ से बातें करते हुए जिस समय मैं तेज आवाज से बोलूं, तुम लोग एकदम कमरे के अन्दर घुस आना और आते ही नवाब पर टूट पड़ना, उन्हें गिरफ्तार करके अपने कब्जे में कर लेना। मिरजा बाकर के आदेशानुसार तिलंगे चुस्त थे।

जयनगर नरेश के साथ नवाब वजीरअली खाँ मुलाकाती कमरे में दाखिल हुए।

कमर में बिलायती तलवार लटक रही थी। चेहरे पर तेज छाया था और हृदय जोश से भरा हुआ था। मिरजा बाकर ने उठ कर बड़े अदब-कायदे के साथ नवाब का स्वागत किया, ताजीम दी। नवाब बड़े इतमीनान के साथ मसनद पर तकिए का सहारा लेकर बैठ गए। उनकी बाँई तरफ जयनगर नरेश तथा दाहिनी तरफ मिरजा बाकर बैठे। राजा ने उन दोनों का मुलाकाती परिचय कराया। फिर उठ कर बोले "मैं अभी आ रहा हूँ।" और वह वहाँ से चले गए।

मुलाकाती कमरा बहुत हवादार था। तीन तरफ बड़े-बड़े द्वार और खिड़कियाँ थीं जिन में पर्दे पड़े हुए थे। चौथी में महल के अन्दर आने का एक छोटा द्वार था। बाहर तीनों बड़े द्वारों के सामने बरामदे थे। कमरा काफी सुसज्जित था। फर्श पर कालीन मसनद तकिए बिछे थे। उचित स्थानों पर सुन्दर छोटी-छोटी चौकियों पर पेचवान खासदान, इत्रदान आदि रखे हुए थे। एक चौकी पर गंगा यमुनी सोने चाँदी की छोटी-सी सुराही में पीने का पानी था।

जयनगर नरेश के चले जाने के बाद कुछ देर के लिए वातावरण मौन रहा। दोनों मिलने वाले अपने-अपने मंतव्यों को लिए खामोश बैठे रहे। फिर मीर मुंशी ने नजर उठा कर नवाब वजीरअली खाँ के चेहरे की तरफ देखा। उनके चेहरे के तेज ने अपना प्रभाव डाला। मिरजा बाकर पर नवाब का रौब छा गया। सिटपिटा से गए। कुछ कहने का साहस न कर सके।

आखिर नवाब वजीरअली खाँ ने ही पहल की। बड़े इतमीनान के साथ अपनी शर्तें सुना दी। मिरजा बाकर शर्तों का स्पष्ट उत्तर न देकर हूँ-हाँ, करने लगे। वजीरअली खाँ तेज मिजाज तो थे ही एकदम गरमा गए। उच्च स्वर से कम्पनी सरकार की काली करतूतों तथा ज्यादतियों की निन्दा करने लगे। उनकी तेज और क्रोधमय आवाज कमरे में गूंज रही थी।

मीर मुंशी मिरजा बाकर पर नवाब का कुछ ऐसा रौब गालिब हो गया था कि गूंगे बन रहे थे। होंठ चिपक से गए थे। मुंह खोलने का साहस ही नहीं कर पा रहे थे और नवाब वजीरअली खाँ बोले चले जा रहे थे, बोले चले जा रहे थे।

उधर घात में लगे हुए तिलंगे मुंशीजी की तेज आवाज सुनने के लिए कान खड़े किए इन्तजार में थे। जब उन्हें मिरजा बाकर की कोई आवाज न सुनाई दी केवल नवाब का उच्च स्वर ही उनके कानों के पर्दे फाड़े जा रहा था तो वे लोग अपना स्थान छोड़-छोड़ कर पहले दबे पाँव बरामदे में आ गए और फिर दरवाजों के पास आकर पर्दों के कोनों से ताक-झाँक करने लग गए।

उच्च स्वर से बोलने तथा क्रोध की गर्मी के कारण नवाब वजीरअली खाँ का गला सूखने लगा। प्यास महसूस होने लगी। पानी की तलाश में उन्होंने इधर-उधर नजर घुमाई। चौकी पर रखी पानी की सुराही नजर आ गई। लपक कर सुराही उठा ली।

यद्यपि वहीं आबखोरा भी रखा हुआ था किन्तु प्यास की तेजी में उन्होंने उस पर ध्यान न दिया और सुराही को मुंह से लगा कर पानी पीने लग गए।

मुंशी मिरजा बाकर का साहस जागा। मौका मिल गया और उन्होंने हिम्मत बांध बटोर कर नवाब वजीरअली खाँ की कमर में लटकती हुई विलायती तलवार बड़ी तत्परता के साथ अपने कब्जे में कर ली।

तिलंगे तो ताक में लगे ही थे। मीर मुंशी के इस साहस को ही गनीमत समझे। दौड़ कर कमरे में घुस आए और एक साथ दस-बारह तिलंगे नवाब वजीरअली खाँ पर टूट पड़े। सुराही उनके हाथ से गिर गई। तिलंगों ने पूर्ण रूप से नवाब को अपने कब्जे में कर लिया। वहाँ से सवारी पर बैठा कर अपनी निगरानी में करनल कालंस के सामने ले आए। कालंस ने मीर मुंशी मिरजा बाकर की पीठ ठोंकी और तिलंगों के ओहदे ऊँचे कर दिए।

नवाब वजीरअली खाँ को लखनऊ रजीडेन्सी नहीं ले जाया गया। करनल कॉलंस उन्हें अपनी गोरी पल्टन के घेरे में लेकर सीधे कानपुर को रवाना हो गए। केवल उनकी गिरफ्तारी का समाचार लखनऊ के रजीडेन्ट के पास भेज दिया।

जयनगर नरेश की दगाबाजी तथा नवाब वजीरअली खाँ की गिरफ्तारी का समाचार हवा की लहरों पर उड़ता हुआ मेहमानखाने में पहुँच गया। मुसाहिबों के होश हवास खो गए। एकदम घबड़ा गए। सोचने लगे-जब नवाब साहब गिरफ्तार कर लिए गए और जयनगर नरेश ने उनके साथ ऐसी दगा की, अपने महल में ले जाकर उन्हें अंग्रेजों के सिपुर्द कर दिया। ऐसी सूरत में हमलोग कैसे बच सकते हैं। उधर से निपट कर हमलोगों पर ही उनका हमला होने वाला है। अतः बेहतर यही है कि यहाँ से जल्द से जल्द निकल भागा जाए। जिसके सींग जिधर समाएँ उधर का रास्ता पकड़ा जाए। क्योंकि नवाब वजीरअली खाँ आखिर नवाब ही हैं। ज्यादा से ज्यादा उनके साथ इतनी ही सख्ती की जा सकती है, यही सजा दी जा सकती है कि उन्हें किसी किले में नजर-बन्द कर दिया जाए। लेकिन हमलोगों के लिए तो खुले आम फाँसी का फन्दा तैय्यार है।"

इस निश्चय पर पहुँच कर मुसाहिब गण उसी क्षण चुपचाप एक-एक दो-दो करके मेहमानखाने से निकल भागे।

कानपुर पहुँच कर करनल कालंस ने छावनी से एक गोरी पल्टन और अपने साथ ली और वहाँ से नवाब वजीरअली खाँ को पल्टन के घेरे में लेकर कलकत्ता की राह पकड़ी।

उपसंहार

नवाब वजीरअली खाँ बन्दी बने कलकत्ता पहुँच गए। वहाँ उनकी जामा-तलाशी ली गई। उनके दामन से कई पत्र बरामद हुए। उनमें दो-तीन पत्र बादशाह काबुल के थे। जिनमें उनके इरादे को बढ़ावा देकर फौजी इमदाद देने का वादा किया गया था। किन्तु काबुल के बादशाह का अंग्रेज सरकार कुछ न कर सकी।

एक पत्र नवाब शम्सुद्दौला जो नाजिम जहाँगीरनगर ढाका के छोटे भाई तथा दामाद मुबारिकुद्दौला बहादुर नाजिम बंगाल का था। अंग्रेज सरकार ने उन्हें धर-घसीटा। गिरफ्तार करके कलकत्ता की जेल में बन्द कर दिया। इसी सिलसिले में कुछ लोग फाँसी पर भी लटका दिए गए। कुछ अण्डमान टापू भेज दिए गए।

नवाब वजीरअली खाँ को कलकत्ता के किले के अन्दर एक बँगले में रखा गया। जिसके बाहरी बरामदे में लोहे की मोटी-मोटी शलाखें लगी थीं। बाहर गोरों का कड़ा पहरा कायम कर दिया गया। सिवा अंग्रेज डाक्टर के कोई उनके पास नहीं पहुँच सकता था। बावर्चीखाना बँगले के बाहर था। खाना तैय्यार होकर डाक्टर के मुलाहजा कर लेने के बाद नवाब के सामने रखा जाता था। किन्तु एक बहुत बड़ी सुविधा यह थी कि बावर्चीखाने में भोजन उनकी मर्जी व इच्छा के अनुसार ही पका करता था। पोशाक भी अपने पसन्द की पहिनने को इजाजत थी।

कैदखाने में रहते हुए नवाब वजीरअली खाँ को तीन-चार महीने गुजर चुके थे। उन्हें वहाँ दो वस्तुओं की विशेष तकलीफ थी। एक तो सुबह कसरत के बाद उन्हें मुग्दर हिलाने को नहीं मिल रहे थे। यही उनका बचपन से लेकर इस अवस्था तक का व्यसन था। इसके बगैर सारा दिन उनकी तबीयत उदास बनी रहती थी। दूसरे कैदखाने के उस एकाकी जीवन में उन्हें समय काटने के लिए किसी साथी की आवश्यकता थी। जी घबड़ा उठता था। नवाब के पास अपने अन्तस की वेदना को स्पष्ट करने के लिए केवल एक ही साधन था और वह था डाक्टर हेनरी जार्डन का प्रतिदिन उनके स्वास्थ की खबर-गीरी के लिए कैदखाने में आना जाना।

डाक्टर हेनरी जार्डन अधेड़ आयु के सुन्दर तथा सहृदय युवक थे। बड़े हँसमुख भी थे। हर समय उनके होठों पर मुस्कान नाचती नजर आती थी। कैदखाने में प्रतिदिन आने-जाने के कारण तथा नवाब वजीरअली खाँ से खैर-खबर पूछने के बाद दो-चार इधर-उधर की बातें करने के कारण एक प्रकार से नवाब तथा हेन्नरी जार्डन में याराना सा स्थापित हो गया था और डाक्टर जार्डन उनके दुख-दर्द के साथी बन गए थे।

एक सवेरे नियमानुसार जैसे ही डाक्टर हेनरी-जार्डन नवाब के स्वास्थ की परीक्षा

करने के लिए कैदखाने में आये और देख-भाल कर वापस जाने को हुए, नवाब वजीरअली खाँ ने उन्हें रोक कर कहा—"डाक्टर साहब आपने आज तक यहाँ आकर मेरी तन्दुरुस्ती को तो रोजाना देखा-भाला है लेकिन मुझे जो बीमारियाँ घेरे हुए हैं उनका कोई इलाज नहीं किया ?"

डाक्टर जार्डन अपने स्वभाव के अनुसार मुस्कराते हुए बोले—"आप को कौन-सी बीमारियाँ घेरे हुए हैं ? मुझे तो आप पूर्ण स्वस्थ नजर आते हैं। शरीर तथा दिल-दिमाग किसी में भी कोई बीमारी या कमजोरी नहीं मालूम होती।"

वजीरअली खाँ भी किंचित मुस्करा कर बोले—"आपकी जाँच गलत है। दो बीमारियाँ हर समय मेरे दिल को परेशान किए रहती हैं ? उनका इलाज कीजिए। वरना वाकई तौर पर मैं बहुत जल्द मर जाऊँगा।"

"कहिए वे कौन-सी दो बीमारियाँ हैं ?" जार्डन ने सहानुभूति भरे लहजे से कहा—"हम जरूर उन बीमारियों की दवा करेंगे।"

वजीरअली खाँ एक क्षण खामोश रहे फिर बोले—"डाक्टर साहब, एक बीमारी तो मुझे यह है कि बचपन से मेरी आदत कसरत करने की है। रोज सुबह अखाड़े में उतरना मेरा काम रहा है। दण्ड-बैठक आदि के बाद मुग्दरों की जोड़ी हिलाने से ही मेरी तन्दुरुस्ती कायम थी। इस कैदखाने में भी मेरा वही कायदा नियम जारी है। लेकिन सिर्फ दण्ड-बैठकों से मेरा जी नहीं भरता। बिना मुग्दरों की जोड़ी हिलाए सारे दिन मेरी तबीयत उदास रहती है। इसलिए मेहरबानी करके आप मेरी इस बीमारी को दूर कीजिए।"

"ओ....आपने आज तक अपनी इस बीमारी का जिक्र नहीं किया।" डाक्टर ने मुस्कराते हुए कहा—"हम जरूर इस रोग की दवा करेंगे और जल्द ही करेंगे।" फिर जरा रुक कर कहा—"कितने वजन के मुग्दरों की जोड़ी आपको चाहिए।"

"एक मन वजन की ?"

"बहुत वजनी जोड़ी होगी ?" जार्डन ने कहा—"बीस-बीस सेर का एक-एक मुग्दर हाथों में लेकर आप नहीं हिला सकेंगे।"

वजीरअली खाँ सगर्व बोले—"पूरे एक घन्टे तक हिला कर दिखला दूँगा।"

"थक जाएँगे।"

"हरगिज नहीं।"

"बेहतर है।" जार्डन ने इतमीनान से कहा—"कल या परसों मुगदरों की जोड़ी आपके पास आ जाएगी। आप शौक से हिलाया करेंगे।"

"हम आपके बहुत-बहुत शुक्रगुजार होंगे।" नवाब ने कृतज्ञता भरे स्वर से कहा।

जार्डन बोला—"शुक्रगुजारी की क्या जरूरत है ? आपकी तन्दुरुस्ती को कायम

रखना तो हमारा फर्ज मंसबी है।" फिर एक क्षण ठहर कर कहा—"और वह दूसरी बीमारी क्या है ?"

"वह दूसरी बीमारी दिल दिमाग से ताल्लुक रखने वाली है ?" नवाब ने जरा गम्भीर होकर कहा।

"किस तरह ?" डाक्टर ने कहा—"दिल दिमाग तो आपका बिलकुल सही है। किसी तरह का फर्क नहीं है।"

"लेकिन उस बीमारी का इलाज न होने से दिल-दिमाग में फर्क पैदा हो सकता है।" नवाब ने कहा।

"यानी ?" डाक्टर ने थोड़ा विस्मय से कहा।

"यानी हमारा सुबह का वक्त तो कसरत वगैरह में गुजर जाता है। लेकिन खाना खाने के बाद सारे दिन वह बीमारी सताती रहती है ?"

"क्या खाना ठीक से हजम नहीं होता ?" जार्डन ने शंका के भाव से कहा—"पेट में कुछ दर्द या भारीपन महसूस होने लग जाता है ?"

"जी नहीं, यह कुछ भी नहीं होता ?" नवाब ने किंचित मुस्करा कर कहा।

"तब ? क्या तकलीफ महसूस हुआ करती है ?" डाक्टर ने सहज भाव से पूछा।

"वक्त काटे नहीं कटता ?" नवाब ने कहा—"अकेलापन महसूस करके तबीयत घबरा उठती है। इसलिए उस वक्त को आराम से गुजारने के लिए हमें कोई साथी चाहिए। जिससे हमें तनहाई न महसूस हो। दिल-दिमाग उससे बातें करते रहें।"

मिस्टर जार्डन गम्भीर हो गए। बोले—"नवाब साहब! माफ कीजिएगा। आपके इस मर्ज बीमारी का इलाज करना हमारे काबू की बात नहीं है।" फिर कुछ और अधिक गम्भीर होकर कहा—"आप खुद जानते समझते होंगे कि ये कैदखाना है। एक कैदखाने में आपको दिल बहलाने या हँसी-मजाक करने के लिए कोई साथी कैसे मिल सकता है। ये सब बातें तो आजादी की हुआ करती हैं। मुझे अफसोस है कि मैं आपकी इस तकलीफ को किसी तरह भी दूर नहीं कर सकता।" और वह वजीरअली खाँ के चेहरे की तरफ देखने लगे।

नवाब वजीरअली खाँ मुस्कराए। फिर नजर मिला कर बोले—"ऐसा नहीं है डाक्टर साहब ? अगर आप चाहें तो हमारी उस वक्तगुजारी और दिलबहलाव के लिए एक क्या दस-बीस साथी जुटा सकते हैं।"

जार्डन उसी गम्भीर मुद्रा में उपेक्षा के भाव से बोले—"आपका ख्याल गलत है। मैं हरगिज ऐसा नहीं कर सकता। यह मेरे इख्तियार से बाहर की बात है। और गवर्नर जनरल से भी इसकी शिफारिश नहीं कर सकता। ऐसा कहने-सुनने से मेरा मजाक उड़ाया जा सकता है। गवर्नर जनरल मुझे बुद्धू करार दे सकते हैं या अपने काम में कमजोर समझ कर नौकरी से भी हटा दे सकते हैं।" फिर जरा ठहर कर कहा—

"आप खुद सोचें, गौर करें, कि अगर कम्पनी सरकार को यह मंजूर होता कि आप आजादी के साथ दस-पाँच दोस्त अहबाबों को अपने पास जमा करके हँसी-मजाक किया करें, गहरी उथली बातों पर विचार विमर्श किया करें तो यहाँ अकेले क्यों रखे जाते ? आप देखते हैं कि यहाँ परिंदा पर नहीं मार सकता। सिर्फ एक मैं आपके स्वास्थ की देख-भाल के लिए तैनात किया गया हूँ और आया-जाया करता हूँ। आपकी तन्दुरुस्ती का इलाज करने के सिवा मैं कुछ नहीं कर सकता।"

वजीरअली खाँ पहले जोर से हँस पड़े। फिर सावधान होकर गम्भीर हो गए और बोले—"डाक्टर साहब ! हम अपना वक्त काटने, दिल बहलाने के लिए किसी दोस्त-अहबाब या अज़ीज़-रिश्तेदार की सोहबत नहीं चाहते।"

"तब ?" जार्डन ने आश्चर्य भरी नजर से उनकी तरफ देख कर कहा—"और किसे चाहते हैं ? क्या अपनी बेगम साहिबा को बुला कर अपने पास रखना चाहते हैं ? वह भी गैरमुमकिन सी बात है। आपकी बेगम ने कम्पनी सरकार के साथ क्या दुश्मनी निबाही है जो वह यहाँ लाकर कैद की जाएँ ?"

वजीरअली खाँ पुनः हँसे। फिर बोले—"आप तो बहुत दूर पहुँच गए। लेकिन हम जिसे चाहते हैं वह किसी बेगम से कम नहीं हैं। वह एक समझदार, पढ़े-लिखे इन्सान की सच्ची साथिन है, सच्ची दोस्त है, गुरु है, उस्ताद है। रोते को हँसाने, गुदगुदाने वाली है। उसके पेट में दुनिया जहान की बातें भरी रहती हैं। जो इंसान जिन बातों को पसन्द करता है, जिससे उसका दिल बहलता है, वह उससे वैसी ही बातें किया करती हैं। इंसान उसकी बातों से भले ही ऊब जाए लेकिन वह कभी नहीं ऊबती, कभी नहीं घबड़ाती। बराबर बोलती रहती है। जितना छेड़िए उतना ही ज्यादा बोलती है। इस लिए हम उसी माशूका को अपना दिल बहलाने के लिए आप से चाहते हैं।"

डाक्टर हेनरी जार्डन भी हँस पड़े और देर तक हँसते रहे। फिर बोले—"समझ गया। ऐसी शायद आपकी कोई पुरानी आशना लखनऊ बनारस में रहने वाली कोई वेश्या तवाइफ है। जिसे...."

वजीरअली खाँ बीच में बोल उठे—"हरगिज नहीं, तोबा कीजिए, लानत भेजिए किसी तवाइफ आशना पर।"

"तब ?" डाक्टर ने गम्भीर होकर कहा—"साफ तौर पर कहिए आप क्या और किसे चाहते हैं ?"

"डाक्टर साहब ! मैं वक्तगुजारी के लिए आपसे कुछ किताबें चाहता हूँ। दुनिया में किताबों से बढ़ कर कोई आशना या दोस्त अहबाब नहीं है। उसका पेट बातों का एक भंडार या खजाना हुआ करता है।"

डाक्टर जार्डन ठहाका मार कर हँस पड़े। फिर सावधान होकर कहा—"वाकई किताब से अच्छा सच्चा कोई दोस्त नहीं होता। मुझे भी किताबें पढ़ने का काफी शौक

है। मेरा फुरसत का समय किताबों के वर्क उलटने में ही गुजरा करता है। आपकी इस माँग को मैं बखूबी पूरा कर सकता हूँ।" फिर जरा रुक कर कहा—"आपको किस विषय से दिलचस्पी है ? उसी विषय की किताबें मैं जुटा दूँ।"

"हमें तवारीख से ज्यादा दिलचस्पी है ?" नवाब ने कहा—"अपने मुल्क और दूसरे मुल्कों की कुछ तवारीखें अगर आप हमें दिलवा सकें तो हम आपके बहुत-बहुत शुक्रगुजार होंगे।"

"जरूर-जरूर !" जार्डन ने कहा—"परसों मुग्दरों की जोड़ी के साथ कुछ तवारीखें भी आपको मिल जाएँगी।"

डाक्टर हेनरी जार्डन कैदखाने से चले गए।

डाक्टर महोदय की कृपा से तीसरे दिन मुग्दरों की एक अच्छी जोड़ी तथा उर्दू-फारसी भाषा में लिखी हुई इतिहास की दस बारह पुस्तकें नवाब वजीरअली खाँ को मिल गईं।

× × ×

नवाब वजीरअली खाँ को कैदखाने में रहते दो-तीन वर्ष बीत चुके थे। मुल्क अवध में पूर्ण शान्ति स्थापित थी। नवाब वजीरअली खाँ की ओर से भी अंग्रेजों को संतोष था। डाक्टर हेनरी जार्डन एक प्रकार से नवाब के दोस्त बन गए थे। अतः उनकी कोशिश तथा शिफारिश से गवर्नर जनरल ने नवाब को बग्घी पर बैठ कर शाम के वक्त हवाखोरी को जाने की इजाजत दे दी थी। बन्धन केवल इतना ही था कि बग्घी के आगे-पीछे गोरे सवार चलते थे।

धीरे-धीरे सन् १८१६ ईस्वी का जून महीना आ गया। नवाब वजीरअली खाँ की आयु का ३६वाँ वर्ष चल रहा था। सहसा वह बीमार पड़ गए। अपने जीवन में उन्हें पहली बार बुखार ने धर दबाया था। उनके मित्र डाक्टर हेनरी जार्डन ने इलाज शुरू किया। लेकिन बुखार का कोप दिन-प्रति-दिन बढ़ता ही चला गया। लखनऊ के बेमुल्क नवाब, वजीरअली खाँ की बीमारी की खबर जेलखाने से निकल कर कलकत्ता के शहर में फैल गई।

गवर्नर जनरल ने उनके इलाज के लिए दूसरे अंग्रेज डाक्टरों को भी बुलाया। लेकिन बुखार तो मौत का रूप धारण करके आया था। दिन-दूना रात चौगना बढ़ता चला गया। अन्त में अवध के बेमुल्क नवाब, आसफुद्दौला की यादगार नवाब वजीरअली-खाँ ने कलकत्ता किले के कैदखाने में पलँग पर पड़े सदैव के लिए आँखें बन्द कर लीं।

गवर्नर जनरल की आज्ञा से नवाब बेमुल्क का जनाजा बड़ी धूम-धाम से उठाया गया। एक कम्पनी तिलंगों की ताबूत के आगे तथा एक गोरा पल्टन पीछे थी। जनाजे के साथ कोतवाल शहर का प्रबन्ध था। जनाजा किले से कासीबाग, जहाँ टीपू सुलतान का बेटा दफन था धीरे-धीरे चला जा रहा था। वजीरे हिन्द का जनाजा जाता देख कर शहर

के लोगों की बहुत बड़ी भीड़ उमड़ पड़ी। जनाजे के साथ चलने लगी। कलकत्ता की अनेक कसबियाँ वैश्याएँ अपने कामकाज छोड़ कर घरों के अन्दर से बाहर द्वारों पर आकर खड़ी हो गईं और नवाब वजीरअली खाँ की बेकसी को याद करते हुए फूट-फूट कर रो रही थी।

जान राबर्ट कलकत्ता के शहर कोतवाल ने कफन-दफन तथा धार्मिक कृत्य के लिए मिरजा जाफर करबलाई तथा मिरजा इब्राहीम बनारसी को तलाश करके बुला लिया था। जनाजा कासीबाग में पहुँच कर कनातों के अन्दर कंधो पर से उतरा गया। मिरजा जाफर ने धर्माअनुसार कफन-दफन किया। आठ दिन तक वहाँ गोरों का पहरा कायम रहा। उसके बाद वहाँ एक छोटी-सी कब्र बनवा दी गई।

वजीरअली खाँ की मुताई बेगम नवाब वजीरुन्निसा ने लखनऊ में रहते हुए उनकी गिरफ्तारी की खबर तो उसी समय सुन ली थी जब नवाब कानपुर से पल्टनों के घेरे में कलकत्ता ले जाए गए थे। उसके कुछ दिन बाद नवाब को किले में कैद कर दिए जाने का समाचार भी उन्हें मिल चुका था। लेकिन सिवा माथा पीट लेने के उनके पास क्या चारा था। सीने पर सब्र का पत्थर रखे हुए दिन गुजार रही थीं।

इधर ज्योंही नवाब वजीरअली खाँ की मृत्यु का समाचार कलकत्ता से लखनऊ पहुँच कर सर्वसाधरण की जबान पर आया बेगम वजीरुन्निसा ने भी सुना। दुख-दर्द से भर गईं। लखनऊ से एकदम दिल उचाट हो गया। कनीज फातमा को साथ लेकर कलकत्ता की ओर चल पड़ीं। कासीबाग में पहुँच कर कब्र से लिपट गईं। घंटो फूट-फूट कर रोती रहीं। फिर मिरजा जाफर करबलाई के मारफत, जिन्होंने नवाब का कफन-दफन किया था गवर्नर जनरल की कोठी पर पहुँचीं और नवाब की उस छोटी सी कब्र पर एक मकबरा तामीर करा देने की इजाजत चाही। गवर्नर महोदय ने सहर्ष इजाजत दे दी। बेगम ने अपने खर्चे से कब्र पर एक छोटा-सा मजार बनवा दिया। कलकत्ता में उनका जी न लगा। मुंगेर में उनके कोई दूर के रिश्तेदार रहते थे अतः मुंगेर जाकर वहीं रहने लग गईं। कम्पनी सरकार ने उनके गुजारे के लिए कोई पेंशन नियत नहीं की और न बेगम ने उसके आगे हाथ ही फैलाया। नवाब वजीरअली खाँ का दिया बख्शा जो उनके पास था उसी से जिन्दगी के दिन गुजारने लगीं।

वजीरअली खाँ के चार यारों तथा मुसाहिबों में से वारिसअली तथा बहादुरअली कुछ दिनों बाद लखनऊ आकर शाह अब्बास की दरगाह में ठहरे। यद्यपि दोनों फकीराना वेश-भूषा में थे। फिर भी पहचान लिए गए। लखनऊ के रेजीडेन्ट करनल बेली को खबर दी गई। सिपाहियों ने आकर दोनों को गिरफ्तार कर लिया। रेजीडेन्ट के इजलास में बनारस के रेजीडेन्ट जान चेरी के कल की रूबकारी शुरू की गई। लेकिन उन दोनों का उस कत्ल में कोई जुर्म साबित न हुआ। छोड़ दिए गए। शेष मुसाहिबों आदि का कोई पता न चला। खुदा जाने सब कहाँ डूब मरे।

• • •

साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड
इलाहाबाद